भाकृअनुप
ICAR

तृण संदेश

राजभाषा वार्षिक पत्रिका

अंक 20   वर्ष 2024-25

DWR

भाकृअनुप - खरपतवार अनुसंधान निदेशालय
जबलपुर (म.प्र.)

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्

महिमा गीत

जय जय कृषि परिषद् भारत की
सुखद प्रतीक हरित भारत की ।

कृषि धन पशु धन मानव जीवन
दुग्ध मत्स्य फल यंत्र सुवर्धन ।।

वैज्ञानिक विधि नव तकनीकी
पारिस्थितिकी का संरक्षण ।

सस्य श्यामला छवि भारत की
जय जय कृषि परिषद् भारत की ।।

हिम प्रदेश से सागर तट तक
मरू धरती से पूर्वोत्तर तक ।

हर पथ पर है मित्र कृषक की
शिक्षा, शोध, प्रसार, सकल तक ।।

आशा स्वावलम्बित भारत की ।
जय जय कृषि परिषद् भारत की
जय जय कृषि परिषद् भारत की ।।

तृण संदेश

राजभाषा वार्षिक पत्रिका

अंक–20, वर्ष 2024-25

भा.कृ.अनु.प. – खरपतवार अनुसंधान निदेशालय

ICAR - Directorate of Weed Research

जबलपुर, मध्य प्रदेश

Jabalpur, Madhya Pradesh

आई.एस.ओ. 9001 : 2015 प्रमाणित

ISO 9001 : 2015 Certified

तृण संदेश

राजभाषा वार्षिक पत्रिका

अंक–20, वर्ष 2024-25

संरक्षक एवं प्रकाशक

डॉ. जे.एस. मिश्र
निदेशक

प्रधान संपादक

डॉ. पी.के. सिंह
प्रधान वैज्ञानिक

संपादक मण्डल

डॉ. योगिता घरडे
वरिष्ठ वैज्ञानिक

डॉ. जीतेन्द्र कुमार सोनी
वैज्ञानिक

डॉ. अर्चना अनोखे
वैज्ञानिक

श्री संदीप धगट
मुख्य तकनीकी अधिकारी

श्री एम.के. मीणा
सहायक मुख्य तकनीकी अधिकारी

इस अंक में प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचारों/आंकड़ों आदि के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी है।

सम्पर्क सूत्र

भा.कृ.अनु.प.–खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर, मध्यप्रदेश
फोन : 0761–2353138 फैक्स : 0761–2353129
वेबसाइट : https://dwr.org.in

फेसबुक लिंक : https://www.facebook.com/ICAR-Directorate-of-Weed-Research-101266561775694
ट्विटर लिंक : https://twitter.com/DwrIcar
यू–ट्यूब लिंक : https://www.youtube.com/channel/UC9WOjNoMOttJaIWdLfumMnA

ISBN : 978-81-958133-8-4

9 788195 813384

सत्यमेव जयते

डॉ. एम. एल. जाट
सचिव (डेयर) एवं महानिदेशक (आईसीएआर)

Dr. M.L. Jat
Secretary (DARE) & Director General (ICAR)

भारत सरकार
कृषि अनुसंधान और शिक्षा विभाग एवं
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्
कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय, कृषि भवन, नई दिल्ली–110 001

GOVERNMENT OF INDIA
DEPARTMENT OF AGRICULTURAL RESEARCH & EDUCATION (DARE)
AND
INDIAN COUNCIL OF AGRICULTURAL RESEARCH (ICAR)
MINISTRY OF AGRICULTURE AND FARMERS' WELFARE
Krishi Bhavan, New Delhi 110 001
Tel: 23382629/23386711 Fax : 91-11-23384773
E-mail: dg.icar@nic.in

संदेश

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद–खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर द्वारा कृषि, गैर–कृषि क्षेत्रों और जल निकायों में खरपतवारों के प्रबंधन हेतु लगातार नवीनतम अनुसंधान किये जा रहे हैं। खरपतवार, फसल उत्पादन, उत्पाद की गुणवत्ता और कृषकों की आय को सीधे प्रभावित करते हैं। इस चुनौती का समाधान केवल रसायनों तक सीमित नहीं रह सकता, बल्कि जैविक विकल्प, यांत्रिक विधियाँ, ड्रोन आधारित छिडकाव, जलवायु–स्मार्ट प्रबंधन तथा कृत्रिम बुद्धिमत्ता आधारित खरपतवार पहचान जैसे नवाचारों को भी अपनाना आवश्यक है। इस दिशा में खरपतवार अनुसंधान निदेशालय द्वारा प्रस्तुत समाधान वैज्ञानिक समुदाय के साथ–साथ कृषकों के लिए भी व्यवहारिक व लाभकारी सिद्ध हो रहे हैं।

आजादी के अमृत काल में भारत सरकार द्वारा चलाया जा रहा "विकसित भारत संकल्प यात्रा" देश के समग्र विकास की परिकल्पना को साकार कर रहा है। इसके अंतर्गत चल रहे "विकसित कृषि संकल्प अभियान" के माध्यम से उन्नत कृषि तकनीकों को किसानों तक पहुँचाना एक ऐतिहासिक पहल है। इस अभियान में खरपतवार प्रबंधन की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह उत्पादन लागत को घटाने, पर्यावरणीय संतुलन बनाए रखने और पोषण सुरक्षा सुनिश्चित करने में सहायक है। निदेशालय इस अभियान में सक्रिय भागीदारी निभा रहा है तथा वैज्ञानिक ज्ञान को कृषकों तक सरल, सटीक और स्थानीय भाषा में पहुँचाने हेतु प्रतिबद्ध है।

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर खरपतवार प्रबंधन में नवीनतम शोध, तकनीकों और प्रसार गतिविधियों तथा उनके उपयोगी परिणामों को सरल और प्रभावी तरीके से **"तृण संदेश"** पत्रिका के 20 वें अंक मे प्रकाशित कर रहा है। मुझे पूर्ण विश्वास है कि यह अंक कृषकों, कृषि वैज्ञानिकों/विद्यार्थियों एवं कृषि से सबंधित आमजन मानस हेतु उपयोगी सबित होगा तथा राजभाषा के प्रचार–प्रसार हेतु प्रेरणा दायक होगा।

"तृण संदेश" के सफल प्रकाशन के लिए मेरी हार्दिक शुभकामनाएं।

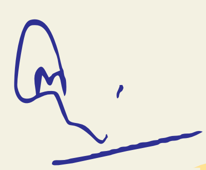

दिनांक : 22.07.2025

(एम. एल. जाट)

भाकृअनुप
ICAR

सत्यमेव जयते

संजय गर्ग
SANJAY GARG
अपर सचिव, डेयर एवं सचिव, आई.सी.ए.आर.
ADDITIONAL SECRETARY, DARE & SECRETARY, ICAR

भारत सरकार
कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय
कृषि अनुसंधान एवं शिक्षा विभाग
कृषि भवन, नई दिल्ली-110001
GOVERNMENT OF INDIA
MINISTRY OF AGRICULTURE AND FARMERS' WELFARE
DEPARTMENT OF AGRICULTURAL RESEARCH & EDUCATION
KRISHI BHAWAN, NEW DELHI-110001

संदेश

मुझे यह जानकर अत्यंत हर्ष हो रहा है कि भा.कृ.अनु.प.-खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर द्वारा खरपतवार प्रबंधन, कृषि एवं अन्य समसामयिक विषयों पर हिंदी में एक उत्कृष्ट जानकारी-संपन्न "**तृण संदेश**" पत्रिका का प्रकाशन किया जा रहा है। यह प्रयास न केवल कृषि क्षेत्र में कार्यरत वैज्ञानिकों, किसानों और विद्यार्थियों के लिए उपयोगी सिद्ध होगा, बल्कि हिंदी भाषा में वैज्ञानिक साहित्य को समृद्ध करने की दिशा में भी एक सराहनीय पहल है।

इस पत्रिका के माध्यम से कृषकों को खरपतवार नियंत्रण एवं उन्नत कृषि की नवीनतम तकनीकों, अनुसंधानों और अनुभवों की जानकारी उनकी मातृभाषा में प्राप्त होगी, जिससे उनकी कार्यकुशलता और उत्पादन क्षमता में वृद्धि संभव हो सकेगी।

"**तृण संदेश**" की पूरी संपादकीय टीम को इस महत्वपूर्ण प्रयास के लिए हार्दिक बधाई एवं शुभकामनाएँ।

दिनांक : 16.07.2025

(संजय गर्ग)

Room No. 106, Krishi Bhawan, Dr. Rajendra Prasad Road, New Delhi - 110001
Tel. No. : +91 11 23384450 Fax : +91 11 23387705 Email: secy.icar@nic.in

भाकृअनुप

ICAR

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्
कक्ष क्र.101, कृषि अनुसंधान भवन-II, पूसा, नई दिल्ली-110012, भारत
INDIAN COUNCIL OF AGRICULTURAL RESEARCH
Room No.-101, Krishi Anusandhan Bhawan-II, Pusa, New Delhi-110012, India

डॉ. ए.के. नायक
Dr. A.K. Nayak
FNASc, FNAAS, FISSS, FARRW
उप महानिदेशक (प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन)
Deputy Director General (Natural Resources Management)

संदेश

खरपतवार कृषि क्षेत्र में उत्पादकता, गुणवत्ता और संसाधन उपयोग दक्षता के लिए एक गंभीर चुनौती बने हुए हैं। यह समस्या केवल खेतों तक सीमित नहीं है, बल्कि जल स्रोतों, सड़क किनारों और गैर फसलीय क्षेत्रों में भी देखी जाती है। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का संस्थान, खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर खरपतवार प्रबंधन के क्षेत्र में वैज्ञानिक अनुसंधान, नवाचार और किसानों के लिए व्यवहारिक समाधान प्रस्तुत करने में अग्रणी भूमिका निभा रहा है। निदेशालय द्वारा विकसित एकीकृत खरपतवार प्रबंधन तकनीकों का उद्देश्य कम लागत में अधिकतम उत्पादन सुनिश्चित करना है।

विकसित कृषि की अवधारणा को साकार करने हेतु निदेशालय द्वारा विकसित कम लागत वाली, टिकाऊ एवं उत्पादकता बढ़ाने वाली खरपतवार प्रबंधन तकनीकों को किसानों तक पहुँचाना एक महत्त्वपूर्ण पहलू है। इस दिशा में निदेशालय की भूमिका नीतिगत एवं शोध स्तर से लेकर किसानों तक प्रसार कार्यक्रम अत्यंत सराहनीय है। निदेशालय द्वारा हिंदी में प्रकाशित वार्षिक पत्रिका **"तृण संदेश"** वैज्ञानिकों, शोधार्थियों और किसानों के बीच संवाद का सेतु बन चुकी है। यह पत्रिका न केवल तकनीकी जानकारी के प्रसार में सहायक है, बल्कि हिंदी भाषा में वैज्ञानिक लेखन को भी प्रोत्साहित कर रही है।

मुझे प्रसन्नता है कि **"तृण संदेश"** का 20वां अंक देशभर के वैज्ञानिकों एवं विषय वस्तु विशेषज्ञों के अनुभवों, अनुसंधान निष्कर्षों तथा किसान-हितैषी दृष्टिकोणों को प्रभावशाली रूप में प्रस्तुत कर रहा है।

मैं इस सार्थक प्रयास के लिए निदेशालय की सम्पूर्ण टीम को बधाई और पत्रिका के सफल प्रकाशन की शुभकामनाएँ प्रेषित करता हूँ।

दिनांक: 24.07.2025

अमरेश

(अमरेश कुमार नायक)

भाकृअनुप

ICAR

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्
कृषि भवन, डॉ. राजेन्द्र प्रसाद मार्ग, नई दिल्ली-110001
INDIAN COUNCIL OF AGRICULTURAL RESEARCH
Krishi Bhawan, Dr. Rajendra Prasad Road, New Delhi-110001

सुपर्णा दासगुप्ता
Suparna Dasgupta
निदेशक (राजभाषा)
Director (Official Language)

संदेश

यह अत्यंत प्रसन्नता का विषय है कि भा.कृ.अनु.प.-खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर द्वारा खरपतवार प्रबंधन एवं इससे सम्बंधित विभिन्न पहलुओं पर आधारित लेखों का संकलन कर राजभाषा पत्रिका **"तृण संदेश"** का प्रकाशन किया जा रहा है। हिंदी भाषा की समृद्ध परंपरा और तकनीकी ज्ञान को समर्पित यह पत्रिका अपनी सरल भाषा में खरपतवार प्रबंधन एवं उन्नत कृषि से सम्बंधित जानकारियों को कृषकों, विद्यार्थियों एवं जन-मानस तक पहुंचकर उन्हें लाभान्वित करेगी।

आशा है कि यह पत्रिका खरपतवार प्रबंधन के साथ ही उन्नत कृषि, समकालीन सामाजिक, सांस्कृतिक, साहित्यक और नव-विचारों का एक सफल संकलन साबित होगी।

इस अवसर पर मैं निदेशालय की समस्त टीम को बधाई देती हूँ तथा हिंदी की सेवा में एक प्रेरणादायक संकलन के रूप में **"तृण संदेश"** पत्रिका के सफल प्रकाशन की कामना करती हूँ।

दासगुप्ता

(सुपर्णा दासगुप्ता)

दिनांक : 25.07.2025

भाकृअनुप
ICAR

निदेशक की कलम से...

वर्तमान समय की कृषि व्यवस्था निरंतर प्रगति और नवाचार के पथ पर आगे बढ़ रही है। उत्पादन क्षमता बढ़ाने के साथ-साथ अब कृषि वैज्ञानिक, नीति-निर्माता और किसान-तीनों ही जलवायु परिवर्तन, प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण और समावेशी विकास जैसे विषयों को प्राथमिकता दे रहे हैं। इन्हीं में एक महत्वपूर्ण पक्ष है- खरपतवार प्रबंधन, जो आज की टिकाऊ और लाभकारी कृषि का अभिन्न हिस्सा बन चुका है। खरपतवार, फसलों से पोषक तत्व, जल और प्रकाश की प्रतियोगिता कर न केवल उपज को प्रभावित करते हैं, बल्कि उत्पादन लागत, श्रमिक आवश्यकता और पर्यावरणीय संतुलन पर भी प्रतिकूल प्रभाव डालते हैं। अच्छी बात यह है कि अब देश में खरपतवार प्रबंधन को लेकर जागरूकता और तकनीकी समाधान तेजी से विकसित हो रहे हैं।

इस दिशा में भा.कृ.अनु.प.-खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर बीते कई वर्षो से समन्वित अनुसंधान, प्रौद्योगिकी विकास, प्रसार एवं प्रशिक्षण के माध्यम से उल्लेखनीय योगदान दे रहा है। निदेशालय द्वारा जलवायु अनुकूल खरपतवार प्रबंधन, फसलवार एकीकृत प्रबंधन तकनीकियाँ, जुताई रहित खेती में खरपतवार प्रबंधन, जैविक विधियाँ और ड्रोन आधारित छिड़काव आदि पर केंद्रित तकनीकों का विकास किया गया है, जो अब किसानों के खेतों तक पहुँच रही हैं।

'विकसित कृषि संकल्प यात्रा', 'प्राकृतिक खेती', और 'डिजिटल कृषि' जैसे राष्ट्रीय कार्यक्रमों के अंतर्गत, खरपतवार प्रबंधन की उन्नत तकनीकों को ग्राम स्तर तक पहुँचाने के लिए संस्थान पूरी सक्रियता से कार्य कर रहा है। वैज्ञानिकों द्वारा किए गए अनेक अनुसंधान कार्य केवल शोध-पत्रों तक ही सीमित नहीं है, बल्कि उन्हें सरल भाषा, क्षेत्रीय परिप्रेक्ष्य और प्रशिक्षण कार्यक्रमों के माध्यम से किसानों तक प्रभावी रूप से पहुँचाया जा रहा है।

इसी उद्देश्य से निदेशालय द्वारा प्रकाशित हिंदी वार्षिक पत्रिका **"तृण संदेश"** अब अपने 20वें अंक में प्रवेश कर रही है। यह केवल एक वैज्ञानिक पत्रिका नहीं, बल्कि एक संवाद सेतु है-जो वैज्ञानिकों, छात्रों, प्रसार कर्मियों, एवं किसानों को एक साझा मंच प्रदान करती है। इसमें शोध लेखों के साथ-साथ किसानों के अनुभव एवं क्षेत्रीय रिपोर्टो के आधार पर विकसित व्यवहारिक तकनीकों को समाहित किया गया है। मुझे यह जानकर अत्यंत प्रसन्नता है कि **"तृण संदेश"** के इस विशेष अंक में देशभर से प्राप्त गुणवत्ता पूर्ण लेखों के माध्यम से खरपतवार प्रबंधन एवं अन्य उन्नत कृषि तकनीको की समकालीन दिशा और दशा का समावेश किया गया है। यह अंक निश्चित ही पाठकों के लिए प्रेरक, ज्ञानवर्धक और व्यावहारिक रूप से उपयोगी सिद्ध होगा।

मैं इस पत्रिका से जुड़े सभी लेखकों, संपादकीय मंडल एवं सहयोगियो को हार्दिक बधाई देता हूँ, जिनके निष्ठापूर्ण कार्य एवं समर्पण से यह अंक प्रकाशित हो सका है।

सजग किसान, सशक्त कृषि-हमारा संकल्प।

जय जवान, जय किसान, जय अनुसंधान!

जय हिन्द !

दिनांक: 30 जुलाई, 2025

जे.एस. मिश्र
निदेशक

संपादकीय...

भारत बहुभाषी राष्ट्र है जहाँ भौगोलिक, सांस्कृतिक एवं भाषाएँ विविधताएँ एक साथ पाई जाती हैं। हिंदी इस विविधता के बीच संवाद का सेतु बनकर हमारी एकता को अधिक दृढ़ बनाती है। हिंदी में लिखा साहित्य समाज में जागरूकता और सृजनात्मक सोच को जन्म देता है और इसकी समृद्ध परंपरा हमें गर्व से जोड़ती है। यही कारण है कि हमें हिंदी के प्रयोग को प्रोत्साहित करने और इसके प्रसार को निरंतर बढ़ावा देने की आवश्यकता है। पिछले कुछ वर्षों में विज्ञान व तकनीक के क्षेत्र में हमारे देश ने अभूतपूर्व प्रगति की है। संचार के हर माध्यम- दूरदर्शन, रेडियो, मोबाइल, इंटरनेट एवं अन्य सोशल मीडिया प्लेटफार्म के प्रभाव से हमारी कृषि प्रणाली में भी स्पष्ट विकास दिख रहा है।

नवीनतम शोधों की जानकारी किसानों और आम लोगों तक सहज हिंदी में पहुँचाना निदेशालय का सदैव सर्वोच्च लक्ष्य रहा है। इसी उद्देश्य की प्राप्ति के लिए हमारा निदेशालय निरन्तर कार्यरत है ताकि कृषि से जुड़ी वैज्ञानिक उपलब्धियाँ और अनुसंधान अपनी मातृभाषा में किसानों तक सरलता से पहुँचे। निदेशालय समय-समय पर डिजिटल माध्यमों एवं संदेश सेवाओं के जरिए किसानों को ताज़ा कृषि-समाचार, उपयुक्त तकनीक, और विशेष रूप से खरपतवार प्रबंधन से संबंधित वैज्ञानिक जानकारी उपलब्ध कराता रहा है।

निदेशालय द्वारा प्रकाशित **"तृण संदेश"** पत्रिका का प्रकाशन न केवल एक सराहनीय कदम है, बल्कि यह आधुनिक कृषि वैज्ञानिक तरीकों की पहुँच को व्यापक बनाता है। फसल उत्पादन में खरपतवारों की समस्या विशेष चिंता का विषय है। निदेशालय ने इस दिशा में अनेक शोध-प्रयास किए और सफल तकनीकें विकसित की हैं। इन सभी राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय-स्तरीय तकनीकों को हिन्दी माध्यम में किसानों तक पहुँचाने का हमारा प्रयास रहा है। हिन्दी इसलिए महत्वपूर्ण है कि देश के कोने-कोने में बोली जाने वाली अनेक बोलियों का यह सेतु है, जो ज्ञान और अभिव्यक्ति को सहजता से जोड़ती है।

"तृण संदेश" पत्रिका के बीसवें अंक में खरपतवार प्रबंधन पर आधारित नवीनतम शोधों के साथ-साथ कृत्रिम बुद्धिमत्ता, संरक्षित खेती, और सामान्य खेती से सम्बन्धित कई अन्य उपयोगी विषयों को भी सम्मिलित किया गया है। हिंदी भाषा के उन्नयन के प्रति हमारी प्रतिबद्धता इस पत्रिका को और भी अधिक सार्थक बनाती है। हमें विश्वास है कि यहाँ प्रकाशित शोध लेख, अनुभव साझा करने वाले लेख, कविताएँ, कहानियाँ कृषि-क्षेत्र से जुड़े पाठकों के लिए हितकारी सिद्ध होंगे।

हम इस पत्रिका के सफल संकलन एवं प्रकाशन में मार्गदर्शन और सहयोग प्रदान करने के लिए निदेशालय के निदेशक महोदय को हार्दिक धन्यवाद प्रकट करते हैं। साथ ही, उन सभी वैज्ञानिकों, लेखकों, कवियों और कहानीकारों के प्रति आभार व्यक्त करते हैं, जिन्होंने अपने शोध, निष्कर्ष, उन्नत तकनीक, विचार और अनुभव को इस पत्रिका के माध्यम से हमारे साथ साझा किए। राजभाषा समिति एवं अन्य सभी सहयोगियों के प्रति भी हम धन्यवाद ज्ञापित करते है क्योंकि उनके प्रयासों के बिना यह "बीसवाँ संस्करण" संभव न हो पाता।

आशा है कि हम सबके यह सामूहिक प्रयास आपको उपयोगी लगेंगे। आपकी प्रतिक्रिया और सुझावों की हमें प्रतीक्षा रहेगी।

संपादक मण्डल

|| सरस्वती वंदना ||

वर दे, वीणावादिनी वर दे!
प्रिय स्वतंत्र-रव अमृत मंत्र नव
भारत में भर दे!
वीणावादिनी वर दे!

काट अंध-उर के बंधन स्तर
बहा जननि, ज्योतिर्मय निर्झर,
कलुष-भेद-तम हर, प्रकाश भर,
जगमग जग कर दे!
वर दे, वीणावादिनी वर दे!

नव गति, नव लय, ताल-छंद नव,
नवल कंठ, नव जलद्-मंद्र रव,
नव नभ के विहग वृंद को,
नव पर, नव स्वर दे!
वर दे, वीणवादिनी वर दे!

वर दे, वीणावादिनी वर दे!
प्रिय स्वतंत्र-रव अमृत मंत्र नव
भारत में भर दे!
वीणावादिनी वर दे!

ॐ सरस्वती मया दृष्ट्वा, वीणा पुस्तक धारणीम्।
हंस वाहिनी समायुक्ता, मां विद्या दान करोतु मे ॐ॥

Oam Saraswati Mayaa Drishtwa, Veena Pustak Dharnim ।
Hans Vahini Samayuktaa Maa Vidya Daan Karotu Me Oam ॥

अनुक्रमणिका

क्र.	विवरण	पृष्ठ संख्या
	खण्ड – क	
1.	**समेकित खरपतवार प्रबंधन में खरपतवार बीज बैंक का महत्व** जे.एस. मिश्र	1–4
2.	**तिलहनी फसलों में उन्नत खरपतवार प्रबंधन** पी.के सिंह	5–10
3.	**सीधी बुवाई विधि से धान की खेती में जंगली धान (वीडी राइस) का खतरा, समस्याएँ और प्रबंधन** जीतेन्द्र कुमार सोनी एवं सुरभि होता	11–14
4.	**संरक्षण कृषि प्रणाली के अंतर्गत फसल विविधीकरण द्वारा खरपतवार प्रबंधन** बादल वर्मा, वी.के. चौधरी एवं अमित कुमार झा	15–20
5.	**खरपतवार प्रबंधन में आवरण फसलों की भूमिका** संस्कृति राय, वी.के. चौधरी एवं बादल वर्मा	21–26
6.	**खरपतवार नियंत्रण की विधियां एवं प्रयोग के दौरान सावधानियां** निधी प्रजापति, प्रमोद कुमार गुप्ता एवं योगिता घरडे	27–34
7.	**कृत्रिम बुद्धिमत्ता का उपयोग : खरपतवार प्रबंधन का बदलता स्वरूप** योगिता घरडे, पी.के. सिंह, प्रमोद कुमार गुप्ता एवं सुरभि होता	35–38
8.	**चारे वाली फसलों में गैर रासायनिक खरपतवार प्रबंधन** पिजुश काँती मुखर्जी एवं मोनिका रघुवंशी	39–47
9.	**खरपतवार और कृषि एक जटिल सम्बन्ध** आर.के. सिंह एवं सौरव चौरसिया	48–50
10.	**हाइपरस्पेक्ट्रल सिग्नेचर के माध्यम से खरपतवार प्रजातियों की पहचान** सुरभि होता एवं योगिता घरडे	51–52
11.	**गेहूँ में बेहतर खरपतवार नियंत्रण के लिए नाइट्रोजन युक्त उर्वरकों और शाकनाशियों का उपयोग** शिवानी ठाकुर, जगजीत पंथी, वी.के. चौधरी, बादल वर्मा एवं संस्कृति राय	53–58
12.	**कृषि पारिस्थितिकी तंत्र की गतिशीलता में खरपतवारों की भूमिका: मित्र या शत्रु?** सुधानंद प्रसाद लाल एवं रोमा कुमारी	59–62
13.	**गेहूँ में खरपतवार प्रबंधन के उपयुक्त उपाय** रिंकू कुमार, अरुण कुमार, दिनेश साह, संजय कुमार एवं अश्वनी कुमार मौर्य	63–67
14.	**खरपतवार से प्राप्त जैव-कीटनाशकों का उपयोग करके पर्यावरण-अनुकूल कीट नियंत्रण** दीक्षा एम. जी. एवं अर्चना अनोखे	68–69
15.	***साल्विनिया मोलेस्टा* का जैविक नियंत्रण : एक सफल कहानी** अर्चना अनोखे, सुशील कुमार एवं मोगली रम्मैया	70–71
16.	**खरपतवार : औषधीय गुण एवं लाभ** प्रतिभा सिंह, राकेश समौरिया, श्वेता गुप्ता, सीमा शर्मा एवं अंजू कँवर खंगारोत	72–74

क्र.	विवरण	पृष्ठ संख्या
17.	**राजस्थान के अर्ध शुष्क क्षेत्र में मूंगफली की फसल में खरपतवार प्रबंधन** श्वेता गुप्ता, भीम पारीक एवं प्रतिभा सिंह	75-78
18.	**गैर कृषि क्षेत्रों के खरपतवार एवं उनका प्रबंधन** निशा महान, लोकनाथ सिंह, विनोद कुमार पांडेय एवं वरुण कुमार सिंह	79-82
19.	**कृषक प्रशिक्षण और जागरूकता : खरपतवार प्रबंधन में सुधार की कुंजी** मुस्कान पोरवाल, बादल वर्मा एवं अमित कुमार झा	83-87
20.	**जलवायु परिवर्तन का फसलों और खरपतवारों के पारस्परिक संबंध व शाकनाशी प्रभावशीलता पर प्रभाव-एक समग्र दृष्टिकोण** चंद्रकांत सिंह, श्रीकांत डी., दीपक वी. पवार एवं जे.एस. मिश्र	88-92
21.	**उत्तराखंड के पर्वतीय क्षेत्रों में प्राकृतिक खेती के अंतर्गत फूलगोभी में खरपतवार नियंत्रण** कोहिमा नूपुर, के.एस. पंत, ए.के. जोशी, सविता, तेजस अशोक भोसल, एस.सी. पंत, पारस सिंह एवं हेमंत	93-95
22.	**अमरावती में अमरबेल की समस्या : अरहर का एक घातक परजीवी खरपतवार** एम.एस. रघुवंशी, अभय शिराले, सिरिशा अडामाला, रितिक बिस्वास, आर के नैताम, एच.एल. खरबीकर, पी.सी. मोहाराना, हर्ष ठाकुर, प्रफुल्ल महल्ले, ज्योति डाश, जी.आर. डोंगरे एवं एन.जी. पाटिल	96-97
23.	**एकीकृत खरपतवार प्रबंधन** पवन कुमार पारा, पंकज शुक्ला एवं किरण शर्मा	98-102

खण्ड -ख

1.	**ज्वार फसल उत्पादन की उन्नत सस्य तकनीकी** निशा सप्रे	103-108
2.	**सफेद मूसली की खेती** कनिका उपाध्याय	109-110
3.	**गाजर उत्पादन की उन्नत तकनीक** मुकेश कुमार मीणा, अर्चना अनोखे एवं जी.आर. डोंगरे	111-113
4.	**नैनोकण-संवर्धित नील हरित शैवाल: कवक रोग प्रबंधन के लिए नवोन्मेष दृष्टिकोण** हिमांशु महावर, शोभित थापा, राधा प्रसन्ना एवं रोबिन गोगोई	114-115
5.	**उत्तर भारत के उच्च पर्वतीय क्षेत्रों में शिमला मिर्च की खेती : एक लाभकारी विकल्प** सविता, ए.के. जोशी, कोहिमा नूपुर, हेमन्त एवं अनिल सिंह	116-118
6.	**पर्वतीय राज्यों में अदरक की खेती : 20 सूत्रीय प्रबंधन** ए.के. जोशी, सविता, पारस सिंह, एस.सी. पंत, कोहिमा नूपुर, राजेन्द्र भट्ट एवं हेमंत	119-120
7.	**मक्का की फसल में फॉल आर्मी वर्म का प्रबन्धन** अखिलेश कुमार, स्मिता सिंह, राजेश सिंह, ब्रजेश कुमार तिवारी एवं ए.के. पाण्डेय	121-123

क्र.	विवरण	पृष्ठ संख्या
8.	**कृषि में कीटों को नियंत्रित करने में जैव ध्वनिकी (बायोएकॉस्टिक्स) की भूमिका** अंचल शर्मा एवं आई.बी. मौर्य	124–125
9.	**ड्रैगन फ्रूट की आधुनिक खेती हेतु पौध संरक्षण के उपाय** द्वारका एवं निशा चढ़ार	126–129
10.	**शिमला मिर्च की फसल में समन्वित नाशीजीव प्रबंधन** गजेन्द्र सिंह एवं अर्चना अनोखे	130–132
11.	**फॉल आर्मीवर्म एवं आभासी आर्मीवर्म का जीवन–चक्र एवं समेकित कीट प्रबंधन** राजेश मीणा, मोगली रम्मैया, अर्चना अनोखे, मुकेश कुमार मीणा एवं मुकेश कुमार ढिल्लों	133–134
12.	**हरी खाद से भूमि की उर्वरता में सुधार** उत्कर्ष सिंह, आनंद सिंह, अभिनन्दन सिंह, विश्वविजय रघुवंशी एवं मंयक मणि त्रिपाठी	135
13.	**बागवानी फसलों में सिंचाई प्रबंधन** मनु त्यागी, पुनीत शर्मा एवं विक्रमजीत सिंह	136–138
14.	**जलवायु सहनशील कृषि प्रणाली की ओर : स्थिरता की दिशा में एक मार्ग** ए. जमालुद्दीन, पी.के. सिंह, संतोष कुशवाहा, श्रीकांत दसारी एवं हिमांशु महावर	139–143
15.	**किसानों को समर्पित केन्द्र एवं मध्य प्रदेश राज्य की योजनाएँ** मोनिका रघुवंशी, पिजुश काँती मुखर्जी, अर्चना अनोखे एवं दीपक पवार	144–150
	खण्ड – ग	
1.	**मेरा नाम खरपतवार** जी.आर. डोंगरे	151
2.	**जीवन–पथ** सुनीता केशर	152
3.	**वक्त और इंसान** दीक्षा श्रीवास्तव	153
4.	**नवग्रह वाटिका : पौधों के धार्मिक महत्व** मोनिका धगट एवं संदीप धगट	154–156
5.	**जलवायु परिवर्तन और ग्रामीण समुदायों पर इसका प्रभाव** कीर्ति खत्री	157–158
6.	**पर्यावरण मानव जीवन के व्यवहार में बदलाव के लिए आवश्यक** अखिलेश कुमार	159–160
7.	**कृषिरत महिलाओं के परिप्रेक्ष्य में संयुक्त राष्ट्र सतत् विकास लक्ष्य के प्राप्ति की रूपरेखा** दीक्षा श्रीवास्तव, सुधानंद प्रसाद लाल, कुमारी सुष्मिता एवं मंजू देवी	161–163
8.	**वर्ष 2024-25 में भाकृअनुप - खरपतवार अनुसंधान निदेशालय की राजभाषा कार्यान्वयन समिति की गतिविधियाँ एवं किये गये प्रयासों का संक्षिप्त विवरण**	164–166

तृण ज्ञानेन सर्वजन हिताय्

खण्ड-क

समेकित खरपतवार प्रबंधन में खरपतवार बीज बैंक का महत्व

जे.एस. मिश्र
भाकृअनुप-खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)

खरपतवार बीजबैंक जमीन में निश्चित क्षेत्र में खरपतवारों के बीजों की कुल संख्या को दर्शाता है। उसमें जमीन के अन्दर पहले से मौजूद पुराने बीज तथा हाल ही में खरपतवारों के पौधों से गिरे नए बीजों के अलावा खरपतवारों के कंद, प्रकंद, बल्ब एवं अन्य वानस्पतिक संरचनाएं भी शामिल होती हैं जिनके द्वारा पूरे वर्ष भर खरपतवार फैलते रहते हैं। भूमि से खरपतवारों का अंकुरण उसमें मौजूद इन्हीं बीजों या वानस्पतिक संरचनाओं द्वारा होता है। किसी भी फसल में खरपतवारों की संख्या उस जमीन में मौजूद खरपतवारों के बीजों पर निर्भर करती है। इसलिए एक सफल खरपतवार प्रबंधन के लिए जमीन में मौजूद खरपतवारों के बीजों का उचित प्रबंधन अति आवश्यक है। यह अनुमान लगाया गया है कि किसी दिए गए वर्ष में उत्पादित खरपतवारों के बीजों में से केवल 1-9% ही अंकुर के रूप में विकसित होते हैं, शेष बीज सुसुप्तावस्था में बने रहते हैं और बाद के वर्षों में अंकुरित होते रहते हैं।

खरपतवारों में बीज उत्पादन की क्षमता

खरपतवार अत्यधिक मात्रा में बीज पैदा करते हैं तथा काफी वर्षों तक भूमि में जीवित रहते हैं। अनुकूल परिस्थिति में ये अंकुरित होकर फसल को नुकसान पहुचाते हैं।

तालिका-1 विभिन्न खरपतवारों में बीज पैदा करने की क्षमता।

खरपतवार	एक पौधे में बीज पैदा करने की क्षमता
गाजरघास	5000-25000
बथुआ	30,000-1,76,000
गेंहू का मामा	1000-1200
अमरबेल	>1,00,000
सत्यानाशी	30,000 तक
जंगली जई	20-1070
अकरी	31-225
चौलाई	66,000-1,41,000
स्ट्राइगा (अगिया)	50,000-75,000
पथरचटा	10,000-52,000
ओरोबैंकी	40,000-1,20,000
संवा	40,000-50,000

खरपतवार बीज बैंक की गतिशीलता

मृदा के अंदर खरपतवार बीजबैंक की गतिशीलता खरपतवारों की मृदा में उपस्थिति, उनके व्यवहार एवं मृदा के अंदर रहने का समय आदि को संदर्भित करती है। यह मृदा में बीजों के होने, प्रसुप्ति और मर जाने की क्रिया को दर्शाती है। इसके अंतर्गत खरपतवारों के बीज मिट्टी में कैसे जमा होते हैं, कैसे अंकुरित होते हैं, तथा कीटों, व्याधियों, पक्षियों और अन्य पर्यावरणीय कारणों के कारण बीज के अंकुरण और मृत्युदर का अध्ययन शामिल है।

बीजबैंक के प्रकार: विभिन्न खरपतवारों के बीजों में अलग-अलग समय तक भूमि में जीवित रहने की क्षमता होती है। इसके आधार पर इन्हे तीन भागों में विभाजित किया गया है।

क्षणिक बीजबैंक: ऐसे खरपतवारों की प्रजातियाँ जिनके बीज खेत में एक वर्ष से कम समय की अवधि तक जीवित रहते है।

अल्प कालिक स्थायित्व: ऐसे खरपतवारों की प्रजातियाँ जिनके बीज खेत में 1-5 वर्ष की अवधि तक जीवित रहते है।

दीर्घ कालिक स्थायित्व: ऐसे खरपतवारों की प्रजातियाँ जिनके बीज खेत में 5 वर्ष से अधिक की अवधि तक जीवित रहते है।

बीजबैंक का आकार: किसी निश्चित मात्रा की मिट्टी में खरपतवारों के बीजों की संख्या एवं उनके प्रजातियों की संरचना को बीजबैंक का आकार कहा जाता है।

खरपतवारों के बीजों की गतिशीलता

खरपतवार बीजबैंक की गतिशीलता को प्रभावित करने वाले कारक

बीज का स्रोत: पिछली फसल में उपस्थित खरपतवारों के बीज जमीन में गिर कर बीजों की संख्या बढ़ाते हैं। साथ ही साथ फसल के बीजों के साथ मिश्रित होकर, कृषियंत्रों द्वारा, पशुओं, पक्षियों, हवा, पानी आदि द्वारा भी खरपतवारों के बीज खेत में इकठ्ठा होते रहते हैं।

बीज का निराकरण: खरपतवारों के बीजों का अंकुरण एवं सस्य क्रियाओं द्वारा नष्ट करना या पक्षियों, कीड़े-मकोड़ों द्वारा नष्ट होना आदि।

पर्यावरणीय कारक: प्रतिकूल नमी, तापमान, प्रकाश आदि बीजों के अंकुरण को प्रभावित करते हैं।

बीजों की सुसुप्तावस्था: कुछ बीज तब तक अंकुरित नहीं होते जब तक उन्हें अंकुरण के लिए पर्याप्त पर्यावरणीय संकेत नहीं प्राप्त होता, फलस्वरूप वे बीजबैंक में बने रहते हैं।

बीजबैंक प्रबंधन की रणनीतियां: खरपतवार प्रबंधन की रणनीतियों में सबसे महत्वपूर्ण लेकिन अक्सर उपेक्षित रणनीति खेत में मौजूद खरपतवार के बीजों की संख्या को कम करना है, और इस तरह फसल उत्पादन के दौरान संभावित खरपतवार संख्या को सीमित करना है।

शुद्ध एवं प्रमाणित बीज का प्रयोग: ''सुबीजम सुक्षेत्रे जायते, सम्पदायते'' (मनुस्मृति)। इसका तात्पर्य यह है कि यदि अच्छा बीज अच्छी जमीन में बोया जाता है तो संपत्ति में वृद्धि होती है। नए क्षेत्रों में फसल के बीजों के साथ-साथ कुछ खरपतवारों के बीज भी आ जाते हैं जो आने वाले वर्षों में बीज उत्पन्न करके खरपतवारों की संख्या एवं प्रभाव में वृद्धि करते है। जैसे- गेहूं के साथ फेलारिस माइनर, धान के साथ जंगली धान, बरसीम के साथ कासनी के बीज आदि। प्रमाणित बीजों के प्रयोग से खेत में नए खरपतवारों का प्रकोप कम हो पाता है।

ग्रीष्म कालीन जुताई: गर्मी के महीनों (अप्रैल-जून) में खेत की गहरी जुताई करने से कुछ खरपतवारों के बीज अत्यधिक गर्मी के कारण अपनी अंकुरण की क्षमता खो देते हैं। कुछ खरपतवारों जैसे मोथा, दूब घास आदि में प्रकंद एवं तने गर्मी की जुताई से ऊपर आ कर सूख कर मर जाते हैं।

स्टेल सीडबेड: इस विधि में खरीफ फसल की बुवाई के 8-10 दिन पहले हल्की सिंचाई करने से काफी संख्या में खरपतवार ऊग आते हैं। इन खरपतवारों को हलकी जुताई द्वारा नष्ट किया जा सकता है और खेत में बीजबैंक को काफी हद तक कम किया जा सकता है।

शून्य जुताई (जीरो टिलेज): इस तकनीक में विशेष मशीनों जैसे जीरो टिल सीडड्रिल अथवा हैप्पी सीडर की मदद से पूर्व फसल के अवशेष के मौजूदगी में फसल के बीजों की बुवाई की जाती है। फसल अवशेष के कारण खरपतवारों का अंकुरण एवं विकास कम हो जाता है तथा भूमि में नमी संचित रहने से फसलों का विकास अधिक होता है। साथ ही जुताई के खर्च में भी कमी की जा सकती है।

मृदा सूर्यीकरण: इस पद्धति में ग्रीष्मकाल में 4-6 सप्ताह तक पारदर्शी पोलिथीन को मिट्टी की सतह पर बिछा दिया जाता है परिणामस्वरूप मिट्टी का तापक्रम सामान्य से 8-10°C बढ़ जाता है । जिससे अधिकांश वार्षिक खरपतवारों की अंकुरण क्षमता नष्ट हो जाती है।

फसल विविधिकरण: फसल विविधीकरण द्वारा खरपतवार प्रबंधन के लिए दो प्रमुख सिद्धान्तों का पालन किया जाता है।

- विभिन्न फसल प्रबंधन चाहने वाली फसलों के अनुक्रमों का उपयोग करके खरपतवारों के अंकुरण एवं वृद्धि को कम करना।
- फसल विविधीकरण के तरीकों द्वारा पोषक तत्वों, नमी एवं प्रकाश को फसलों के पक्ष में अधिकतम करने के लिए डिजाइन किया जाना। जिससें खरपतवारों को इनकी उपलब्धता कम से कम हो पाये।

ये सिद्धांत किसी भी फसल विविधीकरण विधियों (जैसे फसल चक्र, कवर क्रापिंग और इंटरक्रापिंग) के लिए आधार होना चाहिए। विविधीकरण का उद्देश्य सभी खरपतवारों को पूरी तरह खत्म करना नहीं है बल्कि उन्हें नियंत्रित करके उनके द्वारा फसलों में होने वाले नुकसान को कम करना हैं।

फसल चक्रण

एकल फसल प्रणाली में खरपतवार प्रजातियां प्रबंधन प्रथाओं के अनुकूल हो जाती है और फसल के साथ प्रतिस्पर्धा करके पैदावार में कमी लाती हैं। फसल चक्रण में खरपतवारों को विविध खरपतवार प्रबंधन की विधियों (जैसे जीरो टिलेज, जुताई, विविध शाकनाशी रसायनों का प्रयोग, बुवाई की तिथि, कतारों के बीच की दूरी, उर्वरक एवं सिंचाई की व्यवस्था) के अधीन करके उनकी वृद्धि एवं विकास को रोककर बीज उत्पादन को कम कर दिया जाता है। जिससे उनके प्रबंधन मे आसानी होती है। उदाहरण के लिए धान-आधारित एकल फसल चक्रण (सीधी बुवाई धान-गेहूं-मूंग) को निरन्तर अपनाने से धान मे घास कुल के खरपतवारों जैसे- संवा, *डिजिटेरिया, डाईनेब्रा,* दूब घास एवं मोथा की अधिकता हो जाती है तथा धान के लिये अनुमोदित शाकनाशी रसायनों द्वारा इनका समुचित नियंत्रण न होने से धान की पैदावार में काफी कमी (70-80 प्रतिशत) पायी गई है। परन्तु फसल चक्र मे धान की जगह 1-2 वर्ष मक्का की फसल लगाने से मक्के के लिए अनुशंसित शाकनाशी रसायनों के प्रयोग से घास कुल एवं मोथा के इन खरपतवारों का प्रभावी नियंत्रण किया जा सकता है। तथा 1-2 वर्ष बाद पुनः धान की फसल को अपनाया जा सकता है।

धान-आधारित एकल फसल चक्रण (सीधी बुवाई धान-गेहूं-मूंग) को निरन्तर 12 वर्षों तक अपनाने से धान में घासकुल के खरपतवारों की अधिकता।

लगातार 12 वर्षों तक सीधी बुवाई वाले धान के स्थान पर मक्का की फसल

2-3 वर्षों तक मक्का लगाने के बाद पुनः सीधी बुवाई वाली धान

फसल विविधीकरण से जहां एक ओर फसल अनुसार शाकनाशियों मे बदलाव के कारण खरपतवारों के प्रकार एवं घनत्व मे कमी आती है, वहीं दूसरी ओर फसल प्रबंधन के तरीकों में बदलाव से खरपतवारों के अंकुरण, वृद्धि एवं विकास, एवं उनकी बीज उत्पादन क्षमता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

कवर फसलें : कवर फसलें शीघ्र बढ़ने के साथ-साथ खरपतवारों से प्रकाश, पानी एवं पोषक तत्वों के लिए प्रतिस्पर्धा करके खरपतवारों के विकास को दबाती हैं। फसल की समाप्ति के बाद यह मिट्टी की सतह पर गीली घास की परत बनाती हैं, जो खरपतवारों के बीज के अंकुरण, उद्भव एवं स्थापना को कम कर देती हैं। इसके अतिरिक्त कुछ कवर फसलों मे एलीलोकेमिकल्स के कारण खरपतवारों पर प्रतिकूल प्रभाव देखा गया है।

ढैंचा की कवर क्रॉपिंग

फसल प्रजातियां:- प्रारंभिक अवस्था में तीव्र अंकुरण, उच्च वृद्धि और तेजी से मृदा को ढकने की विशेषता वाली किस्मों के उपयोग से फसल प्रतिस्पर्धी क्षमता में सुधार होता है। जैसे मटर की जे.पी. 885 किस्म, धान की पूर्णा, स्वर्ण श्रेया, वंदना आदि प्रजाति।

यांत्रिक विधि:- खरपतवारों को नियंत्रण करने की यह एक सरल एवं प्रभावी विधि है। फसल की प्रारंभिक अवस्था में बुआई के 15 से 45 दिन के मध्य फसलों को खरपतवारों से मुक्त रखना जरूरी है। सामान्यत: दो निराई-गुड़ाई, पहली 20-25 व दूसरी 45 दिन बाद करने से खरपतवारों का नियंत्रण प्रभावी ढंग से होता है।

शाकनाशी रसायनों का उपयोग:- खरपतवार नियंत्रण में शाकनाशी रसायनों का उपयोग बढ़ता जा रहा है। जो खरपतवार प्रबंधन की दृष्टि से अधिक प्रभावी एवं लाभकारी है। यदि शाकनाशियों का प्रयोग अनुसंशित मात्रा एवं उपयुक्त समय में समेकित विधि में किया जावे तो मिट्टी में पहुंचने वाले खरपतवार के बीजों की संख्या को कम करने में काफी मदद मिलती है।

हार्वेस्ट वीड सीड कंट्रोल:- मिट्टी में पहुंचने वाले खरपतवार के बीजों की संख्या को कम करने की यह एक गैर-रासायनिक विधि है। इसमें फसल कटाई के दौरान खरपतवार के बीजों को इकट्ठा करके नष्ट किया जाता है। इस विधि द्वारा 80 प्रतिशत तक खरपतवारों के बीज को फसल की कटाई के समय खेत से निकल कर अलग किया जा सकता है।

खेत में खरपतवारों के बीजबैंक इनपुट को कम करना बीजबैंक प्रबंधन का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। ध्यान रखें कि खरपतवार प्रबंधन की कोई भी रणनीति खरपतवार बीजबैंक को पूरी तरह से खत्म नहीं करेगी और आपको बीजबैंक के विकसित होने के साथ-साथ अपने बीजबैंक प्रबंधन योजना को समायोजित करने की आवश्यकता हो सकती है। खरपतवार बीजबैंक का प्रबंधन करना चुनौतीपूर्ण है क्योंकि इसमें न केवल बड़ी संख्या में बीज होते हैं, बल्कि कई तरह के बीज भी होते हैं, एक ही खेत में आम तौर पर 20 से 50 अलग-अलग खरपतवार प्रजातियाँ होती हैं। दूसरे शब्दों में कहें तो, उत्पादक को 20 से 50 अलग-अलग पौधों के अस्तित्व की रणनीति से निपटना पड़ सकता है। खरपतवार बीजबैंक का प्रबंधन करने का आदर्श तरीका यह है कि आप अपने क्षेत्र में चार या पाँच सबसे अधिक परेशानी वाले खरपतवारों के इर्द-गिर्द अपनी रणनीति की योजना बनाएँ, फिर समय के साथ खरपतवार वनस्पतियों में होने वाले परिवर्तनों को ट्रैक करें, यह देखते हुए कि मूल लक्षित खरपतवार प्रजातियों के कम होने पर कौन सी नई पौधों की प्रजातियाँ विकसित होती हैं। फिर अपने बीज बैंक प्रबंधन दृष्टिकोण में आवश्यक समायोजन करें।

तिलहनी फसलों में उन्नत खरपतवार प्रबंधन

पी.के. सिंह
भाकृअनुप-खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)

भारत में तिलहनी फसलों का बहुत महत्वपूर्ण स्थान हैं, क्योंकि यह खाद्य तेल के प्रमुख स्त्रोत हैं। देश में तिलहन उत्पादन के दृष्टिकोण से 9 मुख्य तिलहनी फसलें (मूंगफली, सरसों एवं राई, सोयाबीन, अरण्डी, सूरजमुखी, कुसुम, तिल, अलसी तथा रामतिल) उगाई जाती हैं। इनका कुल उत्पादन वर्ष 1950-51 के 5.16 मिलियन टन से बढ़कर वर्ष 2022-23 में लगभग 41.36 मिलियन टन हो चुका हैं। ज्यादातर तिलहन की खेती बारानी क्षेत्रों में की जाती है। वैसे आजकल वैश्विक बाजार में तेलों की आसमान छूती कीमतों के कारण किसानों एवं शासन का रूझान इस ओर काफी बढ़ा है। फलस्वरूप इनकी सफलतापूर्वक खेती सिंचित एवं असिंचित दोनों दशाओं में लगभग सभी प्रकार के सस्य जलवायुवीय क्षेत्रों में की जा रही है। रबी मौसम (सितम्बर से मई) में उगाई जाने वाली प्रमुख तिलहनी फसलों में सरसों एवं राई, सूरजमुखी, कुसुम एवं अलसी प्रमुख हैं, जबकि खरीफ मौसम में मूंगफली, सोयाबीन, तिल, रामतिल एवं अरण्डी की खेती प्रमुख रूप से की जाती है। अच्छी गुणवत्तायुक्त तेल प्राप्त करने हेतु इन फसलों को उगाने के लिए विशेष सावधानी रखना आवश्यक है जैसे- खेत की अच्छी प्रकार तैयारी करना, शुद्ध, अच्छे एवं प्रमाणित बीजों का चयन, उचित उर्वरक, सिंचाई, खरपतवार, कीट तथा रोग नियंत्रण आदि।

उपयुक्त समय

खरपतवार प्रबंधन में समय का सर्वाधिक महत्व है। यदि खरपतवारों की रोकथाम, प्रतिस्पर्धा की क्रान्तिक अवस्था में न की गई तो उससे भरपूर लाभ नहीं मिल पाता है। अतः यह आवश्यक है कि जिन खरपतवारनाशी रसायनों का उपयोग कर रहे हैं, उसका असर छिड़काव के बाद कम से कम 40-50 दिनों तक रहना चाहिए। विभिन्न तिलहनी फसलों की खरपतवारों से प्रतिस्पर्धा की अवधि (क्रान्तिक अवस्था) एवं इनके द्वारा उपज में कमी सारणी-1 में तथा खरपतवारों द्वारा तिलहनी फसलों में पोषक तत्वों का अवशोषण का विवरण सारणी-2 में दिया गया है।

सारणी-1: तिलहनी फसलों की खरपतवारों से प्रतिस्पर्धा की अवधि एवं इनके द्वारा उपज में कमी

क्र.सं.	फसल	क्रान्तिक अवधि (दिन में)	उपज में कमी (प्रतिशत)
1	सरसों एवं राई	15-40	15-45
2	सूरजमुखी	30-45	30-50
3	कुसुम	15-45	30-50
4	अलसी	20-45	20-40
5	मूंगफली	21-56	20-60
6	सोयाबीन	15-45	40-50
7	तिल	15-45	20-35
8	रामतिल	15-45	35-40
9	अरण्डी	30-60	30-35

सारणी-2 : विभिन्न तिलहनी फसलों में खरपतवारो द्वारा पोषक तत्वों का अवशोषण

पोषक तत्वों का अवशोषण (कि.ग्रा/हे.)			
फसल	नत्रजन (N)	फास्फोरस (P_2O_5)	पोटाश (K_2O)
तिल/रामतिल	45	6.9	36
मूंगफली	15-39	5-9	21-24
सूरजमुखी	42	15	45
अरण्डी	45-60	3-9	35-88
कुसुम	15-28	2-5	15-45

राई एवं सरसों	20-22	2-3	10-12
अलसी	30-32	2.3	11-13
सोयाबीन	26-65	3-11	43-102

प्रमुख खरपतवार

तिलहनी फसलों की खेती खरीफ एवं रबी दोनों मौसमों में की जाती है। इस फसलों में उगने वाले खरपतवारों को मुख्यत: तीन श्रेणियों में बांटा जा सकता है।

सारणी 3. विभिन्न तिलहनी फसलों में उगने वाले प्रमुख खरपतवार

क्र.	खरपतवारों की श्रेणी	खरीफ मौसम के खरपतवार	रबी मौसम के खरपतवार
1.	सकरी पत्ती वाले खरपतवार	पत्थरचटा (*ट्रायेन्थमा पोर्टुलाकैस्ट्रम*), कनकवा (*कामेलिना बेगालेनसिस*), महकुआ (*एजीरेटम कोनीज्वाडिस*), वन मकोय (*फाइजेलिस मिनीमा*), सफेद मुर्ग (*सिलोसिया अर्जेन्सिया*) हजारदाना (*फाइलेन्थस निरूरी*)	प्याजी (*एस्फोडिलस टेन्यूफोलियस*), बथुआ (*चिनोपोडिम एल्बम*), कृष्णनील (*एनागालिस आरवेनसिंस*), हिरनखुरी (*कानवोलवुलस आरवेनसिंस*), पोहली (*कार्थेमस आक्सीकैन्था*), सत्यानाशी (*आर्जेमोन मैक्सीकाना*), अंकरी (*विसिया सटाइवा*), जंगलीमटर (*लेथाइरस सेटाईवा*)
2.	चौड़ी पत्ती वाले	संवा (*इकानोक्लोआ कोलोना*), दूब घास (*साइनोंडोन डेक्टीलोन*), कोदों (*इल्यूसिन इंडिका*), बनरा (*सिटैरिया ग्लाऊका*)	गेहूं का मामा (*फैलेरिस माइनर*), जंगली जई (*अवेना लुडाविसियाना*), दूब घास (*साइनोंडोन डेक्टीलोन*)
3.	मोथाकुल परिवार के खरपतवार	मोथा (*साइपेरस रोटन्ड्स, साइपेरस इरिया* आदि)	मोथा (*साइपेरस रोटन्ड्स*)

खरपतवारों की रोकथाम

तिलहनी फसलों के उत्पादन में खरपतवार एक प्रमुख अवरोधक है। खरपतवार तिलहनी फसलों से प्रतिस्पर्धा करके भूमि में निहित नमी एंव पोषक तत्वों के अधिकांश भाग को अवशोषित कर लेते है, फलस्वरूप फसल की विकास गति धीमी पड़ जाती है, जिससे पैदावार कम हो जाती है। उचित समय पर खरपतवारों की रोकथाम से ना केवल तिलहनों की पैदावार एवं गुणवत्ता बढ़ाई जा सकती है, बल्कि तेल की प्रतिशत मात्रा में भी वृद्धि की जा सकती है।

तिलहनी फसलों के खरपतवार प्रबंधन में दो बाते आवश्यक हैं, पहली तो निवारक उपाय जिसमें खरपतवारों को खेत में पहुंचने से रोका जा सकता है तथा दूसरा रोकथाम के विभिन्न उपाय, जिसमें इनके प्रभाव को समय विशेष के लिए कम करके फसलों को सफलतापूर्वक उगाया जाता है। तिलहनी फसलों में खरपतवारों की रोकथाम निम्नलिखित विधियों से की जा सकती है-

1. निवारक विधि :

इस विधि में वे क्रियाएं शामिल हैं जिनके द्वारा खेतों में खरपतवारों के प्रवेश को रोका जा सकता है जैसे- शुद्ध एवं प्रमाणित बीजों का प्रयोग, अच्छी सड़ी गोबर या कम्पोस्ट खाद का प्रयोग, सिंचाई की नालियों की सफाई, खेत की तैयारी और बुवाई में प्रयोग किए जाने वाले यंत्रों का प्रयोग से पूर्व अच्छी तरह से सफाई आदि।

2. सस्य विधि :

- तेज घूप में जुताई करके खेत को सुखाने से खरपतवार के बीज मर जाते हैं और कुछ भाग चिड़ियां व अन्य पक्षी खा जाते हैं।
- फसलचक्र अपनाकर खरपतवारों की कुछ हद तक रोकथाम की जा सकती है। देखा गया है कि एक ही तरह की फसल उगाने से उनमें उगने वाले खरपतवार अधिक हो जाते हैं। अत: ऐसे खेत में विपरीत स्वभाव वाली फसल उगाने से खरपतवार कम होते हैं। उदाहरणत: जिस खेत में *फैलेरिस माइनर* तथा जंगली जई की संख्या अधिक होती है, उसमें गेहूं के स्थान पर सरसों लगाने से लाभ होता है।
- पलवार द्वारा फसल के बीच खाली स्थानों को पुआल या प्लास्टिक की परत से ढकने से खरपतवारों को पर्याप्त प्रकाश तथा वायु नहीं मिलती है। इससे वे मर जाते हैं। इन खाली स्थानों में जल्दी पकने वाली दलहनी फसलों को उगाकर भी खरपतवार कम किये जा सकते हैं।
- बुआई के समय में परिवर्तन करने से भी खरपतवारों की संख्या को कम किया जा सकता है। इसमें फसलें ऐसे समय में बोई जाती हैं कि

वे खरपतवार निकलने से पहले ही खेत को ढक लें या फसल की बुआई सामान्य समय की अपेक्षा थोड़ी देरी से करते हैं।

- सघन बुआई करने से भी खरपतवारों की संख्या कम की जा सकती है।
- प्रतियोगी फसलें उगाने से भी खरपतवारों की संख्या को कम किया जा सकता है। ये फसलें खरपतवारों से जल, प्रकाश, स्थान, पोषक तत्व एवं कार्बन डाइऑक्साइड के लिए प्रभावी तरीके से प्रतियोगिता करती हैं।
- उर्वरकों का प्रयोग कूड़ में पौधों की जड़ के पास करने से खरपतवारों के लिए उक्त उर्वरक की उपलब्धता कम हो जाती है। फसलें इनका प्रयोग अधिक क्षमता से कर लेती हैं।

3. यांत्रिक विधि :

इस विधि द्वारा खरपतवारों का प्रभावी नियंत्रण किया जा सकता है। फसल की प्रारम्भिक अवस्था में बुआई के 15 से 45 दिनों के बीच का समय फसल से खरपतवारों की प्रतियोगिता की दृष्टि से क्रान्तिक समय है। इसके बाद उगने वाले खरपतवारों को फसल अपने ऊपर नहीं निकलने देती है तथा ये नीचे दबकर रह जाते हैं, फलस्वरूप फसल से प्रतियोगिता नहीं कर पाते हैं। इस विधि में खरपतवारों को हाथ से उखाड़कर, कृषि यंत्रों द्वारा या मशीनों द्वारा नष्ट करते हैं। इसके लिए खुरपी, फावड़ा, कुदाल, वीडर, हैंड हो या कल्टीवेटर का प्रयोग किया जाता है। इस विधि में पर्याप्त खरपतवार उगने के बाद ही नियंत्रण होता है। तब तक फसल में कुछ हानि तो हो ही जाती है। कई बार खरपतवार फसल के समान होने के कारण (पहचान में न आने के कारण) खेत में बचे रह जाते हैं।

4. रासायनिक विधि :

शाकनाशी रसायनों के प्रयोग से जहां एक ओर खरपतवारों का प्रभावी नियंत्रण किया जा सकता है वहीं दूसरी ओर लागत कम आती है तथा समय की बचत होती है। शाकनाशी रसायनों के प्रयोग में ध्यान देने योग्य बात यह है कि उनका प्रयोग सही समय पर, उचित मात्रा में ठीक प्रकार से होना चाहिए अन्यथा लाभ की बजाय नुकसान उठाना पड़ सकता है। यह विधि इसलिए भी अधिक प्रभावी एवं महत्वपूर्ण है, क्योंकि इसमें खरपतवारों को जमने से पूर्व भी नष्ट किया जा सकता है। रबी की प्रमुख तिलहनी फसलों में खरपतवार नियंत्रण के लिए संस्तुत खरपतवारनाशी रसायनों के नाम, मात्रा तथा छिड़काव का समय सारणी-4 में दिया गया है।

सारणी 4: विभिन्न तिलहनी फसलों में प्रयोग किए जाने वाले खरपतवारनाशी

क्र. सं.	तिलहनी फसलें	खरपतवारनाशी	मात्रा (कि.ग्रा./हे.)	प्रयोग का समय
01	**सोयाबीन**	पेंडीमिथलिन+इमैजेथापायर	1.00	बुवाई के 0-3 दिन पर
		इमैजेथापायर	0.10	बुवाई के 18-22 दिन पर
		प्रोपाक्युजाफॉप+इमैजेथापायर	0.125	बुवाई के 18-22 दिन पर
		इमैजेथापायर+ इमेजामोक्स	0.0	बुवाई के 18-22 दिन पर
		फोमेसाफेन+क्युजालोफॉप	0.180+0.045	बुवाई के 18-22 दिन पर
		क्लोरीम्यूरॉन+फेनाक्साप्रॉप	0.009+0.08	बुवाई के 18-22 दिन पर
		फोमसाफेन+फ्लूजीफॉप	0.22-0.25	बुवाई के 18-22 दिन पर
02	**मूंगफली**	पेंडीमिथलिन	0.678	बुवाई के 0-3 दिन पर
		इमैजेथापायर	0.10-0.15	बुवाई के 12-14 दिन पर
		फेनाक्साप्रॉप	0.079	बुवाई के 18-22 दिन पर
		क्युजालोफॉप+इमैजेथापायर	0.0328+0.0626	बुवाई के 18-22 दिन पर
		इमैजेथापायर+क्लोरीम्यूरॉन	0.10+0.024	बुवाई के 18-22 दिन पर
		फोमसाफेन+फ्लुजीफॉप	0.22+0.25	बुवाई के 18-22 दिन पर
03	**राई एवं सरसों**	पेंडीमिथालिन	0.678	बुवाई के 0-3 दिन पर
		आक्सीफ्लुरफेन	0.15-0.25	बुवाई के 0-3 दिन पर
		क्युजालोफॉप	0.04-0.05	बुवाई के 18-22 दिन पर
		आइसोप्रोप्युरॉन	1.00	बुवाई के 18-22 दिन पर
04	**तिल/रामतिल**	ब्युटाक्लोर	1.00-1.50	बुवाई के 0-3 दिन पर
		पेंडीमिथालिन (38.7%)	0.678	बुवाई के 0-3 दिन पर
		आइसोप्रोप्युरॉन	1.00-1.50	बुवाई के 18-22 दिन पर

		प्रोपाक्युजाफॉप	0.10	बुवाई के 18-22 दिन पर
		फ्लुजीफॉप	0.25	बुवाई के 18-22 दिन पर
05	**अलसी**	पेंडीमिथालिन (30% EC)	0.75-1.00	बुवाई के 0-3 दिन पर
		ब्युटाक्लोर	1.00-1.50	बुवाई के 0-3 दिन पर
		प्रोपाक्युजाफॉप	0.10	बुवाई के 18-22 दिन पर
06	**सूरजमुखी**	पेंडीमिथालिन (30% EC)	0.75-1.00	बुवाई के 0-3 दिन पर
		क्युजालोफॉप	0.04-0.05	बुवाई के 18-22 दिन पर
07	**कुसुम**	पेंडीमिथालिन (30% EC)	0.75-1.00	बुवाई के 0-3 दिन पर
		पायरोक्सासल्फॉन	0.1175	बुवाई के 0-3 दिन पर
		सलफेन्ट्राजोन	0.105	बुवाई के 0-3 दिन पर
08	**अरण्डी**	पेंडीमिथालिन	1.5-2.0	बुवाई के 0-3 दिन पर
		क्युजालोफॉप- इथाइल	0.05	बुवाई के 18-22 दिन पर
		फेनाक्जाप्रॉप-पी-इथाइल	0.05	बुवाई के 18-22 दिन पर

खरपतवारों के प्रभावी नियंत्रण हेतु संस्तुत रसायन की उचित मात्रा का उचित समय एवं उचित तरीके से प्रयोग करना अति आवश्यक है। खरपतवारनाशियों के संबंध में कुछ निम्नलिखित महत्वपूर्ण बिंदु हैं, जिनका ध्यान रखना आवश्यक है जैसे-

- तरल अवस्था या घुलनशील चूर्ण रसायनों का पहले थोड़े पानी में घोल बनाते हैं। फिर इसे 500 लीटर पानी में मिलाकर एक हैक्टर क्षेत्रफल (10000 वर्ग मीटर) के लिए घोल बनाकर फ्लैटफेन नोजिल युक्त नैपशैक स्प्रेयर की सहायता से छिड़काव (स्प्रे) करते हैं।
- पेण्डिमेथिलीन को बुआई के तुरन्त बाद से लेकर तीन दिन (0-3 दिन) तक, परन्तु फसल के अंकुरण से पहले छिड़काव करें। सावधानी रखें कि छिड़काव की हुई सतह पर कोई सस्य क्रियाएं न करें, क्योंकि यह रसायन मृदा की सतह पर एक पतली फिल्म बना लेता है। अंकुरण से पूर्व पेण्डिमेथिलीन का संस्तुत मात्रा में प्रयोग करने पर गुल्ली डंडा (*फैलरिस माइनर*) तथा कुछ चौड़ी पत्ती के खरपतवार उगने से पहले ही नष्ट हो जाते हैं।
- जिन खेतों में लगातार गेहूं-धान फसलचक्र अपनाया जा रहा है, वहां गुल्ली डंडा (*फैलरिस माइनर*) तथा जंगली जई की समस्या अधिक हो जाती है। ऐसा देखा जा रहा है कि ये खरपतवार पुराने खरपतवारनाशियों के प्रति सहनशील हो रहे हैं। ऐसी स्थिति में कुछ नये संस्तुत रसायनों का प्रयोग प्रति वर्ष बदल-बदल कर करने से इनपर प्रभावी नियंत्रण प्राप्त होता है।

खरपतवार मुक्त विभिन्न दलहनी फसलों का परिदृश्य

खरपतवार मुक्त सोयाबीन

खरपतवार मुक्त मूंगफली

खरपतवार मुक्त सूरजमुखी

खरपतवार मुक्त सरसों

खरपतवार मुक्त अलसी

खरपतवार मुक्त कुसुम

खरपतवार मुक्त अरण्डी

खरपतवार मुक्त तिल

एकीकृत विधि द्वारा खरपतवार प्रबंधन

खरपतवार नियंत्रण हेतु बताई गयी विभिन्न विधियों (यांत्रिक, सस्य, रासायनिक आदि) का उपलब्ध संसाधनों के आधार पर एकीकृत तथा न्याय संगत प्रयोग करके खरपतवारों का प्रभावी नियंत्रण करते हुए फसल की उत्पादकता बढ़ाना ही लक्ष्य होना चाहिए। फसल पारिस्थितिकी, पर्यावरण प्रदूषण तथा सामाजिक एवं आर्थिक कारकों को ध्यान में रखते हुए फसलों में एकीकृत खरपतवार प्रबंधन वर्तमान में महत्वपूर्ण एवं आवश्यक हो गया है। इसके लिए निराई-गुड़ाई, यांत्रिक, सस्य क्रियाओं एवं रासायनिक नियंत्रण विधियों का सुविधानुसार प्रयोग करना चाहिए जिससे खरपतवारों का बेहतर नियंत्रण किया जा सके तथा उत्पादन लागत कम करते हुए भरपूर उपज प्राप्त की जा सकें।

खरपतवारनाशी रसायनों के प्रयोग में सावधानियां

- फसल के अनुरूप ही रसायनों को संस्तुत मात्रा में प्रयोग करें।
- छिड़काव के समय खेत में पर्याप्त नमी होनी चाहिए।
- खेत में बराबर मात्रा में छिड़काव करें, कहीं कम या ज्यादा न हो।
- घोल को स्प्रेयर में भरने से पहले प्रत्येक बार अच्छी तरह मिला लें।
- रसायन का छिड़काव तेज हवा/धूप या खराब मौसम में न करें।
- छिड़काव से पहले तथा बाद में छिड़काव यंत्र को पानी से अच्छी तरह साफ करें।
- इन रसायनों को बच्चों की पहुंच से दूर रखें तथा खाली डिब्बों को नष्ट कर दें।
- छिड़काव के समय खाद्य सामग्रियों का सेवन अथवा धूम्रपान न करें।
- प्रयोग करते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि रसायन शरीर पर न पड़ें। इसके लिए विशेष पोषाक, दस्ताने तथा चश्में इत्यादि का प्रयोग करना चाहिए।
- छिड़काव कार्य समाप्त होने के बाद हाथ मुंह साबुन से अच्छी तरह धो लेना चाहिए तथा अच्छा होगा यदि स्नान भी कर लें।
- जिन खेतों में फसलों की मिलवां खेती की गयी हो, उनमें दोनों फसलों के अनुरूप ही रसायनों का चयन करें।
- एक फसल में एक ही रसायन का प्रयोग प्रत्येक वर्ष न करें, अर्थात उसी फसल के लिए संस्तुत अन्य रसायनों का बदल-बदल कर प्रयोग करने से अच्छे परिणाम मिलते हैं।

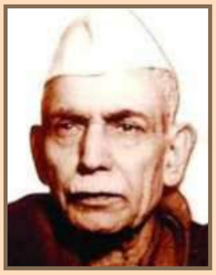

हिंदी हमारे देश और भाषा की प्रभावशाली विरासत है।

-माखनलाल चतुर्वेदी

हर देश को किसी संपर्क भाषा की आवश्यकता होती है और वह भारत में केवल हिंदी ही हो सकती है।

-इंदिरा गांधी

सीधी बुवाई विधि से धान की खेती में जंगली धान (वीडी राइस) का खतरा, समस्याएँ और प्रबंधन

जीतेन्द्र कुमार सोनी एवं सुरभि होता
भाकृअनुप-खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)

सीधी बुवाई विधि (डीएसआर) से धान की खेती विश्वभर में किसानों के बीच तेजी से लोकप्रिय हो रही है, जोकि पारंपरिक रोपाई प्रणाली की तुलना में कई लाभ प्रदान करती है। इन लाभों में कम श्रम लागत, पानी की कम आवश्यकता और फसल स्थिरता है। लेकिन, डीएसआर से अपने लाभों के साथ-साथ खरपतवार प्रबंधन कि भी एक बड़ी चुनौती है। विभिन्न प्रकार के खरपतवारों में, जंगली धान (वीडी राइस) एक प्रमुख समस्या के रूप में सामने आया है, जो फसल उत्पादन और किसानों की आजीविका को खतरे में डाल रहा है। सीधी बुवाई विधि ने जंगली धान के विस्तार के लिए अनुकूलित वातावरण प्रदान किया है।

सीधी बुवाई विधि की धान पर जंगली धान का प्रकोप

जंगली धान क्या है?

जंगली धान (*ओराइज़ा सैटाइवा* फार्मा *स्पॉन्टानिया*) उन जंगली धान प्रजातियों के समूह को कहा जाता है, जो दिखने में धान जैसी होती हैं, लेकिन इनमें अवांछित गुण, जैसे बीजों का जल्दी बिखर जाना, तीव्र वृद्धि और अनुत्पादक दाने शामिल हैं। अधिकांश जंगली धान प्रजातियों के चावल लाल रंग के होते हैं, इसलिए इसे 'लाल धान' भी कहा जाता है। यह धान की खेती के लिए एक गंभीर खतरा है, जो उत्पादन, कटाई, गुणवत्ता और किसानों की आय को प्रभावित करता है। भारत में जंगली धान का संक्रमण पहली बार सन् 1994 में रिपोर्ट हुआ, फिर समय के साथ यह पश्चिम बंगाल, आंध्र प्रदेश, असम, बिहार, कर्नाटक, मध्य प्रदेश, ओडिशा, तमिलनाडु, केरल, मणिपुर और उत्तर प्रदेश जैसे राज्यों तक फैल चुका है। भारत के विभिन्न राज्यों में इसका संक्रमण 5 से 60 प्रतिशत तक पाया गया जिससे धान के खेतों में इसके कारण 30 से 60 प्रतिशत तक उपज में कमी दर्ज की गई है।

जंगली धान का पौधा

जंगली धान को कैसे पहचानें?

जंगली धान को कुछ विशिष्ट लक्षणों से पहचाना जा सकता है। सामान्यत: जंगली धान, धान की तुलना मे ऊँची, पत्तियाँ लंबी और झुकी हुई एवं कल्ले अधिक होते है। इसके तनों का आकार गोल और चिकना होता है, तथा गांठें (नोड्स) कठोर और उभरी हुई होती हैं। कुछ किस्मों में गांठों पर एंथोसाइनिन रंग (बैंगनी रंगत) भी देखने को मिलता है। आमतौर पर इसकी ऊँचाई 130 से 145 सेंटीमीटर तक होती है, जबकि सामान्य धान की ऊँचाई 90 से 110 सेंटीमीटर के बीच रहती है। जंगली धान का पुष्पन काल 8 से 93 दिनों तक रहता है जबकि धान में यह केवल 7 से 22 दिनों तक सीमित रहता है। जल्दी फूल आना और पौधों का अधिक ऊँचा होना, इसके लंबे प्रजनन काल में योगदान करता है। जंगली धान के बीजों की सतह पर महीन बालों (ट्राइकोम्स) की पंक्तियाँ होती हैं और उनकी लंबाई में भी विविधता पाई जाती है। इसके ज्यादातर बीजों पर बखिया (ऑन्स) होते हैं। इसके अलावा, जंगली धान के दाने जल्दी और असमान रूप से पकते हैं, जिससे उसके बीज धान के पकने से पहले ही झड़ जाते है। अलग-अलग जैव प्रकारों में यह दाना झड़ने की दर 20 से 95 प्रतिशत तक पाई जाती है।

जंगली धान के गांठों पर एंथोसाइनिन रंग

सीधी बुवाई विधि की धान पर जंगली धान का प्रकोप

जंगली धान के प्रबंधन की रणनीतियाँ

डीएसआर प्रणाली में जंगली धान के प्रबंधन के लिए किसानों को निवारक उपायों के साथ-साथ सस्य, यांत्रिक, रासायनिक और जैविक तरीकों का एकीकृत माध्यम से प्रबंधन करना चाहिए। नीचे कुछ प्रमुख प्रभावी प्रबंधन रणनीतियाँ दी गई हैं:

निवारक उपाय:

स्वच्छ और प्रमाणित बीजों का उपयोग, स्वच्छ कृषि उपकरणों का प्रयोग और किसानों द्वारा नियमित खेत निरीक्षण से जंगली धान (वीडी राइस) की समस्या से बचा जा सकता है। किसानों को संक्रमित खेतों से प्राप्त बीजों के दोबारा उपयोग करने से बचना चाहिए, क्योंकि इनमें जंगली धान के बीजों की मौजूदगी ज्यादा बढ़ जाती हैं।

सस्य उपाय:

रोगिंग: जंगली धान के पौधों को प्रारंभिक अवस्था में ही हाथों से निकालना (रोगिंग) एक महत्वपूर्ण सस्य विधि है। इस विधि मे खेत का नियमित निरीक्षण की जरूरत होती जिसमे श्रम लागत भी लगती है, लेकिन यह जंगली धान के फैलाव को रोकने के लिए अत्यंत आवश्यक है।

स्टेल सीडबेड तकनीक:

इस तकनीक में फसल बोनी से पूर्व, खेत तैयार कर सिंचाई की जाती है जिसमे जंगली धान के बीजों के साथ-साथ अन्य खरपतवार के बीज भी अंकुरित हो जाते है। इसके बाद उगे हुए पौधों को गैर-चयनात्मक शाकनाशी के द्वारा या यांत्रिक विधियों के द्वारा नष्ट कर दिया जाता है। यह विधि मिट्टी में मौजूद जंगली धान एवं अन्य खरपतवार के बीज भंडार को कम करने में मदद करती है।

मृदा सौरीकरण:

यह एक जल-तापीय प्रक्रिया है जिसमें ग्रीष्म ऋतु के दौरान नम मृदा को 30-80 माइक्रॉन मोटाई वाली यूवी-स्थिरित पारदर्शी पॉलीथीन शीट से समान रूप से 40-45 दिनों तक ढका जाता है। इससे 90 प्रतिशत से अधिक जंगली धान पर नियंत्रण पाया जा सकता है। यह तकनीक विशेष रूप से धान की नर्सरी के लिए उपयोगी है, ताकि जंगली धान से मुक्त स्वस्थ पौध तैयार किये जा सकें।

प्रजातियों का चयन:

लंबी, तीव्र प्रारंभिक वृद्धि एवं तेजी से पत्तियों की छतरी बनाने वाली धान की किस्में, जंगली धान के साथ अधिक प्रतिस्पर्धी होती हैं। कम अवधि वाली किस्मों का चयन भी एक अच्छा विकल्प हो सकता है। जंगली धान रहित संक्रमित खेत पर बैंगनी रंग की पत्तियों वाली धान की किस्मों के प्रयोग कर प्रारंभिक अवस्था में जंगली धान को पहचानने में मदद मिलती हैं, जिससे समय से निराई की जा सकती है।

जल-बुवाई:

धान के बीजों के अंकुरण के लिए ऑक्सीजन, नमी और उपयुक्त तापमान की आवश्यकता होती है। इनमें से किसी एक की कमी से अंकुरण कम हो सकता है। जल-बुवाई तकनीक में, अंकुरित बीजों को छिटकाव विधि से समतल व सपाट खेत पर बोया जाता है जहाँ साफ स्थिर पानी हो ताकि जंगली धान की आबादी को घटाया जा सके।

पंक्ति में बुआई :

पंक्ति में धान की बुआई से जंगली धान के पौधों की पहचान और उन्हें निकालना आसान हो जाता है क्योंकि पंक्तियों के बीच अंतर-कृषि कार्य करना सरल होता है।

जलभराव:

प्रत्यक्ष बुवाई वाली धान प्रणाली में जंगली धान और अन्य खरपतवारों के प्रबंधन के लिए उपयुक्त समय, अवधि और जलभराव की गहराई अत्यंत महत्वपूर्ण होती है। ऐसी धान की किस्मों का चयन जो अनवायवी मृदा स्थितियों में अंकुरित हो सकें, वे फसल के अंकुरण के दौरान जंगली धान के अंकुरण और वृद्धि को बाधित करती है। लंबे समय तक जलभराव की स्थिति में कई जंगली धान के बीज सड़ जाते हैं, जिससे इनकी वृद्धि रुक जाती है।

फसल चक्र:

अगर एक ही तरह की प्रबंधन प्रणाली के साथ लगातार धान की खेती की जाए, तो जंगली धान फसल प्रणाली में हावी हो सकता है। विभिन्न प्रबंधन वाली वैकल्पिक फसलों की खेती करने से जंगली धान के जीवन चक्र को बाधित किया जा सकता है और उसका प्रभाव कम किया जा सकता है।

यांत्रिक विधियाँ

परिशुद्ध भूमि तैयारी:

समुचित समतलीकरण और खेत की तैयारी से जंगली धान के संक्रमण को कम किया जा सकता है। अच्छी तरह से तैयार किए गए खेतों में असमान या नीचले हिस्सों में जंगली धान के बीजों के स्थापित होने की संभावना कम हो जाती है।

अंत:कृषि में यांत्रिक विधि द्वारा खरपतवार नियंत्रण:

पंक्तियों में बोई गई फसलों में यांत्रिक विधि द्वारा खरपतवार नियंत्रण संभव है। कोनो वीडर और अन्य यांत्रिक उपकरणों (ट्रैक्टर-चालित या बैल-चालित) या मैनुअल उपकरणों से पंक्तियों के बीच की घास हटाई जा सकती है। लाइन से बुवाई करने पर बीज की मात्रा भी कम लगती है, जिससे खेती के बीज की लागत कम हो जाती है।

शाकनाशियों का उपयोग

अंकुरण पूर्व उपयोग:

अंकुरण पूर्व शाकनाशियों का प्रयोग जंगली धान के अंकुरण को रोकने में मदद करता है। हालाँकि, उपयुक्त शाकनाशी जो धान को नुकसान पहुँचाये बिना जंगली धान को नियंत्रित करे, का चयन कठिन होता है। आमतौर पर पेंडिमिथालिन और बुटाक्लोर जैसे शाकनाशियों का प्रयोग अंकुरण पूर्व किया जाता है, लेकिन इनकी प्रभावशीलता स्थानीय परिस्थितियों पर निर्भर करती है।

अंकुरण पश्चात् उपयोगः

जंगली धान के अंकुरण के बाद उसके नियंत्रण के लिए अंकुरण पश्चात् शाकनाशियों का प्रयोग किया जा सकता है। लेकिन जंगली धान और खेती की जाने वाली धान के बीच अनुवांशिक और भौतिक समानता के कारण चयनात्मक शाकनाशियों का उपयोग कठिन हो जाता है। कुछ मामलों में, शाकनाशी सहिष्णु धान की किस्मों का प्रयोग किया जाता है, जिनमें ऐसे विशिष्ट शाकनाशी का उपयोग किया जा सकता है जो जंगली धान को नष्ट करें लेकिन फसल को नुकसान न पहुँचाए। जंगली धान जो धान से अपेक्षाकृत लम्बी होती है, उस पर सीधे विक या वाइपर एप्लिकेटरों के द्वारा पर्ण-छिड़काव कर सिस्टमिक शाकनाशी जैसे ग्लायफोसेट (20 प्रतिशत) या साइक्लोक्सीडिम (5 प्रतिशत) से नियंत्रित किया जा सकता है। ये एप्लिकेटर स्वयं-चालित मशीनों पर या ट्रैक्टर के आगे लगाए जा सकते हैं।

अनुवांशिक रूप से परिवर्तित या शाकनाशी-सहिष्णु किस्में:

शाकनाशी-सहिष्णु धान की किस्मों (जैसे कि इमिडाजोलिनोन या ग्लाईफोसेट के प्रति सहिष्णु किस्में) का विकास, जंगली धान के प्रबंधन के लिए समाधान प्रदान करता है। इन किस्मों से किसानों को विशेष शाकनाशियों का उपयोग कर जंगली धान को नष्ट करने मे सहायक होगी जो धान की फसल को भी कोई हानि पहुँचाएगा। हालांकि, इन किस्मों का उपयोग नियामक स्वीकृति के बाद ही किसानों द्वारा किया जा सकता है। क्लियरफील्ड तकनीक जो ए.एल.एस. जीन को लक्षित करके आई.एम.आई. शाकनाशियों के सीधे छिड़काव की अनुमति देती है, जिसमे बिना फसल को नुकसान पहुँचाए, जंगली धान के साथ-साथ अन्य खरपतवारों को भी नियंत्रित करती है। हाल ही में, आई.ए.आर.आई., नई दिल्ली ने ''रॉबी-नो-वीड'' बासमती धान की किस्में जिसमे पूसा बासमती 1979 और पूसा बासमती 1985 विकसित की जो इमेजेथापायर के प्रति सहिष्णु हैं। वहीं, राष्ट्रीय धान अनुसंधान संस्थान, कटक ने गैर-बासमती धान की किस्म सी.आर. धान 807 विकसित की है, जो कि इमेजेथापायर के प्रति सहिष्णु है। साथ ही, सवाना सीड्स प्राइवेट लिमिटेड द्वारा फुलपेज तकनीक के माध्यम से उन्नत शाकनाशी-सहिष्णुता को धान में प्रस्तुत किया है, जो सीधी बुवाई विधि से धान में व्यापक खरपतवार नियंत्रण की सुविधा देती है।

एकीकृत जंगली धान प्रबंधनः

इस प्रबंधन तकनीक मे भूमि की तैयारी, प्रमाणित बीजों का उपयोग, यांत्रिक बीज बुवाई, अंकुरण-पूर्व शाकनाशियों का प्रयोग, जल प्रबंधन, बैंगनी धान के बाद शाकनाशी-सहिष्णु धान का वैकल्पिक क्रम में उपयोग, और जंगली धान के पौधों को समय से निकालना शामिल है। साथ ही, फसल कटाई मे साफ उपकरणों का उपयोग भी शामिल है। फसल चक्र, विशेष रूप से धान के साथ मक्का या सोयाबीन जैसी उपजाऊ फसलों को बारी-बारी से बोने से, जंगली धान के जीवन चक्र को तोड़ने और उसकी वृद्धि को नियंत्रित करने का प्रभावी तरीका हो सकता है।

निष्कर्ष

जंगली धान, सीधी बुवाई वाली धान की स्थिरता के लिए एक गंभीर खतरा है। यह धान के साथ प्रतिस्पर्धा कर उसको कमजोर कर देती है, जिसमे एक तरफ वो अपना बीज बैंक बढ़ाता जाता है, एवं धान की कटाई में भी दुविधा उत्पन्न करता है। अतः इसके प्रबंधन के लिए एक बहुआयामी दृष्टिकोण की आवश्यक है। जिसमे सस्य उपायों जैसे कि प्रमाणित बीजों का उपयोग और ''रोगिंग'' (अवांछित पौधों को हाथ से हटाना), फसल चक्रण, यांत्रिक, रासायनिक और जैविक नियंत्रण उपायों को साथ मिलाकर, एकीकृत खरपतवार प्रबंधन रणनीति के द्वारा इस समस्या पर काबू पाया जा सकता है। जिससे जंगली धान के प्रभाव को न्यूनतम कर, डीएसआर की उत्पादकता और लाभप्रदता बनाए रख सकते हैं।

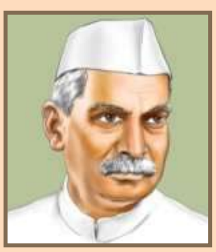

कोई देश विदेशी भाषा के द्वारा न तो उन्नति कर सकता है और न ही राष्ट्रीय भावना की अभिव्यक्ति।

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद

संरक्षण कृषि प्रणाली के अंतर्गत फसल विविधीकरण द्वारा खरपतवार प्रबंधन

बादल वर्मा[1], वी.के. चौधरी[1] एवं अमित कुमार झा[2]

[1]भाकृअनुप-खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)

[2]जवाहर लाल नेहरु कृषि विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

प्रस्तावना

भारत जैसे कृषि प्रधान देश में खेती न केवल अर्थव्यवस्था की रीढ़ है, बल्कि करोड़ों लोगों की आजीविका का प्रमुख साधन भी है। समय के साथ परंपरागत कृषि पद्धतियों में परिवर्तन हुआ है और अधिक उत्पादन के उद्देश्य से रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों का अत्यधिक उपयोग किया गया है। इसका परिणाम यह हुआ कि एक ओर जहां उत्पादन में वृद्धि हुई वहीं दूसरी ओर प्राकृतिक संसाधनों पर दबाव, मिट्टी की उर्वरता में गिरावट और पारिस्थितिक असंतुलन जैसी समस्याएं भी उभरकर सामने आईं। इन्हीं समस्याओं में से एक जटिल और दीर्घकालिक समस्या है 'खरपतवार'। ये अनावश्यक पौधे न केवल फसलों से पोषक तत्वों और जल के लिए प्रतिस्पर्धा करते हैं, बल्कि वे रोगवाहक, कीटों का आश्रय स्थल भी बनते हैं, जिससे फसलों की उत्पादकता में भारी गिरावट आती है। कृषि वैज्ञानिकों के अनुसार, यदि खरपतवारों को समय पर नियंत्रित न किया जाए, तो यह उपज में 30-40% तक की कमी ला सकते हैं।

अब तक खरपतवार नियंत्रण के लिए अधिकांश किसान रासायनिक शाकनाशी पर निर्भर हैं। परंतु इनका अत्यधिक प्रयोग स्वास्थ्य और पर्यावरण दोनों के लिए घातक सिद्ध हो रहा है। इसके विकल्प के रूप में जैविक और पारिस्थितिकीय दृष्टिकोण से सुरक्षित उपायों की खोज की जा रही है। इन्हीं उपायों में से एक है 'फसल विविधीकरण के माध्यम से खरपतवार नियंत्रण', विशेषकर जब इसे संरक्षण कृषि प्रणाली के अंतर्गत लागू किया जाए।

संरक्षण कृषि (कंजरवेशन एग्रीकल्चर) एक स्थायी कृषि पद्धति है, जिसमें मिट्टी की गुणवत्ता, जल संरक्षण और जैव विविधता बनाए रखने पर विशेष ध्यान दिया जाता है। इसके तीन मूल सिद्धांत (न्यूनतम जुताई, जैविक आवरण और विविध फसल चक्र) सीधे तौर पर खरपतवार प्रबंधन से जुड़े हुए हैं। जब फसल विविधीकरण को इस प्रणाली का अंग बनाया जाता है, तो यह खरपतवारों के जीवन चक्र को बाधित करने, उनके प्रतिस्पर्धात्मक लाभ को कम करने और प्राकृतिक शत्रुओं को बढ़ावा देने में सहायक होता है।

आज के समय में जब जलवायु परिवर्तन, कृषि लागत में वृद्धि और प्राकृतिक संसाधनों की सीमितता जैसी समस्याएं सामने हैं, ऐसे में यह आवश्यक हो गया है कि हम खरपतवार नियंत्रण के लिए रसायनों की निर्भरता कम करें और प्राकृतिक एवं प्रणालीगत दृष्टिकोण अपनाएं। फसल विविधीकरण के साथ संरक्षण कृषि प्रणाली इस दिशा में एक ठोस और व्यवहारिक विकल्प प्रदान करती है।

संरक्षण कृषि की अवधारणा

संरक्षण कृषि (कंजरवेशन एग्रीकल्चर) एक ऐसी कृषि पद्धति है जो प्राकृतिक संसाधनों की रक्षा करते हुए टिकाऊ उत्पादन सुनिश्चित करने पर आधारित होती है। इसका उद्देश्य उत्पादन बढ़ाने के साथ-साथ मिट्टी, जल और जैव विविधता का संरक्षण करना होता है, ताकि पर्यावरणीय संतुलन बना रहे और भावी पीढ़ियों के लिए कृषि संभव हो सके (तालिका 1)।

संरक्षण कृषि के तीन मूल सिद्धांतः

संरक्षण कृषि की सफलता तीन आधारभूत सिद्धांतों पर टिकी होती है:-

न्यूनतम या शून्य जुताई - यह सिद्धांत खेत की मिट्टी को यथासंभव बिना पलटे फसल उत्पादन को बढ़ावा देता है। इससे मिट्टी की प्राकृतिक बनावट, सूक्ष्मजीव गतिविधियाँ और कार्बन स्तर बने रहते हैं। साथ ही, जुताई की लागत कम होती है और खरपतवारों का अंकुरण भी सीमित होता है।

सतत जैविक आवरण - मिट्टी को फसल अवशेषों (Crop residues) या आवरण फसलों (Cover crops) से ढंक कर रखा जाता है। इससे नमी का संरक्षण, तापमान नियंत्रण और खरपतवारों के बीजों के अंकुरण में बाधा उत्पन्न होती है।

फसल चक्र एवं विविधता - एक ही खेत में विभिन्न फसलों की अदल-बदल करना न केवल मिट्टी की पोषण आवश्यकताओं को संतुलित करता है, बल्कि खरपतवारों, कीटों और रोगों के जीवन चक्र को भी बाधित करता है।

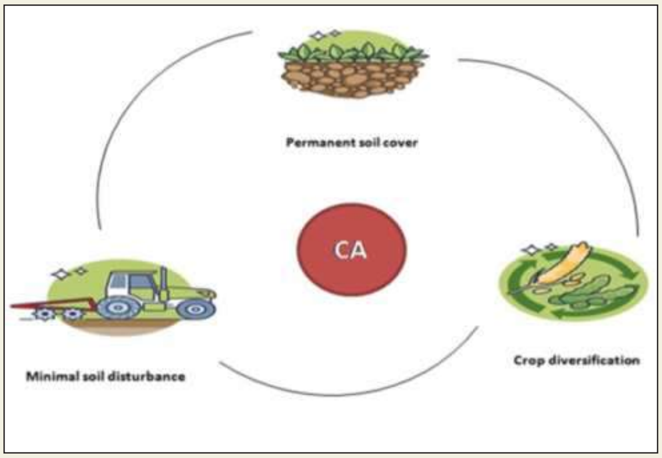

तालिका 1: संरक्षण कृषि की विशेषताएँ

विशेषता	विवरण
प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण	मृदा, जल और जैवविविधता का सतत उपयोग सुनिश्चित करता है।
ऊर्जा की बचत	ट्रेक्टर और जुताई उपकरणों की आवश्यकता कम होती है।
कार्बन अनुक्रमण	मिट्टी में कार्बन संग्रह बढ़ता है, जिससे जलवायु परिवर्तन के प्रभावों में कमी आती है।
जल संरक्षण	जल की सतह पर बहाव और वाष्पन कम होता है।
खरपतवार नियंत्रण में मददगार	आवरण और फसल चक्र से खरपतवारों का प्राकृतिक नियंत्रण संभव होता है।

भारतीय परिप्रेक्ष्य में संरक्षण कृषि की प्रासंगिकता

भारत जैसे देश में, जहाँ कृषि भूमि का अत्यधिक उपयोग, जल की कमी और भूमि क्षरण एक गंभीर समस्या है, वहाँ संरक्षण कृषि एक आवश्यक उपाय बनकर उभरा है। विशेष रूप से पंजाब, हरियाणा, मध्य प्रदेश, बिहार जैसे राज्यों में धान-गेहूं चक्र के स्थान पर संरक्षण आधारित प्रणाली अपनाने से न केवल पर्यावरणीय लाभ मिल रहे हैं, बल्कि उत्पादन में भी स्थिरता आई है **(तालिका 2)**।

तालिका 2: पारंपरिक कृषि बनाम संरक्षण कृषि

मापदंड	पारंपरिक कृषि	संरक्षण कृषि
जुताई	बार-बार जुताई	न्यूनतम या शून्य
अवशेष प्रबंधन	जलाना या हटाना	मिट्टी पर बनाए रखना
फसल चक्र	एक या दो फसलों तक सीमित	विविध फसलें
जल उपयोग	अधिक जल की आवश्यकता	जल संरक्षण में सहायक
खरपतवार नियंत्रण	शाकनाशी पर निर्भर	जैविक एवं प्रगतिशील

संरक्षण कृषि और खरपतवार नियंत्रण का अंतर्संबंध

संरक्षण कृषि के सिद्धांत न केवल मृदा संरचना में सुधार लाते हैं, बल्कि खरपतवारों की वृद्धि पर भी प्रभाव डालते हैं:

- शून्य जुताई के कारण गहराई में दबे खरपतवार बीज सतह पर नहीं आते, जिससे उनका अंकुरण नहीं हो पाता।
- फसल अवशेषों की परत खरपतवार बीजों को प्रकाश नहीं मिलने देती, जिससे उनका विकास अवरुद्ध होता है।
- फसल चक्र में विविधता से खरपतवारों की विशिष्टता समाप्त होती है और उनके जीवन चक्र में बाधा आती है।

फसल विविधीकरण: एक परिचय

फसल विविधीकरण की परिभाषा-

फसल विविधीकरण का अर्थ है 'किसी एक विशिष्ट फसल पर निर्भर रहने की बजाय विभिन्न फसलों का उत्पादन करना'। यह विविधता स्थानिक और कालिक दोनों रूपों में हो सकती है, जैसे एक ही मौसम में मिश्रित फसलों की बुवाई या विभिन्न मौसमों में फसल चक्र का परिवर्तन। फसल विविधीकरण के प्रकार एवं विवरण तालिका 3 में दिया है।

तालिका 3 : फसल विविधीकरण के प्रकार

प्रकार	विवरण
क्षैतिज विविधीकरण	एक ही प्रकार की फसल की कई किस्में उगाना जैसे विभिन्न किस्म की धान।
ऊर्ध्वगामी विविधीकरण	मुख्य फसल के अलावा उससे जुड़ी मूल्यवर्धन गतिविधियां अपनाना जैसे-फल उत्पादन और प्रसंस्करण।
अंतरफसली खेती	दो या दो से अधिक फसलों को एक साथ उगाना जैसे मक्का+मूंग।
फसल चक्र	एक मौसम की फसल के बाद दूसरी भिन्न प्रकृति की फसल लगाना जैसे- धान के बाद चना।

फसल विविधीकरण की आवश्यकता

भारत में पारंपरिक फसल प्रणाली जैसे धान-गेहूं या कपास-मक्का अत्यधिक दोहन और मोनोकल्चर एक ही फसल पर निर्भरता की स्थिति उत्पन्न कर चुकी है। इसके कारण प्रमुख समस्याएं मृदा की उर्वरता में गिरावट, जल की अत्यधिक खपत, खरपतवारों की प्रतिरोधी प्रजातियाँ विकसित होना, रोग और कीट संक्रमण की तीव्रता में वृद्धि पैदा हो गई है। इन समस्याओं से उबरने के लिए फसल विविधीकरण एक व्यावहारिक और पर्यावरण अनुकूल रणनीति है। फसल विविधीकरण के प्रमुख लाभ तालिका 4 में दिए है।

फसल विविधीकरण के प्रमुख उद्देश्य

- **जोखिम प्रबंधन** - विभिन्न फसलों की विविधता से जलवायु या बाजार की अनिश्चितताओं का प्रभाव कम होता है।
- **मृदा स्वास्थ्य सुधार** - दालों और आवरण फसलों के समावेश से मृदा की पोषण स्थिति सुधरती है।
- **खरपतवार नियंत्रण** - भिन्न फसलों का प्रयोग खरपतवारों की आदतों को तोड़ता है।
- **कृषि आय में वृद्धि** - नकदी फसलों और सब्जियों के समावेश से अधिक लाभ मिलता है।
- **पोषण सुरक्षा** - विविध फसलों से पोषण तत्वों की विविधता प्राप्त होती है।

तालिका 4: फसल विविधीकरण के प्रमुख लाभ

लाभ	व्याख्या
मृदा उर्वरता में सुधार	नाइट्रोजन स्थिर करने वाली फसलें जैसे मूंग, उड़द मृदा को समृद्ध बनाती हैं।
जल संरक्षण	कुछ फसलें जैसे बाजरा, अरहर कम जल की आवश्यकता वाली होती हैं।
रोग एवं कीट नियंत्रण	फसल चक्र में परिवर्तन से कीटों का प्रजनन चक्र बाधित होता है।
खरपतवार प्रबंधन	विभिन्न प्रकार की फसलें खरपतवारों की पारिस्थितिकी को प्रभावित करती हैं।
अतिरिक्त आय	सब्जी, फूलों, औषधीय पौधों आदि से अतिरिक्त आय होती है।

फसल विविधीकरण और खरपतवार नियंत्रण का अंतर्संबंध

- खरपतवार किसी विशिष्ट फसल चक्र में अनुकूलन कर लेते हैं। जब किसान फसल चक्र को नियमित रूप से बदलते हैं, तो खरपतवारों की जैविक रणनीतियाँ असफल हो जाती हैं।
- कुछ फसलें जैसे सूरजमुखी, अलसी, मूंग आदि एलिलोकेमिकल्स का उत्सर्जन करती हैं, जो खरपतवार बीजों के अंकुरण को बाधित करते हैं।
- अंतरफसल प्रणाली में घनी छाया व कवर के कारण खरपतवारों को प्रकाश नहीं मिल पाता, जिससे उनका विकास रुकता है।

भारतीय कृषि में विविधीकरण की संभावनाएँ

भारत के विभिन्न ऋषि जलवायु क्षेत्रों में उपयुक्त फसल विविधीकरण मॉडल को अपनाया जा सकता है:

- उत्तर भारत: धान-गेहूं की जगह धान-चना या मक्का-तिलहन
- पूर्वी भारत: धान, मूंग, मक्का, सरसों या सब्जी आधारित प्रणाली
- दक्षिण भारत: कपास, अरहर, मक्का, मूंगफली
- पश्चिम भारत: बाजरा, ग्वार, मूंग, चना, सूरजमुखी, तिल

खरपतवार की समस्या

खरपतवार की परिभाषा- खरपतवार वे अनचाहे पौधे होते हैं जो फसल क्षेत्र में उगकर मुख्य फसलों के साथ जल, पोषक तत्व, प्रकाश और स्थान के लिए प्रतिस्पर्धा करते हैं। ये न केवल फसल उत्पादन को प्रभावित करते हैं, बल्कि कटाई के बाद की प्रक्रिया को भी कठिन बना देते हैं।

खरपतवारों का फसल पर प्रभाव- खरपतवार छोटे से लेकर बड़े स्तर तक कृषि उत्पादन को गंभीर रूप से प्रभावित करते हैं। इसके प्रमुख दुष्प्रभाव निम्नलिखित हैं:-

- **पोषक तत्वों की प्रतिस्पर्धा:** खरपतवार मिट्टी से आवश्यक पोषक तत्वों को अवशोषित कर लेते हैं जिससे फसलों को कम पोषण मिलता है।
- **जल और प्रकाश की प्रतिस्पर्धा:** ये मुख्य फसल से तेज गति से बढ़ते हैं और उसके ऊपर छाया डालते हैं।
- **फसल उपज में कमी:** अनुसंधानों से सिद्ध हुआ है कि यदि प्रारंभिक अवस्था में खरपतवार नियंत्रण नहीं किया गया तो उपज में 30% से लेकर 70% तक की गिरावट आ सकती है।
- **रोग और कीटों का आश्रय:** कई खरपतवार फसलों के रोगजनक और कीटों का आश्रय स्थल होते हैं, जैसे गाजर घास कई वायरस वाहक कीड़ों को आश्रय देता है।
- **गुणवत्ता पर प्रभाव:** फसल के साथ खरपतवार मिश्रित होने से गुणवत्ता घटती है और बाजार मूल्य कम होता है।

- **उत्पादन लागत में वृद्धि:** खरपतवार नियंत्रण के लिए श्रम, यंत्र या रसायनों की आवश्यकता होती है जिससे लागत बढ़ जाती है।

फसल विविधीकरण द्वारा खरपतवार नियंत्रण के सिद्धांत

फसल विविधीकरण केवल पोषण प्रबंधन या उत्पादन वृद्धि की रणनीति नहीं है, बल्कि यह एक प्रभावी और पर्यावरण अनुकूल खरपतवार प्रबंधन उपकरण भी है। जब किसान फसल प्रणाली को एकरूप (मोनोकल्चर) से विविध बनाते हैं, तो वे खरपतवारों के जैविक व पारिस्थितिक संतुलन को बाधित कर देते हैं। यह रसायनों पर निर्भरता घटाने का एक सशक्त विकल्प है।

पारिस्थितिकी आधारित नियंत्रण का आधार

फसल विविधीकरण के माध्यम से खरपतवार नियंत्रण निम्नलिखित पारिस्थितिक सिद्धांतों पर आधारित होता है:-

पारिस्थितिक प्रतिस्पर्धा- जब दो या अधिक फसलें एक ही खेत में उगाई जाती हैं, तो वे खरपतवारों के साथ जल, पोषक तत्व और प्रकाश के लिए तीव्र प्रतिस्पर्धा करती हैं। विशेषकर तेजी से बढ़ने वाली या गहन पर्णावरण (डेंस कैनोपी) वाली फसलें खरपतवारों के लिए प्रतिकूल वातावरण बनाती हैं।

उदाहरण:

1. मक्का + मूंग की अंतरफसल प्रणाली में मूंग की झाड़ीदार बनावट खरपतवारों को प्रकाश प्राप्त नहीं करने देती।
2. सोयाबीन + बाजरा प्रणाली में सोयाबीन की छाया खरपतवारों के अंकुरण को रोकती है।

प्रकाश की बाधा- कुछ फसलें ऐसी होती हैं जिनका प्रारंभिक विकास तेज़ होता है और वे जल्द ही मिट्टी को ढँक लेती हैं। इससे खरपतवारों को प्रकाश नहीं मिलता, जिससे उनका अंकुरण और विकास रुक जाता है। उदाहरण: धान की सीधी बुआई प्रणाली में, यदि फसल अवशेष बचाकर रखे जाएँ, तो वे सूर्यप्रकाश को अवरुद्ध करते हैं और खरपतवार नियंत्रण में सहायक होते हैं।

आवरण फसलों का उपयोग- आवरण फसले जैसे सूरजमुखी, मूँग, जई, बाजरा आदि फसल के अंतराल में उगाई जाती हैं। इनका उद्देश्य खाद्यान्न उत्पादन नहीं बल्कि मिट्टी ढँक कर रखना, जैविक पदार्थ देना और खरपतवारों को दबाना होता है।

लाभ:

1. मिट्टी की सतह पर जीवित फसल या उसके अवशेष खरपतवारों को उगने नहीं देते।
2. जैविक अवशेषों में उपस्थित ऐलीलोपैथिक रसायन (प्राकृतिक यौगिक) खरपतवार बीजों के अंकुरण को रोकते हैं।

एलिलोपैथी- कुछ फसलें ऐसी होती हैं जो अपने जीवन चक्र के दौरान विशेष प्रकार के जैव रसायन उत्सर्जन करती हैं, जो पास-पास उगने वाले खरपतवारों के विकास को रोकने में सहायक होते हैं। उदाहरण: सूरजमुखी की जड़ें ऐसे रसायनों का स्राव करती हैं जो विशेष रूप से बथुआ और गाजर घास जैसे खरपतवारों को प्रभावित करते हैं। इसी प्रकार अलसी अपने बीजों और जड़ों से ऐसे यौगिक उत्सर्जन करती है जो अमरैंथस प्रजातियों के विकास को बाधित करते हैं। इस प्रकार इन फसलों का चयन और समावेशन फसल विविधीकरण की रणनीति में जैविक खरपतवार नियंत्रण के एक उपयोगी साधन के रूप में किया जा सकता है।

फसल चक्र की असंगति- एक ही फसल बार-बार उगाने से कुछ विशिष्ट खरपतवारों को अनुकूल पारिस्थितिकी मिल जाती है। लेकिन जब फसल चक्र को बदला जाता है, तो उन खरपतवारों का जीवन चक्र बाधित होता है।

उदाहरण: धान-गेहूं चक्र में यदि धान की जगह मक्का या दलहन ली जाए तो इकाइनोक्लोआ कोलोना जैसे खरपतवारों का दबाव कम हो जाता है।

अंतरफसली प्रभाव- इंटरक्रॉपिंग में दो या अधिक फसलों को एक साथ उगाया जाता है जो परस्पर पूरक होती हैं। यह भूमि उपयोग दक्षता बढ़ाने के साथ-साथ खरपतवारों के लिए स्थल, प्रकाश व पोषण की उपलब्धता घटा देती है।

उदाहरण: कपास + मूँग, गन्ना + चना, मक्का + अरहर।

बुआई समय व विधि में परिवर्तन- यदि किसी क्षेत्र में खरपतवार का दबाव अधिक है, तो फसल का बुआई समय या विधि बदलकर खरपतवारों के पहले अंकुरण को रोका जा सकता है।

उदाहरण:

1. मक्का या ज्वार की बुवाई खरपतवारों के मुख्य अंकुरण काल के बाद की जाए तो फसल को बढ़त मिलती है।
2. बेडप्लांटिंग विधि से खरपतवारों की सघनता कम होती है।

जैव विविधता और कीटशत्रु संतुलन- फसल विविधीकरण न केवल खरपतवारों पर दबाव बनाता है, बल्कि यह प्राकृतिक शत्रुओं (कीट, परजीवी) को भी आकर्षित करता है जो खरपतवारों की संख्या को सीमित करते हैं। यह जैविक नियंत्रण का परोक्ष समर्थन करता है।

रासायनिक उपयोग की आवश्यकता में कमी- फसल विविधीकरण के कारण खरपतवारों पर पहले से ही पारिस्थितिक दबाव होता है, जिससे शाकनाशी की मात्रा, आवृत्ति और प्रकार को कम किया जा सकता है। इससे पर्यावरणीय व आर्थिक लाभ होते हैं।

आर्थिक और पर्यावरणीय स्थिरता- फसल विविधीकरण से केवल खरपतवार नियंत्रण ही नहीं होता, बल्कि इससे

- उत्पादन लागत घटती है
- जैव विविधता में वृद्धि होती है
- मृदा स्वास्थ्य सुधरता है
- खरपतवारों में प्रतिरोध उत्पन्न होने की संभावना घटती है

संरक्षण कृषि एवं फसल विविधीकरण के संयुक्त प्रभाव

परंपरागत कृषि पद्धतियों में अत्यधिक जुताई एक ही फसल का दोहराव और रासायनिक शाकनाशी पर अत्यधिक निर्भरता के कारण मिट्टी की उर्वरता में गिरावट, जल संकट और खरपतवार प्रतिरोध जैसी समस्याएँ सामने आई हैं। ऐसे में संरक्षण कृषि (Conservation Agriculture) और फसल विविधीकरण (Crop Diversification) ये दोनों मिलकर एक दीर्घकालिक पर्यावरणीय रूप से अनुकूल और खरपतवार मुक्त कृषि प्रणाली के निर्माण में सहायक सिद्ध हो सकते हैं (**तालिका 5**)।

संयुक्त प्रभाव के प्रमुख पहलू

खरपतवार दबाव में दीर्घकालिक कमी

- संरक्षण कृषि के अंतर्गत मृदा को बिना जोते (no-tillage) छोड़ने से खरपतवार बीजों का अंकुरण सीमित होता है।
- फसल विविधीकरण खरपतवारों के जीवन चक्र को बाधित करता है और पारिस्थितिक प्रतिस्पर्धा बढ़ाता है।
- जब दोनों को एक साथ अपनाया जाता है, तो खरपतवारों के लिए प्रतिकूल परिस्थितियाँ बनती हैं।

तालिका 5: संयुक्त प्रभाव के उदाहरण

प्रबंधन रणनीति	खरपतवारों पर प्रभाव	परिणाम
जीरोटिल+धान-गेहूं चक्र	इकाइनोक्लोआ नियंत्रण	उत्पादन स्थिर
बेडप्लांटिंग+चना-मक्का	चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार नियंत्रण	श्रम लागत घटती
अवशेष वापसी+अंतरफसल	गाजरघास पर अवरोध	पर्यावरणीय लाभ

मिट्टी की सतह ढकाव और प्रकाश अवरोध

- फसल अवशेषों की सतह पर मौजूदगी से सूर्य का प्रकाश खरपतवार बीजों तक नहीं पहुँचता, जिससे उनका अंकुरण रुकता है।
- फसल विविधीकरण से अधिकतम समय तक भूमि ढकी रहती है, जिससे भूमि में खरपतवार बीज अंकुरण की संभावना कम होती है।

जल संरक्षण और खरपतवार अंकुरण में कमी

- संरक्षण कृषि में जल का वाष्पन कम होता है, जिससे मिट्टी की ऊपरी परत में नमी का उतार चढ़ाव सीमित रहता है।
- यह नमी स्थायित्व खरपतवार बीजों को अंकुरण के लिए आवश्यक संकेत नहीं देता।

शाकनाशी पर निर्भरता में कमी

- फसल विविधीकरण के साथ संरक्षण कृषि अपनाने से खरपतवार पहले ही दब जाते हैं, जिससे रासायनिक नियंत्रण की आवश्यकता घटती है।
- इससे शाकनाशी अवशेषों की समस्या और खरपतवार प्रतिरोध जैसी स्थितियाँ उत्पन्न नहीं होती।

मिट्टी और जैव विविधता का संरक्षण

- मृदा संरचना, सूक्ष्मजीवों की गतिविधि और जैव विविधता संरक्षित रहती है जिससे नीचे स्तर पर खरपतवारों के साथ प्रतिस्पर्धी जैविक घटक पनपते हैं।
- इससे पारिस्थितिकी तंत्र का संतुलन बना रहता है।

किसानों की आय और जोखिम में संतुलन

- विविध फसलें और कम खरपतवार भार से उत्पादन लागत घटती है तथा उपज की गुणवत्ता बढ़ती है।
- विभिन्न फसलों के कारण मौसम, बाजार या कीट-रोग से होने वाला जोखिम विभाजित होता है।

एकीकृत दृष्टिकोण की ओर कदम- फसल विविधीकरण और संरक्षण कृषि का संयुक्त प्रभाव एक ''एकीकृत खरपतवार प्रबंधन'' का हिस्सा बन सकता है, जिसमें:-

- जैविक, यांत्रिक, पारिस्थितिक और रासायनिक नियंत्रण विधियों को फसल प्रणाली में एकीकृत किया जाए।
- स्थान विशेष के अनुसार फसल चक्र और अवशेष प्रबंधन को योजनाबद्ध किया जाए।
- किसानों को प्रशिक्षण और जागरूकता प्रदान की जाए कि विविधीकरण से पर्यावरणीय और आर्थिक लाभ कैसे प्राप्त किए जा सकते हैं।

चुनौतियाँ- भारत जैसे कृषि प्रधान देश में संरक्षण कृषि और फसल विविधीकरण द्वारा खरपतवार नियंत्रण की रणनीति काफी उपयोगी सिद्ध हो सकती है। हालांकि, इसकी व्यवहार्यता क्षेत्र-विशिष्ट है और कई सामाजिक, तकनीकी एवं नीतिगत चुनौतियाँ इसमें बाधा बन सकती हैं।

मशीनों और तकनीकी संसाधनों की कमी

- संरक्षण कृषि उपाय हेतु जीरो-टिल सीडर्स, हैप्पी सीडर्स, मल्चर्स आदि की आवश्यकता होती है, जो हर किसान की पहुंच में नहीं हैं।
- कस्टम हायरिंग सेंटर की संख्या अभी अपर्याप्त है।

पारंपरिक फसल प्रणाली से बाहर निकलने में झिझक

- कई किसान वर्षों से एक ही फसल चक्र पर निर्भर हैं।
- उन्हें बाजार, उपज मूल्य और बीमा जैसी अनिश्चितताओं को लेकर डर रहता है।

प्रशिक्षण और जागरूकता की कमी

- अधिकतर किसानों को संरक्षण कृषि और फसल विविधीकरण के लाभों की ठोस जानकारी नहीं होती।
- प्रचार-प्रसार संस्थान भी सीमित दायरे में कार्य कर रही हैं।

फसल अवशेष प्रबंधन की व्यवहारिक कठिनाइयाँ

- बिना अवशेष जलाए खेत की तैयारी के लिए पर्याप्त यंत्रों की जरूरत होती है।
- इसके अभाव में किसान अभी भी अवशेष जलाने को मजबूर होते हैं।

तालिका 6: समाधान और सुधार की दिशा

समाधान	विवरण
तकनीकी सुलभता	यंत्रो को किराए पर देने हेतु कस्टम हायरिंग सेंटर बढ़ाना
आर्थिक सहायता	संरक्षित कृषि अपनाने वालों को विशेष सब्सिडी और प्रोत्साहन
प्रशिक्षण कार्यक्रम	कृषि विज्ञान केन्द्र द्वारा व्यापक प्रशिक्षण और प्रदर्शन
नीति में सुधार	न्यूनतम समर्थन मूल्य और बीमा योजनाओं में वैकल्पिक फसलों को भी समाविष्ट करना
बाजार समर्थन	विविध फसलों के लिए न्यूनतम समर्थन मूल्य और सुरक्षित विपणन चैनल

निष्कर्ष

भारत जैसे विविधतापूर्ण कृषि तंत्र वाले देश में संरक्षण कृषि और फसल विविधीकरण खरपतवार प्रबंधन की एक प्रभावी और टिकाऊ रणनीति बन सकती हैं। परंपरागत जुताई और एक ही फसल चक्र से न केवल खरपतवारों की सघनता बढ़ी है, बल्कि मृदा, जल और आय पर भी प्रतिकूल असर पड़ा है। संरक्षण कृषि की तकनीकें जैसे शून्य जुताई, फसल अवशेषों का प्रयोग और सतही ढकाव खरपतवारों को अंकुरण से पहले ही नियंत्रित करती हैं। वहीं, फसल विविधीकरण से प्राकृतिक प्रतिस्पर्धा बढ़ती है और खरपतवारों का जीवन चक्र बाधित होता है। इन दोनों उपायों का संयोजन खरपतवारों के साथ-साथ मृदा स्वास्थ्य, जल संरक्षण और आयवृद्धि में भी सहायक है। यद्यपि व्यवहार्यता में कुछ चुनौतियाँ हैं, लेकिन नीति समर्थन, तकनीकी सहायता और किसानों की भागीदारी से इन्हें दूर किया जा सकता है। इस एकीकृत प्रणाली को अपनाकर भारत स्थायी और पर्यावरण-अनुकूल कृषि की दिशा में मजबूत कदम बढ़ा सकता है।

खरपतवार प्रबंधन में आवरण फसलों की भूमिका

संस्कृति राय, वी.के. चौधरी, शिवानी ठाकुर एवं बादल वर्मा
भाकृअनुप-खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)

आवरण फसलों का परिचय

आवरण फसलें ऐसी वनस्पति प्रजातियाँ होती हैं जिन्हें मुख्य रूप से नकदी फसलों के मध्य अथवा फसल चक्र के दौरान कृषि प्रणाली में विभिन्न पारिस्थितिकीय लाभ प्रदान करने हेतु उगाया जाता है। इनका प्रयोग कभी-कभी नकदी फसलों के साथ मिलाकर भी किया जाता है, जिससे समग्र फसल प्रणाली को बहुआयामी लाभ प्राप्त होते हैं। इन फसलों के माध्यम से मिलने वाले लाभों को पारिस्थितिकीय सेवाएँ न कहकर, कृषि-सहायक प्रभाव या पारिस्थितिकीय योगदान कहना अधिक उपयुक्त होगा। आवरण फसलें कृषि पारिस्थितिकी तंत्र को अनेक प्रकार के लाभ देती हैं। ये मिट्टी को ढककर उसके कटाव को कम करती हैं, उसमें कार्बन का संचयन बढ़ाती हैं, जैविक पदार्थों की मात्रा को बढ़ाती हैं और संपूर्ण मृदा स्वास्थ्य में सुधार लाती हैं। साथ ही, ये नाइट्रोजन और फास्फोरस जैसे पोषक तत्वों को अवशोषित कर लेती हैं, जो अन्यथा वर्षा या सिंचाई के जल के साथ बहकर जलाशयों को प्रदूषित कर सकते हैं। खरपतवार नियंत्रण में इनकी विशेष भूमिका होती है। आवरण फसलें खरपतवारों को प्रकाश, जल, पोषक तत्व और स्थान की प्रतिस्पर्धा में पीछे छोड़कर उनके प्राकृतिक रूप से उगने की संभावना को 80-100% तक घटा सकती हैं। इसके अतिरिक्त, ये फसलें अनेक लाभकारी कीटों और वन्यजीवों के लिए आवास और आहार का भी स्रोत बनती हैं। इस प्रकार, आवरण फसलों का समावेश खरपतवार नियंत्रण के एक प्रभावी, पर्यावरण-अनुकूल और सतत विकल्प के रूप में किया जा सकता है। आवरण फसल को उगाने से खरपतवारों को कई तरीकों से समाप्त किया जा सकता है:-

- प्रत्यक्ष प्रतिस्पर्धा से
- एलिलोपैथी (पौधों की वृद्धि को बाधित करने वाले रसायनों का उत्सर्जन) के द्वारा
- खरपतवार के बीजों के अंकुरण को रोक कर
- मिट्टी के सूक्ष्मजीव समुदायों में परिवर्तन करके कुछ खरपतवारों को नुकसान पहुँचाना

आवरण फसल- मूंग

आवरण फसल- तिल

आवरण फसलों को जोतने, काटने अन्यथा समाप्त करने के बाद, इसके अवशेष निम्नलिखित तरीकों से खरपतवार दमन में वृद्धि कर सकते हैं:-

- अंकुरण में शारीरिक बाधा से (यदि अवशेषों को गीली घास के रूप में सतह पर छोड़ दिया जाए)
- अपघटन के दौरान ऐलिलोपैथिक पदार्थों का उत्सर्जन से
- खरपतवार के पौधों के लिए रोगजनक कवक को बढ़ा कर
- नाइट्रोजन को बांधना (जब कम-नाइट्रोजन अवशेषों को मिट्टी में शामिल किया जाता है)

आवरण फसलों की प्रजातियाँ

आवरण फसलें आम तौर पर फैबेसी, पोएसी , ब्रैसिकेसी पौधों के परिवारों से होती हैं। पौधों की प्रजातियाँ आवरण के उद्देश्य और मिट्टी की स्थिति, उस स्थान/जलवायु पर निर्भर करती हैं जहाँ इसे उगाया जाएगा। आवरण फसलों को विशेषताओं के आधार पर इसे चुना जाता है, जैसे कि स्थापना में आसानी, मिट्टी का आवरण, खरपतवार और कीट को समाप्त करने की क्षमता, रोग के प्रति प्रतिरोध, मुख्य फसल के साथ कम प्रतिस्पर्धा और समाप्ति में आसानी (तालिका 1)।

तालिका 1: आवरण फसलों के रूप में प्रयुक्त पौधों की प्रजातियों के उदाहरण

साधारण नाम	परिवार	वैज्ञानिक नाम	आवरण फसल की विशेषताएँ
मूंग	फैबेसी	*विग्ना रेडिएटा*	1) नाइट्रोजन स्थिरीकरण 2) सूखे की सहनशीलता 3) मिट्टी के स्वास्थ्य में सुधार 4) खरपतवारों के नियंत्रण के लिए मल्चिंग या 'पलवार' विधि अपनाकर
लोबिया	फैबेसी	*विग्ना अनगुड़कुलाटा*	1) मिट्टी का कटाव कम करना 2) लोबिया को पशु चारे के रूप में भी इस्तेमाल किया जा सकता है। 3) खरपतवार नियंत्रण
सन हेम्प (सनई)	फैबेसी	*कोटेलेरिया जुन्सिया*	1) सनई परागणकों और अन्य जीवों को आकर्षित करती है, जिससे जैव विविधता को बढ़ावा मिलता है। 2) खरपतवारों और कीटों को नियंत्रित करना 3) मिट्टी में नाइट्रोजन की मात्रा को बढ़ाना
सेस्बेनिया	फलीदार	*सेस्बेनिया रोस्ट्रेटा*	1) मिट्टी में नाइट्रोजन और कार्बनिक पदार्थ जोड़ने के लिए हरी खाद की फसल के रूप में किया जाता है।
उड़द	फैबेसी	*विग्ना मूंगो*	1) नाइट्रोजन स्थिरीकरण 2) मिट्टी की गुणवत्ता में सुधार
सरसों	ब्रैसीकेसी	*ब्रैसिआ जंसिया*	1) यह एक लोकप्रिय कवर फसल है जो तेजी से बढ़ती है और मिट्टी के कटाव को कम करने में मदद करती है।
अरहर	फैबेसी	*कैजेनस कैजन*	1) मिट्टी की उत्पादकता में सुधार 2) मजबूत स्थापना क्षमता
तिल	पेडलिएसी	*सेसमस इंडिकम*	1) पानी की उपलब्धता में सुधार 2) तिल की तेजी से वृद्धि खरपतवारों को दबाने में मदद करती है।

आवरण फसलों के लाभ

मृदा अपरदन से रोकथाम: सर्दियों की आवरण फसलें सक्रिय रूप से बढ़ती हैं, जो मिट्टी की सतह पर एक अवरोध प्रदान करती हैं और सर्दियों तथा प्रारंभिक वसंत के महीनों में मिट्टी के कटाव को रोकने में सहायक होती हैं, जब अधिकांश नकदी फसलें नहीं उगाई जातीं। अनाज राई, सर्दियों का गेहूं और वार्षिक राई ग्रास जैसी घासों की आवरण फसलें बड़ी और रेशेदार जड़ प्रणाली विकसित करती हैं, जो मिट्टी को एक साथ बांधे रखने में मदद करती है। ऊपरी मिट्टी के क्षरण से न केवल मिट्टी की उत्पादकता घटती है, बल्कि सतही जल स्रोतों में तलछट की मात्रा भी बढ़ जाती है।

पर्यावरण के लिए हानिकारक पोषक तत्वों का अवशोषण और भंडारण:

नाइट्रोजन और फास्फोरस जैसे अतिरिक्त मिट्टी के पोषक तत्व मिट्टी से नष्ट हो सकते हैं और जल संसाधनों को दूषित कर सकते हैं। अधिकांश आवरण फसलों में सर्दियों के वार्षिक खरपतवारों की तुलना में गहरी जड़ें होती हैं, जिससे आवरण फसलें मिट्टी के कार्बनिक पदार्थों से निकलने वाले अवशिष्ट उर्वरक और पोषक तत्वों को अवशोषित कर लेती हैं। आवरण फसलें उन पोषक तत्वों को संग्रहीत कर सकती हैं और संभवत: उन्हें अगली नकदी फसल में पुनर्चक्रित कर सकती हैं। अनाज राई जैसी आवरण फसलें जल निकासी के पानी में मिट्टी के नाइट्रेट के स्तर को लगभग 50% तक कम कर सकती हैं।

मिट्टी में पानी के प्रवेश और प्रतिधारण में सुधार: आवरण फसलें मौसम की परिवर्तनशीलता से उत्पन्न प्रभावों को कम करने में मदद कर सकती हैं, जो मिट्टी में अत्यधिक गीलापन (संतृप्ति) या अत्यधिक सूखे जैसी स्थितियों का कारण बनती हैं। जैसे-जैसे ये फसलें बढ़ती हैं, वे मिट्टी में उपलब्ध जल का उपयोग करती हैं, जिससे अधिक वर्षा के बाद मिट्टी की संतृप्ति को घटाने में सहायता मिलती है। आवरण फसल की जड़ें वर्ष के उस समय के दौरान मिट्टी में गहराई तक फैलती हैं जब भूमि अपेक्षाकृत

नरम होती है, और ऐसी जड़ नालियाँ (रूट चैनल्स) बनाती हैं जिनका उपयोग गर्मी के शुष्क महीनों में नकदी फसलों की जड़ें कर सकती हैं। आवरण फसल की समाप्ति के बाद उसके अवशेष मिट्टी की सतह पर एक परत बनाते हैं। जल निकासी (अपवाह) की गति को धीमा करके जल के प्रवेश (इनफिल्टरेशन) को बढ़ाने में मदद करते हैं। इसके अतिरिक्त, ये अवशेष मिट्टी से जल के वाष्पीकरण की दर को भी कम करते हैं, जिससे सूखे की स्थिति में मिट्टी में नमी की उपलब्धता बनी रहती है।

मिट्टी में कार्बनिक पदार्थ की मात्रा में वृद्धिः समाप्ति के बाद, आवरण फसल की टहनियाँ और जड़ें सड़ जाती हैं, पोषक तत्व छोड़ती हैं और सूक्ष्मजीवी गतिविधि और मिट्टी के समुच्चय निर्माण को उत्तेजित करती हैं। इस प्रक्रिया के दौरान, आवरण फसल के अवशेष का एक हिस्सा कार्बनिक पदार्थ के रूप में मिट्टी में समाहित हो जाता है। मिट्टी के कार्बनिक पदार्थ पौधों को पोषक तत्वों को संग्रहीत और आपूर्ति करके, मिट्टी की उर्वरता में सुधार करके और पौधों को उपलब्ध जल सामग्री को बढ़ाकर फसल की वृद्धि में लाभ पहुँचाते हैं।

पौधों में नाइट्रोजन का योगदानः क्रिमसन क्लोवर और हेयरी वेच जैसी फलीदार आवरण फसलें वातावरण से जैविक रूप से नाइट्रोजन को स्थिर कर सकती हैं और मिट्टी को इस नाइट्रोजन की आपूर्ति कर सकती हैं, जिससे कृत्रिम नाइट्रोजन उर्वरकों की आवश्यकता में कमी आती है। तापमान और नमी की स्थिति के अनुसार, फलीदार आवरण फसलें नाइट्रोजन को पौधों के लिए उपलब्ध रूप में छोड़ने में कई सप्ताह से लेकर महीनों तक का समय ले सकती हैं। दुर्भाग्यवश, कई अध्ययनों में यह पाया गया है कि फलीदार आवरण फसलें पर्याप्त मात्रा में नाइट्रोजन प्रदान करती हैं, जिससे किसानों को मकई की बुवाई में देरी करनी पड़ती है ताकि इन फसलों को पूरी तरह विकसित होने और अधिक नाइट्रोजन स्थिरीकरण का समय मिल सके।

खरपतवार का दमनः

आवरण फसलें अपनी वृद्धि के दौरान खरपतवारों से प्रतिस्पर्धा करके और समाप्ति के बाद खरपतवार दमनकारी मल्च (आवरण परत) उत्पन्न करके खरपतवार बायोमास को कम कर सकती हैं। अनाज राई और वार्षिक राई ग्रास जैसी तेजी से स्थापित होने वाली और उच्च जैव द्रव्यमान (बायोमास) उत्पादन क्षमता वाली आवरण फसलें, वसंत ऋतु में नकदी फसल की रोपाई से पहले सर्दियों के खरपतवारों के बायोमास और घनत्व को 50 से 100% तक घटा सकती हैं। हालांकि, किसानों को वार्षिक राईग्रास के उपयोग में सतर्क रहना चाहिए क्योंकि यह सर्दियों के गेहूं में एक आक्रामक खरपतवार के रूप में कार्य कर सकती है, इसलिए इसे उन खेतों में नहीं लगाया जाना चाहिए, जहाँ गेहूं फसल चक्र का हिस्सा हो। उच्च बायोमास वाली आवरण फसलें खरपतवार नियंत्रण की लंबी अवधि प्रदान कर सकती हैं और ग्लाइफोसेट के छिड़काव के बाद खरपतवार प्रतिरोध के विकास के जोखिम को भी कम कर सकती हैं। इसके विपरीत, क्रिमसन क्लोवर जैसी फलीदार फसलें धीमी वृद्धि, कम बायोमास और तेजी से अपघटन के कारण प्रभावी खरपतवार नियंत्रण प्रदान नहीं कर पातीं। हालांकि, घास और फलियों वाली मिश्रित आवरण फसलें खरपतवार दमन और पोषक तत्वों की आपूर्ति दोनों के लाभों को जोड़कर बाद की नकदी फसल के लिए अत्यधिक उपयोगी सिद्ध हो सकती हैं।

आवरण फसलों का उपयोग करके खरपतवार प्रबंधन

खरपतवार प्रकाश, पोषक तत्वों और पानी के लिए फसलों के साथ प्रतिस्पर्धा करते हैं। पिछले शोध से पता चला है कि मक्का, सोयाबीन और कपास में खरपतवार अत्यधिक प्रतिस्पर्धक हैं। आवरण फसलों को शामिल करने से पंक्ति फसल प्रणालियों में खरपतवार के बीज के अस्तित्व पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ सकता है। घास की प्रजातियाँ, जैसे कि अनाज राई, बायोमास का उत्पादन करने में अत्यधिक प्रभावी हैं जो खरपतवारों को दबा सकती हैं और मिट्टी के संघनन को कम कर सकती हैं। अन्य अध्ययनों में, अन्य पारंपरिक प्रणालियों की तुलना में आवरण फसलों का उपयोग करके खरपतवार नियंत्रण के उच्च स्तर को प्राप्त किया गया था। आवरण फसलें खरपतवार के दबाव को कम करने के तीन मुख्य तरीके हैं:-

1. **आवरण फसल अवशेष:** राई के अवशेषों ने खरपतवारों पर लगभग 6 सप्ताह तक ऐलेलोपैथिक प्रभाव (रासायनिक दमन) दिखाया है। आवरण फसल के अवशेष कपास और मूंगफली की फसलों में खरपतवार बायोमास को काफी हद तक कम करते हैं, जिससे पारंपरिक (बिना आवरण फसल वाले) उत्पादन प्रणालियों की तुलना में शाकनाशी की आवश्यकता भी काफी कम हो जाती है। जब आवरण फसलों को एकीकृत कीट प्रबंधन (IPM) दृष्टिकोण का हिस्सा बनाया जाता है, तो वे खरपतवार नियंत्रण में एक प्रभावी सहायक भूमिका निभा सकती हैं।
2. **जीवित आवरण फसल:** एक सशक्त और तेजी से बढ़ने वाली आवरण फसल स्थान, प्रकाश, नमी और पोषक तत्वों के लिए खरपतवारों के साथ प्रतिस्पर्धा करके खरपतवार के अंकुरण को दबाती है और खरपतवार की वृद्धि को 80% -100% तक कम कर सकती है।
3. **जड़ स्राव और अपघटन से निकलने वाले यौगिक:** कुछ आवरण फसलें अपनी जड़ों के माध्यम से सीधे पौधे की जड़ों के आसपास की मिट्टी में पदार्थ छोड़ सकती हैं। कार्बनिक यौगिक विभिन्न सूक्ष्मजीव वनस्पति, जैसे कि कवक और बैक्टीरिया का समर्थन कर सकते हैं, एक अच्छी तरह से संरचित मिट्टी विकसित करने में सहायता करते हैं, और कुछ खरपतवारों के अंकुरण को रोकते हैं। उदाहरण के लिए *चेनोपोडियम एल्बम* और पॉलीगोनम में खरपतवार कम वृद्धि दिखाते हैं यदि उनकी जड़ें माइकोराइजल कवक द्वारा संक्रमित होती हैं।

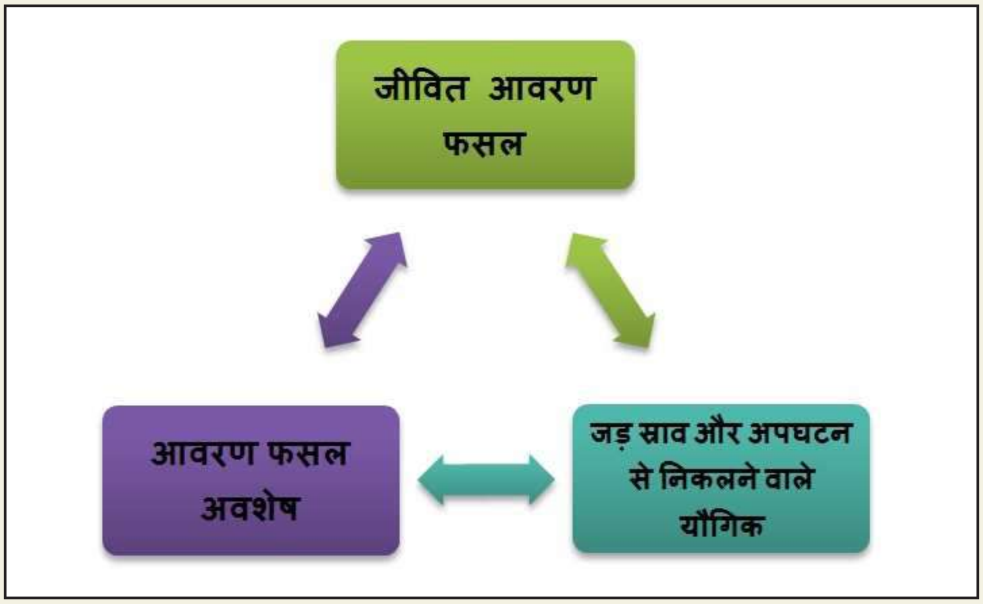

आवरण फसलों का उपयोग करके सफल खरपतवार नियंत्रण के लिए रणनीतियाँ

1. **खरपतवार की खोज और पहचान:** खेतों में मौजूद खरपतवार की प्रजातियों की पहचान करें ताकि उन प्रजातियों पर आवरण फसल की प्रभावशीलता का अनुमान लगाया जा सके। आम तौर पर, वार्षिक खरपतवार पामर ऐमारैंथ, डिजिटेरिया सैंगुइनलिस और एल्यूसिन इंडिका, बारहमासी जीवन चक्र वाले खरपतवारों साइपरस एस्कुलेंटस और सोरघम हेलपेन्स की तुलना में अधिक आसानी से दबा दिए जाते हैं।
2. **आवरण फसल लगाने का सबसे अच्छा समय:** आवरण फसलों की समय पर (जल्दी बुवाई) करने से कुल खरपतवार उद्‌भव में कमी आती है। पतझड़ के मौसम में आवरण फसल की जल्दी बुवाई से पर्याप्त जैव द्रव्यमान (बायोमास) उत्पन्न करने के लिए पर्याप्त समय मिलता है, जो मिट्टी को अच्छी तरह ढकता है और खरपतवारों को दबा देता है। गर्मियों की आवरण फसलों को खरपतवार के अंकुरण से पहले ही बोना सुनिश्चित करें, ताकि वे प्रभावी रूप से खरपतवार नियंत्रण में मदद कर सकें।

3. **उच्च बायोमास उत्पन्न करने वाली आवरण फसल प्रजातियाँ चुनें:** कुछ आवरण फसल प्रजातियाँ काफी अधिक बायोमास उत्पन्न करने के लिए जानी जाती हैं। जौ, जई या अनाज राई जैसे अनाज अच्छे विकल्प हैं। ये आवरण फसलें उच्च स्तर के पौधे बायोमास का उत्पादन करती हैं और मिट्टी की सतह को ढकती हैं और सूर्य के प्रकाश के प्रवेश को कम करती हैं, जो छोटे-बीज वाले खरपतवार के बीजों के अंकुरण के लिए महत्वपूर्ण है।

4. **विविध आवरण फसल मिश्रण का उपयोग करें:** आवरण फसलों को मिश्रण में या एकल प्रजाति के रूप में लगाया जा सकता है। उदाहरण के लिए, अनाज राई आवरण फसल के साथ फलीदार आवरण फसल लगाने से मिट्टी में नाइट्रोजन बढ़ेगा और अनाज राई की वृद्धि और उत्पादन में सुधार होगा।

5. **मौसम और अपने लक्ष्यों के आधार पर आवरण फसल चुनना:** किसी दिए गए मौसम के लिए सबसे अच्छी उम्मीदवार आवरण फसल चुनें। उदाहरण के लिए, शुरुआती गर्मियों के दौरान ज्वार या बाजरा (गर्म मौसम की आवरण फसल प्रजातियाँ) लगाने से पतझड़ के खरपतवारों के उभरने को कम करने में मदद मिल सकती है। इस समय के दौरान आवरण फसलों का उपयोग चराई के लिए भी किया जा सकता है, इसलिए आवरण फसल प्रजातियों का चुनाव आपके लक्ष्यों पर भी निर्भर करता है।

6. **आवरण फसल समाप्ति और एलिलोपैथी:** आवरण फसलों (जैसे, अनाज राई या ब्रासिका), को समाप्त करने के बाद, उनके विघटित अवशेषों से निकलने वाले एलोपैथिक रसायन एक पूर्व-उद्भव शाकनाशी की तरह कार्य कर सकते हैं, जो खरपतवार के बीजों को अंकुरित होने से रोकते हैं। आवरण फसलों द्वारा उत्पादित एलोकेमिकल्स खरपतवार के बीजों के अंकुरण पर महत्वपूर्ण प्रभाव डाल सकते हैं। उदाहरण के लिएए रेपसीड, सरसों और मूली जैसी ब्रासिका प्रजातियाँ ग्लूकोसाइनोलेट्स नामक कई रासायनिक यौगिक उत्पन्न करती हैं। अपघटन प्रक्रिया के दौरान, ये यौगिक आइसोथियोसाइनेट्स नामक शक्तिशाली एलोकेमिकल पदार्थों में टूट जाते हैं, जो खरपतवार के अंकुरण को कम कर सकते हैं।

7. **बीज दर और रोपण की विधि:** आवरण फ़सलों को आम तौर पर दो तरीकों से लगाया जाता है, स्प्रेड और ड्रिल। ड्रिल का इस्तेमाल आम तौर पर फसलों की संकरी पंक्ति (7.5 इंच) में रोपण के लिए किया जाता है, जैसे कि छोटे अनाज। ड्रिल से लगाए गए आवरण फसलों के परिणामस्वरूप स्प्रेड विधि की तुलना में अधिक समान पौध आबादी होगी। यह रोपण विधि मिट्टी से बेहतर बीज संपर्क सुनिश्चित करती है और प्रति एकड़ बहुत कम बीज का उपयोग करती है। फसल अवशेषों पर आवरण फ़सलों को स्प्रेड करने से अक्सर कम अंकुरण और असमान वृद्धि हो सकती है। बीज दर बढ़ाने से प्रत्याशित असमान या खराब आवरण फ़सल आबादी की भरपाई करने में मदद मिल सकती है। देर से रोपण करते समय बीज दर बढ़ाना महत्वपूर्ण है। आवरण फसल के बीजों का हवाई प्रसारण ज़मीनी उपकरणों की तुलना में कम समय में अधिक क्षेत्र को कवर करने की क्षमता प्रदान करता है। जब फसल की कटाई देर से होगी, तो आवरण फसल के बीजों का हवाई प्रसारण समय पर रोपण में मदद करेगा। हालाँकि, अगर किसान के पास ड्रिल तक पहुँच है, तो ड्रिल से लगाई गई आवरण फसलें स्प्रेड विधि की तुलना में अधिक समान पौध आबादी का परिणाम देंगी। कुछ मुख्य फसलों (जैसे, कपास, सोयाबीन, मक्का) की कटाई से पहले बीज बोना (और उसके बाद आवरण फसल का अंकुरण और विकास) किया जा सकता है। इससे ठंडे तापमान या नमी की कमी की स्थिति शुरू होने से पहले एक अच्छी आवरण फसल तैयार हो जाएगी।

8. **मिट्टी की स्थिति:** रोपण से पहले, मिट्टी में पर्याप्त नमी होनी चाहिए । एक मिट्टी की सतह जो अवशेषों की एक परत या ढीली और खुरदरी सतह से ढकी हुई है, हवाई प्रसारण और बीज अंकुरण के लिए बेहतर काम करती है।

9. **आवरण फसल की वृद्धि और प्रदर्शन की निगरानी करना :** आवरण फसल सभी प्रकार के खरपतवारों को नष्ट कर सकती है और शाकनाशियों की आवश्यकता को पूरा कर सकती है। आवरण फसलें खरपतवारों की आबादी को एक संख्या तक कम कर देती हैं, जिससे बाद में खरपतवारनाशकों के साथ निगरानी और नियंत्रण बहुत आसान और किफायती हो जाता है । समय के साथ अपने खेतों की निगरानी करके, आप खेत के एकीकृत खरपतवार प्रबंधन कार्यक्रम में एक उपकरण के रूप में आवरण फसलों के प्रदर्शन का मूल्यांकन कर सकते हैं।

आवरण फसल रोपण और समाप्ति का समय

आवरण फसलों को सामान्यत: पतझड़, प्रारंभिक या देर से सर्दियों, या गर्मियों में बोया जाता है, जो वार्षिक फसल प्रणालियों में आवरण फसल की समाप्ति के बाद बोई जाने वाली नकदी फसल के प्रकार पर निर्भर करता है। बागों और अंगूर के बागों में, आवरण फसलों को सामान्यत: पतझड़ या प्रारंभिक सर्दियों में बोया जाता है। आवरण फसलों को आम तौर पर वार्षिक फसल प्रणालियों में नकदी फसल के रोपण से पहले या बाग की फसलों या अंगूर की बेलों के निष्क्रियता के बाद, सक्रिय विकास को पुनः आरंभ करने से पहले समाप्त कर दिया जाता है, क्योंकि उनकी समाप्ति की तारीख नकदी फसलों के अंकुरण को नकारात्मक रूप से प्रभावित कर सकती है, और इसके परिणामस्वरूप फसल की उपज में कमी हो सकती है। आवरण फसल का रोपण समय, लंबी अवधि तक बढ़ने वाले मौसम के कारण, आवरण फसल द्वारा बायोमास संचय की दर और मात्रा पर प्रत्यक्ष प्रभाव डाल सकता है, विशेष रूप से फलियों के मामले में नाइट्रोजन की मात्रा और खरपतवार दमन की क्षमता पर। आवरण फसल की समाप्ति के लिए सबसे सामान्य विधियों में शाकनाशी का प्रयोग, जुताई/ समावेशन, रोलिंग/क्रिलम्पग, जलाना, घास काटना और प्राकृतिक विंटरकिल शामिल हैं। सामान्यत:, व्यापक स्पेक्ट्रम

पोस्ट-इमर्जेंस शाकनाशी जैसे- ग्लाइफोसेट, पैराक्वाट, ग्लूफोसिनेट, 2,4-डी आदि का उपयोग आवरण फसलों की समाप्ति के लिए किया जाता है, जो आवरण फसल के प्रकार पर निर्भर करता है। उदाहरण के लिए, ग्लाइफोसेट राई और गेहूं की आवरण फसलों को समाप्त करने में प्रभावी था, लेकिन फलियों को समाप्त करने में उतना प्रभावी नहीं था। ग्लूफोसिनेट ने फलीदार आवरण फसलों को नियंत्रित किया, जबकि शाकनाशी का उपयोग आवरण फसल समाप्ति का एक सीधा तरीका है। हालांकि, पर्यावरणीय चिंताएँ और शाकनाशी प्रतिरोध के मुद्दे हैं, जो इस पद्धति पर पूरी तरह निर्भरता को कम आकर्षक बनाते हैं।

निष्कर्ष

आवरण फसलें खरपतवार प्रबंधन में एक प्रभावी और पर्यावरणीय रूप से सुरक्षित रणनीति प्रदान करती हैं। ये न केवल खरपतवारों के अंकुरण और वृद्धि को दबाती हैं, बल्कि मिट्टी की गुणवत्ता में भी सुधार करती हैं। आवरण फसलों के विभिन्न प्रकार, जैसे कि मूंग, तिल और सनहेम्प हरी खाद के रूप में उपयोग किए जा सकते हैं और कृषि पारिस्थितिकी तंत्र में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। ये फसलें नाइट्रोजन का स्थिरीकरण करती हैं, मिट्टी की उर्वरता बढ़ाती हैं और जल संसाधनों की रक्षा में सहायक होती हैं। आवरण फसलों के अवशेष भी खरपतवारों पर ऐलेलोपैथिक प्रभाव डालते हैं और उनके बीजों के अंकुरण को रोकते हैं। इसके अलावा, इन फसलों से प्राप्त जैविक पदार्थ मिट्टी में कार्बनिक पदार्थ की मात्रा बढ़ाते हैं, जो लंबे समय में पौधों की वृद्धि को प्रोत्साहित करता है। खरपतवारों के दबाव को कम करने के लिए, विभिन्न आवरण फसलें मिलाकर उपयोग की जा सकती हैं, जो अधिक बायोमास उत्पन्न करती हैं और पोषक तत्वों की आपूर्ति भी करती हैं। इस प्रकार, आवरण फसलों का उपयोग न केवल खरपतवार प्रबंधन को बेहतर बनाता है, बल्कि पर्यावरणीय संतुलन बनाए रखने में भी मदद करता है, जिससे कृषि में दीर्घकालिक लाभ प्राप्त होते हैं।

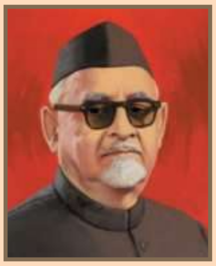

हिंदी भारत मां के हार में पिरोये गए सूत्रों का धागा है।

-डॉ. जाकिर हुसैन

हिंदी का आंदोलन समूचे देश को आत्म निर्भर और समृद्ध बनाने का संकल्प है।

-डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी

खरपतवार नियंत्रण की विधियाँ एवं प्रयोग के दौरान सावधानियाँ

निधी प्रजापति[1], प्रमोद कुमार गुप्ता[1] एवं योगिता घरडे[2]
[1]जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)
[2]भाकृअनुप-खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)

देश में खाद्यानों की पूर्ति के लिए एवं कई औद्योगिक इकाईयाँ कच्चे माल के लिए कृषि पर निर्भर हैं। इसलिए खाद्यान्न उत्पादन में वृद्धि करना अति आवश्यक हैं। खरपतवार, कीट एवं व्याधियों से हमारी फसलों को लगभग 1 लाख करोड़ रूपये की हानि प्रति वर्ष होती है परन्तु सर्वाधिक हानि खरपतवारों की उपस्थिति के कारण होती है।

खरपतवार फसलों के साथ पोषक तत्व, जल, प्रकाश एवं स्थान आदि के लिए प्रतिस्पर्धा करते हैं, साथ ही साथ ये फसलों के लिए हानिकारक रोग व कीटों को शरण देकर भी क्षति पहुंचाते हैं जिससे फसलों की उपज पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

खरपतवारों के कारण उत्पादकता में कमी के साथ-साथ फसल उत्पादों की गुणवत्ता में भी कमी आती है जिससे किसानों को उसके उत्पाद का सही बाजार मूल्य नहीं मिलता है; अत: कृषकों को फसलों से भरपूर उपज लेने हेतु उन्नत बीज, संतुलित उर्वरक एवं सिंचाई प्रबन्धन के साथ ही खरपतवारों का सही समय पर नियंत्रण करना भी अति आवश्यक है।

विभिन्न फसलों की पैदावार में खरपतवारों द्वारा 10 से 80 प्रतिशत तक की कमी हो जाती है। खरपतवारों से परोक्ष रूप से भी बहुत सी हानियां होती है जैसे फसलों के बीजों में गुणवत्ता में कमी, फसलों में रोग कीटों को शरण देना, दुधारू पशुओं से प्राप्त होने वाले खाद्य पदार्थों की गुणवत्ता में कमी होना, फसल उत्पादन लागत मूल्यों में वृद्धि आदि।

उन्नत किस्म के बीज, उपयुक्त उर्वरक, सिंचाई एवं फसल सुरक्षा के उपाय जैसे आधुनिक तरीकों को अपनाकर भी कृषक फसलों की भरपूर पैदावार नहीं ले पाते हैं जिसका मुख्य कारण है खरपतवारों का सही समय पर एवं उचित विधि द्वारा नियंत्रण नहीं कर पाना। अत: विभिन्न विधियों द्वारा खरपतवारों को नियंत्रित कर फसलों की अधिक उपज एवं लाभ लिया जा सकता है। खरपतवारों द्वारा होने वाली हानियों का वर्णन निम्न प्रकार है :-

नमी पर प्रभाव :

फसलों के पौधों की भांति खरपतवारों के पौधे भी मृदा से नमी का उपयोग करते हैं। कभी-कभी खरपतवारों की जल मांग मुख्य फसल की जल मांग से भी अधिक होती है।

मृदा में पोषक तत्वों पर प्रभाव :

मृदा में विभिन्न पोषक तत्व जो फसल के लिये उपयोगी हाते हैं खरपतवारों द्वारा औसतन 7-20 प्रतिशत तक गहृण कर लिये जाते हैं विभिन्न अनुसन्धान परिणामों के अनुसार खरपतवार 22-162 किलोग्राम नत्रजन, 3-24 किलोग्राम फास्फोरस एवं 21-203 किलोग्राम पोटाश प्रति हेक्टेयर तक अवशोषित कर लेते हैं । विभिन्न रबी खरपतवारों के पौधे में शुष्क भार के आधार पर 1.01-3.16 प्रतिशत नत्रजन, 0.06-1.63 प्रतिशत फास्फोरस एवं 1.32-4.51 प्रतिशत पोटाश की मात्रा पायी जाती है।

फसलों की उपज पर प्रभाव :

विभिन्न फसलों में खरपतवारों के द्वारा 10-80 प्रतिशत तक पैदावार में कमी आ जाती है। विभिन्न फसलों के दानों में तेल एवं प्रोटीन प्रतिशत में कमी हो जाती है। गन्ने के पौधे में चीनी की मात्रा कम हो जाती है एवं सब्जियों के गुणों पर भी कुप्रभाव होता है। चारे की फसल के गुण भी नष्ट हो जाते हैं। इन सभी कारणों से फसलों की कीमत गिर जाती है।

रोग एवं कीटों को आश्रय :

खरपतवार, फसल के पौधों पर आक्रमण करने वाले विभिन्न कीट पतंगों व बीमारियों के जीवाणुओं को शरण देकर फसलों को हानि पहुंचाते हैं। गेहूँ, जौ व जई पर लगने वाली तने की रोली नामक बीमारी के रोगाणु जंगली जई पर शरण लेते हैं।

कृषि यन्त्रों एवं मशीनों पर प्रभाव :

जिन खेतों में खरपतवारों का प्रकोप अधिक होता है उनकों नष्ट करने के लिये बार-बार जुताई व गुड़ाई करनी पड़ती है, जिसके कारण कृषि यन्त्र व मशीनों में घिसावट होती है।

भूमि की उत्पादकता पर प्रभाव :

मृदा से खरपतवार पोषक तत्वों का हास्र करके मृदा उत्पादकता को प्रभावित करते हैं। कुछ खरपतवार मृदा में अपनी जड़ों द्वारा विषलै पदार्थ छोड़ते हैं, जो आगामी फसलों के लिये बहुत हानिकारक होते हैं ।

सारणी-1 : रबी फसलों में पाये जाने वाले मुख्य खरपतवार।

फसल	मुख्य खरपतवार
गेहूँ एवं जौ	मंडूसी या गेहूँसा, बथुआ, कृष्णनील, चटरी-मटरी, गेगला, मुनमुना, हिरनखुरी, सैंजी, प्याजी, कंटीली, जंगली जई, मोथा व दूब घास।
चना, मटर एवं मसूर	बथुआ, कृष्णनील, चटरी-मटरी, गेगला, हिरनखुरी, गजरी, सैंजी, प्याजी, कंटीली, मोथा व दूब घास।
सरसों	ओरोबैंकी (भुई फोड़), प्याजी, सैंजी, हिरनखुरी, मोथा व दूब।

सारणी 2 : रबी फसलों के मुख्य खरपतवार एवं उनकी पहचान

खरपतवार का नाम	पहचान
गेहूँ का मामा/गुल्लीडंडा/ गेहुँसा/मंडूसी	गेहूँ व जौ की फसल के पौधों से मिलता-जुलता खरपतवार है। इसके नीचे की गांठे हल्की लाल रंग की होती है। बालियां 3-6 से.मी. लम्बी, बीज काले व अण्डाकार तथा प्रसारण बीज द्वारा।
बथुआ	एक वर्षीय, चौड़ी पत्ती, 2-3 सें.मी. आकार की चिकनी पत्तियां । फूल व फल जनवरी में तथा बीजों द्वारा प्रसारण।
खरबाथुआ	वार्षिक, पत्तियां अधिक चौड़ी, बथुआ से लम्बे पौधे, पुष्प हरे गुच्छों में लगते हैं तथा प्रसारण बीज द्वारा।
जंगली जई	एक वर्षीय, संकरी पत्ती, औसतन 6000 बीज प्रति पौधा, गेहूँ, जौ, जई से मिलता जुलता खरपतवार।
हिरणखुरी	पूरे वर्ष रहने वाला बहुवर्षीय, पत्तियाँ हिरण के खुर के समान बेल के रूप में, जड़े अधिक गहरी होती है। अन्य फसलों के तनों से लिपटा रहता है। प्रसारण बीज व जड़ द्वारा।
कृष्णनील	चौड़ी पत्ती वाले थोड़ा फैलने वाले शाकीय तने, छोटे चमकीले नीले फूल, प्रसारण बीज द्वारा।
सत्यानाशी	चौड़ी पत्ती वाले, पौधें की ऊँचाई 60 से 90 सें.मी. फूलों व फलों पर कांटे, तने से पीला रस निकलता है। बीज देखने में सरसों जैसा व प्रसारण बीज द्वारा।
प्याजी	एक वर्षीय, संकरी पत्तियां प्याज के जैसी, जड़ें पतली व रेशेदार।
मोथा	संकरी पत्ती वाला, बहुवर्षीय खरपतवार है तने के नीचे जडों में गाँठ होती है काटने पर बार-बार उग जाता है।
चटरी-मटरी	तना कमजोर, आधार से टेड्रिल्स निकलते है जिनके सहारे यह अन्य पौधों के तनों से लिपटकर ऊपर चढ़ता है । फूल पीले रंग के व प्रसारण बीज द्वारा।
जंगली पालक	काफी चौड़ी पालक जैसी पत्तियां होती हैं।
कटैली	बहुवर्षीय, पत्तियों पर नुकेले कांटे, किनारे कटे फटे, गुलाबी-बैगनी फूल।
पीली सैंजी	एक वर्षीय, चौड़ी पत्ती, फूल पीले रंग के, प्रजनन बीज द्वारा, चारे में उपयोगी।

खरपतवारों का नियंत्रण

प्राय: यह देखा गया है कि कीट व व्याधि लगने पर उनके निदान के लिय किसान तुरंत ध्यान देते हैं लेकिन खरपतवारों की ओर ध्यान नहीं देते हैं और उनको जब तक बढ़ने देते हैं जब तक कि ये हाथ से पकड़कर उखाड़ने योग्य न हो जायें। कभी-कभी तो किसान खरपतवारों को पशुओं के चारे के रूप में उपयोग करते हैं, तब तक खरपतवार फसल को नुकसान कर चुके होते हैं। फसलों की प्रारंभिक अवस्थाएं खरपतवारों के प्रति अधिक संवेदनशील होती है जिस अवस्था में यह प्रतिस्पर्धा सर्वाधिक होती है उसे "क्रान्तिक अवस्था" कहते हैं। यदि इस अवस्था पर खरपतवारों का नियंत्रण नहीं किया गया तो उसकी क्षति पूर्ति बाद में नहीं की जा सकती है। प्रमुख रबी फसलों में खरपतवारों की क्रान्तिक अवस्था सारणी 3 में दी गई है।

सारणी 3 : विभिन्न रबी फसलों में फसल-खरपतवार प्रतिस्पर्धा का क्रान्तिक समय

फसल	क्रान्तिक समय (बुआई के बाद दिन)
गेंहू	30-45
जौ	15-45
चना	30-60
मटर	30-45
मसूर	30-60
सरसों	15-40

खरपतवार नियंत्रण की निरोधक विधि

इस विधि में वे क्रियायें शामिल की गई हैं जिनके द्वारा खेत में खरपतवारों को फैलने से रोका जा सकता है जो इस प्रकार हैं-

1. खरपतवार बीज रहित बीजों का ही उपयोग करना चाहिए।
2. गोबर की खाद या कम्पोस्ट को अच्छी तरह से सड़ा कर ही प्रयोग करें, जिससे उनमें उपस्थित खरपतवारों के बीजों की अंकुरण क्षमता समाप्त हो जाये ।
3. प्रक्षेत्र मशीनों, कृषि यंत्रों का प्रयोग आवश्यक साफ-सफाई के बाद ही करना चाहिये ।
4. रोपाई वाली फसलों की पौध शाला में ही खरपतवारों को उखाड़कर बाहर कर देना चाहिये ।
5. खाली पड़ी भूमि, सिंचाई नालियों, नहरों, मेड़ों तथा सड़कों पर खरपतवार न उगने दें ।
6. बीज बनने से पहले खरपतवारों को अवश्य नष्ट कर दें ।

खरपतवार नियंत्रण की यांत्रिक विधियां

यह विधि खरपतवारों की रोकथाम की सबसे पुरानी प्रचलित, सरल व प्रभावी विधि है। इस विधि में खरपतवारों की रोकथाम हेतु विभिन्न यंत्रों व मशीनों का प्रयोग किया जाता है। यांत्रिक विधि के अन्तर्गत निम्न क्रियाऐं अपनायी जाती है।

भू परिष्क्रण: भू परिष्करण में वे सभी कर्षण क्रियाऐं शामिल होती हैं जो कि फसल के विकास व वृद्धि के लिये आवश्यक है। यह विधि खरपतवारों की रोकथाम में बहुत ही सहायक है। खेतों में समय पर कर्षण कार्य जैसे जुताई एवं गुड़ाई करने से खरपतवार उखड़कर या टूटकर नष्ट हो जाते हैं।

इस विधि के द्वारा वार्षिक तथा बहुवर्षीय खरपतवारों को नष्ट किया जा सकता है अत: खरपतवारों पर प्रभावी रोकथाम हेतु समय पर जुताई व अन्य भूपरिष्करण करते रहना चाहिये। समय पर जुताई करने से खरपतवारों के बीजों का अंकुरण प्रभावित होता है क्योंकि कुछ बीज अधिक गहराई पर चले जाने पर अंकुरण के पश्चात् मर जाते हैं तथा कुछ बीज सूखी मिट्टी में बाहर आ जाते हैं जिससे पर्याप्त नमी न मिलने पर अंकुरण नहीं होता है।

निराई-गुड़ाई: यह खरपतवार नियंत्रण की सर्वोत्तम विधि है। फसलों की प्रारंभिक अवस्था में बुवाई के 15-35 दिन के मध्य का समय खरपतवारों से प्रतियोगिता की दृष्टि से क्रांतिक समय है परिणामस्वरूप, प्रारंभिक अवस्था में ही फसलों को खरपतवारों से मुक्त करना लाभदायक होता है।

बुवाई के 15-35 दिन के मध्य फसल की क्रांतिक अवस्था के अनुसार खुरपी या कुदाली द्वारा निराई-गुड़ाई करके खरपतवार निकालना चाहिये। इस विधि से न केवल खरपतवार नष्ट होगें बल्कि मृदा के वायु संचार में भी वृद्धि होगी। इस विधि से कतारों में बोई गई फसलों के खरपतवारों को सफलतापूर्वक नष्ट किया जा सकता है।

हाथ द्वारा होइंग: इस विधि से खेतों में बड़े-बड़े आकार के खरपतवार नष्ट किये जाते हैं। हाथ द्वारा चलने वाले गुड़ाई के यंत्रों से खरपतवारों को काफी सीमा तक नियंत्रित किया जाता है। यह विधि कतारों में बोई गई फसलों में अधिक कारगर रहती हैं। फसल बोने के 15-35 दिन के मध्य दो कतारों के बीच हैंण्ड हो, व्हील हो, डोरा व द्वि व्हील चलाना चाहिये।

खरपतवार नियंत्रण की शस्य विधियां

खेतों की ग्रीष्मकालीन जुताई: इस विधि में सर्वप्रथम हल्की मिट्टी में डिस्क प्लाऊ तथा मध्यम से भारी मिट्टी में एम.बी. प्लाऊ से गर्मियों में खेतों की गहरी जुताई कर खुला छोड़ देते हैं। गर्मियों में अधिक गर्मी से मृदा के तापमान में वृद्धि होती है।

जिससे कई खरपतवार जलकर नष्ट हो जाते हैं तथा उनके बीजों की अंकुरण क्षमता नष्ट हो जाती है और आगामी फसलों में खरपतवार नहीं उगते हैं। कुछ मुश्किल खरपतवारों जैसे दूबघास, मोथा व कांस आदि की जड़ें व वानस्पतिक भाग खेतों की गहरी जुताई करने से उखड़ कर नष्ट हो जाते हैं।

समय पर कर्षण क्रियाएँ : उपयुक्त समय पर जुताई करने से भी खरपतवारों को नियंत्रित किया जा सकता है। जैसे फसल कटने के तुरंत बाद गहरी जुताई कर देना चाहिये। इस विधि से काफी संख्या में खरपतवारों की रोकथाम की जा सकती है।

बुवाई की विधि : बुवाई हमेशा कतारों में करना चाहिये ताकि दो कतारों के बीच में निराई-गुड़ाई व अन्य कर्षण क्रियाऐं करने में आसानी रहे और खरपतवारों का प्रभावी ढंग से नियंत्रण किया जा सके।

उपयुक्त विधि से बुवाई करने पर पौध संख्या पर्याप्त रहती है तथा पौधे प्रारम्भ से ही ठीक से वृद्धि करने लगते हैं और उनमें खरपतवारों से प्रतिस्पर्धा करने की क्षमता बढ़ती है। गेहूँ में आड़ी तिरछी विधि (क्रिस-क्रॉस) बुवाई करने पर खरपतवारों का प्रभाव कम होता है।

बुवाई का समय : फसल को ऐसे समय पर बुवाई की जाये कि खरपतवारों के निकलने से पहले ही खेत को ढक लें या खरपतवारों को एक बार पहले उगने देवे, फिर जुताई कर नष्ट करने बाद फसल की बुवाई थोड़ी देर बाद करें।

अत: परिस्थिति के अनुसार उपयुक्त बुवाई के समय में हेर-फेर करने से खरपतवारों से होने वाले नुकसान से बचाया जा सकता है। इससे खरपतवार प्रतिस्पर्धा नहीं कर पायेंगे तथा फसल सरलता से बढ़कर बाद में उगने वाले खरपतवार को हानिकारक नहीं होने देती है।

उपयुक्त बीज दर व दूरी : बीज दर व दूरी का खरपतवारों की वृद्धि पर बहुत असर पड़ता है। कतारों की दूरी कम होने पर फसल छायादार रहेगी जिसके कारण प्रकाश तथा वायु भूमि पर नहीं पहुंचेगा और खरपतवार प्रकाश की अनुपस्थिति में वृद्धि नहीं कर पाते हैं।

इसी प्रकार यदि बीज की मात्रा बढ़ा दी जाये तो पौधों की आपस की दूरी कम हो जायेगी और खरपतवारों को प्रकाश व वायु नहीं मिल पायेगी जिससे खरपतवारों की वृद्धि कम होगी।

गेहूँ की कतारों की दूरी 15 से.मी. दूरी करने से खरपतवारों की वृद्धि पर विपरीत असर पड़ता है। गेहूँ में बीज की मात्रा 125 किग्रा प्रति हेक्टर करने पर खरपतवारों के प्रभाव को कम किया जा सकता है।

उपयुक्त फसल-चक्र: उपयुक्त फसल-चक्र अपनाना ही खरपतवार नियंत्रण की एक आधारभूत विधि है। फसल-चक्र में फसलों को बदल-बदल कर लेने से खरपतवारों की वृद्धि व प्रजनन पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। फसल-चक्र में दलहनी फसलें जैसे चना, मसूर एवं मटर आदि शामिल करने से खरपतवारों पर प्रभाव तो कम होगा साथ ही भू-क्षरण भी बचेगा और मृदा उर्वरकता बढ़ेगी।

एक ही फसल को बार-बार खेत में लेने से उस फसल के खरपतवारों का प्रकोप बढ़ जाता है। जैसे एक ही खेत में बार-बार गेहूँ की फसल लेने से बथुआ व गेहूँ का मामा का प्रकोप बढ़ जाता है, जिसके परिणामस्वरूप कुछ समय बाद इनकी संख्या इतनी बढ़ जाती है कि उस खेत में गेहूँ की फसल लेना आर्थिक दृष्टि से लाभकारी नहीं रहता है।

अत: ऐसे खेत में विपरीत स्वभाव वाली फसल उगाने से वह खरपतवार कम होते हैं। जैसे-जिस खेत में गेहूँ का मामा (*फेलिरस*

माइनर) तथा जंगली जैसे (*ऐवेना फतुआ*) अधिक हो तो उस खेत में बरसीम या सरसों लगाने से लाभ होता है।

उपयुक्त उर्वरक प्रबंधन : खरपतवार फसलों में दिये गये पोषक तत्वों के लिये प्रतिस्पर्धा करते हैं। यदि उर्वरक उचित समय व विधि से नहीं दिये जाते हैं तो उर्वरकों का अधिकतम हिस्सा खरपतवार ग्रहण कर लेते हैं और इस स्थिति में अधिक वृद्धि कर फसल को हानि पहुंचाते हैं अत: उर्वरक छिटकवा विधि की अपेक्षा कूंड में बीज के नीचे देना उचित रहता है।

यदि उपयुक्त विधि से उर्वरक दिया गया हो तो फसल के पौधे प्रारम्भिक लाभ उठा लेते हैं तथा उर्वरकों के कारण पौधों में वानस्पतिक वृद्धि अधिक होने लगती है और बाद में उगने वाले खरपतवार दब जाते हैं।

उपयुक्त सिंचाई व्यवस्था: उपयुक्त सिंचाई व्यवस्था खरपतवारों की रोकथाम में सहायक हो सकती है। यदि खरपतवारों को पर्याप्त नमी मिलती है तो यह वृद्धि कर फसल से अधिक प्रतियोगिता करते हैं। सिंचाई विधियां भी खरपतवारों की सघनता को प्रभावित करती है।

बूंद-बूंद सिंचाई विधि से सिंचाई करने पर थाला विधि की अपेक्षा खरपतवारों की रोकथाम ज्यादा अच्छी होती है क्योंकि बूंद-बूंद सिंचाई से पानी पौधे की जड़ों के पास दिया जाता है और बाकी का खेत सूखा रहता है इस तरह से खरपतवार बिना नमी के पनप नहीं पाते हैं।

खरपतवार नियंत्रण की रासायनिक विधियाँ

यदि यांत्रिक एवं सस्य क्रियाओं द्वारा प्रतिकूल मौसम परिस्थितियों जैसे लगातार वर्षा होने या समय पर मजदूरों के न मिलने के कारण अधिक क्षेत्रों में श्रमिकों द्वारा खरपतवार निकालना संभव नहीं होता है ऐसी परिस्थितियों में रासायनिक विधि ही कारगर है।

खरपतवारनाशकों द्वारा खरपतवारों के नियंत्रण में कम लागत, समय की बचत तथा अधिक क्षेत्र में आसानी से नियंत्रण संभव हो जाता है। खरपतवारनाशी दवायें खरपतवारों को उगते ही शीघ्र नष्ट कर देती हैं जिससे उनकी पुन: वृद्धि एवं फूल व बीज नहीं बनने से प्रसारण नहीं हो पाता है जिससे अगले वर्ष फसलों में खरपतवारों का प्रकोप काफी कम हो जाता है।

खरपतवारनाशी रसायनों का प्रयोग करते समय ध्यान रखना चाहिए कि सिफारिशानुसार उचित मात्रा में, सही विधि एवं उपयुक्त समय पर प्रयोग करें अन्यथा गलत तरीके से प्रयोग करने पर फसलों को नुकसान हो सकता है। विभिन्न फसलों में खरपतवार नियंत्रण हेतु अलग-अलग खरपतवारनाशक दवाओं की सिफारिश दी गयी हैं। उपरोक्त खरपतवारनाशक दवाओं को मुख्यत: तीन वर्गों में विभक्त किया गया है तथा उनकी मात्रा व उपयोग सम्बन्धी विवरण सारणी 8-13 में विस्तृत रुप से दी गई है।

बुवाई से पूर्व प्रयुक्त खरपतवारनाशी

इस प्रकार के खरपतवारनाशी बुवाई से पूर्व खेत की अंतिम जुताई के समय छिड़काव कर भूमि में मिला दिये जाते हैं जो कि खरपतवारों के बीजों को उगने से रोकते हैं या कुछ उग भी जाते हैं तो शीघ्र नष्ट हो जाते हैं। इनका प्रयोग नैपसेक स्प्रेयर, पावर स्प्रेयर एवं ट्रैक्टर माउन्टेड स्प्रेयर से भी किया जा सकता है।

ध्यान रहे कि ये ज्यादातर उड़नशील प्रकृति के होते हैं अत: इन्हें छिड़काव के साथ ही या तुरन्त ही जुताई द्वारा अच्छी तरह मिलाना अति आवश्यक है अन्यथा इनका प्रभाव कम हो जाता है। जैसे: फ्लूक्लोरेलीन व ट्राईफ्लूरेलीन इत्यादि।

अकुंरण पूर्व एवं बुवाई के तुरन्त बाद प्रयुक्त खरपतवारनाशी

इस प्रकार के खरपतवारनाशी बुवाई के तुरन्त बाद (24-36 घण्टे तक) एवं अंकुरण से पूर्व प्रयोग में लिए जाते हैं। चूंकि खरपतवार फसल से पहले उग आते हैं अत: यह उगते हुए या उगे हुए खरपतवारों को नष्ट कर देते हैं तथा अन्य खरपतवारों को उगने से रोकते हैं।

इन खरपतवारनाशकों के प्रयोग के समय भूमि में नमी होना अति आवश्यक है जिससे इनकी क्रियाशीलता बढ़ जाती है। यह चयनित प्रकार के होते हैं अत: फसल को नुकसान नहीं पहुँचाते हैं। जैसे: पेन्डीमेथालीन, एलाक्लोर व एट्राजीन इत्यादि ।

अंकुरण पश्चात खड़ी फसल में प्रयुक्त खरपतवारनाशी

इस प्रकार के खरपतवारनाशी फसल उगने के पश्चात् खड़ी फसल में छिड़के जाते हैं। यह चुनिंदा प्रकार के होते हैं जो खरपतवारों को विभिन्न रासायनिक क्रियाओं द्वारा नष्ट करते हैं तथा फसल को नुकसान नहीं पहुँचाते हैं। कई बार लगातार बुवाई की प्राथमिकता होने या लगातार बारिश होने या किन्ही अन्य कारणों से बुवाई पूर्व या अंकुरण पूर्व खरपतवारनाशकों का प्रयोग नहीं किया जा सके तो बुवाई पश्चात खड़ी फसलों में खरपतवारनाशकों का प्रयोग कर सकते हैं।

चूंकि यह खरपतवारनाशक खड़ी फसल में प्रयुक्त होते हैं अत: इनके प्रयोग में कुछ विशेष सावधानियाँ रखनी चाहिए जैसे विशिष्ट खरपतवारों के लिए सिफारिशनुसार उचित खरपतवारनाशक की सही

मात्रा, सही समय पर एवं सही विधि द्वारा छिड़काव करें अन्यथा फसल पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है।

खड़ी फसल में खरपतवारनाशकों का प्रयोग करते समय चिपकने वाला पदार्थ (सरफेक्टेन्ट) जैसे-साबुन, शैम्पू, सेन्डोवीट या धानुवीट आदि का 0.5 प्रतिशत (500 मिलीलीटर प्रति हैक्टर) को मिलाकर छिड़काव करने से यह खरपतवारों की सम्पूर्ण पत्तियों पर फैलकर चिपक जाते हैं एवं उनकी क्रियाशीलता को बढ़ाते हैं। इस प्रकार खरपतवारनाशकों के साथ ''सरफेक्टेंट'' मिलाकर छिड़काव करने से खरपतवारों का अच्छा नियंत्रण होता है।

यह ध्यान रखें कि स्प्रेयर की टंकी में पहले खरपतवानाशक मिलायें तथा बाद में सरफेक्टेंट को डाल कर छिड़काव करें। जैसे: 2,4-डी, मेटसल्फूरोन मिथाइल, सल्फोसल्फ्यूरान, क्यूजालोफोप इथाईल, क्लोडीनोफोप व इमाजिथापायर इत्यादि फसल विशेष खरपतवारनाशक हैं।

खरपतवारनाशी की मात्रा कैसे ज्ञात करें

कई बार कृषकों को खरपतवारनाशकों की सही मात्रा ज्ञात करने में परेशानी होती है अत: स्वयं किसान भी सूत्र के द्वारा सही मात्रा ज्ञात कर सकते हैं। खरपतवारनाशक के डिब्बे पर उसकी सान्द्रता (प्रतिशत) ई.सी., डब्ल्यू.पी., जी.एस.पी., डब्ल्यू.एस.पी., एल. या एस.एल. के रूप में लिखी रहती है। इनकी सान्द्रता को ध्यान में रखकर निम्नलिखित सूत्र द्वारा सही मात्रा की गणना की जा सकती है।

खरपतवारनाशक के प्रयुक्त किये जाने वाले दवा की मात्रा

खरपतवारनाशक की व्यापारिक मात्रा (किग्रा. या लीटर प्रति है.)

= सक्रिय तत्व कि.ग्रा. प्रति है. / खरपतवारनाशक की सान्द्रता (प्रतिशत) ×100

उदाहरण- गेहूँ की फसल में चौड़ी पत्ती कुल के खरपतवारों के नियत्रंण हेतु मेटसल्फूरॉन 20 प्रतिशत डब्ल्यू पी नामक खरपतवारनाशक की 4 ग्राम सक्रिय तत्वप्रति हेक्टर की दर से कितनी व्यापारिक मात्रा की जरूरत पड़ेगी।

4/20 x 100= 20 ग्रा. प्रति हे.

छिड़काव से संबंधित सावधानियाँ

खरपतवारनाशी आधुनिक कृषि विज्ञान की परम आवश्यकता है लेकिन वे एक प्रकार के जहर हैं अत: इनके प्रयोग में विशेष सावधानी रखनी चाहिए। जिस प्रकार यह खरपतवारों व अन्य जीवों के लिए घातक है उसी प्रकार मानव शरीर पर भी इनका कुप्रभाव पड़ता है।

इस प्रकार ये रसायन जो कृषि के लिए वरदान सिद्ध हो रहे हैं, असावधानी और अज्ञानतापूर्वक प्रयोग करने पर प्राणघातक भी सिद्ध हो सकते हैं। अत: खरपतवार नाशकों के छिड़काव में कतिपय सावधानियों की आवश्यकता होती है साथ ही उचित प्रकार के छिड़काव यंत्र काम में लेने से इनका प्रयोग अधिक प्रभावी व सुगमता से किया जा सकता है। जिससे खरपतवारनाशी रसायनों की कम मात्रा भी अधिक प्रभावी होती है।

फसल	खरपतवार नाशी	सक्रिय तत्व मात्रा (ग्राम/हे.)	व्यापारिक उत्पाद मात्रा (ग्राम/हे.)	प्रयोग का समय	खरपतवारों का नियंत्रण
गेहू	पेन्डीमेथालीन (30 सी.)	1000	3325	अंकुरण से पूर्व	घास एवं चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार
	मेटसल्फूरोन मिथाइल (20 प्रतिशत डब्ल्यू .पी.)	4-6	20-30	बुवाई के 30-35 दिन बाद	*सिरसियंम आरवेन्स* और *रुमेक्स* सहित केवल चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार
	मैट्रीब्यूजिन (70 प्रतिशत डब्ल्यू. पी.)	150-200	210-280	बुवाई के 30- 35 दिन बाद	सभी प्रकार के (संकरी व चौड़ी पत्ती वाले) खरपतवार
	सल्फोसल्फ्यूरान (75 प्रतिशत डब्ल्यू. पी)	33	33	बुवाई के 30-35 दिन बाद	संकरी पत्ती (जंगली जई, गुल्ली डंडा) तथा चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार
	फिनोक्साप्रोप इथाइल (10 ई.सी.)	100-120	1000-1200	बुवाई के 30-35 दिन बाद	घास कुल विशेषकर जंगली जई
	क्लोडीनाफॉप	60	400	बुवाई के 30-35 दिन बाद	घास कुल के खरपतवारों का नियंत्रण करती है।

चना, मसूर, मटर	फ्लूक्लोरेलिन	1000	2200	बोने से पहले खेत की अन्तिम जुताई के समय छिड़ककर भूमि में अच्छी तरह से मिला दें।	सभी प्रकार के खरपतवारों को नियंत्रित करती है।
	पेन्डीमेथालिन (30 ई.सी.)	1000	3325	अंकुरण से पूर्व बुवाई के 1-2 दिन बाद	सैंजी व गाजरघास के अलावा सभी खरपतवारों की रोकथाम करती है।
रेपसीड और सरसों	फ्लूक्लोरेलिन	1000	2200	बोने से पहले खेत की अन्तिम जुताई के समय छिड़ककर भूमि में अच्छी तरह से मिला दें।	सभी प्रकार के खरपतवारों को नियंत्रित करती है।
	पेन्डीमेथालिन (30 ई.सी.)	1000	3325	अंकुरण से पूर्व बुवाई के 1-2 दिन बाद	सैंजी व गाजरघास के अलावा सभी खरपतवारों की रोकथाम करती है।
जौ	2, 4-डी ई.ई. (34 प्रतिशत डी.सी.)	500	1470	बुवाई के 30-35 दिन के बाद	चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार संकरी पत्ती
	आइसोप्रोट्यूरॉन (50 प्रतिशत डब्ल्यू.पी.)	750-1250	1500-2500	बुवाई के 30-35 दिन के बाद	वाले खरपतवार एवं चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार (जंगली जई, गुल्ली डंडा)

यह देखा गया है कि कुछ खरपतवारनाशी रसायन बुवाई से पहले छिड़क कर मृदा में मिला देने से और बुवाई के 20-30 दिन बाद एक बार निराई करने से खरपतवारों से छुटकारा मिलता है। रबी की फसलों में एक बार खरपतवारनाशी का छिड़काव और एक निराई ही वार्षिक खरपतवारों की रोकथाम के लिए काफी है। खरपतवारनाशी रसायनों से खरपतवारों की रोकथाम आर्थिक दृष्टि से सस्ती, आसान व बेहतर है।

छिड़काव यंत्रों के प्रयोग में सावधानियाँ

छिड़काव यंत्र के उचित प्रयोग एवं सावधानी के अभाव में मनुष्य के स्वास्थ्य पर इसका प्रतिकूल असर पड़ता है अत: फसलों में खरपतवारनाशियों के छिड़काव के लिए उपयोगी यंत्रों का चयन, रखरखाव तथा सावधानियाँ अत्यंत आवश्यक है। छिड़काव से पहले, छिड़काव के समय व छिड़काव के बाद भी कई प्रकार की सावधानियों की आवश्यकता होती है।

- किसी भी यंत्र को उपयोग में लाने से पूर्व यह देखें कि उनके कल पुर्जो के सभी जोड़ ठीक से कसे हों।
- आपस में रगड़ कर चलने वाले सभी पूर्जों को निर्धारित मात्रा में तेल या ग्रीस दिया जाना चाहिए।
- यंत्रों में लगने वाले पट्टे, बेल्ट, कमानी आदि के कसाव की जांच करना चाहिए ।
- स्प्रेयर को प्रयोग में लाने से पूर्व पम्प, होज़ पाइप, बूम, कट ओफ वाल्व तथा नोजल की टूट-फूट की जाँच कर लेनी चाहिए तथा एक बार पानी डालकर चलाकर देख लेना चाहिए।
- छिड़काव करने से पूर्व नोजल को साफ तथा ढीला कर लेना चाहिए।
- छिड़काव पूरा हो जाने के पश्चात कभी-भी स्प्रेयर में दवा का घोल नहीं छोड़ना चाहिए।
- कृषि यंत्रों को उपयोग करने के बाद छायादार स्थान पर रखना चाहिए।
- स्प्रेयर को यदि लम्बी अवधि के लिए भण्डार में रखना है तो जोड़ों में थोड़ा सा ग्रीस अवश्य लगाना चाहिए।

प्रयोग के दौरान सावधानियाँ

- खरपतवारनाशी मिलाते समय शरीर के किसी कटे भाग में स्पर्श नहीं होना चाहिये।
- खरपतवारनाशी को हमेशा खुली जगह पर ही मिलाना चाहिये। घोल सदैव साफ बर्तन में बनाएं।

- खरपतवारनाशी रसायन की संस्तुत मात्रा को 500-600 लीटर पानी में प्रति हेक्टर की दर से मिलाकर फ्लेट फैन नोजल से छिड़काव करें।
- खरपतवारनाशियों का छिड़काव करते समय सक्रिय तत्व की मात्रा व खरपतवार नियंत्रण की क्रांतिक अवस्था का ध्यान रखें।
- टंकी में उचित दबाव बनाये रखने के लिए उसे तीन चौथाई भाग तक ही भरें।
- खरपतवारनाशी का छिड़काव करते समय सिर पर टोपी, आंखों पर चश्में, मुंह पर मास्क, हाथों में दस्ताने (प्लास्टिक या रबर के) पैरों में बूट, फुल आस्तीन की शर्ट व पैंट तथा ऐप्रेन पहनना चाहिये।
- दवाई के खाली डिब्बे को घर वापस न लायें। खाली डिब्बे को खेत में सुरक्षित गहराई पर गाड़ देना चाहिए।
- छिड़काव के दौरान किसी प्रकार का धूम्रपान, तम्बाकू व गुटखा आदि का उपयोग न करें।
- छिड़काव पूर्ण होने के तुरन्त बाद साबुन से अच्छी तरह पहने गये कपड़ों एवं हाथों को साफ करे।
- छिड़काव करते समय यदि नोजल में कोई कचरा फंस जाए तो उसे मुँह से फूंक मारकर कदापि साफ न करें। इस कार्य हेतु कोई पिन या बारीक सुई से ही साफ करें।
- छिड़काव के समय किसी प्रकार की घबराहट, बेचैनी, उल्टी, चक्कर आना व खुजली चलने आदि शिकायत होने पर तुरन्त चिकित्सक से सम्पर्क करें। प्रभावित व्यक्ति को हवादार और छाया में लिटाकर उसके मुँह पर बंधा कपड़ा हटा दें। डॉक्टर के आने पर उसे खरपतवार दवाई का लेबल व साहित्य पूरा दिखाएं।

हिन्दी से किसी भी भारतीय भाषा को भय नहीं है यह सबकी सहोदरा है।

-महादेवी वर्मा

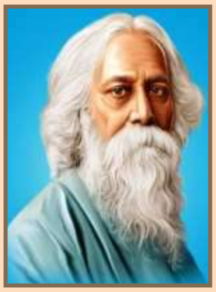

आधुनिक भाषाओं के हार की मध्यमणि हिंदी भारत भारती होकर विराजती रहे।

-रविन्द्रनाथ टैगोर

कृत्रिम बुद्धिमत्ता का उपयोग : खरपतवार प्रबंधन का बदलता स्वरुप

योगिता घरडे[1], पी.के. सिंह[1], प्रमोद कुमार गुप्ता[2] एवं सुरभि होता[1]
[1]भाकृअनुप-खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)
[2]ज.ने.कृ.वि.वि.-कृषि विज्ञान केंद्र, जबलपुर (म.प्र.)

परिचय

कृषि, वैश्विक खाद्य उत्पादन की आधारशिला है, जो खरपतवारों के प्रकोप से लगातार जूझती रहती है। खेतों में खरपतवारों की उपस्थिति कृषि उत्पादकता के लिए एक बड़ा खतरा है, क्योंकि वे पानी, पोषक तत्वों, प्रकाश और स्थान जैसे आवश्यक तत्वों के लिए फसलों के साथ प्रतिस्पर्धा करते हैं। फलस्वरूप, यह फसलों की वृद्धि और विकास को बाधित करता है। खरपतवार फसलों की एक समान वृद्धि को भी बाधित करते हैं, जिससे फसल की परिपक्वता असमान हो जाती है और कटाई की प्रक्रिया कठिन हो जाती है। इसके अतिरिक्त, कुछ खरपतवार प्रजातियाँ कीटों और बीमारियों को आश्रय देती हैं, जो कृषि रोगजनकों के लिए आश्रय स्थल के रूप में काम करती हैं जो फसलों को बर्बाद कर सकते हैं। इसके अलावा, खरपतवार नियंत्रण के लिए अधिक श्रम और संसाधनों की भी आवश्यकता होती है और ये आर्थिक प्रभाव भी डालते है, जिसमें फसल की उपज में नुकसान, उत्पादन लागत में वृद्धि और कम गुणवत्ता वाली फसल का होना भी शामिल है।

खरपतवार प्रबंधन के लिए मुख्य रूप से शाकनाशियों का प्रयोग किया जाता है, जिसके दीर्घकालिक दुष्परिणाम हो सकते है और खाद्य सुरक्षा पर भी बुरा प्रभाव पड़ सकता है। शाकनाशी रासायनिक यौगिक हैं जिन्हें खरपतवारों को नियंत्रित करने के लिए बनाया गया है ये लक्षित खरपतवारों को नियंत्रित कर एवं श्रम की बचत कर, फसल की पैदावार को बढ़ाने और खरपतवार प्रतिस्पर्धा के हानिकारक परिणामों को कम करने में महत्वपूर्ण योगदान देते है। परन्तु इनके अंधाधुंध उपयोग के परिणाम स्वरूप शाकनाशी-प्रतिरोधी खरपतवारों की संख्या बढ़ती जा रही है जिन्हें नियंत्रित करना अपने आप में एक चुनौतीपूर्ण कार्य है। इसके अलावा, शाकनाशी अवशेष मिट्टी और जल तंत्रों में बने रहते हैं, जो संभावित रूप से गैर-लक्षियत पौधों, जलीय जीवन, खाद्य उत्पादों और मानव स्वास्थ्य को प्रभावित करते हैं। इन चुनौतियों को देखते हुए, खरपतवार प्रबंधन के लिए अधिक सटीक और पर्यावरण-अनुकूल दृष्टिकोण अपनाने की आवश्यकता बढ़ती जा रही है, और यहीं पर कृत्रिम बुद्धिमत्ता (एआई) तकनीकें सामने आती हैं।

खरपतवार प्रबंधन में एआई तकनीक का उपयोग, शाकनाशियों की मात्रा को कम करके उनकी प्रभावकारिता को बढ़ाकर तथा रासायनिक अवशेषों की उपस्थिति को सीमित करके उनसे जुड़े दुष्परिणामों को कम करने का प्रयास करता है। यह प्रयास अंततः खरपतवार नियंत्रण के क्षेत्र में एक अधिक सतत और पर्यावरण-अनुकूल तरीके को बढ़ावा देती है। एआई विधियों में कंप्यूटर विज़न, मशीन लर्निंग और डीप लर्निंग सहित कई तरह की तकनीकें शामिल हैं, जो एआई क्षेत्र में प्रमुखता से उपयोग होती हैं। डीप लर्निंग (DL), मशीन लर्निंग (ML) का ही एक प्रकार है, जो आर्टिफिशियल न्यूरल नेटवर्क (ANN) से भिन्न है और वर्तमान में खरपतवार पहचान में सबसे अधिक उपयोग में लाया जाता है। डेटा से सूक्ष्म जानकारियां निकालने और जटिल पैटर्न की पहचान करने की इसकी क्षमता के कारण इसका उपयोग खरपतवार पहचान के लिए काफी होने लगा है। डीप लर्निंग मॉडल, जिन्हें व्यापक डेटासेट पर प्रशिक्षित किया जाता है, कई जटिल परिस्थितियों में भी फसलों और खरपतवारों के बीच सटीक रूप से अंतर करने की एक अद्वितीय क्षमता प्रदर्शित करते हैं। इसके अलावा भी, डीप लर्निंग ने कृषि के विभिन्न पहलुओं में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है, जिसमें फसल के पौधों की पहचान और उनकी गिनती, फसलों में बीमारियों का पता लगाना, फसल तनाव की पहचान, फसल पंक्तियों का पता लगाना, फलों की तुड़ाई, फलों को वर्गीकृत करना, और साइट-विशिष्ट खरपतवार प्रबंधन शामिल हैं।

खरपतवार प्रबंधन में एआई अपनाने के आर्थिक प्रभाव बहुत अधिक हैं। खरपतवारों की सटीक पहचान करके और उन्हें लक्षित करके, एआई संसाधनों की बचत में योगदान देता है, विशेष रूप से शाकनाशी के अनुप्रयोग में और भूमि तथा श्रम की बचत में। वर्तमान में सीमित संसाधनों के साथ कृषि भूमि की उत्पादकता बढ़ाने को अत्यंत महत्वपूर्ण माना गया है। यह मानना है कि कृषि 5.0 में परिवर्तन के परिणाम स्वरूप एआई गतिविधियों का समर्थन करने के लिए नए रोजगारों का सृजन होगा।

एआई प्रणाली अपनाने के कारक

खरपतवार प्रबंधन के क्षेत्र में एआई का सम्मिलित होना कृषि पद्धतियों में एक परिवर्तनशील मोड़ को दर्शाता है। एआई तकनीक अपनाने के कई कारक हो सकते है। इन कारकों में महत्वपूर्ण है: खाद्य सुरक्षा, प्रभावशीलता में बढ़ोतरी और शाकनाशियों की मात्रा में कमी। इन कारकों का विस्तार पूर्वक विवरण निम्नानुसार है:

1. खाद्य सुरक्षा

कृषि क्षेत्र में खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करना अत्यंत महत्वपूर्ण है, क्योंकि इसका मानव स्वास्थ्य पर सीधा और महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है। खरपतवार नियंत्रण के लिए बहुत अधिक मात्रा में रासायनिक शाकनाशियों के उपयोग के कारण अनजाने में सही परन्तु खाद्य सुरक्षा से संबंधित कई तरह की चिंताएँ पैदा हो रही हैं। शाकनाशियों का उपयोग, खरपतवार नियंत्रण में प्रभावी होने के साथ-साथ, प्रतिकूल प्रभाव भी डालता है। शाकनाशियों के अवशेष फसलों और आस-पास की मिट्टी में जमा हो

सकते हैं, जिससे संभावित रूप से खाद्य उत्पादों में उनके अवशेष होने की संभावना होती है और इसलिए ये हमारे और पर्यावरण के लिए बहुत बड़ा खतरा बनते जा रहे है। पूर्व में किये गए अध्ययनों में पाया गया कि विभिन्न प्रकार के खाद्य उत्पादों में शाकनाशियों के अवशेष मौजूद होते हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्ल्यूएचओ) ने कहा है कि आमतौर पर भोजन में पाए जाने वाले शाकनाशी अवशेषों का स्तर प्रत्यक्ष तौर पर स्वास्थ्य के लिए जोखिम भरा नहीं होता हैं, परन्तु कुछ वैज्ञानिकों और स्वास्थ्य विशेषज्ञों ने इनके संभावित दीर्घकालिक प्रभावों, जैसे कैंसर और प्रजनन समस्याओं के बारे में चिंता व्यक्त की है।

एआई तकनीकियों के आगमन ने खरपतवार प्रबंधन के परिदृश्य को नया आयाम दिया है, क्योंकि एआई प्रणालियाँ खरपतवार की पहचान और वर्गीकरण में उच्च स्तर की सटीकता प्रदर्शित करती हैं। एआई-संचालित खरपतवार प्रबंधन समाधानों द्वारा प्राप्त उच्च स्तर की सटीकता फसलों और खरपतवारों के बीच सही अंतर करने की अनुमति देती है और किसानों को अभूतपूर्व सटीकता के साथ शाकनाशियों को केवल लक्षित खरपतवारों को नियंत्रित करने का तरीका प्रदान करती है। एआई तकनीकियों के कार्यान्वयन से खाद्य उत्पादों में शाकनाशी अवशेषों के जमा होने की संभावना भी काफी हद तक कम हो जाती है।

2. प्रभावशीलता में बढ़ोतरी

वर्तमान में, चूंकि खरपतवार लगातार फसल की पैदावार और कृषि दक्षता को चुनौती देते हैं, इसलिए खरपतवार नियंत्रण उपायों की प्रभावशीलता को बढ़ाने की आवश्यकता है। खरपतवार प्रबंधन विधियों का अनुकूलन कृषि उत्पादकता को बढ़ाने और आर्थिक नुकसान को कम करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। पारंपरिक खरपतवार नियंत्रण उपायों में अक्सर शाकनाशियों की सही मात्रा का प्रयोग न करना और फसल की क्रांतिक अवस्था के बाद इन शाकनाशियों का प्रयोग जैसी चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। ये कमियाँ खरपतवार प्रबंधन रणनीतियों की सफलता में एक बाधा के रूप में हैं। अत: खरपतवारों का तेजी से और सटीक रूप से पता लगाने के लिए एआई और इसमें निहित क्षमताएँ खरपतवार प्रबंधन रणनीतियों की प्रभावशीलता को बेहतर बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं।

खरपतवार प्रबंधन में एआई द्वारा बढ़ी हुई प्रभावशीलता को दो मूलभूत पहलुओं द्वारा समझा जा सकता है: सटीकता और समयबद्धता। एआई-संचालित प्रणालियाँ फसलों और खरपतवारों के बीच अंतर करने में सटीकता का एक अद्वितीय उदाहरण प्रस्तुत करती हैं। इसके अलावा, एआई वास्तविक समय या लगभग वास्तविक समय में काम कर सकता है, खरपतवार की मौजूदगी के लिए खेतों की निरंतर निगरानी कर सकता है। खरपतवारों की समय पर पहचान कर तत्काल नियंत्रण का सकते है, जिससे खरपतवारों के बढ़ने और कृषि फसलों के साथ प्रतिस्पर्धा करने की समय-सीमा कम हो जाती है, जो खरपतवार प्रबंधन की समग्र प्रभावशीलता में महत्वपूर्ण योगदान देती है।

3. शाकनाशी में कमी

फसलों में बहुत अधिक मात्रा में शाकनाशियों के प्रयोग से मिट्टी और पानी में उनके रिसाव से गैर-लक्ष्य जीवों पर प्रभाव, जल निकायों का दूषित होना और शाकनाशी-प्रतिरोधी खरपतवारों की संख्या में वृद्धि होना प्रमुख है। अत: खरपतवार प्रबंधन में शाकनाशी में कमी और पर्यावरण-मित्रता के लिए एआई एक सफल उपाय के रूप में उभरा है। एआई-आधारित उपाय प्रारंभिक अवस्था में खरपतवारों की सटीक और तुरंत पहचान करने में सक्षम होते हैं और किसानों को खरपतवारों का पता लगाने और उनका समाधान करने में सहायता करते हैं, जिसके परिणाम स्वरूप शाकनाशियों पर निर्भरता कम हो जाती है या समाप्त हो जाती है।

एआई मॉडल

खरपतवार प्रबंधन में एआई एकीकरण का मूल एल्गोरिदम, न्यूरल नेटवर्क और कम्प्यूटेशनल इंटेलिजेंस के एक जटिल नेटवर्क के समान है। खरपतवार प्रबंधन के क्षेत्र में निर्णय लेने की प्रक्रियाओं को सुविधाजनक बनाने में एआई मॉडल महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। ये मॉडल एकत्रित फोटो, सेंसर इनपुट और पर्यावरणीय विशेषताओं को शामिल करते हुए व्यापक मात्रा में डेटा को एकीकृत करते हैं और इस ज्ञान को व्यवहारिक और उपयोगी दृष्टि में परिवर्तित करते हैं। खरपतवार प्रबंधन में उपयोग किए जाने वाले एआई मॉडल मुख्य रूप से कंप्यूटर विज़न के लिए डीप लर्निंग के अंतर्गत आते हैं। डीप लर्निंग, मशीन लर्निंग का एक प्रकार है जो आर्टिफिशियल न्यूरल नेटवर्क के उपयोग पर ध्यान केंद्रित करता है, जिसमें छवि-संबंधी कार्यों के लिए कन्वोल्यूशनल न्यूरल नेटवर्क (CNN) पर विशेष जोर दिया जाता है। इनमें कई संस्करणों में यू लुक ओनली वन्स (YOLO), सिंगल-शॉट मल्टीबॉक्स डिटेक्टर (SSD), एफ़िशिएंटडेट, रेटिनानेट, सेंटरनेट, फास्टर-रीजन बेस्ड कन्वोल्यूशनल न्यूरल नेटवर्क (RCNN), रीजनबेस्ड फूली कन्वोल्यूशनल न्यूरल नेटवर्क (RFCN), रेसनेट101, डार्कनेट53, मोबाइलनेट, VGG, डेंसनेट, शफलनेट, एमएनएसनेट, एफ़िशिएंटनेट, अलेक्सनेट, गूगलनेट, इन्सेप्सनेट3, एक्स्सेप्स, वीजीजीनेट, डिटेक्टनेट, और यू-नेट शामिल हैं।

एआई परिणाम और सटीकता

एआई मॉडल की सटीकता खरपतवार प्रबंधन में उनकी व्यावहारिक उपयोगिता का एक प्रमुख निर्धारक है। रिकॉल, F1-स्कोर और रिसीवर ऑपरेटिंग विशेषता वक्र (AUC&ROC) के तहत क्षेत्र जैसे मानकों को आमतौर पर मॉडल की सटीकता का आकलन करने के लिए उपयोग किए जाता हैं। खरपतवार प्रबंधन में एआई मॉडल की उच्च सटीकता यह सुनिश्चित करती है कि शाकनाशियों को विवेक पूर्ण तरीके से उपयोग किया जाए तथा फसलों को बचाते हुए लक्षित खरपतवारों को नियंत्रित किया जाए जिससे आर्थिक नुकसान कम हो और पर्यावरणीय प्रभाव को कम किया जा सके।

एआई की सहायक तकनीकियाँ

कृषि क्षेत्र में एआई के उपयोग ने खरपतवार प्रबंधन के क्षेत्र में सटीकता और उत्पादकता का एक नया युग शुरू किया है। फिर भी, एआई संचालित खरपतवार प्रबंधन की प्रभावकारिता अकेले एआई की क्षमता से परे है। यह एआई के साथ मिलकर काम करने वाली सहायक तकनीकियों के उपयोग से संभव है, जो खरपतवार नियंत्रण रणनीतियों की सटीकता और दायरे को बढ़ाती है। सामूहिक रूप से, ये तकनीकियाँ आधुनिक कृषि में खरपतवार प्रबंधन के लिए एक समग्र दृष्टिकोण को आकार देते हुए, डेटा संग्रहण, निगरानी, निर्णय लेने और हस्तक्षेप को और अधिक सटीक बनाती है। एआई के साथ संयोजन में उपयोग की जाने वाली चार प्रमुख तकनीकियाँ निम्नानुसार है:

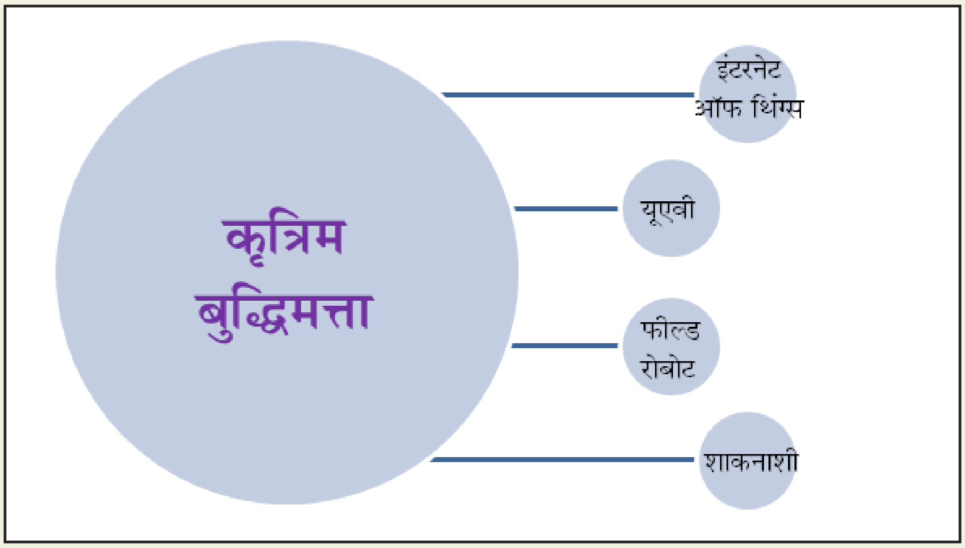

1. इन्टरनेट ऑफ थिंग्स (आईओटी)

आईओटी डिवाइस जैसे सेंसर, रिमोट कैमरा और डेटा लॉगर वास्तविक समय के पर्यावरणीय डेटा को संगृहीत करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, जिससे एआई सिस्टम अच्छी तरह से निर्णय लेने में सक्षम होता है। पर्यावरणीय विशेषताओं की सटीक समझ होना शाकनाशी के उपयोग, संसाधनों के आवंटन और खरपतवार विकास के मॉडलिंग के समय को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इसके अलावा, आईओटी में सैटेलाइट इमेजिंग और ड्रोन के साथ उपयोग किये गए सेंसर सहित रिमोट सेंसिंग तकनीकों को शामिल करने से डेटा संग्रहण की क्षमता बढ़ जाती है। ये तकनीकें उच्च-रिजॉल्यूशन इमेजिंग और मल्टीस्पेक्ट्रल डेटा तक पहुँचने में एआई के उपयोग की सुविधा प्रदान करती हैं, जिससे व्यापक खरपतवार मानचित्रों का निर्माण और खरपतवार की उपस्थिति की समय पर पहचान संभव हो पाती है। इसके अलावा, डेटा फ़्यूज़न तकनीक आईओटी-जनरेटेड डेटा को रिमोट सेंसिंग डेटा के साथ जोड़ती है, जिससे खरपतवार की सटीक पहचान करने की एआई की क्षमता बढ़ जाती है।

2. यूएवी

यूएवी, जिन्हें अक्सर ड्रोन के रूप में जाना जाता है, एआई-संचालित खरपतवार प्रबंधन के लिए सफल उपकरण के रूप में उभरे हैं। उन्नत कैमरा और सेंसर तकनीकों से लैस यूएवी कृषि क्षेत्रों का हवाई दृश्य प्रदान करते हैं, जिससे एआई सिस्टम के उपयोग से खरपतवारों की उपस्थिति की निगरानी और मूल्यांकन करने में मदद मिलती है। इसके अलावा, शोधकर्ता खरपतवारों की पहचान करने, उनके वितरण का आँकलन करने और विस्तृत खरपतवार मानचित्र बनाने के लिए हवाई चित्रों का विश्लेषण करने के लिए एआई मॉडल का उपयोग करते हैं। हवाई दृश्य का उपयोग जमीनी स्तर पर छूटे हुए अलग-अलग खरपतवार पैच की पहचान की सुविधा प्रदान करता है। उन्नत यूएवी में न केवल उच्च-रिजॉल्यूशन इमेजरी प्राप्त करने और खरपतवार मानचित्र बनाने की क्षमता है, बल्कि वे अपने हवाई सुविधाजनक बिंदु से खरपतवार-ग्रस्त क्षेत्रों की स्वयं पहचान करके और सटीक रूप से शाकनाशियों को विशिष्ट लक्ष्यों पर छिड़काव करने में सक्षम होते हैं, जिससे शत-प्रतिशत खरपतवार नियंत्रण प्राप्त होता है।

3. फील्ड रोबोट

उन्नत सेंसर और एआई एल्गोरिदम से लैस, ये एआई -संचालित फील्ड रोबोट कृषि क्षेत्रों में नेविगेट करते हैं, खरपतवारों की पहचान करते हैं और उनके नियंत्रण की विधि अपनाते है। फील्ड रोबोट वास्तविक समय के परिदृश्यों में विभिन्न फसलों और खरपतवारों के बीच प्रभावी ढंग से पहचान करने और अंतर करने के लिए कंप्यूटर विज़न और मशीन लर्निंग तकनीकों का उपयोग करते हैं। एआई एल्गोरिदम का उपयोग ऑनबोर्ड कैमरों से प्राप्त डेटा का विश्लेषण और व्याख्या करने के लिए किया जाता है, जिससे रोबोट खरपतवार नियंत्रण के बारे में स्वयं निर्णय लेने में सक्षम होते हैं, जिससे मानवीय हस्तक्षेप की आवश्यकता कम हो जाती है। खरपतवार नियंत्रण में सटीक उपचार लागू करने के लिए यांत्रिक या छिड़काव उपकरणों का उपयोग शामिल है, जो केवल खरपतवार संक्रमित क्षेत्रों को लक्षित करते हैं। यह सटीकता शाकनाशी के उपयोग को कम करती है, पर्यावरणीय प्रभाव को कम करती है और संसाधनों का संरक्षण करती है।

4. शाकनाशी

हालाँकि खरपतवार प्रबंधन में पारंपरिक रूप से शाकनाशी का उपयोग किया जाता है, लेकिन वर्तमान में शाकनाशी के अनुप्रयोग को समायोजित करके एआई का उपयोग कर लाभ प्राप्त किया जा रहा है, जिससे यह सुनिश्चित होता है कि इन रसायनों का विवेकपूर्ण तरीके से और न्यूनतम पर्यावरणीय प्रभाव के साथ उपयोग किया जाता है। इससे शाकनाशी का उपयोग कम होता है, फसल जोखिम कम होता है, और पर्यावरण दूषित होने का जोखिम कम होता है।

निष्कर्ष

खरपतवार प्रबंधन में एआई तकनीक का उपयोग, शाकनाशियों की मात्रा को कम करके उनकी प्रभावकारिता को बढ़ा कर तथा रासायनिक अवशेषों की उपस्थिति को सीमित करके उनसे जुड़े दुष्परिणामों को कम करने का प्रयास करता है। यह प्रयास अंततः खरपतवार नियंत्रण के एक अधिक सतत् और पर्यावरण-अनुकूल तरीके को बढ़ावा देती है। डेटा से सूक्ष्म जानकारियां निकालने और जटिल पैटर्न की पहचान करने की इसकी क्षमता के कारण इसका उपयोग खरपतवार पहचान एवं नियंत्रण के लिए काफी होने लगा है।

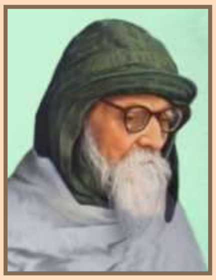

मेरे देश में हिन्दी की इज्जत न हो यह मैं सह नहीं सकता।

-विनोबा भावे

मानव के लिए मातृभाषा उतनी ही आवश्यक है, जितना बच्चे के लिए मां का दूध।

-महात्मा गांधी

चारे वाली फसलों में गैर-रासायनिक खरपतवार प्रबंधन

पिजुश काँती मुखर्जी एवं मोनिका रघुवंशी
भाकृअनुप-खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)

चारा वाली फसलों में खरपतवारों की समस्या अनाज वाली फसलों के समान ही गंभीर है, जो न केवल उत्पादकता बल्कि गुणवत्ता को भी प्रतिकूल रूप से प्रभावित करती है। खरपतवारों की तीव्र वृद्धि और अधिक शुष्क पदार्थ संचय करने की प्रवत्ति फसलों पर हानिकारक प्रभाव डालती है। खरपतवार, आवश्यक संसाधन जैसे जल, पोषक तत्व, प्रकाश और स्थान के लिए फसलों से प्रतिस्पर्धा करते हैं जिससे फसलों की स्थापना, वृद्धि, कुल जैवभार (बायोमास) एवं उत्पादन में उल्लेखनीय कमी आती है। विशेष रूप से, बरसीम में *कोरोनोपस डिडीमस* तथा मक्का व ज्वार में *कोक्सिनिया ग्रांडिस, सेलोसिया अर्जेंटिया* और *ट्रांयेन्थिमा* जैसी खरपतवार प्रजातियों की मिलावट से न केवल हरे चारे की स्वादप्रियता व पोषण गुणवत्ता में गिरावट आती है, बल्कि इसका प्रत्यक्ष प्रभाव दुग्ध पशुओं की दूध उत्पादन क्षमता पर भी पड़ता है। भारत, जो 1998 से विश्व में सर्वाधिक दूध उत्पादन करने वाला देश है, के पास विश्व की सबसे बड़ी गौवंशीय आबादी है। विश्व की 15% पशुधन जनसंख्या देश के मात्र 2% भौगोलिक क्षेत्र में निवास करती है, जो पशुधन दबाव की गहनता को दर्शाता है। वर्तमान में देश को हरे चारे में 33%, सूखे फसल अवशेष में 11% और पशु आहार में 40% की कमी का सामना करना पड़ रहा है। कुल चारे की आवश्यकता का 54% हिस्सा फसल अवशेषों से पूरा होता है, जबकि 18% चारा, घास के मैदानों से प्राप्त होता है और केवल 28% चारा उगाई गई चारा फसलों से मिलता है, जिस कारण से इन फसलों की उत्पादकता में वृद्धि की अत्यधिक आवश्यकता है। इस परिप्रेक्ष्य में, गैर-रासायनिक खरपतवार प्रबंधन विधियाँ जैसे- समय पर बुआई, फसल चक्र परिवर्तन, अंतर्वर्ती फसलें, यांत्रिक निराई-गुड़ाई, दमनकारी फसलें, स्टेल सीड बेड तथा मल्चिंग, पर्यावरणीय दृष्टि से उपयुक्त और दीर्घकालिक समाधान के रूप में उभर रही हैं। ये उपाय न केवल खरपतवारों की प्रभावी रोकथाम सुनिश्चित करते हैं, बल्कि पर्यावरणीय संतुलन बनाए रखते हुए पशुधन को सुरक्षित, पोषण युक्त एवं रासायन-मुक्त चारा उपलब्ध कराने में सहायक सिद्ध होते हैं। यह शोध लेख चारा फसलों में खरपतवार प्रबंधन हेतु एकीकृत एवं रसायन-रहित दृष्टिकोणों की महत्ता को रेखांकित करता है, जो देश में टिकाऊ पशुधन उत्पादन प्रणाली को सुदृढ़ बनाने के लिए आवश्यक है।

विभिन्न चारा फसलों में पूर्व खरीफ एवं खरीफ मौसम के दौरान पाई जाने वाली प्रमुख खरपतवार वनस्पतियाँ:

गर्मी और वर्षा ऋतु में उगाई जाने वाली सभी चारा फसलों में प्रमुख खरपतवारों में *ट्रांयेन्थिमा पोर्चुलाकास्ट्रम, ट्रांयेन्थिमा मोनोगायना* (हॉर्स पर्सलेन) अत्यंत हानिकारक रूप में पाए जाते हैं। इनके साथ ही *सेलोसिया अर्जेंटिया, क्लियोम विस्कोसा, कोक्सिनियाग्रांडिस* (जंगली प्रकार) और *साइपरस एसकुलेंटस* (*पीला नट सेज*) भी व्यापक रूप से उपस्थित रहते हैं। वहीं, सर्दियों के मौसम में *कोरोनोपस डिडीमस, पोआ एन्नुआ, रुमेक्स डेंटेटस* और *चिकोरियम इंटायेबस* जैसे खरपतवार सामान्य रूप से पाये जाते हैं।

ट्रांयेन्थिमा प्रजातियाँ:

जैविक विवरण:

- यह एक स्थलीय, वार्षिक एवं भूतल पर फैलने वाला खरपतवार है, जिसकी लंबाई लगभग 40 सेमी तक हो सकती है।
- इसका अंकुरण देर शीतकाल (फरवरी से मार्च) में प्रारंभ होता है और वृद्धि प्रारंभिक सर्दियों (दिसंबर) तक जारी रहती है।
- यह पौधा अक्टूबर तक (यदि सर्दियाँ मृदु हों तो नवंबर तक) निरंतर फूल उत्पन्न करता है।
- प्रत्येक फूल से लगभग 8 से 12 बीज बनते हैं (एक पौधा कुल 224 से 504 बीज उत्पन्न कर सकता है।
- बीजों का अंकुरण जल अवशोषण के 6 से 20 दिनों के भीतर प्रारंभ हो जाता है, हालांकि कुछ बीज बाद में भी अंकुरित हो सकते हैं।

प्रजनन:

- इसका प्रजनन बीजों और पौधे के खंडित भागों (तनों या जड़ों) से होता है।
- खंडित तनों के माध्यम से यह बहुत आसानी से फैलता है; अधिक जुताई होने पर तनों का अधिक विखंडन होता है जिससे यह तेजी से फैलता है।
- बीज परिपक्व होते ही तुरन्त अंकुरित हो जाते हैं; इनमें निष्क्रियता (डोर्मेंसी) नहीं पाई जाती।
- चारा फसलों के बीच इस खरपतवार की स्थिरता के लिए इसका निरंतर पुष्पन अत्यंत महत्वपूर्ण होता है।

अजैविक तनाव:

जलभराव/अधिप्लावन:

- *ट्रांयेन्थिमा* प्रजातियाँ मिट्टी में अधिक नमी और जलभराव के प्रति अत्यधिक संवेदनशील होती हैं।
- खेत में केवल 1-2 दिन तक जल भराव की स्थिति होने पर भी अंकुरण रुक जाता है और पौधों की वृद्धि गंभीर रूप से बाधित होती है।

- ऐसी स्थिति में चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों की जगह घासकुल के खरपतवारों का प्रभुत्व बढ़ जाता है।

प्रसारः

एंडोज़ूचोरीः

- इनके बीज पालतू जानवरों (मवेशियों) के जठर तंत्र (रूमेन) से होकर गुजरने के बाद भी जीवित रहते हैं और गोबर में अंकुरण क्षमता बनाए रखते हैं।
- अधपचा गोबर/अविघटित जैविक खाद के खेत में प्रयोग से यह खरपतवार फैलता है।
- जुताई की क्रिया के दौरान खंडित पौधों के भाग एवं जड़ें खेत में फैल जाती हैं और नई पौध तैयार करती हैं।
- सिंचाई के पानी और खेत की जुताई के माध्यम से बीजों का फैलाव होता है।

सेलोसिया अर्जेंटिया:

संबंधित फसलः चारा ज्वार

जैविक विवरणः

- यह चारा ज्वार की वृद्धि अवस्था को प्राथमिकता देती है।
- खरीफ ऋतु के दौरान अच्छी तरह पनपती है और प्रारंभिक सर्दियों तक बढ़ती रहती है।
- इसकी वृद्धि आक्रामक होती है तथा यह चारा-ज्वार के साथ तीव्र प्रतिस्पर्धा करती है।
- औसतन इसकी पौध-संख्या 16 पौधे/वर्ग मीटर तक देखी गई है।
- प्रत्येक पौधा लगभग 1,716 से 3,496 बीज उत्पन्न करता है।
- यह चारा-ज्वार से ऊँचाई में अधिक बढ़ जाती है जिससे कटाई कार्यों में बाधा उत्पन्न होती है।
- कटाई के दौरान चारा-ज्वार में इस खरपतवार के मिल जाने से हरे चारे की गुणवत्ता में अत्यधिक गिरावट आती है।

प्रजननः

- यह केवल बीजों के माध्यम से ही प्रजनित होता है।
- बीज परिपक्वता के बाद निष्क्रियता (डोर्मेंसी) प्रदर्शित करते हैं।

प्रसारः

- इसके बीज बहुत हल्के वजन के होते हैं, जो हवा द्वारा आसानी से फैल जाते हैं।
- सिंचाई जल के माध्यम से बीजों का वितरण होता है।
- खेत की जुताई क्रियाओं के दौरान भी इसके बीज फैल जाते हैं।

कोक्सिनिया ग्रांडिस (जंगली प्रकार):

संबंधित फसलें: चारा मक्का एवं चारा ज्वार (पूर्व-खरीफ एवं खरीफ ऋतु में)

जैविक विवरण:

- यह खरपतवार फसल के अंकुरण से पहले ही उग आता है, जिससे नवांकुरित फसल पौधों का दमन हो जाता है।
- इसकी लतादार वृद्धि प्रवृत्ति फसल की छत्रछाया (केनोपी) के साथ मिलकर पत्तियों की वृद्धि और फसल के समुचित विकास में बाधा उत्पन्न करती है।
- इसके कारण हरे चारे की उपज, कटाई दक्षता और चारे की गुणवत्ता तीनों में गिरावट आती है।

प्रजनन:

- प्रत्येक पौधा 18 से 27 फल उत्पन्न करता है, तथा प्रत्येक फल में 136 से 164 बीज पाए जाते हैं।
- कुल बीज उत्पादन 2,934 से 4,428 बीज प्रति पौधा तक होता है।
- बीज उत्पादन की अधिकता इसके घनत्वयुक्त विस्तार को बढ़ावा देती है।

प्रसार:

- इसके बीज एंडोजूचोरी के माध्यम से फैलते हैं, अर्थात् अधपचा गोबर या अविघटित जैविक खाद में मौजूद बीज पालतू जानवरों (मवेशियों) के मल के द्वारा खेतों में पहुँचते हैं।

अजैविक तनाव प्रतिक्रिया:

- जलभराव और कीचड़ युक्त स्थितियाँ बीजों के अंकुरण को बाधित करती हैं।
- सर्दियों के मौसम में कीचड़ युक्त दशा में बरसीम की खेती करने से गर्मी और खरीफ मौसम की चारा फसलों में इस खरपतवार का प्रकोप प्रभावी रूप से दबाया जा सकता है।

क्लियोम विस्कोसा:

संबंधित फसलें: चारा मक्का एवं चारा ज्वार (पूर्व खरीफ एवं खरीफ ऋतु में)

जैविक विवरण:

- यह खरपतवार, चारा मक्का और ज्वार की विकास परिस्थितियों के अनुकूल होती है।
- पकने की अवधि हरे चारे की फसलों की कटाई से पहले होती है।
- इसकी वृद्धि आक्रामक होती है और यह फसल के साथ प्रतिस्पर्धा करता है।

प्रजनन:

- प्रत्येक पौधे में 8 से 15 फल बनते हैं।
- प्रत्येक फल में 84 से 117 बीज पाए जाते हैं।
- कुल बीज उत्पादन प्रति पौधा लगभग 672 से 1,755 बीज होता है।
- इसके बीज पशुओं के मल द्वारा/गोबर के माध्यम से खेतों में फैलते हैं।

प्रसार:

- बीज एंडोजूचोरी के द्वारा फैलते हैं, यानी अधपचा गोबर या अविघटित जैविक खाद के माध्यम से।
- पशुओं के पाचन तंत्र से होकर गुजरने के बाद भी ये बीज जीवित रहते हैं और खेतों में फैल जाते हैं।

पूर्व खरीफ एवं खरीफ ऋतुओं में अन्य खरपतवारों का वितरण:

अन्य खरपतवारों में, घासकुल के खरपतवार जैसे *ब्रेकियारिया रमोसा, इल्यूसीन इंडिका, इकाईनोक्लोआ कोलोना, डिजीटेरिया सैंगुइनेलिस* विभिन्न चारा फसलों में व्यापक रूप से वितरित पाए जाते हैं। वहीं, सेज वर्गीय खरपतवार जैसे *साइपरस एसकुलेंटस, साइपरस इरिया, साइपरस रोटंडस* तथा चौड़ी पत्ती वाला *अमेरन्थस विरिडिस* गर्मियों और खरीफ ऋतु के दौरान कुछ विशिष्ट चारा फसलों में अल्प क्षेत्रीय रूप से पाए जाते हैं।

सर्द ऋतु में विभिन्न चारा फसलों में खरपतवार वनस्पतियाँ:

1. **बरसीम में खरपतवार वनस्पतियाँ:**

- बरसीम की पहली, दूसरी, तीसरी और चौथी कटाई के दौरान पूरे चारा प्रक्षेत्र में तीन प्रमुख चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार- *कोरोनोपस डिडीमस, रुमेक्स डेंटेटस* और *चिकोरियम इंटायेबस* पाए जाते हैं।
- *कोरोनोपस डिडीमस* बरसीम की पहली कटाई तक प्रमुख खरपतवार के रूप में प्रकट होता हैं।
- अक्टूबर के अंत में तापमान अनुकूल होने पर इसके तेजी से अंकुरण और स्थापना को बढ़ावा मिलता है।
- नवम्बर में तापमान गिरने के साथ इसकी वृद्धि और अधिक तेज हो जाती है, और यह बरसीम की छत्रछाया में फलता-फूलता रहता है।
- *रुमेक्स डेंटेटस* और *चिकोरियम इंटायेबस* (चिकोरी) पहली से तीसरी कटाई तक अधिक प्रभावशाली रहते है।
- पहली कटाई और दिसंबर का कम तापमान इनके वेजिटेटिव (शाकीय) विकास को प्रोत्साहित करता है।
- दूसरी कटाई के बाद ये पौधे प्रजनन अवस्था में चले जाते है, और मार्च की शुरुआत तक बीज अवस्था तक पहुँच जाते है।
- *पोआ एन्नुआ* जनवरी के अंत में उभरता है और तीसरी कटाई से पहले आक्रामक हो जाता है।
- *रुमेक्स डेंटेटस* का प्रसार एंडोजूचोरी (पशुओं के मल के माध्यम से) द्वारा होता है।
- इसके अतिरिक्त, अपचित गोबर की खाद, कंपोस्ट और पशु शेड के पानी द्वारा सिंचाई से इसका फैलाव और बढ़ता है।

4. खरपतवार नियंत्रण हेतु गैर-रासायनिक फसल प्रबंधन विधियों का प्रयोग:

ट्रायेन्थिमा **के प्रकोप को कम करने वाले फसल प्रबंधन के उपाय:**

- *ट्रायेन्थिमा पोर्चुलाकास्ट्रम* एवं *ट्रायेन्थिमा मोनोगायना* (हॉर्स पर्सलेन) अधिकांश ग्रीष्मकालीन एवं वर्षा ऋतु की चारा फसलों में पाई जाती हैं, लेकिन पडल्ड धान में अनुपस्थित रहती हैं, क्योंकि जलभराव एक प्रभावशाली खरपतवार नियंत्रण उपाय के रूप में कार्य करता है।
- लोबिया में, ट्रायेन्थिमा खरपतवार फसल के साथ-साथ उगता है, किंतु विकास की उन्नत अवस्था में लोबिया की प्रतिस्पर्धी प्रवत्ति के कारण यह नियंत्रण में आ जाता है।

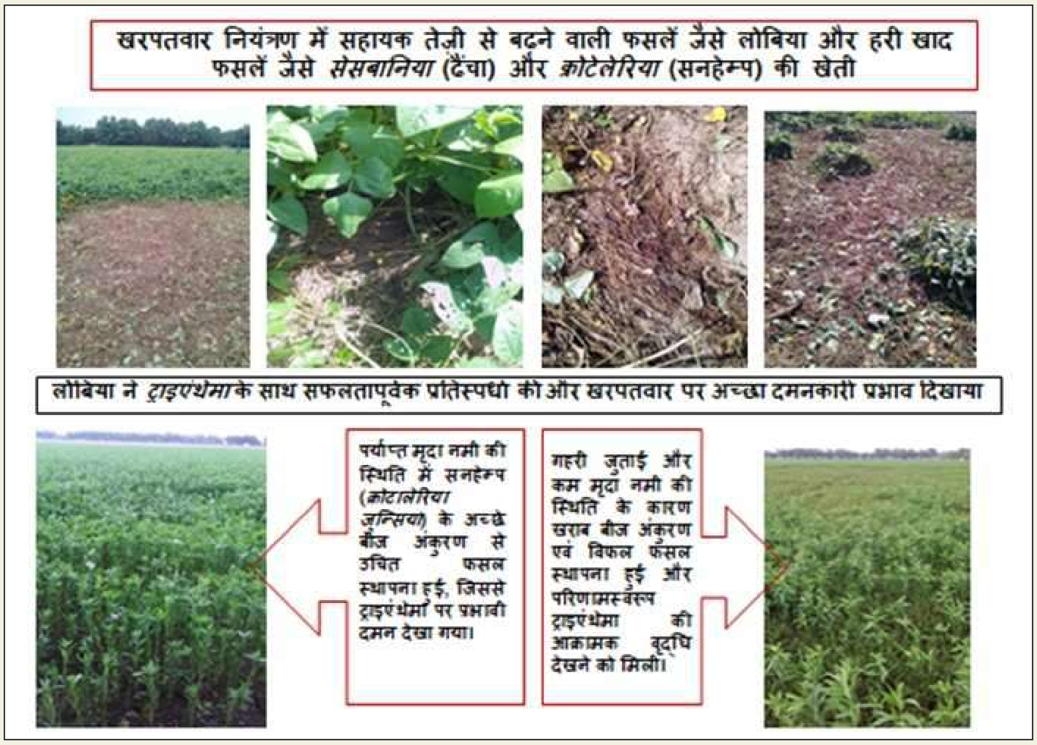

ट्रायेन्थिमा नियंत्रण हेतु मक्का + लोबिया की मिश्रित खेती:

- मक्का + लोबिया की मिश्रित खेती (दोनों फसलों का बीज दर 50%) से *ट्रायेन्थिमा पोर्चुलाकास्ट्रम* एवं *ट्रायेन्थिमा मोनोगायना* के प्रकोप में उल्लेखनीय कमी देखी जाती है।
- लोबिया द्वारा बुवाई के 20-25 दिन बाद खरपतवारों पर दबाव डाला जाता है, जिससे उनका अंकुरण एवं विकास बाधित होता है।
- यह विधि न केवल खरपतवार नियंत्रण में सहायक सिद्ध होती है, बल्कि मवेशियों के लिए अनाज-दलहन मिश्रित संतुलित हरा चारा भी उपलब्ध कराती है।
- अधिकतम लाभ प्राप्त करने हेतु समय पर कटाई अत्यंत आवश्यक होती है।

इष्टतम कटाई समय:

- बुवाई के 55 दिन बाद चारे की कटाई करने पर हरे चारे की उपज अधिकतम प्राप्त होती है।
- बोआई के 55 दिन पर मक्का और लोबिया दोनों में परस्पर सहयोगी प्रभाव देखने को मिलता है, जिससे समग्र उत्पादकता में वृद्धि होती है।

विलंबित कटाई के प्रभाव:

- बोआई के 55 से 65 दिनों के बीच, लोबिया का मक्का पर प्रभाव अतिरिक्त होता है जो इसके बाद प्रतिस्पर्धा की ओर बढ़ने लगता है।
- 65 दिन के बाद, लोबिया प्रतिस्पर्धी रुप में आ जाता है, जिससे मक्का की उपज में गिरावट आती है।
- बोआई के 65 दिन पर मक्का की उपज में 19.4% की गिरावट देखी गई है।
- बोआई के 65 दिन के बाद उपज में 37.3% तक की गिरावट देखी गई है।
- अत:, समय पर (55 दिन के बाद) कटाई करना अत्यंत आवश्यक है ताकि दोनों फसलों के बीच संतुलन बना रहे और कुल चारे की उपज अधिकतम हो सके।

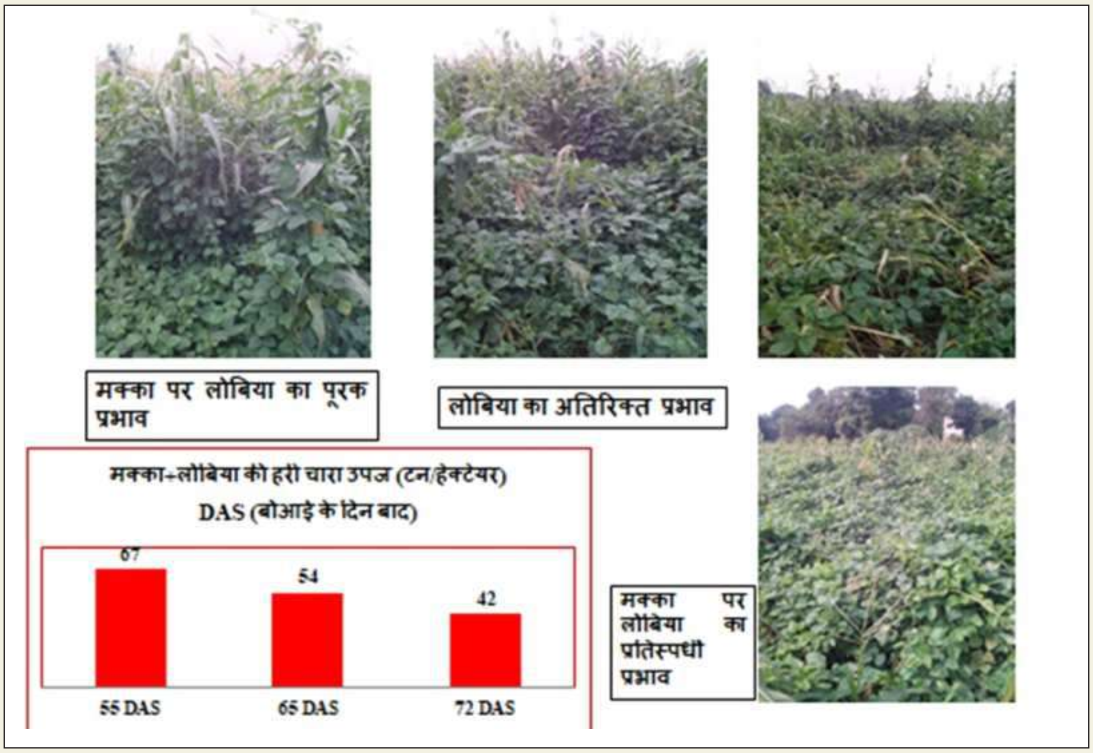

सेलेसिया अर्जेंटिया को नियंत्रित करने के लिए ज्वार का लोबिया से प्रतिस्थापन:

- *सेलेसिया अर्जेंटिया* सामान्यत: चारा ज्वार फसल के साथ पनपता हुआ खरपतवार है जो कि वृद्धि कर ज्वार से भी ऊपर बढ़ जाता है।
- यह ज्वार की कटाई से पहले बीज अवस्था तक पहुँच जाता है, जिससे ज्वार का चारा अत्यधिक प्रभावित होता है और चारे की गुणवत्ता में गिरावट आती है।
- चारा ज्वार में *सेलेसिया अर्जेंटिया* का प्रत्येक पौधा औसतन 2,606 बीज उत्पन्न करता हैं।
- खेत पर लोबिया फसल प्रतिस्थापन से *सेलेसिया अर्जेंटिया* की वृद्धि और बीज उत्पादन में स्पष्टत: कमी आती है।
- लोबिया का लतायुक्त एवं क्षैतिज फैलने वाला स्वभाव इस खरपतवार को प्रभावी रूप से दबा देता है।
- इससे *सेलेसिया अर्जेंटिया* के बीज उत्पादन में 86% तक की कमी आ जाती है।

ज्वार+लोबिया- अंतरफसल पंक्ति अनुपात 2:2

चारा फलियों के साथ ज्वार की अंतरफसल उगाने से चारे की गुणवत्ता और मिट्टी की सेहत में सुधार होता है। लोबिया और ग्वार जैसी चारा फलियों को आमतौर पर ज्वार के साथ उगाया जाता है। संतुलित हरे बायोमास उत्पादन और चारे की गुणवत्ता के लिए 2:2 का पंक्ति अनुपात आदर्श पाया गया है।

चारा बाजरा को अर्ध-शुष्क से शुष्क क्षेत्रों में ग्वार, लोबिया और सेम के साथ मिलाकर उगाया जाता है। बाजरा + लोबिया की 1:1 कतार अनुपात में अंतरफसली प्रणाली अधिकांश वृद्धि परिस्थितियों में श्रेष्ठ पाई गई है।

बरसीम में *कोरोनोपस डिडीमस* पर नियंत्रण हेतु बरसीम + गोभी सरसों की मिश्रित फसल, चिकोरी नियंत्रण हेतु बरसीम बीजों का नमक घोल से उपचार, और खरपतवार चक्र को तोड़ने हेतु बरसीम एवं जई का फसल चक्र:

- बरसीम प्रारंभिक 40 दिनों (पहली कटाई) तक धीमी गति से बढ़ता है, जिससे *कोरोनोपस डिडीमस* को पनपने का अवसर मिलता है।
- बरसीम + गोभी सरसों (600-800 ग्राम/हे.) की मिश्रित खेती से *कोरोनोपस* की वृद्धि दब जाती है।
- शीतकालीन खरपतवार प्रसार में कमी आती है।
- पहली कटाई के दोरान बरसीम की कम हरित चारा उपज की भरपाई हो जाती है।

बीज शुद्धिकरण तकनीक:

- बरसीम बीज में *चिकोरियम इंटायेबस* (चिकोरी) के बीज मिल जाते हैं क्योंकि उनका आकार समान होता है।
- 10% सामान्य नमक घोल से उपचार करने पर चिकोरी के बीज ऊपर तैरने लगते हैं, जबकि बरसीम के बीज तली में बैठ जाते हैं।

  इससे बोआई के पूर्व ही प्रभावी पृथक्करण एवं नियंत्रण संभव हो जाता है।

फसल चक्र (बरसीम↔जई):

- जई फसल *कोरोनोपस डिडीमस, रुमेक्स डेंटेटस, चिकोरियम इंटायेबस* और *पोआ एन्नुआ* जैसे खरपतवारों को दबा देती है क्योंकि:
- इसमें तीव्र टिलरिंग (प्रशाखा उत्पादन) होता है।
- घनी छाया प्रदान करने वाली संरचना होती है।
- बरसीम और जई का अदल-बदल फसल चक्र, खरपतवार जीवन चक्र को तोड़कर खरपतवार की सघनता को कम करता है।

खेत की मेड़ों पर खरपतवार प्रबंधन:

- मेड़ों पर उपस्थित *रुमेक्स डेंटेटस* एवं *चिकोरियम इंटायेबस* जैसे खरपतवार जुताई के दौरान बीज स्त्रोत के रूप में कार्य करते हैं।
- बरसीम की पहली, दूसरी एवं तीसरी कटाई के समय मेड़ों से इन खरपतवारों को हटाना:
- खरपतवार बीज उत्पादन एवं प्रसार को रोकता है।
- आने वाले सीजन में खेत में इन खरपतवारों के प्रसार को कम करता है।

बरसीम में *कोरोनोपस डिडीमस* के नियंत्रण हेतु अनपडल्ड भूमि में बरसीम + राईग्रास (मक्खन घास) की मिश्रित खेती:

- *कोरोनोपस डिडीमस* की उपस्थिति पडल्ड बरसीम में अधिकतम निरपेक्ष घनत्व और 100% निरपेक्ष आवृत्ति के साथ दर्ज की गई है।
- बरसीम + राई ग्रास (मक्खन घास) की 50% बीज दर पर अनपडल्ड स्थिति में मिश्रित बुवाई करने पर निम्नलिखित परिणाम प्राप्त होते है:
- बोआई के 56 दिन बाद (पहली कटाई पर) 5.8 पौधे/वर्ग मीटर के साथ 33.3% निरपेक्ष आवृत्ति।
- पहली कटाई के 41 दिन बाद 2.27 पौधे/वर्ग मीटर के साथ 20% निरपेक्ष आवृत्ति।

- दमन के कारण: राई ग्रास की तीव्र टिल्लरींग, तेज़ विकास दर एवं घना भूमि आवरण, ऐसा सूक्ष्म पर्यावरण बनाता है जो कम ऊँचाई व खुले स्थान को पसंद करने वाले *कोरोनोपस डिडीमस* पर प्रतिकूल प्राभाव डालता है।
- लाभ: यह मिश्रण एक संतुलित दलहन + अनाज आधारित हरा चारा प्रदान करता है जिसमें प्रोटीन की उपयुक्त मात्रा होती है।

चारा मक्का फ़सल में खरपतवार नियंत्रण हेतु फर्टी-सीड ड्रिल एवं उच्च बीज दर का प्रयोग:

- बड़े आकार के बीजों में उच्च अंकुरण क्षमता और शक्तिशाली अंकुरण के कारण तेज़ प्रारंभिक विकास होता है।

उच्च बीज दर:

- चारा मक्का में 63 किग्रा/हेक्टेयर की बीज दर से बोआई करने पर फसल की घनी पौध-संख्या प्राप्त होती है।

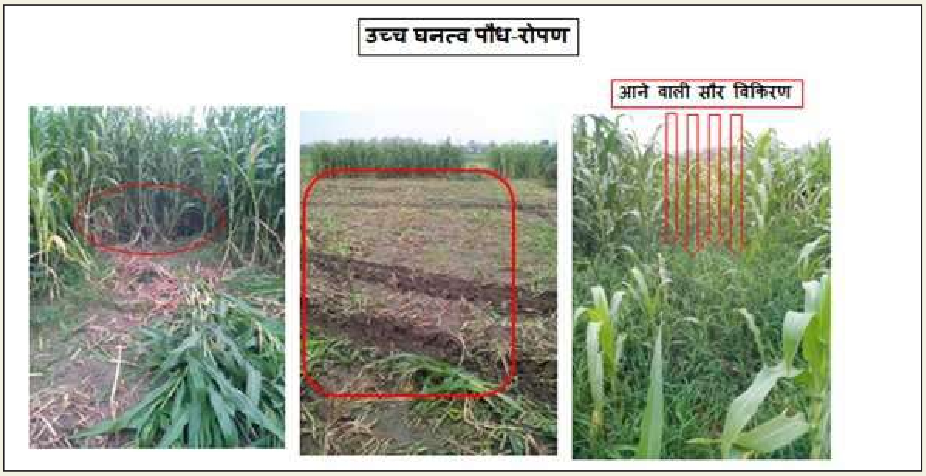

फर्टी-सीड ड्रिल से कतार में बुवाई:

- 15 सेमी पंक्ति दूरी एवं उच्च उर्वरक की स्थानीय आपूर्ति के कारण फसल का प्रारंभिक विकास बेहतर होता है।

यूरिया की टॉप ड्रेसिंग:

- समय पर यूरिया का छिड़काव एवं लक्षित पोषण से मक्का की प्रतिस्पर्धात्मक क्षमता बढ़ती है।

प्रभाव:

- मक्के का तेजी से विकास एवं प्रारंभिक भव्य विकास चरण, छत्र (केनोपी) के नीचे पनप रहे खरपतवार को उभरने से प्रतिबंधित कर देता है।
- स्थानीय उर्वरक आपूर्ति + घनी बुवाई से मक्का, खरपतवारों की तुलना में अधिक प्रतिस्पर्धी सिद्ध होता है, जिससे पारंपरिक छिटकवां बुवाई की तुलना में बेहतर परिणाम प्राप्त होते है।

- स्टेल सीड बेड एक सरल एवं प्रभावी खरपतवार प्रबंधन तकनीक है, जिसमें चार मुख्य चरण होते हैं: बीज शैय्या (सीड बेड) की तैयारी की जाती है, सतही मिट्टी में उपस्थित खरपतवार बीज प्राकृतिक रूप से या पूर्व सिंचाई के माध्यम से अंकुरित होकर उग आते हैं, अंकुरित खरपतवारों को उनकी प्रारंभिक अवस्था में न्यूनतम मृदा उलट-पलट करके नष्टकर दिया जाता है। यह प्रक्रिया 1 से 2 बार दोहराई जाती है, इसके बाद मुख्य फसल की बुवाई की जाती है।
- रासायनिक शाकनाशियों का उपयोग केवल मेड़ और सिंचाई नालियों तक सीमित किया जाता है।
- इन गैर-फसल क्षेत्रों में उगने वाले खरपतवार सिंचाई जल के माध्यम से या सीधे खेत में प्रवेश करके फसल क्षेत्र में खरपतवार बीजों का प्रसार करते हैं।
- इसलिए, इन क्षेत्रों में खरपतवार नियंत्रण अत्यंत आवश्यक है ताकि खरपतवार बीजों की आपूर्ति श्रृंखला को रोका जा सके।

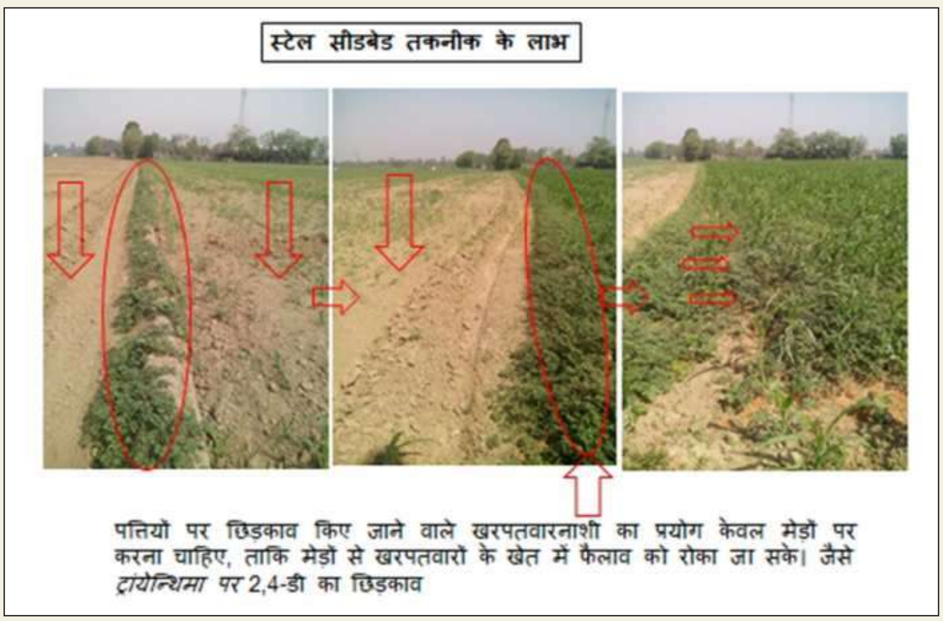

द्विउद्देश्यीय गेहूं की किस्म उगाकर *फेलेरिस माइनर* के प्रतिरोधी बायोटाइप पर नियंत्रण:

- *फेलेरिस माइनर* की एक हर्बीसाइड प्रतिरोधी बायोटाइप विकसित हो चुकी है, जो सल्फोसल्फ्यूरॉन एवं क्लोडिनाफॉप जैसे शाकनाशियों पर प्रतिक्रिया नहीं देती, लेकिन फिनॉक्साडेन अभी भी प्रभावी है।
- द्विउद्देश्यीय गेहूं (अर्थात हरे चारे एवं दाने दोनों के लिए) की खेती करने से पहली कटाई के बाद (57 दिनों पर) इस प्रतिरोधी बायोटाइप की वृद्धि को रोका जा सकता है।

- पहली कटाई के बाद गेहूं में अधिक संख्या में टिलर निकलने की क्षमता *फेलेरिस माइनर* के पुन: उगने की संभावना को समाप्त कर देती है।
- 'वी.एल.गेहूं-829' किस्म हरे चारे और दाने दोनों के लिए उपयुक्त पाई जाती है।
- कम्बाइन हार्वेस्टर के उपयोग से *फेलेरिस माइनर* और *रूमेक्स डेंटेटस* जैसे खरपतवारों के बीज पूरे खेत में फैल जाते हैं।
- हार्वेस्टर के पीछे से निकलने वाली हवा भी बीजों के प्रसार में सहायक होती है।

5. एन्डोजूचोरी:

- एन्डोजूचोरी एक बीज प्रसारण तंत्र है जिसमें पशु/मवेशी फल खाकर बीजों को मल त्याग कर अथवा उल्टी के माध्यम से फैला देते हैं।
- इन बीजों की जीवन क्षमता पशुओं के रूमेन (जठर प्रणाली) से गुजरने के बाद भी बनी रहती है।
- अविघटित गोबर/एफवाईएम या मवेशी बाड़े के जल के उपयोग से यह बीज खेतों में खरपतवार के रूप में फैल जाते हैं, जो फसल को क्षति पहुँचाते हैं और हरे चारे की गुणवत्ता को घटाते हैं।

घासकुल के खरपतवार : *पासपेलम डिस्टिकम, इकाईनोक्लोआ कोलोना*

चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार: *ट्रांयेन्थिमा पोर्चुलाकास्ट्रम, ट्रांयेन्थिमा मोनोगायना* (हॉर्स पर्सलेन), *कॉमेलिना डिफ्यूसा, रुमेक्स डेंटेटस, अमेरेन्थस विरिडिस, फिसेलिस मिनिमा, कोक्सिनियाग्रांडिस, क्लियोम विस्कोसा, फाइलेन्थस निरुरी, सेलोसिया अर्जेंटिया*

चारा फसलों में एन्डोजूचोरी द्वारा फैलने वाले खरपतवारों की रोकथाम के उपाय:

- पूरी तरह सड़ी हुई गोबर की खाद का ही उपयोग करें।
- खरपतवार रहित हरे चारे का ही उपयोग करें।
- खरपतवार बीजों से युक्त मवेशी बाड़े का जल सिंचाई हेतु प्रयोग न करें।

मक्का और ज्वार के हरे चारे में एट्राजीन अवशेष की मात्रा:

अध्ययन से यह स्पष्ट हुआ कि जब हरे चारे की कटाई 55 दिनों के पश्चात की गई, तब उसमें एट्राज़िन अवशेष पाए गए, और यह अवशिष्ट मात्रा शाकनाशी के पूर्व-उद्भवन प्रयोग की तुलना में पश्च-उद्भवन प्रयोग में अधिक थी, जब इसका प्रयोग फसल के उगने के बाद किया गया। यह इंगित करता है कि एट्राज़िन शाकनाशी का फसल में दीर्घ कालिक स्थायित्व (परसिसटेन्स) संभव है, जो पशु चारे की गुणवत्ता के लिए एक गंभीर चिंता का विषय है। हरे चारे में ऐसे रासायनिक अवशेष न केवल पशुओं के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव डाल सकते हैं, बल्कि दुग्ध की गुणवत्ता और उसकी उपयुक्तता पर भी प्रतिकूल प्रभाव डाल सकते है। अत: शाकनाशी के प्रयोग की समयावधि तथा हरे चारे की कटाई का समय वैज्ञानिक रूप से निर्धारित किया जाना चाहिए, ताकि पशु आहार और दुग्ध उत्पादों की गुणवत्ता एवं सुरक्षा सुनिश्चित की जा सके।

तालिका 1. एट्राजीन छिड़काव के 60 दिन बाद (बोआई के 62 दिन बाद) मक्का के हरे चारे में एट्राजीन अवशेष की मात्रा

पूर्व उद्भवन एट्राजीन की उपयोग दर (किग्रा/हेक्टेयर)	अवशेष मात्रा
0.50	0.0081
0.75	0.0137
1.0	0.1810
2.0	0.5310

तालिका 2. एट्राजीन छिड़काव के 38 दिन बाद (द्वितीय कटाई) ज्वार के हरे चारे में एट्राजीन अवशेष की मात्रा

पश्च उद्भवन एट्राजीन की उपयोग दर (किग्रा/हेक्टेयर)	अवशेष मात्रा
0.50	0.1296
0.75	0.2118
1.0	0.5445
2.0	0.8109

खरपतवार और कृषि : एक जटिल सम्बन्ध

आर.के. सिंह[1] एवं सौरव चौरसिया[2]

[1]कृषि विज्ञान केन्द्र, अमिहित, जौनपुर (उ.प्र.)

[2]आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)

कृषि, मानव सभ्यता के विकास की आधारशिला रही है और जैसे-जैसे मानव ने फसल उत्पादन की तकनीकों को विकसित किया वैसे-वैसे खेतों में 'खरपतवार' की समस्या एक नई चुनौती भी उभर कर सामने आयी। सामान्यत: खरपतवार उन अवांछित पौधों को कहा जाता है जो मुख्य फसल के साथ उगते हैं और उसके पोषक तत्व, प्रकाश, जल और स्थान के लिए प्रतिस्पर्धा करते हैं। परिणामस्वरूप, ये पौधे फसलों की वृद्धि, उत्पादन और गुणवत्ता पर प्रतिकूल प्रभाव डालते हैं। परन्तु यदि हम इस सम्बन्ध को केवल प्रतिद्वंद्विता तक सीमित कर दें तो यह अधूरा विश्लेषण होगा। वास्तव में, खरपतवार और कृषि का सम्बन्ध कहीं अधिक जटिल, पारिस्थितिकीय और जैविक स्तर पर गहरे जुड़ा हुआ है। कुछ परिस्थितियों में खरपतवार पारिस्थितिक संतुलन बनाए रखने, मिट्टी के स्वास्थ्य को सुधारने, भूमि क्षरण को रोकने, और जैव विविधता को बढ़ाने में भी सहायक हो सकते हैं। कुछ खरपतवारों के पास प्राकृतिक कीटनाशकों को आकर्षित करने, मिट्टी में नाइट्रोजन स्थिरीकरण करने, तथा उपयोगी जीवों के लिए आश्रय प्रदान करने जैसी भूमिकाएँ भी होती हैं।

इतिहास भी इस जटिल संबंध का साक्षी रहा है। प्राचीन कृषि प्रणालियों में कुछ खरपतवारों को औषधीय पौधों के रूप में भी स्वीकारा गया था। पारम्परिक किसानों ने यह समझा था कि हर अनचाहा पौधा वास्तव में अनावश्यक नहीं होता। आधुनिक विज्ञान भी आज इसी सोच को आगे बढ़ा रहा है, जहाँ पूर्ण उन्मूलन की जगह समेकित खरपतवार प्रबंधन जैसे संतुलित दृष्टिकोण को अपनाया जा रहा है। महान कृषि वैज्ञानिक डॉ. नार्मन बोरलॉग का कथन-

''हर खरपतवार एक कहानी कहता है, उसे केवल हटाने से पहले उसकी भाषा को समझना होगा।''

आज जब कृषि उत्पादन को टिकाऊ बनाने, पर्यावरणीय क्षरण को रोकने, और जलवायु परिवर्तन के प्रभावों से निपटने की चुनौती सामने है, तब खरपतवारों के साथ संतुलित सहअस्तित्व और उनका विवेकपूर्ण प्रबंधन और भी अधिक महत्त्वपूर्ण हो गया है।

इस लेख में हम खरपतवारों के कृषि में योगदान और चुनौती दोनों पहलुओं की गहनता से पड़ताल करेंगे। साथ ही, आधुनिक कृषि में खरपतवार प्रबंधन के नवीनतम दृष्टिकोणों, जैविक विकल्पों, तथा पर्यावरणीय संरक्षण के संदर्भ में उनकी भूमिका पर भी विस्तृत चर्चा करेंगे, जो उत्पादन क्षमता बढ़ाने और पारिस्थितिकीय संतुलन बनाए रखने में सहायक सिद्ध हो सकते हैं।

खरपतवारों के नकारात्मक प्रभाव

पोषक तत्वों और संसाधनों के लिए प्रतिस्पर्धा

खरपतवार खेत में उगकर फसलों से आवश्यक संसाधनों जैसे जल, पोषक तत्व, प्रकाश और स्थान के लिए सीधी प्रतिस्पर्धा करते हैं। प्रारंभिक वृद्धि के चरणों में जब फसलें कमजोर होती हैं, तब खरपतवारों की उपस्थिति उनकी वृद्धि को अत्यधिक प्रभावित कर सकती है।

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली द्वारा किए गए एक व्यापक सर्वेक्षण में यह पाया गया कि यदि प्रारंभिक 30-40 दिन तक खरपतवारों को नियंत्रित न किया जाए तो उपज में औसतन 35-40 प्रतिशत तक की गिरावट हो सकती है। खासतौर पर पानी और पोषक तत्वों की सीमित उपलब्धता वाले क्षेत्रों में खरपतवारों की प्रतिस्पर्धा फसलों के अस्तित्व के लिए घातक सिद्ध हो सकती है।

उत्पादन लागत में वृद्धि

खरपतवारों के नियंत्रण के लिए किसानों को नियमित निराई-गुड़ाई, मशीनी साधनों या खरपतवारनाशी का प्रयोग करना पड़ता है। इसके चलते-

- श्रम लागत में वृद्धि होती है।
- रसायनों और मशीनों पर अतिरिक्त व्यय होता है।
- उत्पादन की दक्षता प्रभावित होती है।

भारत में औसत कृषि लागत का लगभग 15-20 प्रतिशत भाग खरपतवार प्रबंधन में ही व्यय हो जाता है। इससे किसानों का लाभांश कम हो जाता है और खेती एक महंगा उद्यम बनती जा रही है।

बीमारियों एवं कीटों का वाहक

कई प्रकार के खरपतवार पौधों के रोगों और कीटों के लिए आदर्श आश्रय स्थल बन जाते हैं। उदाहरण के लिए- *पार्थेनियम हिस्टेरोफोरस* न केवल एलर्जेनिक है बल्कि विभिन्न फसलों में रोगजनकों को भी संरक्षित करता है। ऐमरैंथस प्रजातियाँ विभिन्न वायरस जनित रोगों के वाहक बनती हैं जो प्रमुख फसलों में संक्रमण फैलाते हैं। इस प्रकार खरपतवारों का अप्रत्यक्ष प्रभाव फसलों की स्वास्थ्य एवं उत्पादकता पर गहरा पड़ता है।

गुणवत्ता में गिरावट

फसल उत्पादन के अंतिम चरण में खरपतवार बीजों का मिलना एक गंभीर समस्या बन जाती है। उदाहरण के लिए धान या दलहन की फसल में खरपतवार बीज मिलावट से न केवल घरेलू बाजार में बल्कि अंतरराष्ट्रीय निर्यात बाजार में भी गुणवत्ता गिरती है। कई बार विषैले खरपतवारों (जैसे-*आर्जिमोन मेक्सिकाना*) के बीज अनजाने में अनाज में मिलकर खाद्य विषाक्तता का कारण बनते हैं।

खरपतवारों के सकारात्मक पहलू

मृदा संरक्षण

जब खेत खाली रहते हैं, तो खुली मिट्टी वर्षा, तेज हवा और तापमान के उतार-चढ़ाव से क्षतिग्रस्त होती रहती है और ऐसे में खरपतवार:

- भूमि पर प्राकृतिक आवरण बनाकर कटाव को रोकते हैं।
- मिट्टी की नमी और जैविक पदार्थों को संरक्षित करते हैं।
- मृदा के पोषक तत्वों के पुनर्चक्रण में सहायता करते हैं।

विशेषकर *साइपरस रोटंडस* और *पोर्टुलाका* जैसे खरपतवार की प्रजातियाँ सूखे क्षेत्रों में मिट्टी के स्वास्थ्य को बचाए रखने में सहायक होती हैं।

जैव विविधता और पारिस्थितिकीय संतुलन

खरपतवारों का खेतों में अस्तित्व मधुमक्खियों, तितलियों, परागणकर्ता कीटों और अन्य लाभकारी जीवों के लिए भोजन एवं आश्रय का स्रोत बनता है। विभिन्न अध्ययनों ने यह सिद्ध किया है कि फसलों के किनारे उगने वाले खरपतवार क्षेत्र में परागण गतिविधियों में औसतन 20-30 प्रतिशत की वृद्धि कर सकते हैं, जिससे अन्ततः फसल उत्पादन बढ़ता है।

औषधीय एवं पोषक महत्व

भारतीय आयुर्वेद और लोक चिकित्सा में कई खरपतवारों का उपयोग औषधि के रूप में होता आया है:-

पुनर्नवा: मूत्र संबंधी विकारों एवं सूजन में लाभकारी।

बथुआ: लौह तत्व और विटामिन्स का प्रचुर स्रोत।

भृंगराज: बालों की वृद्धि और जिगर विकारों में उपयोगी।

चिरयता: बुखार नियन्त्रित करने में उपयोगी।

इस प्रकार यदि वैज्ञानिक दृष्टिकोण से देखा जाए तो खरपतवारों का उचित उपयोग कृषि और स्वास्थ्य दोनों क्षेत्रों में लाभकारी हो सकता है।

पारिस्थितिकीय संकेतक

कुछ विशेष प्रकार के खरपतवार मृदा की स्वास्थ्य स्थिति के प्राकृतिक संकेतक होते हैं। उदाहरण स्वरूप: *फिलैंथस निरुरी* की अधिकता मिट्टी में नाइट्रोजन की कमी का संकेत करती है। सेज (साइपरेसी) की अधिकता भूमि में जलभराव का संकेत देती है। ऐसे संकेतकों के आधार पर किसान अपनी कृषि रणनीतियों को समायोजित कर सकते हैं।

खरपतवार प्रबंधन में संतुलित दृष्टिकोण

समेकित खरपतवार प्रबंधन (IWM)

समेकित खरपतवार प्रबंधन आधुनिक कृषि का एक समग्र दृष्टिकोण है, जिसमें:

- यांत्रिक उपाय (हाथ से निराई, यंत्रों का उपयोग)
- रासायनिक उपाय (खरपतवारनाशी का सीमित और लक्षित प्रयोग)
- जैविक उपाय (प्राकृतिक शत्रुओं का उपयोग)
- कल्चरल विधियाँ (फसल चक्रीकरण, मृदा आच्छादन फसलें, समय पर बुवाई, ग्रीष्मकालीन गहरी पलटाई आदि) का एक समन्वय बनाकर खरपतवारों का प्रबंधन किया जाता है।

इस पद्धति का लक्ष्य केवल खरपतवारों का उन्मूलन नहीं, बल्कि पर्यावरणीय संतुलन बनाए रखते हुए टिकाऊ खेती सुनिश्चित करना है।

स्मार्ट तकनीकों का उपयोग

वर्तमान में तकनीकी नवाचारों से खरपतवार प्रबंधन को एक नई दिशा मिली है:

- ड्रोन आधारित छिड़काव से विशिष्ट क्षेत्र में सटीक खरपतवारना"ाी का उपयोग संभव हुआ है।
- ए.आई. आधारित वीडिंग रोबोट्स फसल और खरपतवार में अंतर पहचान कर स्वतः निष्पादन कर रहे हैं।
- जी.आई.एस. और रिमोट सेंसिंग तकनीकों से खेत के विभिन्न हिस्सों में खरपतवारों का वास्तविक समय में विश्लेषण संभव हो सका है।

खरपतवारनाशी प्रतिरोध क्षमता से निपटना

प्रत्येक वर्ष एवं बार-बार एक ही प्रकार के हर्बीसाइड का प्रयोग करने से खरपतवारों में प्रतिरोध क्षमता विकसित हो रहा है, जिससे वे पहले से अधिक कठिनाई से नियंत्रित हो रहे हैं। इस समस्या से निपटने हेतु:

- विभिन्न सक्रिय घटकों वाले खरपतवारनाशी का बारी-बारी से उपयोग।
- खरपतवारनाशी की खुराक और समय का वैज्ञानिक निर्धारण।
- वैकल्पिक नियंत्रण उपायों का समावेशन आवश्यक हो गया है।

जैविक नियंत्रण और प्राकृतिक शत्रु

प्राकृतिक शत्रुओं का प्रयोग एक पर्यावरण-अनुकूल समाधान है।

- *जाइगोग्रामा बाइकोलोराटा* बीटल का उपयोग पार्थेनियम नियंत्रण में सफलतापूर्वक किया गया है।
- *फ्यूजेरियम ऑक्सीस्पोरम* फफूंद कुछ विशिष्ट खरपतवारों को लक्षित कर उन्हें स्वाभाविक रूप से नष्ट कर देती है।

खरपतवार और बदलती जलवायु

जलवायु परिवर्तन ने खरपतवार पारिस्थितिकी को अत्यधिक प्रभावित किया है:-

- उच्च तापमान और असामान्य वर्षा पैटर्न ने कई आक्रामक खरपतवारों के लिए आदर्श स्थितियाँ बना दी हैं।
- कुछ खरपतवार प्रजातियाँ अब कम समय में बीज उत्पादन कर तेजी से फैल रही हैं।
- खरपतवारनाशी प्रतिरोधी खरपतवारों की संख्या भी लगातार बढ़ रही है।

इसके परिणामस्वरूप किसानों को अधिक जटिल और विवेकपूर्ण प्रबंधन रणनीतियों को अपनाना पड़ रहा है। भविष्य की कृषि को 'जलवायु-लचीला खरपतवार प्रबंधन' अपनाना ही पड़ेगा।

निष्कर्ष

- खरपतवारों और कृषि के बीच का संबंध मात्र संघर्ष तक सीमित नहीं है, बल्कि यह एक गहन पारिस्थितिकीय, सामाजिक और आर्थिक संबंध है।
- जहाँ एक ओर खरपतवार फसलों के लिए प्रतिस्पर्धा का खतरा उत्पन्न करते हैं, वहीं दूसरी ओर वे मृदा संरक्षण, जैव विविधता वृद्धि और प्राकृतिक संकेतक के रूप में भी कार्य करते हैं।
- आज के समय में आवश्यकता है कि हम खरपतवारों को केवल विनाश योग्य नहीं, बल्कि समझ योग्य भी मानें।
- समेकित खरपतवार प्रबंधन, तकनीकी नवाचार, और पारिस्थितिकीय संतुलन के साथ हमें एक ऐसी कृषि प्रणाली विकसित करनी होगी जो टिकाऊ, लाभकारी और पर्यावरण के अनुकूल हो।
- अत: आने वाली पीढ़ियों के लिए सुरक्षित, उत्पादक और हरित कृषि का भविष्य खरपतवारों के साथ समझदारीपूर्वक सहअस्तित्व में ही निहित है।

हिन्दी ही ऐसी भाषा है जिसमें हमारे देश की समस्त भाषाओं का समन्वय है।

-राजर्षि पुरुषोत्तम दास टण्डन

हमारी नागरी लिपि दुनिया की वैज्ञानिक लिपि है।

-राहुल सांकृत्यायन

हाइपरस्पेक्ट्रल सिग्नेचर के माध्यम से खरपतवार प्रजातियों की पहचान

सुरभि होता एवं योगिता घरडे
भाकृअनुप-खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)

भारत एक कृषि प्रधान देश है, जहाँ देश की अधिकांश जनसंख्या आजीविका के लिए कृषि पर निर्भर है। फसल उत्पादन में वृद्धि और खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए फसलों को रोगों, कीटों और विशेषकर खरपतवारों से बचाना अत्यंत आवश्यक हो जाता है। खरपतवार ऐसे अवांछनीय पौधे होते हैं, जो न केवल फसलों से पोषक तत्व, जल, प्रकाश और स्थान के लिए प्रतिस्पर्धा करते हैं, बल्कि कई बार वे हानिकारक कीटों और रोगों के वाहक भी बनते हैं।

खरपतवार की उपस्थिति से फसल की वृद्धि दर घटती है और उत्पादन में भारी कमी आती है। भारत में कई लाख टन अनाज हर वर्ष केवल खरपतवारों के कारण नुकसान में चला जाता है। पारंपरिक रूप से खरपतवारों की पहचान मानव दृष्टि या मैन्युअल निरीक्षण पर आधारित होती है, जिसमें समय, श्रम और विशेषज्ञता की आवश्यकता होती है। साथ ही यह प्रक्रिया बड़े खेतों में व्यावहारिक रूप से चुनौतीपूर्ण और त्रुटिपूर्ण भी हो सकती है।

ऐसे में एक अत्याधुनिक तकनीक के रूप में हाइपरस्पेक्ट्रल इमेजिंग (Hyperspectral Imaging-HSI) सामने आई है, जो बिना पौधों को क्षति पहुँचाए उनकी पहचान करने, वर्गीकृत करने और विश्लेषण करने में सक्षम है। यह तकनीक खरपतवारों की समय पर पहचान कर उनके प्रभावी नियंत्रण की दिशा में क्रांति ला सकती है।

हाइपरस्पेक्ट्रल इमेजिंग और सिग्नेचर क्या है?

हाइपरस्पेक्ट्रल इमेजिंग एक उन्नत तकनीक है जो किसी वस्तु से परावर्तित सौर प्रकाश को कई सौ संकीर्ण तरंगदैर्ध्य बैंड्स (Narrow Wavelength Bands) में रिकॉर्ड करती है। साधारण RGB इमेजिंग तकनीक जहाँ केवल तीन बैंड (लाल, हरा, नीला) में दृश्य डेटा देती है, वहीं हाइपरस्पेक्ट्रल इमेजिंग 0.3 से 2.5 माइक्रोमीटर तक के सैकड़ों बैंड्स में जानकारी एकत्र करती है।

जब सूर्य का प्रकाश किसी पौधे की सतह पर पड़ता है, तो पौधे की शारीरिक और रासायनिक संरचना के अनुसार कुछ प्रकाश अवशोषित होता है और कुछ परावर्तित होता है। इस परावर्तित प्रकाश के विशेष पैटर्न को हीस्पेक्ट्रल सिग्नेचर कहा जाता है। प्रत्येक पौधा, उसकी पत्ती की बनावट, रंग, जल-सामग्री, क्लोरोफिल और अन्य रासायनिक घटकों के अनुसार एक विशिष्ट सिग्नेचर उत्पन्न करता है।

इन सिग्नेचरों का विश्लेषण कर यह जाना जा सकता है कि पौधा किस प्रजाति का है- जैसे कि वह फसल है या खरपतवार, और यदि खरपतवार है, तो किस प्रकार का। यही हाइपरस्पेक्ट्रल तकनीक की विशेषता है। यह दृष्टिगोचर रूप से एक जैसे दिखने वाले पौधों को भी उनके स्पेक्ट्रल पैटर्न के आधार पर अलग कर सकती है।

खरपतवार पहचान में HSI की भूमिका:

1. **सटीक पहचान:** हाइपरस्पेक्ट्रल डेटा खरपतवार और फसल के बीच सूक्ष्म अंतर को भी पहचानने में सक्षम होता है। यह तकनीक एक ही क्षेत्र में उग रही विभिन्न खरपतवार प्रजातियों को भी अलग-अलग पहचान सकती है।
2. **रियल टाइम निगरानी:** ड्रोन या उपग्रह आधारित हाइपरस्पेक्ट्रल सेंसर के माध्यम से खेतों की वास्तविक समय में निगरानी संभव होती है, जिससे समय रहते खरपतवार नियंत्रण के उपाय किए जा सकते हैं।
3. **गैर-विनाशकारी विधि:** यह तकनीक बिना मिट्टी या पौधों को क्षति पहुँचाए जानकारी एकत्र करती है, जिससे फसल पर कोई नकारात्मक प्रभाव नहीं पड़ता।
4. **स्वचालित विश्लेषण:** आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस और मशीन लर्निंग एल्गोरिदम की मदद से हाइपरस्पेक्ट्रल डेटा का तेजी से विश्लेषण कर खरपतवार पहचान को और भी प्रभावी बनाया जा सकता है।

अध्ययन विषयक केस स्टडी:

एक अध्ययन भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद-खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर परिसर में कुछ सामान्य खरपतवार प्रजातियों की पहचान हेतु उनके हाइपरस्पेक्ट्रल सिग्नेचर के माध्यम से किया गया। इस अध्ययन के लिए तीन खरपतवार प्रजातियाँ *पोर्टुलाका ओलेरेसिया, ऑल्टर्नन्थेरा सेसिलिस* और *ट्राइडैक्स प्रोकम्बेन्स* को चुना गया, जो एक समान खेत में स्वस्थ अवस्था में पाई गई। इन पौधों की पत्तियों के स्पेक्ट्रल सिग्नेचर को 0.34 से 2.4 माइक्रोमीटर (μm) की तरंगदैर्ध्य सीमा में रिकॉर्ड किया गया, जिसमें SVC HR 768 स्पेक्ट्रोरैडियो मीटर का उपयोग किया गया। मापन का समय दोपहर 12:30 बजे चुना गया, जब वनस्पति को सूर्य से प्रचुर मात्रा में प्रकाश प्राप्त हो रहा था। प्राप्त स्पेक्ट्रल सिग्नेचरों का अध्ययन पूरे तरंगदैर्ध्य क्षेत्र में किया गया।

परावर्तन वक्र (Reflectance Curve) (चित्र 1) से यह संकेत मिला कि तीनों खरपतवार प्रजातियाँ दृश्यमान (Visible) से समीप-अवरक्त (Near-Infrared NIR) क्षेत्र (0.7-1.0 μm) में परावर्तन में महत्वपूर्ण वृद्धि प्रदर्शित करती हैं। यह वृद्धि मुख्यत: पत्तियों की संरचनात्मक विशेषताओं और पौधों के ऊतकों में आंतरिक बिखराव (internal scattering) के कारण होती है। इस क्षेत्र में सबसे अधिक

परावर्तन *ऑल्टर्नन्थेरा सेसिलिस* में देखा गया (लगभग 0.8-1.2 μm पर), जो इसकी अन्य प्रजातियों की तुलना में विशिष्ट स्पेक्ट्रल सिग्नेचर को दर्शाता है। इसका कारण इसकी चिकनी पत्ती सतह और चमकीले हरे रंग की पत्तियाँ हैं। वहीं, *पोर्टुलाका ओलेरेसिया* ने इस क्षेत्र में सबसे कम परावर्तन (%) प्रदर्शित किया, जिसका कारण इसकी पत्तियों का बैंगनी-हरा रंग और छोटे आकार का होना माना गया। सभी प्रजातियों के लिए लघु-तरंग अवरक्त क्षेत्र (Short-Wave Infrared SWIR) (1.3-2.4 μm) में परावर्तन धीरे-धीरे घटता गया, जहाँ जल अवशोषण और अन्य पौध जैव रासायनिक गुण प्रभावी होते हैं। *पोर्टुलाका ओलेरेसिया* और *ट्राइडैक्स प्रोकम्बेन्स* ने SWIR क्षेत्र में समान परावर्तन प्रवृत्ति दिखाई, जो कि *ऑल्टर्नन्थेरा सेसिलिस* की तुलना में कम था। परावर्तन में ये अंतर, विशेष रूप से हरे और लाल वर्णक्रमीय क्षेत्रों में, हाइपरस्पेक्ट्रल इमेजिंग तकनीक की सहायता से खरपतवार प्रजातियों के बीच भेद करने का एक मजबूत आधार प्रदान करते हैं।

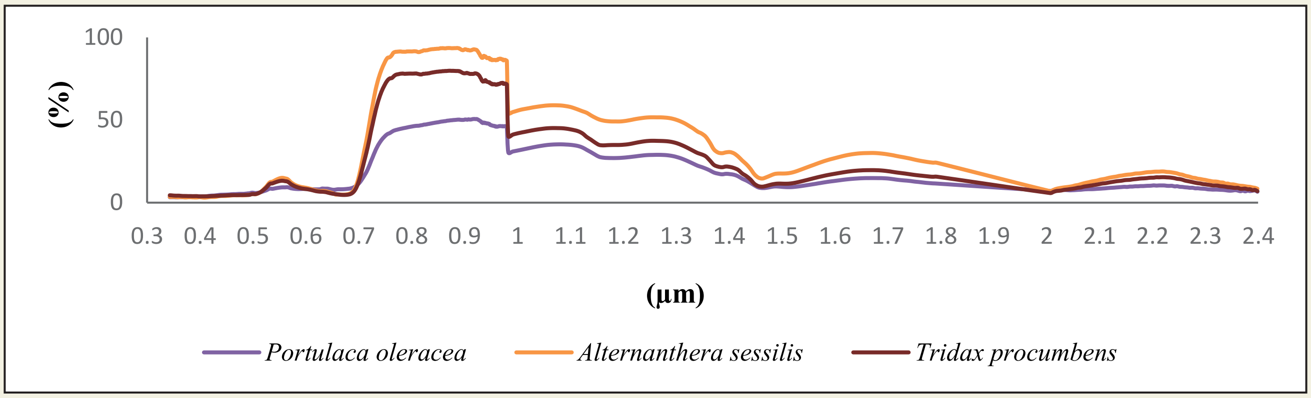

चित्र 1. दृश्य से लेकर लघु-तरंग अवरक्त (SWIR) क्षेत्र (0.3 से 2.4 माइक्रोमीटर) तक विद्युत चुंबकीय स्पेक्ट्रम में खरपतवारों की स्पेक्ट्रल परावर्तन वक्र

प्रमुख चुनौतियाँ:

- डेटा की विशालता: हाइपरस्पेक्ट्रल इमेजिंग में बहुत अधिक मात्रा में डेटा उत्पन्न होता है, जिसे स्टोर और प्रोसेस करना चुनौतीपूर्ण हो सकता है।
- लागत: उच्च गुणवत्ता वाले हाइपरस्पेक्ट्रल सेंसर और ड्रोन प्रणाली की लागत अभी भी किसानों के लिए एक बड़ी बाधा है।
- तकनीकी प्रशिक्षण: इस तकनीक का लाभ उठाने के लिए विशेषज्ञता और प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है।

भविष्य की दिशा:

- कम लागत वाले सेंसर और ओपन-सोर्स एल्गोरिदम के विकास से यह तकनीक अधिक सुलभ हो सकती है।
- राज्य सरकारें और कृषि अनुसंधान संस्थान मिलकर इस तकनीक को खेतों तक पहुँचाने में सहायक बन सकते हैं।
- "स्मार्ट कृषि" की दिशा में यह तकनीक एक क्रांतिकारी कदम साबित हो सकती है।

निष्कर्ष:

हाइपरस्पेक्ट्रल सिग्नेचर के माध्यम से खरपतवार की पहचान कृषि क्षेत्र में सटीकता, दक्षता और स्थायित्व की दृष्टि से अत्यंत उपयोगी तकनीक है। यदि इसे उचित ढंग से अपनाया जाए और किसानों को इसके उपयोग का प्रशिक्षण दिया जाए, तो यह खरपतवार प्रबंधन की दिशा में एक प्रभावी समाधान बन सकता है, जो अंततः खाद्य सुरक्षा और किसान की आमदनी बढ़ाने में सहायक सिद्ध होगा।

हिन्दी के द्वारा ही सारे भारत को एक सूत्र में पिरोया जा सकता है।

-स्वामी दयानंद सरस्वती

गेहूं में बेहतर खरपतवार नियंत्रण के लिए नाइट्रोजन युक्त उर्वरकों और शाकनाशियों का उपयोग

शिवानी ठाकुर, जगजीत पंथी, वी.के. चौधरी, बादल वर्मा एवं संस्कृति राय
भाकृअनुप-खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)

प्रस्तावना

गेहूं भारत में धान के बाद दूसरी सबसे महत्वपूर्ण खाद्यान्न फसल है और देश की खाद्य सुरक्षा और अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। हालाँकि, भारत विश्व में गेहूं उत्पादन में अग्रणी देशों में से एक है। गेहूं भारत के लाखों किसानों की आजीविका का प्रमुख साधन और देशवासियों के भोजन का आधार है। गेहूं मुख्यत एक रबी फसल है, जिसे नवंबर-दिसंबर में बोया जाता है और मार्च-अप्रैल में काटा जाता है। हरित क्रांति के बाद भारत में गेहूं उत्पादन में अभूतपूर्व वृद्धि हुई है। लेकिन आज भी उपज को प्रभावित करने वाले अनेक कारक मौजूद हैं, जिसमे मुख्य रूप से जलवायु परिवर्तन (खासकर दाना भरने की अवस्था में तापमान वृद्धि), मृदा स्वास्थ्य में गिरावट, खरपतवारों में शाकनाशी प्रतिरोध, असमय या अनुचित कृषि पद्धतियाँ शामिल है। कृषि तकनीकों में प्रगति के बावजूद, गेहूं उत्पादन कई चुनौतियों का सामना कर रहा है, जिनमें खरपतवार संक्रमण एक प्रमुख कारण है जो उपज को सीमित करता है। खरपतवारों के कारण होने वाली हानि को कम करने के लिए प्रभावी और समय पर प्रबंधन आवश्यक है। उचित कृषि तकनीकों, उन्नत शाकनाशी रणनीतियों और समन्वित फसल प्रबंधन से गेहूं के उत्पादन को बेहतर किया जा सकता है।

भारत में गेहूं उत्पादन और उत्पादकता

भारत में हर वर्ष लगभग 29-30 मिलियन हेक्टेयर भूमि पर गेहूं की खेती की जाती है। वर्ष 2022-23 में भारत का गेहूं उत्पादन लगभग 112 मिलियन टन रहा। प्रमुख गेहूं उत्पादक राज्य हैं: उत्तरप्रदेश, पंजाब, हरियाणा, मध्यप्रदेश और बिहार। औसत उत्पादकता लगभग 3500-4000 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर के बीच है, जो विश्व औसत से बेहतर है, लेकिन विकसित देशों से अभी भी कम है।

गेहूं फसल में पोषक तत्व प्रबंधन

उच्च उत्पादन और बेहतर गुणवत्ता प्राप्त करने के लिए संतुलित पोषक तत्त्व प्रबंधन अत्यंत आवश्यक है। पोषक तत्त्वों की सही मात्रा और समय पर आपूर्ति से न केवल उपज में वृद्धि होती है, बल्कि मिट्टी की उर्वरता भी बनी रहती है। गेहूं की फसल के लिए नाइट्रोजन, फॉस्फोरस और पोटाश जैसे प्रमुख पोषक तत्त्वों की आवश्यकता होती है। नाइट्रोजन पौधों की वृद्धि और हरे भागों के विकास में सहायक होता है, जबकि फॉस्फोरस जड़ प्रणाली को मजबूत बनाता है और अनाज पकने की प्रक्रिया में सहायक होता है। पोटाश पौधों में जल संतुलन बनाए रखने और रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने में मदद करता है। इसके अतिरिक्त सल्फर, जिंक और बोरॉन जैसे सूक्ष्म पोषक तत्त्व भी गेहूं की गुणवत्ता और उत्पादन को बेहतर बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

पोषक तत्त्वों का प्रबंधन मिट्टी परीक्षण के आधार पर करना चाहिए ताकि फसल को आवश्यकतानुसार सही मात्रा में उर्वरक मिल सके। आमतौर पर बुवाई के समय एक तिहाई नाइट्रोजन तथा पूरी फॉस्फोरस और पोटाश की मात्रा खेत में डालनी चाहिए, जबकि शेष नाइट्रोजन को दो चरणों में फसल की विभिन्न अवस्थाओं पर देना चाहिए, पहली किस्त सी.आर.आई. अवस्था में और दूसरी बालियों के निकलने के समय। आधुनिक तकनीकों के उपयोग जैसे नैनो यूरिया का छिड़काव परंपरागत यूरिया के स्थान पर किया जा सकता है, जो पोषक तत्त्वों की दक्षता बढ़ाता है और पर्यावरण के लिए भी बेहतर विकल्प है। इसके अलावा धीमी गति से घुलने वाले उर्वरकों का उपयोग पोषक तत्वों की निरंतर आपूर्ति सुनिश्चित करता है।

जैविक उर्वरकों जैसे गोबर खाद, वर्मी कंपोस्ट तथा जैव उर्वरकों का उपयोग मिट्टी की उर्वरता को बनाए रखने में मदद करता है और टिकाऊ खेती को बढ़ावा देता है। उचित जल प्रबंधन तथा समय पर खरपतवार नियंत्रण भी पोषक तत्त्वों के प्रभावी उपयोग में सहायक होते हैं। इस प्रकार, संतुलित और वैज्ञानिक तरीके से पोषक तत्त्वों का प्रबंधन कर किसान गेहूं की उपज और गुणवत्ता में उल्लेखनीय वृद्धि कर सकते हैं, साथ ही मिट्टी के स्वास्थ्य को भी बनाए रख सकते हैं, जो दीर्घकालिक कृषि सफलता के लिए अत्यंत आवश्यक है।

''गेहूं फसल में नैनो यूरिया" खेती में पोषक तत्त्वों के कुशल प्रबंधन के लिए नैनो तकनीक का प्रयोग आज की आवश्यकता बन गया है। पारंपरिक उर्वरकों के अधिक प्रयोग से न केवल उत्पादन लागत बढ़ती है, बल्कि मिट्टी और जल स्रोतों में प्रदूषण की समस्या भी उत्पन्न होती है। ऐसे में नैनो उर्वरक और विशेषकर नैनो यूरिया ने एक बेहतर विकल्प के रूप में स्थान बनाया है। नैनो यूरिया में नाइट्रोजन के अति सूक्ष्म कण होते हैं, जिनका आकार 20 से 50 नैनोमीटर के बीच होता है। यह आकार पौधों द्वारा पोषक तत्त्वों के अवशोषण को अत्यधिक प्रभावी बनाता है। जब नैनो यूरिया का पत्तियों पर छिड़काव किया जाता है, तो पौधे इसे सीधे अवशोषित कर लेते हैं, जिससे नाइट्रोजन की कमी तुरंत पूरी होती है और पौधों की वृद्धि तेज होती है। गेहूं जैसी प्रमुख फसलों में, जहां नाइट्रोजन की आवश्यकता अधिक होती है, नैनो यूरिया का प्रयोग फसल की गुणवत्ता, दाने की संख्या, बालियों की लंबाई तथा कुल उत्पादन पर सकारात्मक प्रभाव डालता है।

नैनो यूरिया के प्रयोग से परंपरागत दानेदार यूरिया की तुलना में 50% तक नाइट्रोजन उर्वरक की बचत संभव है, जो न केवल किसानों के खर्च को कम करता है बल्कि मिट्टी की दीर्घकालिक उर्वरता को भी बनाए रखने में मदद करता है। साथ ही, नैनो यूरिया पर्यावरणीय दृष्टिकोण से भी लाभकारी है, क्योंकि यह नाइट्रोजन के रिसाव और वाष्पन को कम करता है, जिससे जल स्रोतों में प्रदूषण और वायुमंडलीय नाइट्रस ऑक्साइड गैसों के उत्सर्जन में भी कमी आती है। गेहूं की खेती में नैनो यूरिया का पहला छिड़काव बुवाई के 30-35 दिन बाद, यानी सी.आर.आई. अवस्था में किया जाता है, और दूसरा छिड़काव बालियों के बनने के समय पर किया जाता है, जिससे दानों का आकार और वजन बढ़ता है।

इसके अतिरिक्त नैनो फास्फोरस, नैनो पोटाश और अन्य नैनो उर्वरकों पर भी अनुसंधान जारी है, जिनका भविष्य में गेहूं सहित अन्य फसलों की पोषण आवश्यकताओं को पूरा करने में विशेष योगदान रहेगा। नैनो तकनीक के व्यापक उपयोग से किसानों को कम लागत में अधिक उत्पादन, बेहतर गुणवत्ता और पर्यावरणीय सुरक्षा का लाभ मिल सकता है। अतः यह कहा जा सकता है कि गेहूं फसल में नैनो उर्वरक और नैनो यूरिया का प्रयोग कृषि क्षेत्र में एक हरित और टिकाऊ क्रांति की दिशा में महत्वपूर्ण कदम है।

पोषण प्रबंधन के खरपतवार नियंत्रण में लाभ

खरपतवार नियंत्रण में पोषण प्रबंधन की महत्वपूर्ण भूमिका होती है, क्योंकि उचित पोषक तत्वों का प्रबंधन फसल की वृद्धि को बढ़ाता है और उसे खरपतवारों के मुकाबले अधिक प्रतिस्पर्धी बनाता है। जब खेत में संतुलित मात्रा में उर्वरक, जैविक खाद, और सूक्ष्म पोषक तत्व दिए जाते हैं, तो फसल मजबूत, सघन और तेजी से विकसित होती है, जिससे खरपतवारों को जगह, प्रकाश, नमी और पोषक तत्वों तक पहुँचने में कठिनाई होती है। इससे खरपतवारों की संख्या और उनके नुकसान की संभावना कम हो जाती है। इसके अलावा, उचित पोषक प्रबंधन से खरपतवारों की अत्यधिक वृद्धि को प्रोत्साहन नहीं मिलता। जैसे, नाइट्रोजन की अधिक मात्रा से अकसर खरपतवार तेजी से बढ़ते हैं, लेकिन संतुलित और फसल-उपयुक्त मात्रा देने पर फसल को लाभ मिलता है, न कि खरपतवार को।

पोषण प्रबंधन का एक और लाभ यह है कि इससे खरपतवारनाशियों की आवश्यकता कम हो जाती है, जिससे किसानों की लागत घटती है और पर्यावरणीय प्रभाव कम होता है। जैविक खाद और कंपोस्ट के प्रयोग से मिट्टी की संरचना और जीवांश सुधार होता है, जिससे फसल के जड़ विकास में मजबूती आती है और खरपतवारों के लिए प्रतिकूल स्थिति बनती है। इसके अलावा, जब उर्वरकों को केवल फसल की जड़ों के पास, पंक्ति में या उचित विधियों (जैसे बैंड प्लेसमेंट) से दिया जाता है, तो खरपतवारों तक पोषक पहुँचने की संभावना घटती है। कुल मिलाकर, पोषण प्रबंधन न केवल फसल उत्पादन में मदद करता है, बल्कि खरपतवार नियंत्रण की लागत को कम करके खेती को अधिक लाभकारी और पर्यावरण-संवेदनशील बनाता है।

गेहूं की फसल में प्रमुख खरपतवार

लेथाइरस अफाका

यूफोरबिया हिर्टा

चिनोपोडियम एल्बम

एवीना लुडोविसियाना

सोनकस ओलेरेसियस

अल्टरनेनथेरा सीसाइलिस

डिजिटेरिया सेंगुइनालिस

फेलेरिस माइनर

मेडिकागो पोलीमोर्फा

एकीकृत खरपतवार प्रबंधन

एकीकृत खरपतवार प्रबंधन कृषि में एक ऐसी महत्वपूर्ण तकनीक है, जो विभिन्न विधियों का संयोजन करके फसलों में खरपतवारों को प्रभावी ढंग से नियंत्रित करने में मदद करती है। केवल एक पद्धति, जैसे कि रासायनिक खरपतवारनाशियों, पर निर्भर रहना अब स्थायी समाधान नहीं माना जाता, क्योंकि इससे न केवल पर्यावरण पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है, बल्कि खरपतवारों में रासायनिक प्रतिरोध विकसित होने की आशंका भी रहती है। एकीकृत खरपतवार प्रबंधन का उद्देश्य केवल खरपतवारों का सफाया करना नहीं, बल्कि उनकी संख्या और नुकसान की सीमा को इस स्तर तक नियंत्रित करना है जिससे फसल की उपज पर असर न पड़े। इसमें सांस्कृतिक, यांत्रिक, जैविक, रासायनिक और निवारक उपायों का समावेश किया जाता है, ताकि एक संतुलित और स्थायी समाधान निकाला जा सके। सांस्कृतिक उपायों के अंतर्गत फसल चक्र अपनाना, अंतरफसली खेती, समय पर बुआई, पौधों की उचित दूरी और उन्नत किस्मों का चयन शामिल है, जिससे खरपतवारों को उभरने का अवसर कम मिलता है। यांत्रिक विधियों में जुताई, निराई–गुड़ाई, खरपतवार उखाड़ना और मल्चिंग प्रमुख हैं, जिनसे खरपतवारों को भौतिक रूप से हटाया जाता है। जैविक नियंत्रण के अंतर्गत कीट, कवक या रोगजनक सूक्ष्मजीवों का प्रयोग किया जाता है, जो विशेष रूप से खरपतवारों को नुकसान पहुँचाते हैं। रासायनिक नियंत्रण में उपयुक्त खरपतवारनाशियों का संतुलित और सटीक उपयोग किया जाता है, जिससे खरपतवारों पर सीधा असर पड़ता है, लेकिन इसके लिए सावधानी बरतना आवश्यक है ताकि पर्यावरण और लाभकारी जीवों को हानि न हो। निवारक उपायों में खेत में स्वच्छता बनाए रखना, खरपतवार रहित बीजों का उपयोग, नालियों और मेड़ों की सफाई और सिंचाई जल की शुद्धता शामिल है, जिससे खरपतवारों के फैलाव को शुरू होने से पहले ही रोका जा सके।

एकीकृत खरपतवार प्रबंधन के अनेक लाभ हैं जैसे यह उत्पादन लागत को कम करता है, फसल की उपज और गुणवत्ता में वृद्धि करता है, मिट्टी और पर्यावरण की रक्षा करता है और शाकनाशियों पर अत्यधिक निर्भरता को घटाता है। इससे खरपतवारों में प्रतिरोध विकसित होने की

संभावना भी घटती है, और दीर्घकाल में कृषि उत्पादन अधिक स्थायी और टिकाऊ बनता है। किसानों के लिए यह आवश्यक है कि वे अपने खेत की स्थिति, खरपतवारों की पहचान, और उपलब्ध संसाधनों के अनुसार एकीकृत खरपतवार प्रबंधन की रणनीति अपनाएँ और समय पर उचित उपायों का चयन करें। आज के समय में जब प्राकृतिक संसाधनों की रक्षा और पर्यावरणीय संतुलन बनाए रखना अत्यंत आवश्यक हो गया है, एकीकृत खरपतवार प्रबंधन एक व्यावहारिक, पर्यावरण-मित्र और लाभकारी उपाय के रूप में उभर रहा है।

गेहूं की फसल में शाकनाशियों के उपयोग

गेहूं के खेतों में खरपतवार न केवल पोषक तत्त्वों, जल और सूर्य प्रकाश के लिए फसल के साथ प्रतिस्पर्धा करते हैं, बल्कि यह पौधों की वृद्धि और उत्पादन क्षमता को भी गंभीर रूप से प्रभावित करते हैं। फसल की प्रारंभिक अवस्था में यदि खरपतवारों पर नियंत्रण नहीं किया गया, तो यह उपज में 25 से 50 प्रतिशत तक की कमी कर सकते हैं। शाकनाशियों का उपयोग एक आधुनिक और प्रभावशाली उपाय है, जो खेत में समय पर और संतुलित रूप से किया जाए तो अत्यंत कारगर सिद्ध होता है। गेहूं में सामान्यतः दो प्रकार के खरपतवार होते हैं, चौड़ी पत्ती वाले जैसे बथुआ, सत्यानाशी और संकरी पत्ती वाले जैसे गुल्ली डंडा। इनकी रोकथाम के लिए विभिन्न प्रकार के शाकनाशियों का प्रयोग किया जाता है, जैसे कि बुवाई के तुरंत बाद पेंडीमेथालिन का छिड़काव, जो पूर्व-उद्भव शाकनाशी है, तथा फसल के 30-35 दिन बाद क्लोडिनाफॉप , मेटसल्फ्यूरॉन जैसे पोस्ट इमर्जेंस शाकनाशियों का छिड़काव किया जाता है। उचित समय पर सही मात्रा में छिड़काव से फसल को कोई नुकसान नहीं होता और खरपतवार पूरी तरह नियंत्रित रहते हैं। शाकनाशियों के प्रयोग से खेत में श्रमिकों की आवश्यकता कम होती है, जिससे लागत घटती है और उपज में वृद्धि होती है। यदि किसान वैज्ञानिक विधियों और सावधानियों के साथ शाकनाशियों का प्रयोग करें, तो यह तरीका गेहूं की उत्पादन क्षमता को बढ़ाने में एक प्रभावशाली साधन बन सकता है।

खरपतवार नियंत्रण में शाकनाशियों के लाभ

शाकनाशियों के प्रयोग से खेतों में खरपतवारों का तेजी से और प्रभावी नियंत्रण किया जा सकता है, जिससे फसल को पोषक तत्त्वों, जल, धूप और स्थान के लिए प्रतिस्पर्धा नहीं करनी पड़ती। इससे पौधों की वृद्धि बेहतर होती है और उपज में उल्लेखनीय वृद्धि होती है। शाकनाशियों के उपयोग से श्रम लागत में भी कमी आती है क्योंकि खरपतवार निकालने के लिए मजदूरों की आवश्यकता कम हो जाती है, जो विशेष रूप से बड़े खेतों में अत्यंत लाभकारी है। इसके अलावा, समय की भी बचत होती है क्योंकि शाकनाशी छिड़काव से कम समय में बड़े क्षेत्र में खरपतवार नियंत्रण संभव हो जाता है। कुछ विशेष प्रकार के शाकनाशी चयनात्मक होते हैं, जो केवल खरपतवारों को नष्ट करते हैं और मुख्य फसल को सुरक्षित रखते हैं। शाकनाशियों के सही और संतुलित प्रयोग से खेतों की स्वच्छता बनी रहती है, जिससे बीमारियों और कीटों का प्रकोप भी कम होता है। इस प्रकार, शाकनाशियों का उपयोग फसल की गुणवत्ता सुधारने, उत्पादन लागत घटाने और कृषि को अधिक टिकाऊ तथा लाभकारी बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

गेहूं की फसल में शाकनाशियों और उर्वरकों की संगतता

आमतौर पर किसान शाकनाशी और उर्वरक जैसे नैनो यूरिया या प्रिल्ड यूरिया का छिड़काव अलग-अलग समय पर करते हैं, जिससे अतिरिक्त श्रम, समय और लागत बढ़ जाती है। यदि इनका मिश्रण कर एक साथ छिड़काव किया जाए, तो यह एक व्यावहारिक और प्रभावशाली समाधान हो सकता है। इसी उद्देश्य से भा.कृ.अनु.प. खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर, मध्य प्रदेश में एक महत्वपूर्ण अनुसंधान किया गया।

गेहूं की फसल में शाकनाशियों और उर्वरकों की संगतता का अध्ययन एक महत्वपूर्ण प्रयोग है, जिसका उद्देश्य खरपतवार नियंत्रण में विभिन्न शाकनाशी और उर्वरकों के संयोजन की प्रभावशीलता और संगतता का मूल्यांकन करना था। इस प्रयोग में तीन शाकनाशी लिए गए, मेटसल्फ्यूरॉन (4 ग्रा/हे), क्लोडिनाफॉप + मेटसल्फ्यूरॉन (60+4 ग्रा/हे), और कार्फेंट्राजोन + मेटसल्फ्यूरॉन (20+4 ग्रा/हे)। प्रत्येक शाकनाशी को चार अलग-अलग स्थितियों में परखा गया। अकेले शाकनाशी का उपयोग, शाकनाशी + नैनो यूरिया (2 मिली/ली), शाकनाशी + प्रिल्ड यूरिया (2% घोल), और सभी तीन शाकनाशियों का मिश्रण + उर्वरक।

परिणामों से यह स्पष्ट हुआ कि क्लोडिनाफॉप + मेटसल्फ्यूरॉन (60+4 ग्रा/हे) के साथ नैनो यूरिया (2 मिली/ली) मिलाकर उपयोग करने पर सबसे अच्छे खरपतवार नियंत्रण के परिणाम मिले। इस संयोजन ने न केवल खरपतवारों पर बेहतरीन प्रभाव दिखाया, बल्कि यह पूरी तरह से संगत भी पाया गया, जिससे फसल पर कोई नकारात्मक असर नहीं पड़ा। इस मिश्रण का छिड़काव पौधों की पोषण स्थिति को बेहतर बनाता है और खरपतवारों की वृद्धि को नियंत्रित करता है, जिससे फसल को आवश्यक संसाधन जैसे कि नमी, प्रकाश और पोषक तत्त्व पर्याप्त मात्रा में मिल पाते हैं। परिणामस्वरूप पौधों की वृद्धि तीव्र होती है और उत्पादन क्षमता में वृद्धि होती है। मेटसल्फ्यूरॉन (4 ग्रा/हे) का अकेला उपयोग भी अच्छा और किसानों के लिए लाभकारी पाया गया।

कुल मिलाकर, प्रयोग से यह निष्कर्ष निकला कि क्लोडिनाफॉप +मेटसल्फ्यूरॉन+नैनो यूरिया का संयोजन सर्वोत्तम है, मेटसल्फ्यूरॉन अकेला भी लाभकारी है, जबकि कार्फेंट्राजोन+मेटसल्फ्यूरॉन का उर्वरकों के साथ संयोजन अनुशंसनीय नहीं है। किसानों के लिए सिफारिश की गई कि वे क्लोडिनाफॉप+मेटसल्फ्यूरॉन के साथ नैनो यूरिया का उपयोग करें और कार्फेंट्राजोन+मेटसल्फ्यूरॉन के साथ नैनो या प्रिल्ड यूरिया का प्रयोग न करें। इसके साथ ही सही मात्रा, छिड़काव का समय और विधि का पालन करना जरूरी बताया गया, ताकि अधिकतम लाभ प्राप्त किया जा सके।

विपरीत प्रभाव

हालांकि सभी शाकनाशी उर्वरकों के साथ संगत नहीं होते। उदाहरणस्वरूप, कारफेंट्राज़ोन को जब नैनो यूरिया या प्रिल्ड यूरिया के साथ मिलाया गया, तो यह मिश्रण प्रभावहीन सिद्ध हुआ। इस मिश्रण से न तो

खरपतवार नियंत्रण हो सका और न ही उपज में कोई लाभ देखने को मिला। इसलिए इस प्रकार के शाकनाशियों को उर्वरकों के साथ मिलाकर छिड़कने की सिफारिश नहीं की जा सकती। पोषक तत्वों के साथ शाकनाशी का संयोजन करने से विभिन्न खरपतवारो पर पड़ने वाले प्रभाव को तालिका 1 में दर्शाया गया है।

तालिका 1. पोषक तत्वों के साथ शाकनाशी का संयोजन का विभिन्न खरपतवारो पर प्रभाव

पोषक तत्वों के साथ शाकनाशी का संयोजन	*मेडिकागो पोलीमोर्फा*	*लेथाइरस अफाका*	*विसिया सटाइवा*	*फेलेरिस माइनर*	*सोलेनम नाइग्रम*	*सोनकस ओलेरेसिअस*	*डिजीटेरीया सेंगुइनालिस*	*एवीना लुडोवीसीआना*
मेटसल्फ्यूरॉन (4 ग्रा/हे)	✓	✓	✕	✕	✕	✓	✕	✕
मेटसल्फ्यूरॉन (4 ग्रा./हे) + नैनोयूरिया (4 मिली/ली)	✓	✓		✕	✕	✓	✕	✕
मेटसल्फ्यूरॉन (4 ग्रा/हे) + नैनो उर्वरक (2%)	✓	✓	✓	✕	✕	✓	✕	✕
मेटसल्फ्यूरॉन (4 ग्रा/हे) + नैनोयूरिया (2 मिली/ली) + नैनो उर्वरक (1%)	✓	✓		✕	✕	✓	✕	✕
क्लोडिनाफॉप + मेटसल्फ्यूरॉन (60 + 4 ग्रा/हे)	✓	✓	✕	✕	✕	✓	✓	✓
क्लोडिनाफॉप + मेटसल्फ्यूरॉन (60 + 4 ग्रा/हे) + नैनोयूरिया (4 मिली/ली)	✓	✓		✕	✕	✓	✓	✓
क्लोडिनाफॉप + मेटसल्फ्यूरॉन (60 + 4 ग्रा/हे) + नैनो उर्वरक (2%)	✓	✓		✕	✕	✓	✓	✓
क्लोडिनाफॉप + मेटसल्फ्यूरॉन (60 + 4 ग्रा/हे) + नैनोयूरिया (2 मिली/ली) + नैनो उर्वरक (1%)	✓	✓	✓	✕	✕	✓	✓	✓
कार्फेंट्राजोन + मेटसल्फ्यूरॉन (20 + 4 ग्रा/हे)	✓	✓	✓	✓	✓	✓	✕	✕
कार्फेंट्राजोन + मेटसल्फ्यूरॉन (20 + 4 ग्रा/हे) + नैनोयूरिया (4 मिली/ली)	✕	✕	✕	✓	✓	✓	✕	✕
कार्फेंट्राजोन + मेटसल्फ्यूरॉन (20 + 4 ग्रा/हे) + नैनो उर्वरक (2%)	✕	✕	✕	✓	✓	✓	✕	✕
कार्फेंट्राजोन + मेटसल्फ्यूरॉन (20+4 ग्रा/हे) + नैनोयूरिया (2 मिली/ली) + नैनो उर्वरक (1%)	✕	✕	✕	✓	✓	✓	✕	✕
निराई रहित	✕	✕	✕	✕	✕	✕	✕	✕

लाभ

- इस तरह के संगत मिश्रणों का एक साथ उपयोग करने से कई लाभ होते हैं।
- छिड़काव की लागत और श्रम में कमी आती है।
- समय की बचत होती है।
- पौधों को आवश्यक पोषक तत्त्व और खरपतवार नियंत्रण एक साथ मिलता है।
- उपज में वृद्धि और उत्पादन की गुणवत्ता में सुधार होता है।
- किसान के लिए यह अधिक लाभकारी और सरल तकनीक बनती है।

निष्कर्ष

1. क्लोडिनाफॉप + मेटसल्फ्यूरॉन + नैनोयूरिया सबसे प्रभावी संयोजन पाया गया। इस संयोजन ने सर्वाधिक प्रभावी खरपतवार नियंत्रण प्रदान किया और किसी भी फसल पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं दिखा। यह संयोजन पूरी तरह से संगत पाया गया।
2. मेटसल्फ्यूरॉन अकेले भी उपयोगी है, खासकर चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों के लिए।
3. कार्फेंट्राजोन + मेटसल्फ्यूरॉन का नैनो उर्वरक के साथ प्रयोग असंगत पाया गया, छिड़काव के बाद अवांछनीय रसायनिक प्रतिक्रियाएं देखी गईं।
4. सभी क्लोडिनाफॉप + मेटसल्फ्यूरॉन संयोजन पूरी तरह संगत रहे, चाहे वो अकेले हों या नैनो/प्रिल्ड यूरिया के साथ।

गेहूं उत्पादकों को वैज्ञानिक आधार पर उर्वरकों और शाकनाशियों के समन्वित उपयोग की दिशा में मार्गदर्शन प्रदान किया जाता है। क्लोडिनाफॉप+मेटसल्फ्यूरॉन जैसे शाकनाशियों का नैनो यूरिया और प्रिल्ड यूरिया के साथ संयुक्त छिड़काव एक प्रगतिशील कदम है, जो फसल उत्पादन में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। दूसरी ओर, कारफेंट्राज़ोन जैसे रसायनों के साथ सावधानी बरतनी चाहिए और उन्हें मिश्रण हेतु उपयोग नहीं करना चाहिए। भविष्य में इस तकनीक को अपनाकर किसान कम लागत में अधिक उपज प्राप्त कर सकते हैं।

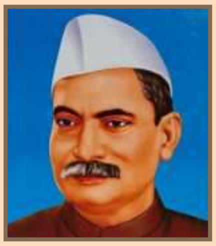

हिन्दी की होड़ किसी प्रान्तीय भाषा से नहीं केवल अंग्रेजी के साथ है।

-डॉ. राजेन्द्र प्रसाद

मैं उन लोगों में से हूं, जो चाहते हैं और जिनका विचार है कि हिंदी ही भारत की राष्ट्रभाषा हो सकती है।

-बाल गंगाधर तिलक

कृषि पारिस्थितिकी तंत्र की गतिशीलता में खरपतवारों की भूमिका : मित्र या शत्रु?

सुधानंद प्रसाद लाल[1] एवं रोमा कुमारी[2]

[1]एआईसीआरपी-डब्लूआईए, कृषि विस्तार शिक्षा विभाग (पीजीसीए)

[2]पंडित दीनदयाल उपाध्याय उद्यान एवं वाणिकी महाविद्यालय, पिपराकोठी, पूर्वी चंपारण,
डॉ. राजेंद्र प्रसाद केंद्रीय कृषि विश्वविद्यालय, पूसा, समस्तीपुर (बिहार)

कृषि की दुनिया में, खरपतवारों को लंबे समय से घुसपैठियों के रूप में दिखाया गया है - अवांछित पौधे जो पोषक तत्वों, पानी, प्रकाश और स्थान के लिए फसलों के साथ प्रतिस्पर्धा करते हैं। विशेष रूप से बागवानी प्रणालियों जैसे कि फलों के बागों, सब्जी के खेतों और फूलों के खेतों में, जहाँ फसल की गुणवत्ता और उपज सबसे महत्वपूर्ण है, खरपतवारों की उपस्थिति को आमतौर पर त्वरित उन्मूलन रणनीतियों के साथ पूरा किया जाता है। खरपतवार विशेष रूप से चर्चा और शोध का विषय हैं, जो कि ऐसे नए कृषि प्रणालियों को विकसित करने के लिए हैं जो कीटों और जैव विविधता के रूप में अपनी दोहरी प्रकृति के कारण बहुत कम या बिल्कुल भी कीटनाशकों का उपयोग नहीं करते हैं। एकीकृत खरपतवार प्रबंधन पर शोध ने प्रबंधन परिवर्तनों के प्रभाव पर ध्यान केंद्रित किया है, जैसे कि जुताई, शाकनाशी उपचार समय और मात्रा, कवर फसलें और रोपण पैटर्न, फसल उत्पादकता और खरपतवार हस्तक्षेप। खरपतवारों और फसलों के बीच संबंध के बारे में हमारे ज्ञान में सुधार करना खरपतवार प्रबंधन का मुख्य लक्ष्य होना चाहिए क्योंकि आजकल मुख्य उद्देश्य पारिस्थितिक रूप से स्वस्थ कृषि-पारिस्थितिकी तंत्र को प्राप्त करने और विभिन्न स्थितियों में उपद्रवी पौधों के कारण होने वाले प्रभाव को कम करने के लिए सबसे उपयुक्त तकनीक प्रदान करना है। हालाँकि, कृषि पारिस्थितिकी तंत्र की गतिशीलता पर गहराई से नजर डालने से पता चलता है कि खरपतवारों की भूमिका हमेशा स्पष्ट नहीं होती है। जबकि कई खरपतवार गंभीर खतरे पैदा करते हैं, अन्य जैव विविधता में सकारात्मक योगदान देते हैं, मिट्टी की संरचना में सुधार करते हैं और कीट नियंत्रण में सहायता करते हैं। इस प्रकार, सवाल उठता है - क्या खरपतवार वास्तव में हमारे दुश्मन हैं, या क्या उन्हें कुछ शर्तों के तहत दोस्त भी माना जा सकता है?

क) परिचय: कृषि पारिस्थितिकी तंत्र की गतिशीलता को समझना

कृषि पारिस्थितिकी तंत्र में खेती के क्षेत्र के सभी जीवित और निर्जीव घटक शामिल होते हैं, जिसमें फसलें, मिट्टी के जीव, कीट, परागणकर्ता और सबसे महत्वपूर्ण रूप से खरपतवार शामिल हैं। बागवानी के संदर्भों में, कृषि पारिस्थितिकी तंत्र अक्सर पारंपरिक फसल प्रणालियों की तुलना में अधिक गहन रूप से प्रबंधित किया जाता है क्योंकि उपज का आर्थिक मूल्य अधिक होता है। इसमें बार-बार सिंचाई, निषेचन, मल्चिंग, छंटाई और कीट नियंत्रण जैसी प्रथाएँ शामिल हैं, जो सभी खरपतवार की गतिशीलता के साथ परस्पर क्रिया करती हैं और उसे प्रभावित करती हैं। मिट्टी को संरक्षित करने और जैव विविधता को बनाए रखने में खरपतवारों का लाभकारी कार्य इस लेख का मुख्य विषय है। राइजोबैक्टीरिया के लिए एक मेजबान के रूप में काम करने के अलावा, खरपतवार कई तरह के पोषक तत्व और कार्बनिक पदार्थ प्रदान करते हैं जो क्षतिग्रस्त मिट्टी को बहाल करते हैं और मिट्टी के कटाव को रोकते हैं। खरपतवारों के साथ मिट्टी के उपचार में भारी धातुओं का पता लगाना उच्च गुणवत्ता वाले, टिकाऊ भोजन के विकास में योगदान देता है। खरपतवार जैव विविधता से तात्पर्य उन खरपतवारों की विस्तृत श्रृंखला से है जो आला में पाए जाते हैं। क्योंकि उनमें कृषि उत्पादकता और गुणवत्ता में सुधार के साथ-साथ महत्वपूर्ण खाद्य फसलों में बीमारियों और कीटों को नियंत्रित करने के लिए आनुवंशिक स्रोत होने की क्षमता है, इसलिए इसकी जैव विविधता को बनाए रखना आवश्यक है। खेतों को खरपतवारों से घेरा जा सकता है। खरपतवारों में एलीलो रसायन होते हैं जिनका उपयोग अन्य खरपतवारों के प्रबंधन द्वारा पर्यावरण के अनुकूल वस्तुओं के लिए कीटनाशकों पर निर्भरता को कम करने के लिए जैविक कारक के रूप में किया जा सकता है। यह समझना कि खरपतवार किस तरह मिट्टी और जैव विविधता को संरक्षित करते हैं, संधारणीय कृषि की उन्नति के लिए आवश्यक है। एकीकृत जल प्रबंधन (IWM) को कृषि पारिस्थितिकी तंत्र स्वास्थ्य से जोड़ने से दो प्राथमिक लाभ मिलते हैं: (1) IWM के भीतर पूर्वानुमानित मश्वडल को व्यापक कृषि पारिस्थितिकी तंत्र मॉडल में एकीकृत किया जा सकता है ताकि IWM के पहले से अज्ञात मुद्दों या लाभों की जांच की जा सके, और (2) IWM का महत्व और लाभ जनता और सरकारी निकायों के लिए अधिक स्पष्ट होंगे जो अन्यथा इस बात पर विचार नहीं कर सकते हैं कि IWM विभिन्न व्यापक सामाजिक, आर्थिक और पर्यावरणीय उद्देश्यों का समर्थन कैसे करता है। भले ही उन्हें आमतौर पर अनदेखा कर दिया जाता है क्योंकि आमतौर पर हानिकारक कीटों (जो उपज हानि का औसतन 18% हिस्सा होते हैं) या संक्रामक एजेंटों (जो उपज हानि का औसतन 16% हिस्सा होते हैं) पर अधिक ध्यान दिया जाता है, खरपतवार सबसे बड़ी संभावित फसल क्षति (औसतन 34% का प्रतिनिधित्व करते हैं) का वैश्विक स्रोत हैं। इसलिए ऐसी कृषि पद्धतियों को खोजना आवश्यक है जो कृषि-पारिस्थितिकी तंत्र में स्वाभाविक रूप से उत्पन्न होने वाले इन अवांछित पौधों को कुशल और जिम्मेदार तरीके से संभाल सकें।

ख) बागवानी के साथ-साथ कृषि में खरपतवारों के नकारात्मक प्रभाव

संभावित लाभों की खोज करने से पहले, खरपतवारों के कई प्रलेखित प्रतिकूल प्रभावों को स्वीकार करना महत्वपूर्ण है, विशेष रूप से प्रबंधित प्रणालियों में जैसे:-

1. संसाधनों के लिए प्रतिस्पर्धा

खरपतवार अक्सर आवश्यक संसाधनों के लिए बागवानी फसलों के साथ प्रतिस्पर्धा करते हैं। सब्जियाँ, उथली जड़ें और तेजी से बढ़ने वाली होने के कारण, *अमरंथस, चेनोपोडियम* और *साइपरस* प्रजातियों जैसे खरपतवारों से प्रतिस्पर्धा के लिए अतिसंवेदनशील होती हैं। फलों के बागों में, *सोरघम हेलपेन्स* या *इम्पेराटा सिलिंड्रिका* जैसे गहरी जड़ वाले बारहमासी खरपतवार पेड़ों के लिए आवश्यक पानी और पोषक तत्वों को खत्म कर सकते हैं। सौंदर्य मूल्य के लिए उगाई जाने वाली फूलों की फसलें विशेष रूप से किसी भी पोषक तत्व की कमी या आक्रामक खरपतवार वृद्धि के कारण छायांकन के प्रति संवेदनशील होती हैं ।

2. गुणवत्ता में गिरावट

खरपतवार उत्पाद की उपस्थिति, शेल्फ-लाइफ और गुणवत्ता को प्रभावित कर सकते हैं। फूलों की खेती में, पोषक तत्वों की कमी के कारण पंखुड़ियों में थोड़ा सा भी रंग उड़ना या विकृति होना बाजार में अस्वीकृति का कारण बन सकता है। सब्जियों की नर्सरी में खरपतवार की मौजूदगी एफिड्स या व्हाइटफ्लाइज जैसे रस चूसने वाले कीटों के प्रसार में योगदान दे सकती है, जिससे वायरल संक्रमण और दृश्य दोष हो सकते हैं।

3. कीटों और रोगजनकों को आश्रय देना

कई खरपतवार कीटों, कवक, बैक्टीरिया और वायरस के लिए वैकल्पिक मेजबान के रूप में कार्य करते हैं। उदाहरण के लिए, *यूफोरबिया हिर्टा* और *पार्थेनियम हिस्टेरोफोरस* अक्सर एफिड्स और व्हाइटफ्लाइज को आश्रय देते हैं जो टमाटर, मिर्च और पपीते में मोजेक और कर्ल वायरस संचारित करते हैं। *चेनोपोडियम* प्रजातियाँ भृंग और लीफहॉपर को आश्रय दे सकती हैं जो पालक और गोभी की फसलों को प्रभावित करते हैं।

4. प्रबंधन लागत

बागवानी खेतों में खरपतवार प्रबंधन संसाधन-गहन है: यांत्रिक निराई श्रमसाध्य और महंगी है। रासायनिक शाकनाशी, प्रभावी होते हुए भी, ट्यूलिप, गुलाब या स्ट्रॉबेरी जैसी संवेदनशील फसलों के लिए फाइटोटॉक्सिसिटी जोखिम पैदा कर सकते हैं। बारहमासी फलों के बागों में, बार-बार शाकनाशी के इस्तेमाल से प्रतिरोध और दीर्घकालिक मिट्टी का क्षरण हो सकता है।

ग) खरपतवारों की सकारात्मक भूमिकाएँ: अदृश्य लाभ

अपनी चुनौतियों के बावजूद, खरपतवार हमेशा हानिकारक नहीं होते हैं। कई अध्ययनों और पारंपरिक ज्ञान प्रणालियों ने खुलासा किया है कि खरपतवार पारिस्थितिकी सेवाएँ भी प्रदान करते हैं जो दीर्घकालिक स्थिरता का समर्थन करते हैं, खासकर जब उनकी वृद्धि को नियंत्रित और निगरानी की जाती है।

1. जैव विविधता को बढ़ाना

खरपतवार प्रजातियों की समृद्धि में योगदान करते हैं, कृषि पारिस्थितिकी प्रणालियों में विविध वनस्पतियों और जीवों का समर्थन करते हैं। उनकी उपस्थिति परागणकों, लाभकारी शिकारियों और परजीवियों को आकर्षित कर सकती है। उदाहरण के लिए, क्लियोम, पोर्टुलाका और ट्रिडैक्स जैसे फूल वाले खरपतवार मधुमक्खियों और ततैयाओं को अमृत और पराग प्रदान कर सकते हैं। फलों के बागों में, अर्ध-प्राकृतिक जमीनी वनस्पतियाँ लाभकारी कीटों को आकर्षित कर सकती हैं जो कीटों का शिकार करते हैं, जैसे कि लेडीबर्ड बीटल और होवरफ्लाइज।

2. मृदा स्वास्थ्य और संरचना

कुछ खरपतवार मिट्टी की स्थिति को बेहतर बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। *कॉमेलीना बेंगालेंसिस* और *कॉनवोल्वुलस आर्वेन्सिस* जैसी गहरी जड़ वाली प्रजातियाँ संकुचित परतों को तोड़ती हैं, जिससे वायु संचार और जल निकासी में सुधार होता है। कुछ खरपतवार पोषक तत्वों, विशेष रूप से नाइट्रोजन और पोटेशियम के जैव संचय में सक्षम होते हैं, जो अंततः खरपतवार के सड़ने पर मिट्टी में वापस आ जाते हैं। खरपतवार वनस्पति आवरण के रूप में कार्य करके कटाव को कम करने में भी मदद करते हैं, खासकर सब्जी के बगीचों और नर्सरी में रोपण चक्रों के बीच परती अवधि के दौरान।

3. कीट और रोग विनियमन

पारिस्थितिक खेती में, 'पुश-पुल रणनीति' नामक एक अवधारणा का अक्सर उपयोग किया जाता है, जहाँ विशिष्ट खरपतवार या साथी पौधे हानिकारक कीटों को दूर भगाते हैं या उन्हें मुख्य फसल से दूर रखते हैं। *टैगेटेस* प्रजाति (मैरीगोल्ड्स), जिसे अक्सर सब्जी की नर्सरी में खरपतवार माना जाता है, नेमेटोड को दूर भगाता है और परागणकों और लाभकारी कीटों को आकर्षित करता है। खट्टे फलों के बागों में, खास निचले खरपतवारों को उगने देने से साइलिड्स और फल मक्खियों का जीवन चक्र बाधित हो सकता है, जिससे कीटों का दबाव कम हो सकता है।

4. जीवित मल्च और नमी संरक्षण

कुछ कम उगने वाले खरपतवार जीवित मल्च के रूप में कार्य कर सकते हैं, जो अधिक आक्रामक प्रजातियों के विकास को दबाते हैं। *ऑक्सालिस, सेंटेला एशियाटिका* और *डेस्मोडियम ट्राइफ्लोरम* एक हरे रंग का कालीन बनाते हैं जो नमी को बनाए रखता है और माइक्रोक्लाइमेट को स्थिर करता है, खासकर अमरूद और केले जैसे उष्णकटिबंधीय फलों के बागों में।

तालिका 1: खरपतवारों का सारणीबद्ध प्रतिनिधित्व, उनका वैज्ञानिक और सामान्य नाम तथा उनके संभावित वैकल्पिक उपयोग।

क्रम सं.	सामान्य नाम	वैज्ञानिक नाम	वैकल्पिक उपयोग
1)	डंडेलियन	*टारैक्सेकम ऑफिसिनेल*	• खाद्य (पत्तियाँ, फूल, जड़ें) • हर्बल चाय में इस्तेमाल किया जाता है (यकृत और पाचन स्वास्थ्य) • परागण का समर्थन करता है (प्रारंभिक अमृत स्रोत)
2)	चिकवीड	*स्टेलेरिया मीडिया*	• खाद्य पत्तेदार सब्जी (सलाद और सूप में) • त्वचा के मलहम और उपचार मलहम में इस्तेमाल किया जाता है • उपजाऊ, नाइट्रोजन युक्त मिट्टी का संकेतक
3)	पिगवीड	*अमरंथस रेट्रोफ्लेक्सस*	• खाद्य पत्ते (विटामिन ए और सी से भरपूर) • बीज का उपयोग अनाज की तरह किया जा सकता है (प्रोटीन में उच्च) • पशुधन चारे के रूप में उपयोगी
4)	पर्सलेन	*पोर्टुलाका ओलेरासिया*	• खाद्य रसीला (ओमेगा-3 फैटी एसिड से भरपूर) • मिट्टी का आवरण कटाव को कम करने के लिए • पारंपरिक विरोधी भड़काऊ उपयोग
5)	बरमूडा घास	*सिनोडोन डेक्टीलॉन*	• पारंपरिक चिकित्सा में उपयोग किया जाता है (बुखार, मूत्र विकार) • चारागाह पशुओं के लिए उत्कृष्ट घास • मिट्टी को कटाव नियंत्रण में स्थिर करने वाला
6)	लैम्ब्स क्वार्टर	*चेनोपोडियम एल्बम*	• अत्यधिक पौष्टिक खाद्य पत्ते (पालक की तरह पकाए गए) • कैल्शियम और पोटेशियम जैसे खनिजों से भरपूर • बीज ऐतिहासिक रूप से अनाज के रूप में उपयोग किए जाते हैं
7)	फील्ड बाइंडवीड	*कॉन्वोल्वुलस आर्वेन्सिस*	• पारंपरिक उपचारों में उपयोग किया जाता है (हल्का रेचक) • मिट्टी को बांधने और कटाव को रोकने में मदद करता है • परागण आकर्षित करने वाला (मधुमक्खियों द्वारा देखे जाने वाले फूल)
8)	क्लीवर	*गैलियम अपारिन*	• लसीका जल निकासी और डिटॉक्स के लिए हर्बल चाय • त्वचा की जलन को शांत करने के लिए उपयोग किया जाता है • बीज फैलाव अध्ययन के लिए प्राकृतिक वेल्क्रो
9)	प्लांटैन	*प्लांटागो मेजर*	• घावों, कीड़े के काटने और जलने के लिए पत्ती की पुल्टिस • खाद्य युवा पत्ते (फाइबर में उच्च) • सूजनरोधी और रोगाणुरोधी गुण
10)	स्टिंगिंग नेटल	*उर्टिका डायोइका*	• खाद्य (पकाने के बाद आयरन और प्रोटीन से भरपूर) • रक्त शोधन और एलर्जी से राहत के लिए चाय में इस्तेमाल किया जाता है • जैविक उर्वरक के लिए घटक (पौधों के लिए बिछुआ चाय)

घ) बागवानी में केस स्टडीज

- **फलों के बगीचे**

सेब के बागों में, फूलों के खरपतवारों की नियंत्रित वृद्धि को मधुमक्खियों के अधिक आने के कारण परागण में वृद्धि से जोड़ा गया है। इसी तरह, आम के बागानों में, कभी-कभी कटाव को कम करने और मिट्टी की सूक्ष्मजीवी गतिविधि को बढ़ाने के लिए ऑफ-सीजन के दौरान ग्राउंड फ्लोरा को बनाए रखा जाता है।

- **सब्जी के खेत**

जैविक टमाटर और बैंगन की खेती में, प्राकृतिक शिकारियों को प्रोत्साहित करके कीटों के हमलों को कम करने के लिए चयनात्मक निराई (कंबल हर्बिसाइड के बजाय) देखी गई है। हालाँकि, शुरुआती विकास चरणों के दौरान आक्रामक खरपतवार प्रतिस्पर्धा अभी भी एक गंभीर चिंता का विषय बनी हुई है।

- **फूलों की खेती के क्षेत्र**

जरबेरा और ग्लेडियोलस की खेती में, शोधकर्ताओं ने लाभकारी कीट गतिविधि को बढ़ावा देने के लिए विशिष्ट खरपतवार पट्टियों को बनाए रखने के साथ प्रयोग किया है। सौंदर्य की दृष्टि से चुनौतीपूर्ण होने के बावजूद, इस अवधारणा ने संरक्षित वातावरण में कीटनाशक के उपयोग को कम करने में वादा दिखाया है (ओवरडीप, 2025)।

च) एकीकृत खरपतवार प्रबंधन (IWM): एक संतुलित दृष्टिकोण

इसका लक्ष्य खरपतवारों को पूरी तरह से खत्म करना नहीं है, बल्कि उन्हें समझदारी से प्रबंधित करना है, जिससे उनके लाभों को अधिकतम किया जा सके और उनकी कमियों को कम किया जा सके। मुख्य IWM रणनीतियों में शामिल हैं:

- खरपतवार के जीवनचक्र को बाधित करने के लिए फसल चक्रण।
- फलीदार या तेजी से बढ़ने वाली घासों के साथ कवर फसल।
- खरपतवार के उभरने को रोकने के लिए मल्चिंग (जैविक या सिंथेटिक)।
- ट्रैप फसलों या कीटों को खाने वाले पौधों के साथ अंतर-फसल।
- चयनात्मक नियंत्रण के लिए मैन्युअल निराई और स्पॉट हर्बिसाइड का उपयोग।

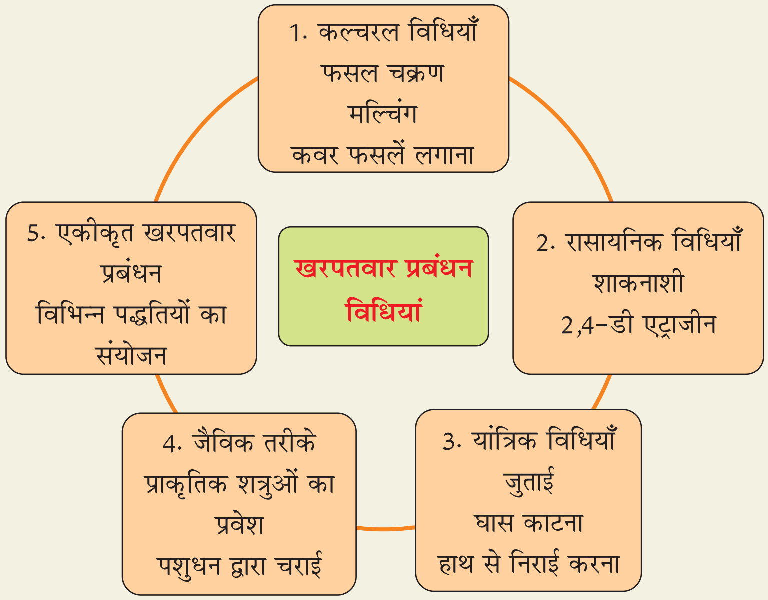

चित्र 1: खरपतवार प्रबंधन के विभिन्न तरीकों को दर्शाने वाला प्रवाह चार्ट

छ) निष्कर्ष: बागवानी में खरपतवारों पर पुनर्विचार-

खरपतवारों को केवल शत्रु के रूप में लेबल करना कृषि पारिस्थितिकी तंत्र की जटिल गतिशीलता में उनकी भूमिका को सरल बनाता है। जबकि बागवानी फसलों पर अनियंत्रित खरपतवार वृद्धि के नकारात्मक प्रभाव निर्विवाद हैं - विशेष रूप से प्रतिस्पर्धा, गुणवत्ता में गिरावट और कीट होस्टिंग के संदर्भ में - इस बात के बढ़ते प्रमाण हैं कि खरपतवार प्रबंधन के लिए एक सूक्ष्म दृष्टिकोण वास्तव में स्थिरता, लचीलापन और पारिस्थितिक संतुलन को बढ़ा सकता है। कृषि पारिस्थितिकी में, खरपतवार अवांछनीय आक्रमणकारी हैं क्योंकि वे नमी, पोषक तत्व, प्रकाश और स्थान जैसे संसाधनों के लिए संघर्ष करते हैं जो उन्हें फसलों के लिए अवांछनीय बनाते हैं। वे फसलों के लिए अनुपयुक्त हैं क्योंकि उनमें प्रकाश, स्थान, नमी और पोषक तत्वों की कमी होती है। खरपतवार आनुवंशिक रूप से अस्थिर होते हैं और उनके पास लचीले फेनोटाइप होते हैं। पारंपरिक कृषि उनके कई नकारात्मक प्रभावों के कारण उन्हें संरक्षित करने के बजाय खरपतवारों को हटाने का प्रयास करती है। हालाँकि, खरपतवार वास्तविक अपराधी नहीं हैंय बल्कि, वे स्वच्छ खेती, मोनोकल्चर और अतिचारण सहित अन्य मुद्दों के संकेत हैं। अधिकांश प्रकाशन खरपतवारों के नकारात्मक प्रभावों पर चर्चा करते हैं और खरपतवार प्रबंधन को बढ़ावा देते हैं। खरपतवार के महत्व के क्षेत्र में बहुत कम सावधानीपूर्वक अध्ययन किया गया है, इस तथ्य के बावजूद कि खरपतवार प्रबंधन के लिए शास्त्रीय और आधुनिक दोनों तरीकों ने खरपतवारों के स्थायी नियंत्रण में बहुत अधिक गहन कार्य किया है। अब खरपतवार नियंत्रण पर दृष्टिकोण बदलने और आगे बढ़ने के लिए खरपतवारों के जैविक घटक को स्वीकार करने का समय है। खरपतवारों के सकारात्मक गुणों को स्वीकार करके और रणनीतिक रूप से उनका उपयोग करके, बागवानी विशेषज्ञ अधिक मजबूत कृषि पारिस्थितिकी तंत्र को बढ़ावा दे सकते हैं जो उत्पादकता और पर्यावरण संरक्षण दोनों के साथ संरेखित होते हैं। इस प्रकार, मनुष्य और प्रकृति के बीच गतिशील संवाद में, शायद यह समय है कि खरपतवारों को केवल दुश्मनों के रूप में देखना बंद कर दिया जाए - और छिपे हुए सहयोगी के रूप में उनकी क्षमता की सराहना करना शुरू कर दिया जाए।

गेहूँ में खरपतवार प्रबंधन के उपयुक्त उपाय

रिंकू कुमार, अरुण कुमार, दिनेश साह, संजय कुमार एवं अश्वनी कुमार मौर्य
बांदा कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, बांदा (उ.प्र.)

गेहूँ विश्व की प्रमुख खाद्यान्न फसल है। यह विश्व की अनाज वाली फसलों में क्षेत्रफल (221 मिलियन हेक्टेयर) और उत्पादन (785 मिलियन टन) दोनों ही दृष्टि से पहले स्थान पर है। भारत में गेहूँ प्रमुख अनाज फसलों में से एक है। उत्तर भारत में इसकी खेती रबी मौसम में की जाती है। भारत में यह 31.40 मिलियन हेक्टेयर के क्षेत्रफल में उगाया जाता है, जिसमें 110.55 मिलियन टन का उत्पादन होता है, और इसकी औसत उत्पादकता 3521 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर है। (कृषि सांख्यिकी, 2023) भारत में उत्तर प्रदेश गेहूँ के क्षेत्रफल के मामले में पहले स्थान पर है, जहाँ 9.52 मिलियन हेक्टेयर में इसकी खेती की जाती है तथा 33.61 मिलियन टन उत्पादन प्राप्त होता है। भारत में गेहूँ की उत्पादकता वैश्विक स्तर पर अन्य देशों की तुलना में कम है। गेहूँ के कम उत्पादन का संबंध अजैविक (गर्मी, सूखा, लवणता आदि) और जैविक (खरपतवार, कीट, रोगजनक आदि) कारकों से है; जिनमें से खरपतवार एक प्रमुख जैविक कारक है। उच्च उत्पादक बौनी गेहूँ की किस्मों के आगमन के कारण जो सिंचाई और उर्वरक के प्रति अत्यधिक अनुक्रियाशील हैं, फसल की पारिस्थितिकी में महत्वपूर्ण बदलाव आया है, जिससे खरपतवारों की प्रसार में तीव्रता आई है।

शोधकर्ताओं के अनुसार, खरपतवार संक्रमण के कारण वैश्विक स्तर पर गेहूँ की फसल की उपज में 13.1 प्रतिशत की कमी आई है। खरपतवारों को अवांछनीय पौधों के रूप में जाना जाता है, जो फसल की उपज के गुणों पर नकारात्मक प्रभाव डालते हैं, चाहे वह पानी या पोषक तत्वों की प्रतिस्पर्धा के माध्यम से हो या स्थान की आवश्यकताओं के कारण। विकास के चरण के दौरान कुछ खरपतवार प्रजातियों को एलीलोपैथी के प्रभाव से फसल प्रभावित होती है। एलीलोपैथिक खरपतवारों से निकलने वाले एलीलोकैमिकल्स जमाव करते हुए फसल के बीजों की जड़ और तना के विकास में गंभीर बाधा उत्पन्न करते हैं और अन्य नुकसान भी पहुंचाते हैं। हाल ही के शोध कार्यों से मालूम हुआ है कि, गेहूँ में बथुआ (*चिनोपोडियम म्यूरेल*) की जड़ों से निकलने वाले एलीलोकैमिकल्स कोशिका चक्र में गड़बड़ी और ऑक्सीडेटिव क्षति के लिए जिम्मेदार हैं। गेहूँ की फसल में संकरी पत्ती और चौड़ी पत्ती वाले दोनों प्रकार के खरपतवारों का संक्रमण होता है। गेहूँ की उपज में खरपतवारों के कारण 40 प्रतिशत तक की कमी हो सकती है, जो विभिन्न कारकों पर निर्भर करती है, जैसे खरपतवार का प्रकार, घनत्व, उभरने का समय, गेहूँ का घनत्व, गेहूँ की किस्म, मिट्टी और पर्यावरणीय कारक। गेहूँ उत्पादन में उच्च पैदावार प्राप्त करने के लिए खरपतवार प्रबंधन का उचित तरीका अपनाना बेहद आवश्यक है।

तालिका 1 : गेहूँ में पाई जाने वाली सामान्य खरपतवार प्रजातियाँ

चौड़ी पत्ती वाले			
बथुआ (*चिनोपोडियम एल्बम*)		अंकरी (*विसिया सटाइवा*)	
बनसोया (*फ्यूमेरिया पार्वीफ्लोरा*)		कृष्णनील (*एनागालिस आरवेन्सिस*)	
पीली सैंजी (*मेलीलोटस इंडिका*)		बनमेथी (*एम. एल्बा*)	

जंगली मटर (*लैथाइरस अफाका*)	जंगली पालक (*रूमेक्स डेंटिकुलेट*)
कासनी (*सिचोरियम इंटीबस*)	पोहली/पीली कंटेली (*कार्थमस ऑक्सीकैंथा*)
हिरनखुरी (*कॉनवोल्वुलस आर्वेन्सिस*)	कनाडा थीस्ल (*सिरसियम आर्वेन्से*)
संकरी पत्ती वाले	
गिल्ली-डंडा (*फेलेरिस माइनर*)	*पोआ एनुआ*
जंगली जई (*एवेना लूडोविसियाना*)	मोथा (*साइप्रस रोटेंडस*)

खरपतवारों के हानिकारक प्रभाव

खरपतवार गेहूँ की फसल में कई तरह से हानिकारक होते हैं:

पोषक तत्वों के लिए प्रतिस्पर्धा: खरपतवार के पौधे मिट्टी में मौजूद पोषक तत्वों का फसल की तुलना में तेजी से अवशोषित और अपेक्षाकृत अधिक मात्रा में पोषक तत्व जमा करते हैं, जिससे गेहूँ की फसल को पर्याप्त पोषक तत्व नहीं मिल पाते। उदाहरण के लिए, बथुआ और पोर्टुलाका अपने शुष्क पदार्थ में 4 प्रतिशत से अधिक पोटेशियम (K_2O) जमा कर लेते हैं। खरपतवार मिट्टी से 30-40 किलोग्राम नाइट्रोजन (N), 10-20 किलोग्राम फास्फोरस (P_2O_2) और 20-40 किलोग्राम पोटेशियम (K_2O) प्रति हेक्टेयर दोहन कर लेते हैं। इन खरपतवारों के कारण पोषक तत्वों की कमी से होने वाले नुकसान से फसल की उपज पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

नमी के लिए प्रतिस्पर्धा: मिट्टी में नमी की कमी में वृद्धि के साथ फसल-खरपतवार प्रतिस्पर्धा महत्वपूर्ण हो जाती है। सामान्यत: समान मात्रा में शुष्क पदार्थ उत्पन्न करने के लिए खरपतवार खेत से फसलों की तुलना में अधिक पानी सोखते हैं। इसलिए, खरपतवारों से आच्छादित खेतों में फसल के वास्तविक वाष्पोत्सर्जन की अपेक्षा नमी की अधिक हानि होती है। बथुआ द्वारा पूरे जीवनकाल में लगभग 550 मिमी पानी का दोहन किया जाता है, जबकि यही मात्रा गेहूँ की फसल के लिए 479 मिमी होती है।

प्रकाश के लिए प्रतिस्पर्धा: प्रारंभिक अवस्था में खरपतवारों का अधिक संक्रमण फसल के पौधों के वृद्धि एवं विकास को नकारात्मक रूप से प्रभावित करता है। अत्यधिक खरपतवार संक्रमण के कारण सूर्य की किरणें फसली पौधों तक नहीं पहुँच पातीं, जिससे फसल का प्रकाश संश्लेषण बाधित होता है। खरपतवारों के छायांकन प्रभाव के कारण फसल के पौधे बुरी तरह प्रभावित होते हैं।

स्थान के लिए प्रतिस्पर्धा: फसल के पौधे सामान्य वृद्धि एवं विकास के लिए उचित बुवाई प्रणाली के साथ लगाए जाते हैं ताकि उन्हें पर्याप्त मात्रा में प्राकृतिक संसाधनों की आपूर्ति होती रहे। लेकिन फसली पौधों के साथ खाली स्थान में खरपतवारों के पौधों के जमने से प्राकृतिक संसाधनों की पर्याप्त आपूर्ति में कमी आ जाती है, जिससे फसल पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

- **रोग एवं कीट प्रकोप:** कई खरपतवार कीटों और रोगों के पोषक होते हैं, जिससे फसल पर इनका प्रकोप बढ़ सकता है। जैसे, गेहूँ का काला रतुआ (ब्लैक रस्ट) के लिए (एग्रोपाइरॉन रिपेन्स) और धान के तना छेदक के लिए बथुआ और (पैनिकस रिपेन्स) वैकल्पिक होस्ट का काम करते हैं।
- **पैदावार में कमी:** खरपतवारों को फसल-खरपतवार प्रतिस्पर्धा की क्रांतिक अवस्था (बुवाई के 15-45 दिन) में नियंत्रित करना आवश्यक है, अन्यथा यह फसल की पैदावार में 30-40 प्रतिशत तक की कमी ला सकते हैं।

खरपतवार प्रबंधन के तरीके:

खरपतवारों का प्रबंधन करने के लिए निम्नलिखित उपाय प्रभावी हो सकते हैं:-

1. निरोधक उपाय

- **खरपतवार-मुक्त फसल बीजों का उपयोग:** खरपतवार-मुक्त बीजों का उपयोग करने से फसल में खरपतवारों का संक्रमण कम होता है।
- **अच्छी तरह से सड़ी हुई गोबर की खाद (FYM) और कंपोस्ट:** फसलों में गोबर की खाद का प्रयोग करते समय इस बात का ध्यान रहे कि खाद पूर्ण रूप से सड़ी हुई हो, अन्यथा खपतवारों के बीज खाद के साथ खेत में पहुँचकर फसलों के साथ प्रतिस्पर्धा बढ़ाते हैं।
- **स्वच्छ कृषि उपकरण:** कृषि उपकरणों को खेत में उपयोग करने से पहले साफ करना खरपतवारों के बीजों के फैलाव को रोकने में मदद करता है।
- **साफ सिंचाई चैनल:** सिंचाई चैनलों की सफाई सुनिश्चित करना भी खरपतवारों के फैलाव को कम करने में सहायक होता है।

2. सस्य वैज्ञानिक विधियाँ:

- **खेत की तैयारी:** बुवाई से पहले खेत की गहरी जुताई करके खरपतवारों के बीजों को नष्ट किया जा सकता है। इससे खेत में खरपतवारों की संख्या कम होती है।
- **बुवाई का समय:** उचित समय पर बुवाई (15 नवंबर से पहले) करने पर फसल की वृद्धि एवं विकास सही होता है, जिससे फसली पौधे खरपतवारों के साथ प्रतिस्पर्धा करने में अधिक सक्षम होते हैं और खरपतवारों के आच्छादन प्रभाव से भी स्वयं को बचा लेते हैं।
- **बीज दर एवं विधि:** 125-150 किलोग्राम/हेक्टेयर की उच्च बीज दर, निकट पंक्ति दूरी (15 सेमी), और द्विदिशात्मक बुआई से खरपतवारों पर प्रभावी नियंत्रण मिलता है। गेहूँ के लंबे जीनोटाइप खरपतवारों की वृद्धि और विकास को बौने जीनोटाइप की तुलना में अधिक दबाते हैं। पारंपरिक छिड़काव विधि की तुलना में 'लाइन बुवाई' अधिक लाभकारी होती है।
- **जीरो टिल सीड कम फर्टिलाइजर ड्रिल** व हैप्पी सीडर से बुवाई करने से खरपतवार के बीज का अंकुरण कम होता है।
- **फसल चक्रीकरण :** फसल चक्रण खरपतवार प्रबंधन के लिए सबसे अच्छी और गैर-मौद्रिक तकनीक है क्योंकि खरपतवार अपनी समान पारिस्थितिक आवश्यकताओं के कारण कुछ फसलों से जुड़े होते हैं। उदाहरण के लिए, खरीफ मौसम के दौरान रोपा धान की खेती करके *एवेना लुडोविसियाना* की समस्या का समाधान किया जा सकता है। इसी तरह गेहूं की जगह बरसीम, आलू, राई/सरसों, गन्ना, शीतकालीन मक्का, सब्जियाँ आदि लगाकर गुल्ली-डंडा (*फैलेरिस माइनर*) का प्रबंधन किया जा सकता है।
- **संतुलित उर्वरक प्रबंधन:** संतुलित पोषक तत्वों के प्रयोग से फसल की वृद्धि बेहतर होती है, जिससे वह खरपतवारों से मुकाबला कर सकती है। खरपतवारों द्वारा उर्वरक को अवशोषित करने से बचने के लिए गेहूँ की फसल के जड़ क्षेत्र में उर्वरक डालना चाहिए।

3. यांत्रिक नियंत्रण:

गेहूँ में यांत्रिक खरपतवार प्रबंधन में विभिन्न भौतिक विधियां शामिल हैं। जिसका उद्देश्य रासायनिक पदार्थों का उपयोग किए बिना खरपतवारों की संख्या को नियंत्रित करना है।

- हाथ से होइंग और मैनुअल वीडिंग प्रभावी तकनीकें हैं, विशेष रूप से जब बुवाई 30-45 दिनों के भीतर की जाती हैं, क्योंकि उस समय खरपतवारों की प्रतिस्पर्धा अत्यधिक होती है। इसके अलावा, जुताई और कटाई जैसी विधियां खरपतवारों को उखाड़ने या काटने में मदद करती हैं। इस कार्य को बीज बनने से पहले करते है ताकि उनके फैलाव को और रोका जा सके।
- पलवार (मल्च): खरपतवार की वृद्धि को रोकने के लिए ज़मीन को भौतिक मल्चिंग (पुआल जैसी सामग्री) की एक परत से ढकना आवश्यक है। ताकि खरपतवार के बीज के अंकुरण को रोकने में सफलता मिल सके। पुआल मल्च का उपयोग खरपतवार की समस्या को कम कर सकता है।

4. रासायनिक नियंत्रण:

रासायनिक खरपतवारनाशी (हर्बिसाइड) का उपयोग गेहूँ में खरपतवारों को नियंत्रित करने का एक प्रभावी तरीका है। उदाहरण के लिए, बुवाई से पहले या बाद में चयनात्मक हर्बिसाइड्स का छिड़काव करके खरपतवारों को नियंत्रित किया जा सकता है। कई हर्बीसाइड्स गेहूँ में खरपतवारों के प्रबंधन में अधिक प्रभावी पाए गए हैं।

तालिका 2. गेहूँ में खरपतवार नियंत्रण के लिए शाकनाशी

शाकनाशी	मात्रा (सक्रिय तत्व ग्रा./हे.)	प्रयोग का समय	खरपतवार नियंत्रण	
			संकरी पत्ती वाले	चौड़ीपत्ती वाले
पेंडिमेथालिन	1000	बुवाई के 0-3 दिन के भीतर	✓	✓
आइसोप्रोटुरॉन	1000	बुवाई के 25 दिन पर	✓	✓
क्लोडिनाफॉप-प्रोपार्जिल	60	बुवाई के 30 दिन पर	✓	
सल्फोसल्फ्यूरॉन	25	बुवाई के 30 दिन पर	✓	✓
फेनोक्साप्रोप-पी-इथाईल	100-120	बुवाई के 25-30 दिन पर	✓	
2,4-डी	500	बुवाई के 25-30 दिन पर		✓
मेटसल्फ्यूरॉन-मिथाइल	4	बुवाई के 25-30 दिन पर		✓
कार्फेंट्राजोन	20	बुवाई के 25-30 दिन पर		✓

तालिका 3. गेहूँ में खरपतवार नियंत्रण के लिए शाकनाशी मिश्रण

शाकनाशी	मात्रा (सक्रिय तत्व ग्रा./हे.)	प्रयोग का समय
मिजोसुल्फ्यूरॉन + आइडोसल्फ्यूरॉन (रेडी-मिक्स)	12 + 2.4	बुवाई के 25-30 दिन पर
सल्फोसल्फ्यूरॉन +मेटसल्फ्यूरॉन (रेडी-मिक्स)	30 + 2.0	बुवाई के 25-30 दिन पर
क्लोडिनाफॉप + मेटसल्फ्यूरॉन (रेडी-मिक्स)	60 + 4	बुवाई के 30 दिन पर
मेटसल्फ्यूरॉन + कार्फेंट्राज़ोन	5 + 20	बुवाई के 30 दिन पर
आइसोप्रोटुरॉन + मेटसल्फ्यूरॉन (टैंक-मिक्स)	750 + 2.0	बुवाई के 30 दिन पर
आइसोप्रोटुरॉन + 2,4 डी (टैंक-मिक्स)	750 + 500	बुवाई के 30 दिन पर

चित्र 1. शाकनाशी मिश्रण द्वारा खरपतवार का प्रभावी नियंत्रण

खरपतवारनाशी के प्रयोग में सावधानियाँ:

- रसायनों का छिड़काव करने से पहले खेत में पर्याप्त नमी होनी चाहिए।
- छिड़काव के समय हवा का बहाव कम होना चाहिए ताकि हर्बीसाइड्स सही तरीके से काम कर सकें।
- हमेशा निर्धारित मात्रा और समय का ध्यान रखें ताकि फसल को नुकसान न हो और खरपतवार प्रभावी रूप से नियंत्रित हो।

5. एकीकृत खरपतवार प्रबंधन (आईडब्ल्यूएम):

वह प्रणाली जिसमें केवल किसी एक विधि पर निर्भर रहने के बजाय विभिन्न विधिया और तरीकों का आवश्यकतानुसार संयोजन और प्रयोग किया जाता है, उसे एकीकृत खरपतवार प्रबंधन कहते हैं। इस प्रकार का खरपतवार प्रबंधन अधिक प्रभावी और स्थायी होता है। एकीकृत खरपतवार प्रबंधन हर्बीसाइड्स पर निर्भरता को कम करता है और पर्यावरण पर पड़ने वाले दुष्प्रभावों से बचाता है। इसमें यांत्रिक, जैविक, सस्य वैज्ञानिक और रसायनिक विधियों का संतुलित संयोजन होता है, जिससे फसल सुरक्षा बेहतर होती है और खेती की लागत को भी कम किया जा सकता है।

जैविक गेहूँ उत्पादन में खरपतवार प्रबंधन के विकल्प:

यह समझना महत्वपूर्ण है कि जैविक प्रणाली के तहत खरपतवारों को पूरी तरह से समाप्त नहीं किया जा सकता; इन्हें केवल प्रबंधित किया जा सकता है। जैविक प्रणाली में खरपतवार प्रबंधन मुख्य उद्देश्य खरपतवारों की प्रतिस्पर्धा और प्रजनन को उस स्तर तक कम करना है, जिससे किसान की फसल को नुकसान न हो। मानव स्वास्थ्य, पर्यावरण संरक्षण, और शाकनाशी प्रतिरोधी खरपतवारों को ध्यान में रखते हुए, रसायनिक शाकनाशियों के बजाय जैविक गेहूँ उत्पादन में खरपतवारों के प्रबंधन के लिए निरोधक उपाय, सस्य वैज्ञानिक, भौतिक/यांत्रिक और जैविक विधियाँ उपयोग की जाती हैं। इन विधियों में सही फसल चक्र, सघन फसलें, समय पर जुताई, हाथ से खरपतवार निकालना, और प्राकृतिक शत्रुओं का उपयोग शामिल होता है, जिससे खरपतवारों से प्रतिस्पर्धा को कम कर उनके प्रभाव को नियंत्रित किया जा सके।

निष्कर्ष:

खरपतवार प्रबंधन गेहूँ की खेती में पैदावार और गुणवत्ता बढ़ाने के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। यांत्रिक, रसायनिक, और सस्य वैज्ञानिक विधियों का समुचित उपयोग करके फसल को खरपतवारों से बचाया जा सकता है। किसानों को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि वे समय पर खरपतवार नियंत्रण के उपाय अपनाएं ताकि उनकी फसल से अधिकतम लाभ प्राप्त हो सके।

जब सारा जिस्म आजाद है तो फिर जुबान ही गुलाम क्यों?

-डॉ. राम मनोहर लोहिया

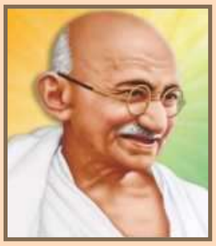

राष्ट्रीय व्यवहार में हिंदी को काम में लाना देश की एकता और उन्नति के लिए आवश्यक है।

-महात्मा गाँधी

खरपतवार से प्राप्त जैव-कीटनाशकों का उपयोग करके पर्यावरण-अनुकूल कीट नियंत्रण

दीक्षा एम. जी. एवं अर्चना अनोखे
भाकृअनुप- खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)

खरपतवार, जिन्हें अक्सर कृषि प्रणालियों में अवांछित घुसपैठियों के रूप में देखा जाता है, को प्राकृतिक जैव सक्रिय यौगिकों के मूल्यवान स्रोतों के रूप में तेजी से पहचाना जा रहा है। इनमें से कई पौधों की प्रजातियों में शक्तिशाली कीटनाशक गुण होते हैं, जो पारंपरिक रासायनिक कीटनाशकों के लिए एक पर्यावरण-अनुकूल और टिकाऊ विकल्प प्रदान करते हैं। खरपतवार से प्राप्त जैव-कीटनाशकों का विकास फसलों में कीटों को नियंत्रित करने के लिए कुछ खरपतवार प्रजातियों में मौजूद विषैले, विकर्षक या विकास को बाधित करने वाले फाइटोकेमिकल्स का उपयोग करता है। इनमें से कई पौधे, खास तौर पर आक्रामक और ऐलेलोपैथिक प्रजातियाँ, एल्कलॉइड, टेरपेनोइड्स, फ्लेवोनोइड्स और फेनोलिक्स जैसे द्वितीयक मेटाबोलाइट्स से भरपूर हैं। इन प्राकृतिक यौगिकों में विषाक्तता, एंटीफीडेंट गतिविधि, अंडे देने की रोकथाम, प्रतिकर्षण और वृद्धि अवरोध सहित कीटनाशक गुणों की एक विविध श्रेणी होती है। इन फाइटोकेमिकल्स का लाभ उठाकर, शोधकर्ता और किसान समान रूप से समस्याग्रस्त खरपतवारों को मूल्यवान जैव-कीटनाशक एजेंटों में बदल सकते हैं। आक्रामक खरपतवार बायोमास को कीटनाशक योगों में परिवर्तित करके, हम न केवल रासायनिक निर्भरता को कम करते हैं बल्कि अन्यथा समस्याग्रस्त पौधों की प्रजातियों के लिए मूल्य भी जोड़ते हैं।

जैव-कीटनाशक गतिविधि वाले सामान्य खरपतवार

कई खरपतवार प्रजातियों में प्राकृतिक कीटनाशक यौगिक होते हैं जो पर्यावरण के अनुकूल तरीके से कृषि कीटों का प्रभावी ढंग से प्रबंधन कर सकते हैं। इन खरपतवारों को जैव-कीटनाशकों के रूप में उपयोग करने से न केवल कीट नियंत्रण में मदद मिलती है, बल्कि खरपतवार बायोमास के स्थायी प्रबंधन में भी योगदान मिलता है।

क्रम संख्या	खरपतवार का नाम	सक्रिय यौगिक	जैव कीटनाशक गतिविधि	लक्षित कीट	संदर्भ
1	*पार्थेनियम हिस्टेरोफोरस*	पार्थेनिन (सेसक्विटरपेन लैक्टोन), फ्लेवोनोइड्स	कीटनाशक, एंटीफीडेंट, विकास अवरोध	*प्लूटेला जाइलोस्टेला* और *एफिस क्रैकसिवोरा*	रेड्डी एट अल ., 2018
2	*लॅन्टाना कैमरा*	आवश्यक तेल, लैंटाडीन	लार्विसाइडल, विकर्षक, ओविसाइडल	मच्छर, एफिड्स, श्वेत मक्खी	कुमार एट अल ., 2024
3	*कैलोट्रोपिस प्रोसेरा*	कार्डियक *ग्लाइकोसाइड्स, लेटेक्स*	संपर्क विषाक्तता, लार्वीसाइडल, निवारक	कैटरपिलर, *सिटोफिलस ओराइजे*	नेनाह एट अल ., 2013
4	*एगेराटम कोनिजोइड्स*	प्रेकोसीन और मोनोटरपीन	एंटी-जुवेनाइल हार्मोन क्रिया, कीट वृद्धि नियामक	मच्छर, दीमक, *प्लूटेला जाइलोस्टेला*	लिम, 2013
5	*धतूरा स्ट्रैमोनियम*	ट्रोपेन एल्कलॉइड्स *(स्कोपोलामाइन, एट्रोपीन)*	संपर्क और अंतर्ग्रहण विषाक्तता	*स्पोडोप्टेरा फ्रूजीपरडा*	मौरावा एट अल ., 2021
6	*अर्जेमोन मेक्सिकाना*	एल्कलॉइड्स (*बर्बेरिन, सैंगुइनारिन)*	अंडनाशी और लार्विसाइडल गुण	मच्छर, एफिड्स, हेलिकोवर्पा आर्मिजेरा	रामानन और सेल्वमुथुकुमारन, 2019

7	*यूफोर्बिया हीरता*	फ्लावोनॉयड्स, डाइटरपीनॉयड्स	धूम्र-प्रभावक और भोजन प्रतिरोधक	एनोफेलीज स्टेफेंसी, *हेलिकोवर्पा आर्मिजेरा*	देवी एट अल ., 2014
8	*क्रोमोलाइना ओडोरेटा*	आवश्यक तेल, फ्लावोनॉयड्स	प्रतिकर्षक और कीट वृद्धि बाधक	*सिटोफिलस जेमाइस, नीलापर्वता लुगेन्स, स्पोडोप्टेरा लिटुरा*	लॉवल एट अल ., 2015
9	*सेन्ना ऑक्सिडेंटालिस*	एंथ्राक्विनोन्स, फ्लावोनॉयड्स	भोजन प्रतिरोध, वृद्धि अवरोध	*कैलोसोब्रुचस मैक्यूलैटस स्पोडोप्टेरा लिटुरा*	लिएनार्ड एट अल ., 1993

अनुप्रयोग और सूत्रीकरण

खरपतवार से प्राप्त जैव कीटनाशकों को सक्रिय यौगिकों, लक्षित कीटों और वितरण के इच्छित तरीके के आधार पर विभिन्न योगों में विकसित और लागू किया जा सकता है। इन योगों का उद्देश्य पर्यावरणीय प्रभाव को कम करते हुए प्रभावकारिता, स्थिरता और उपयोग में आसानी को अनुकूलित करना है। पत्तियों, फूलों, बीजों या जड़ों से जलीय, इथेनॉल या मेथनॉल सॉल्वैंट्स का उपयोग करके तैयार किए गए कच्चे पौधों के अर्क का उपयोग आमतौर पर पत्तियों पर छिड़काव, बीज उपचार या मिट्टी में छिड़काव के रूप में किया जाता है। ये सरल, कम लागत वाली तैयारियाँ हैं जो कई फाइटोकेमिकल्स के सहक्रियात्मक प्रभावों को बनाए रखती हैं, जैसे कि *स्पोडोप्टेरा लिटुरा* के खिलाफ प्रभावी रूप से इस्तेमाल किया जाने वाला *पार्थेनियम हिस्टेरोफोरस* का जलीय अर्क। भाप आसवन या *लैंटाना कैमरा* और *क्रोमोलेना ओडोरेटा* जैसे सुगंधित खरपतवारों से विलायक के माध्यम से निकाले गए आवश्यक तेल, विशेष रूप से ग्रीनहाउस या भंडारण वातावरण में शक्तिशाली विकर्षक या धूम्रक के रूप में काम करते हैं। उनकी उच्च क्षमता और अस्थिरता उन्हें मच्छरों और एफिड्स जैसे कीटों के खिलाफ प्रभावी बनाती है।

पाउडर बायोमास फॉर्मूलेशन में पौधों के हिस्सों को धूप में सुखाना और पीसना शामिल है, जिसे फिर सीधे फसलों पर लगाया जा सकता है या संग्रहीत अनाज के साथ मिलाया जा सकता है। उदाहरण के लिए, *कैलोट्रोपिस प्रोसेरा* के सूखे पत्तों के पाउडर का उपयोग भंडारण कीट नियंत्रण में *सिटोफिलस जीमैस* के खिलाफ किया जाता है। इमल्सीफायबल कंसन्ट्रेट (ई.सी.), जिसमें सक्रिय अर्क को इमल्सीफायर्स और वनस्पति तेलों जैसे विलायकों के साथ मिश्रित किया जाता है ताकि घुलनशीलता और पत्ती की सतह पर पैठ को बढ़ाया जा सके। इसका एक उदाहरण है *आर्गेमोन मेक्सिकाना* बीज अर्क का ई.सी. फार्मूलेशन, जिसका उपयोग चूसने वाले कीटों के खिलाफ किया जाता है। खरपतवार आधारित फाइटोकेमिकल्स को समाहित करने के लिए नैनोकण या नैनोइमल्शन जैसे नैनोफॉर्मूलेशन विकसित किए जा रहे हैं, जो नियंत्रित उत्सर्जन, बढ़ी हुई स्थिरता और बेहतर लक्ष्य विशिष्टता प्रदान करते हैं - जैसा कि मच्छर नियंत्रण के लिए उपयोग किए जाने वाले एग्रेटम कोनीजोइड्स के नैनोइमल्शन में देखा जाता है।

अंततः, इन फार्मूलों को तेजी से एकीकृत कीट प्रबंधन (आई.पी.एम.) प्रणालियों में एकीकृत किया जा रहा है, जहां वे सूक्ष्मजीवी जैव नियंत्रण एजेंटों के पूरक हैं और सिंथेटिक कीटनाशकों पर निर्भरता को कम करते हैं, जिससे टिकाऊ और पर्यावरण-अनुकूल कृषि में योगदान मिलता है।

खरपतवार से बने जैव-कीटनाशकों के लाभ

- **पर्यावरण के अनुकूल और जैवअपघटनीय** - ये अवशेष नहीं छोड़ते और मिट्टी, जल एवं लाभकारी जीवों के लिए सुरक्षित होते हैं।
- **कम लागत व भरपूर कच्चा**- खरपतवार सर्वत्र आसानी से उपलब्ध हैं और इनका उपयोग सस्ता व सतत् संसाधन के रूप में किया जा सकता है।
- **कचरा उपयोग एवं परिपथ जैव-अर्थव्यवस्था**- आक्रामक खरपतवारों को मूल्यवान कीट नियंत्रण उत्पादों में परिवर्तित किया जा सकता है।
- **बहु-प्रभावी कार्यविधि**- विभिन्न कीट शारीरिक प्रणालियों (जैसे तंत्रिका, पाचन, हार्मोन) पर असर डालते हैं, जिससे प्रतिरोधकता की संभावना कम होती है।
- **मानव और पशुओं के लिए सुरक्षित** - सामान्यत: ये गैर-विषैले होते हैं और जैविक तथा एकीकृत खेती के लिए उपयुक्त हैं।
- **आई.पी.एम. रणनीतियों के साथ संगत** - अन्य जैविक एवं पारिस्थितिक कीट नियंत्रण उपायों के साथ आसानी से समन्वय करते हैं।
- **नवीन कीटनाशक खोज की संभावना** - कई खरपतवारों में अद्वितीय यौगिक होते हैं जो नए जैव-कीटनाशकों के विकास का मार्ग प्रशस्त कर सकते हैं।
- **रासायनिक कीटनाशकों पर निर्भरता में कमी** - जैविक विकल्प होने के कारण ये रसायनों का उपयोग कम कर पर्यावरणीय प्रभाव को घटाते हैं।

साल्विनिया मोलेस्टा का जैविक नियंत्रण : एक सफल कहानी

अर्चना अनोखे[1], सुशील कुमार[1] एवं मोगली रम्मैया[2]
[1]भाकृअनुप- खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)
[2]भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

परिचय

साल्विनिया मोलेस्टा (वाटरमॉस), जिसे स्थानीय रूप से (चीनी झालर) कहा जाता है, एक मुक्त रूप से तैरने वाली जलीय फर्न है जो साल्विनिएसी कुल से संबंधित है। इसका मूल निवास स्थान दक्षिण अमेरिका है और इसे सबसे पहले 1754 में वर्णित किया गया था। यह प्रजाति अब एक वैश्विक स्तर पर आक्रामक जलीय खरपतवार बन चुकी है, जो मीठे जल के पारिस्थितिक तंत्र को गंभीर रूप से प्रभावित करती है। भारत में, यह टैंकों, झीलों, जलाशयों, सिंचाई नहरों और धान के खेतों को प्रभावित करती है, विशेष रूप से आर्द्र उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय राज्यों में ज्यादा नुकसान पहुंचाता है। इस पौधे के तने द्विखंडित शाखाओं वाले राइजोम से बने होते हैं जो क्षैतिज रूप से फैलते हैं। यह पौधा पेंटाप्लोइड (2n = 45) है, जिससे यह यौन प्रजनन में असक्षम हो जाता है। फिर भी, यह आक्रामक रूप से वनस्पति प्रजनन के माध्यम से फैलता हैं। प्रत्येक गाँठ कम से कम तीन बगल कलियाँ बना सकती है, और चोट लगने पर छह तक बन सकती हैं। पोषक तत्वों की उपलब्धता और तापमान (30°C इष्टतम तापमान, 10°C से नीचे और 40°C से ऊपर कोई वृद्धि नहीं होती है) इसके विकास को प्रभावित करते हैं। साल्विनिया की वैश्विक रूप से 12 प्रजातियाँ पाई जाती हैं, जिनमें से *स. मोलेस्टा* सबसे अधिक समस्याजनक है। इसकी नाइट्रोजन मात्रा शुष्क वजन का 0.6-4% तक हो सकती है, जो इसे पोषक तत्वों से भरपूर जल निकायों में अधिक उत्पादक और आक्रामक बनाती है।

भारत में स्थिति :- भारत में *साल्विनिया मोलेस्टा* को पहली बार 1940 के दशक में देखा गया था। तब से यह केरल, तमिलनाडु, पश्चिम बंगाल, असम जैसे राज्यों में एक गंभीर आक्रामक खरपतवार बन गया है। इसकी तेज वनस्पतिक प्रजनन दर और अनुकूलन क्षमता के कारण यह अब राष्ट्रीय महत्व का जलीय खरपतवार बन गया है। इसे नियंत्रित करने के लिए यांत्रिक, रासायनिक खरपतवारनाशकों और जैविक नियंत्रण के प्रयास किए गए, जिनमें *सायरटोबैगस साल्विनिए* सबसे उपयोगी पाया गया है।

कैसे फैलता और प्रजनन करता है :- *सिरटोबैगस सल्विनी* लगभग पूरी तरह से वनस्पतिक प्रजनन के माध्यम से फैलता है क्योंकि यह बीज या बीजाणु नहीं बनाता। यह छोटे-छोटे टुकड़ों के माध्यम से तेजी से फैलता है। एक छोटा टुकड़ा भी नई कॉलोनी बना सकता है। अनुकूल परिस्थितियों (20-30°C तापमान और पोषक तत्वों से भरपूर जल) में यह 10 दिनों से भी कम समय में अपने द्रव्यमान को दोगुना कर सकता है। इसकी मोटी परतें 40-60 सेमी तक बढ़ सकती हैं, जिससे जल निकाय पूरी तरह से अवरुद्ध हो जाते हैं। इसका फैलाव जल प्रवाह, बाढ़, नौकाओं, मछली, पशु पकड़ने के उपकरणों और जल पक्षियों द्वारा होता है।

प्रभाव :-

- **जैव विविधता में कमी:** घने प्रकाश को अवरुद्ध करते हैं जिससे प्रकाश संश्लेषण रुकता है और जल में अश्वक्सीजन की कमी हो जाती है।
- **कृषि को नुकसान:** यह नहरों और सिंचाई प्रणाली को जाम करता है, जिससे जल आपूर्ति बाधित होती है।
- **मछली पालन को नुकसान:** मछलियों की आवाजाही और खाद्य श्रृंखला प्रभावित होती है।
- **स्वास्थ्य जोखिम:** जलीय सतह पर रुके पानी में मच्छर पनपते हैं, जिससे मलेरिया और डेंगू जैसे रोग फैलते हैं।
- **आर्थिक नुकसान:** इसे हटाना महंगा और श्रमसाध्य होता है, और नौका वाहन व जल परिवहन में बाधा आती है।

सिरटोबैगस साल्विनी का जीवविज्ञान एवं पारिस्थितिकी :- यह कीट केवल स. प्रजातियों पर निर्भर करता है और इन्हीं को खाता है। इसका मूल स्थान दक्षिण-पूर्वी ब्राजील और उत्तरी अर्जेंटीना है। इसे सबसे पहले 1980 के दशक में अश्वस्ट्रेलिया में जैविक नियंत्रण के लिए प्रयोग किया गया और अब यह 14 से अधिक देशों में सफलतापूर्वक उपयोग किया जा चुका है।

जीवन चक्र में चार अवस्थाएँ होती हैं :-

- अंडा पत्ती की कलियों और राइजोम में दिए जाते हैं (300 अंडे प्रति मादा)
- लार्वा सफेद रंग का (4 मिमी), आंतरिक भागों में सुरंग बनाकर भोजन करता है।
- कोषस्थ (प्यूपा), पानी के भीतर बालों से बने खोल में विकसित होता है।
- वयस्क शुरू में भूरे, बाद में काले (2 मिमी), बाहर से पत्तियों और कलियों पर भोजन करते हैं लार्वा राइजोम को नुकसान पहुँचाता है जिससे पौधे की उछाल खत्म हो जाती है और वह डूब जाता है।

जैविक नियंत्रण के लिए चरणबद्ध प्रोटोकॉल :-

1. **पालन टैंक की स्थापना**- स्वच्छ, बिना क्लोरीन का पानी भरें और स्वस्थ स. मोलस्टा पौधे डालें।

2. **कीटों का प्रारंभिक परिचय**- 1:1 नर-मादा अनुपात में वयस्क सा. साल्विनिए डालें।
3. **रखरखाव**- पानी की गुणवत्ता बनाए रखें और मुरझाए पौधों को समय-समय पर बदलें।
4. **जनसंख्या प्रबंधन**- बढ़ी हुई कीट संख्या को एकत्र कर फील्ड में छोड़ा जाए।
5. **मैदानी छोड़ाई**- प्रारंभिक रूप से 60 कीट/वर्गमीटर की दर से छोड़ें।
6. **निगरानी**- समय पर निरीक्षण करें, और किसी भी प्रकार के रसायनों का उपयोग न करें।

भारत में सफलता की कहानियां :-

- 1982 में बेंगलुरु के पास भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद द्वारा पहली बार ऑस्ट्रेलिया से लाकर कीट छोड़ा गया तथा यह बहुत ही सफल रहा।
- 1990 में वेल्लयानी झील, केरल (50 हेक्टेयर) में 90% से अधिक साल्विनिया का नियंत्रण हुआ तथा इसकी पुनरावृत्ति नही हुई।
- भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद - खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर द्वारा 2018-2020 में सतपुड़ा ताप विद्युत केंद्र, सारणी (4,000 हेक्टेयर) में पूर्ण रूप से साल्विनिया का नियंत्रण किया गया तथा 2022-23 में विभिन्न जलाशयों में जैविक नियंत्रण सफलता पूर्वक पूर्ण किया गया (दोनोरा, गढ़चिरोली, मोहर्ली, चंद्रपुर, पचमढ़ी, दुर्ग, सारणी, झज्जर आदि)। 2023-2024 में गिदुराहा (12 एकड़) और मुरवारी (25 एकड़) क्षेत्र में भी *साल्विनिया मोलेस्टा* का 100% नियंत्रण किया गया।

नियंत्रण में लगने वाला समय :-

2-3 महीने में शुरुआती क्षति के लक्षण दिखते हैं तथा 6-8 महीने में 70% से अधिक नियंत्रण होता है और 9-12 महीने में पूर्ण रूप से नियंत्रण हो जाता है।

निष्कर्ष:

साल्विनिया मोलस्टा भारत में जलीय पारिस्थितिक तंत्र, कृषि और जनस्वास्थ्य के लिए एक गंभीर खतरा है। जैविक नियंत्रण विधि, विशेष रूप से *सा. साल्विनिए* आधारित रणनीति, पर्यावरणीय रूप से सुरक्षित और दीर्घकालिक समाधान प्रदान करती है। भारत के विभिन्न भागों में इसकी सफलता इस विधि की प्रभावशीलता को सिद्ध करती है।

सिरटोबैगस साल्विनी का लार्वा

सिरटोबैगस साल्विनी कीट

सिरटोबैगस साल्विनी का लार्वा

सिरटोबैगस साल्विनी कीट

खरपतवार : औषधीय गुण एवं लाभ

प्रतिभा सिंह, राकेश समौरिया, श्वेता गुप्ता, सीमा शर्मा एवं अंजू कँवर खंगारोत
राजस्थान कृषि अनुसंधान संस्थान, श्री कर्ण नरेंद्र कृषि विश्वविद्यालय, दुर्गापुर, जयपुर (राज.)

खरपतवार ऐसे पौधे हैं जो किसी जगह पर बिना बोए उगते हैं और उनकी उपस्थिति किसान के लिए नुकसानदायक होती है यह फसल पौधों की वृद्धि में बाधा डालते हैं, जिससे मानव गतिविधियां, कृषि, प्राकृतिक प्रक्रियाएं और देश की अर्थव्यवस्था प्रभावित होती है। दूसरे शब्दों में, खरपतवार, वे अवांछित पौधे हैं जो वहां उगते हैं जहां उन्हें नहीं उगाया जाना चाहिए।

मनुष्य एवं प्रकृति का प्राचीन काल से ही काफी गहरा सम्बन्ध रहा है। हम अपने दिन प्रतिदिन के जीवन में विभिन्न प्रकार के पौधों का उपयोग करते हैं। कुछ वनस्पतियाँ प्राकृतिक रूप से बंजर भूमि या खेतों में फसलो के साथ अपने आप ही उग जाती है, इन अनचाही वनस्पतियों को खरपतवार कहते हैं एवं इनको अक्सर अवांछित एवं अनुपयोगी माना जाता है, लेकिन वास्तव में बहुत से खरपतवारों में औषधीय गुण होते हैं जो विभिन्न बीमारियों के उपचार में सहायक होते हैं। इन खरपतवारों में से कुछ का उपयोग पारंपरिक चिकित्सा में भी किया जाता है और कई लोगों को इनसे स्वास्थ्य लाभ मिलता है। उदाहरण के लिए कुछ खरपतवारों का उपयोग खांसी, कफ, मूत्र संक्रमण और शरीर दर्द के लिए किया जाता है। इस लेख में कुछ खरपतवारों एवं उनके औषधीय गुणों के बारे में वर्णन किया गया है।

सत्यानाशी : आम बोलचाल में सत्यानाशी या पीला धतुरा कहलाने वाली पीलीकटेरी का वानस्पतिक नाम *आर्जीमोन मेक्सिकाना* है। अक्सर मैदानी और सिंचित भूमि पर पाए जाने वाला यह कंटीला पौधा औषधीय गुणों से भरपूर है। अक्सर खेतों में खरपतवार की तरह उग आने की वजह से इसे सत्यानाशी कहा जाता है। सत्यानाशी का पौधा छोटे, हरे रंग का होता है और इसके पीले चटकीले फूल इसे आकर्षक बनाते हैं। आयुर्वेद के अनुसार, इस पौधे का उपयोग प्राचीन समय से औषधीय उपचारों में किया जा रहा है, यह बड़े गुणकारी प्रभावों वाला पौधा है। इसे तोड़ने पर पीले रंग का दूध निकलता है, जिसे "स्वर्णशीर" कहा जाता है। पौधे पर छोटे-छोटे कांटे होते हैं, और इसके फल औषधीय गुणों से युक्त माने जाते हैं

उपयोग : सत्यानाशी का उपयोग खांसी, कफ, मूत्र संक्रमण, शरीर दर्द, नाक-कान से रक्तस्राव, कुष्ठ रोग और घावों के इलाज के लिए किया जाता है।

- पौधे की जड़ का काढ़ा खांसी में तुरंत राहत देता है.
- जड़ का पाउडर गर्म पानी या दूध के साथ लेने से कफ की समस्या दूर होती है.
- सत्यानाशी का पौधा पाचन क्रिया को दुरूस्त कर पेट सफाई में सहायक होता है।

दूब : हिन्दू धर्म शास्त्रों में दूब घास को अति-पवित्र माना गया है, प्रत्येक शुभ कार्यों और पूजन के दौरान इसका उपयोग किया जाता है। दूब घास खेल के मैदान, मन्दिर परिसर, बाग व बगीचों और खेत खलिहानों में संपूर्ण भारत में प्रचुर मात्रा में उगती हुई पायी जाती है। इसका वानस्पतिक नाम *सायनाडोन डेक्टीलोन* है।

उपयोग : इसका प्रतिदिन सेवन शारीरिक स्फूर्ति प्रदान करता है और शरीर को थकान महसूस नहल होती है।

- दूबघास एक शक्तिवर्द्धक औषधि है क्योंकि इसमें ग्लाइकोसाइड, अल्केलाइड पाए जाते हैं
- विटामिन 'ए' और विटामिन 'सी' भी पर्याप्त मात्रा में पाये जाते हैं ।
- दूब घास का रस पीने से पथरी गल जाती है।

द्रोणपुष्पी : द्रोण (प्याला) के आकर के फूल होने के कारण इसका नाम द्रोणपुष्पी है। द्रोणपुष्पी सामान्यतः बारिश के दौरान खेत खलिहान, मैदानों और जंगलों में उगता हुआ पाया जाता है। द्रोणपुष्पी का वानस्पतिक नाम ल्युकास एस्पेरा है। सर्प-विष के प्रभाव को कम करने के लिए द्रोणपुष्पी एक महत्वपूर्ण पौधा है।

उपयोग: द्रोणपुष्पी की पत्तियों और पीपल की पत्तियों का एक-एक चम्मच रस सुबह-शाम लेने से संधिवात में लाभ मिलता है।

- साँप के काटे गए स्थान पर यदि लगातार इसकी पत्तियों को रगड़ा जाए तो विष का प्रभाव कम पड़ने लगता है। इसी दौरान इसकी पत्तियों के रस को नाक में डाला जाए और साथ ही इस रस का सेवन कराया जाए तो काफी फ़ायदा होता है।
- द्रोणपुष्पी की पत्तियों का रस (2-2) बूंद नाक में टपकाने से और इसकी पत्तियों को 1-2 काली मिर्च के साथ पीसकर इसका लेप माथे पर लगाने से सिर दर्द में अतिशीघ्र आराम मिलता है। द्रोणपुष्पी की पत्तियों का ताजा रस खुजली को कम करता है, प्रतिदिन इसकी पत्तियों का रस शरीर पर लेपित किया जाए तो खुजली समाप्त हो जाती है।
- हर्रा और बहेड़ा के फलों के चूर्ण के साथ थोड़ी मात्रा इस पौधे की पत्तियों की भी मिला ली जाए और खाँसी से ग्रस्त रोगी को दिया जाए तो काफी ज्यादा आराम मिलता है। द्रोणपुष्पी की पत्तियों को खाँसी से ग्रस्त रोगी को दिया जाए तो काफी ज्यादा आराम मिलता है।

नागरमोथा : यह पौधा संपूर्ण भारत में नमी और जलीय भू-भागों में प्रचुरता से दिखाई देता है, आमतौर से घास की तरह दिखाई देने वाले इस पौधे को मोथा या मुस्तक के नाम से भी जाना जाता है। इसका वानस्पतिक नाम *सायप्रस रोटंडस* है।

उपयोग : नागरमोथा में प्रोटीन, स्टार्च के अलावा कई कार्बोहाड्रेट पाए जाते हैं। ऐसा माना जाता है कि संपूर्ण पौधे का लेप शरीर पर लगाने से सूजन मिट जाती है। इसमें एण्टी-बैक्टेरियल गुण होते हैं। इसके कंद का चूर्ण तैयार कर प्रतिदिन एक चम्मच खाना खाने से पहले लिया जाए तो यह भूख बढाता है।

- नागरमोथा के ताजे पौधे को पानी में उबालकर काढा तैयार कर प्रसुता महिलाओं के पिलाने से उन्हें भी काफ़ी फायदा होता है।
- नागरमोथा की जड़ का काढ़ा बनाकर सेवन करने से शरीर से पसीना आना शुरू हो जाता है जिन्हें मुँह से लार गिरने की शिकायत हो, उन्हे भी आराम मिल जाता है।
- चुटकी भर नागरमोथा का चूर्ण शहद के साथ चाटने से हिचकियों के लगातार आने का क्रम रूक जाता है। किसी वजह से जीभ सुन्न हो जाए तो नागरमोथा का लगभग 5 ग्राम चूर्ण दूध के साथ दिन में दो बार लेने से आराम मिलता है।

पुर्ननवा : हमारे आँगन एवं बगीचे और घास के मैदानों में अक्सर चलते हुए पैरों से कुचली जाने वाली इस बूटी का वानस्पतिक नाम *बोरहाविया डिफ्यूसा* है। आयुर्वेद के अनुसार इस पौधे में व्यक्ति को पुन: नवा अर्थात जवान कर देने की क्षमता है और मजे की बात यह भी है कि मध्य प्रदेश के पातालकोट के आदिवासी इसे जवानी बढ़ाने वाली दवा के रूप में उपयोग में लाते हैं।

उपयोग : पुर्ननवा का उपयोग विभिन्न विकारों में भी करते हैं, इसके पत्तों का रस अपचन में लाभकारी होता है।

- पीलिया होने पर पुर्ननवा के संपूर्ण पौधे के रस में हरड़ या हर्रा के फलों का चूर्ण मिलाकर लेने से रोग में आराम मिलता है।
- हृदय रोगियों के लिए पुर्ननवा का पांचांग (समस्त पौधा) का रस और अर्जुन छाल की समान मात्रा बड़ी फाय़देमंद होती है।
- मोटापा कम करने के लिए पुर्ननवा के पौधों को एकत्र कर सुखा लिया जाए और चूर्ण तैयार किया जाए, 2 चम्मच चूर्ण शहद में मिलाकर सुबह शाम सेवन किया जाए तो शरीर की स्थूलता तथा चर्बी कम हो जाती है।
- पुर्ननवा की ताजी जड़ों का रस (2 चम्मच) दो से तीन माह तक लगातार दूध के साथ सेवन करने से वृद्ध व्यक्ति भी युवा की तरह महसूस करता है।
- पुर्ननवा की जड़ों को दूध में उबालकर पिलाने से बुखार में तुरंत आराम मिलता है। इसी मिश्रण को अल्पमूत्रता और मूत्र में जलन की शिकायत से छुटकारा मिलता है।
- प्रोस्टेट ग्रंथियों के वृद्धि होने पर जड़ के चूर्ण का सेवन लाभकारी होता है। लीवर (यकृत) में सूजन आ जाने पर पुर्ननवा की जड़ (3 ग्राम) और सहजन अथवा मोरिंगा की छाल (4 ग्राम) लेकर पानी में उबाला जाए व रोगी को दिया जाए तो अतिशीघ्र आराम मिलता है।

लटजीरा : हमारे बाग-बगीचे आँगन या खेलकूद के मैदानों और आम रूप से खेतों में पायी जाने वाली इस वनस्पति का वैज्ञानिक नाम *एकाइरेन्थस एस्पेरा* है। एक से तीन फीट की ऊँचाई वाले इस पौधे पर ऊपरी भाग पर एक लट पर जीरे की तरह दिखाई देने वाले बीज लगे होते हैं जो अक्सर पैंट और साड़ियों आदि से रगड़ खाने पर चिपक जाते हैं। खेती में अक्सर इसे खरपतवार माना जाता है लेकिन आदिवासी इसे बड़ा ही महत्वपूर्ण औषधीय पौधा मानते हैं।

उपयोग :

- इसके बीजों को एकत्र कर कुछ मात्रा लेकर पानी में उबाला जाए और काढ़ा बन जाने पर भोजन के 2-3 घंटे बाद देने से लीवर (यकृत) की समस्या में आराम मिलता है।

- लटजीरा के बीजों को मिट्टी के बर्तन में भूनकर सेवन करने से भूख मरती है और इसे वजन घटाने के लिए उपयोग में लाया जाता है।
- मसूड़ो से खून आना, बदबू आना अथवा सूजन होने से लटजीरा की दातून उपयोग में लाने पर तुरंत आराम पड़ता है।
- नए जख्म या चोट लग जाने पर रक्त स्राव होता है, लटजीरा के पत्तों को पीसकर इसके रस को जख्म में भर देने से बहता रक्त रूक जाता है।
- लटजीरा के संपूर्ण पौधे के रस का सेवन अनिद्रा रोग में फायदा करता है। जिन्हें तनाव, थकान और चिढ़चिढ़ापन की वजह से नींद नहीं आती है, उन्हे इसका सेवन करने से निश्चित फायदा मिलता है।
- इसके पत्तों के साथ हींग चबाने से दांत दर्द में तुरंत आराम मिलता है। सर्दी। और खांसी में भी पत्तों का रस अत्यंत गुणकारी है।

हुरहुर : हुरहुर बरसात के मौसम में घरों, मैदानी इलाकों, खेत- खलिहानों और जंगलों मे देखा जा सकता है। इस पौधे को हुलहुल और सूर्यभक्त के नाम से भी जाना जाता है। हुरहुर का वानस्पतिक नाम क्लीयोम विस्कोसा है।

उपयोग :

- हुरहुर की पत्तियों के रस की चार बूँदें कान में टपकाने से कान दर्द में अतिशीघ्र आराम मिलता है।
- कान को अच्छी तरह से साफ करके उसके अन्दर यदि हुरहुर के पत्तों का रस डाला जाए तो कान से मवाद बहना ठीक हो जाता है।
- पत्तियों को कुचलकर किसी सूती कपड़े के सहारे कान के ऊपर बाँध दिया जाए तो कान की सूजन में भी जबरदस्त फ़ायदा होता है।
- ठीक इसी तरह नाक में सूजन, दर्द या कोई और समस्या हो तो हुरहुर की पत्तियों के रस को टपकाने से तकलीफ में राहत मिलती है।
- हुरहुर की पत्तियों को नारियल तेल के साथ कुचलकर मवाद वाले किसी भी घाव पर लगाया जाए तो मवाद सूख जाता है और घाव में आराम होता है।
- हुरहुर की जड़ों के रस की कुछ मात्रा (लगभग 5 से 10 मिली) सुबह और शाम पिलाने से बुखार के बाद आई कमजोरी या सुस्ती में हितकर होती है।

हमारे इर्द-गिर्द पाए जाने वाले हर एक पौधे का अपना एक खास औषधीय महत्व है और यह बात अलग है कि खाद्यान्नों और फसलों की ज्यादा पैदावार के लिए इन खरपतवारों को उखाड फेंक दिया जाता है। खरपतवारों के औषधीय गुणों की जानकारी हो तो हम इन्हें उखाड़-फेंककर जलाने या जमीन में दबाने के बजाए औषधीय तौर पर उपयोग में ला सकते हैं। इस प्रकार खरपतवारो को अवांछित न समझकर हमें इनके महत्व को भी समझना चाहिए एवं जितना हो सके इनके औषधीय गुणों का उपयोग करना चाहिए और इस जानकारी को सभी लोगो से साझा भी करना चाहिए।

भाषा की सरलता, सहजता और शालीनता अभिव्यक्ति को सार्थकता प्रदान करती है। हिंदी ने इन पहलुओं को खूबसूरती से समाहित किया है।

-नरेंद्र दामोदरदास मोदी

भारतीय सभ्यता की अविरल धारा प्रमुख रूप से हिंदी भाषा से ही जीवांत तथा सुरक्षित रह पाई है।

-अमित शाह

राजस्थान के अर्द्ध शुष्क क्षेत्र में मूंगफली की फसल में खरपतवार प्रबंधन

श्वेता गुप्ता, भीम पारीक एवं प्रतिभा सिंह
राजस्थान कृषि अनुसंधान संस्थान, दुर्गापुर, जयपुर (राज.)

मूंगफली को आम तौर पर गरीबों का अखरोट तिलहनों का राजा भी कहा जाता है और इसे अक्सर वंडर नट के नाम से भी जाना जाता है। यह एक फलीदार फसल है जिसकी खेती व्यापक रूप से की जाती है। देश में वनस्पति तेल की कमी को पूरा करने में मूंगफली की अहम भूमिका है। मूंगफली की फसल खरपतवार के संक्रमण के लिए अति संवेदनशील होती है, क्योंकि इसकी शुरुआती अवस्था में वृद्धि धीमी होती है (40 दिन तक), पौधे की ऊंचाई कम और फली भूमिगत होती है। मूंगफली के खरपतवारों में घास से लेकर चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार और सेजेज तक की विविध वनस्पति प्रजातियां शामिल हैं, और ये उपज में भारी नुकसान (15-75%) का कारण बनते हैं जो सिंचित वर्जीनिया प्रकार की मूंगफली की तुलना में वर्षा आधारित स्पेनिश गुच्छा प्रकार में अधिक होता है।

मूंगफली मौसम के आरंभ में खरपतवारों से प्रतिस्पर्धा के लिए अतिसंवेदनशील होती है। खरपतवार इस फसल की उत्पादकता बढ़ाने में एक प्रमुख बाधा है, खासकर बरसात के मौसम में यह फसल काफी दूरी पर होती है, तुलनात्मक रूप से छोटी होती है और पहले 20-25 दिनों तक धीरे-धीरे बढ़ती है। परिणामस्वरूप फसल वृद्धि के आरंभिक चरण में अधिकांश खरपतवारों से अच्छी तरह से प्रतिस्पर्धा नहीं कर पाती है, खासकर प्रतिकूल परिस्थितियों में, इसलिए मूंगफली में प्रारंभिक खरपतवार प्रबंधन आवश्यक है।

राजस्थान के अर्ध शुष्क क्षेत्रों में निम्नलिखित चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार पाए जाते हैं :-

वानस्पतिक नाम	:	*अमेरेन्थस विरिडिस*
हिंदी/स्थानीय नाम	:	जंगली चौलाई
खरपतवार का कुल	:	अमेरेन्थेसी
खरपतवार की प्रकृति	:	एकवर्षीय, खरीफ

वानस्पतिक नाम	:	*कोमेलिना बेंघालेंसिस*
हिंदी/स्थानीय नाम	:	मोरबाटी, कैना, कनकव्वा
खरपतवार का कुल	:	कोमेलिनेसी
खरपतवार की प्रकृति	:	एकवर्षीय, खरीफ

वानस्पतिक नाम	:	*बोहेरविआ डिफ्फुसा*
हिंदी/स्थानीय नाम	:	विषखपरा, पुनर्नवा, सांठ
खरपतवार का कुल	:	निक्टेजिनेसी
खरपतवार की प्रकृति	:	एकवर्षीय, खरीफ

वानस्पतिक नाम	:	*लुकास एस्पेरा*
हिंदी/स्थानीय नाम	:	गुम्मा, गोमा मधुपति, द्रोणपुष्पी
खरपतवार का कुल	:	लेमिएसी
खरपतवार की प्रकृति	:	एकवर्षीय

वानस्पतिक नाम : *डिगरा आरवेंसिस*
हिंदी/स्थानीय नाम : लहसुआ, कीराई, मूंदरा
खरपतवार का कुल : अमेरेंथेसी
खरपतवार की प्रकृति : एकवर्षीय, खरीफ

वानस्पतिक नाम : *फैसलिस मिनिमा*
हिंदी/स्थानीय नाम : रसभरी, चिरबूटी
खरपतवार का कुल : सोलेनेसी
खरपतवार की प्रकृति : एकवर्षीय

वानस्पतिक नाम : *फ़ैलेन्थस निरूरी*
हिंदी/स्थानीय नाम : हज़ारदाना, भूमि आँवला
खरपतवार का कुल : युफ़ोर्बिएसी
खरपतवार की प्रकृति : एकवर्षीय

वानस्पतिक नाम : *ट्रिएन्थमा पोर्टुलकास्ट्रुम*
हिंदी/स्थानीय नाम : सांठा
खरपतवार का कुल : ऐजोएसी
खरपतवार की प्रकृति : एकवर्षीय, खरीफ

राजस्थान के अर्ध शुष्क क्षेत्रों में निम्नलिखित सकड़ी पत्ती वाले खरपतवार पाए जाते हैं :-

वानस्पतिक नाम : *साइप्रस रोटुंडस*
हिंदी/स्थानीय नाम : मोथा
खरपतवार का कुल : साइप्रसी
प्रकृति : बहुवर्षीय

वानस्पतिक नाम : *साइनोडोन डेक्टिलोन*
हिंदी/स्थानीय नाम : दूब घास
खरपतवार का कुल : पोएसी
खरपतवार की प्रकृति : बहुवर्षीय

वानस्पतिक नाम : *डेक्टीलोकटेनियम एजीप्टियम*
हिंदी/स्थानीय नाम : मकड़ा घास
खरपतवार का कुल : पोएसी
खरपतवार की प्रकृति : एकवर्षीय, खरीफ

वानस्पतिक नाम : इलुसिन इंडिका
हिंदी/स्थानीय नाम : मलनकुरी, बलराजा, मंडला
खरपतवार का कुल : पोएसी
खरपतवार की प्रकृति : एकवर्षीय,खरीफ

मूंगफली में खरपतवार प्रबंधन के तरीके:-

1. **शस्य संबंधी पद्धतियाँ**
2. **यांत्रिक विधि**
3. **रासायनिक विधि**

सस्य संबंधी पद्धतियाँ

- **मल्चिंग :** खरपतवार और फसल अवशेष, लाइव मल्च इत्यादि का उपयोग जमीन पर या फसलों की पंक्तियों के भीतर समान रूप से किया जाता है ताकि सूरज की रोशनी कम हो सके, जिससे खरपतवारों का अंकुरण या उद्भव कम हो ।

- **गहरी जुताई :** यह फसल की बुवाई से पहले किया जाता है, जो खरपतवार बीज बैंक को समाप्त करके खरपतवारों के शुरुआती प्रवाह को कम करने में मदद करता है। यह जड़ और तने को नुकसान पहुँचाकर खरपतवारों की प्रतिस्पर्धात्मकता और पुनर्जनन क्षमता को कमज़ोर करता है।

- **उर्वरक :** उर्वरकों को पंक्तियों में डालना चाहिए। यह देखा गया है कि उर्वरक के छिड़काव विधि की तुलना में पंक्तियों में उर्वरकों को डालने पर कम खरपतवार पाए जाते हैं।

- **रोपण घनत्व :** संकीर्ण पंक्ति अंतराल और उच्च बीज दर का उपयोग फसल की शक्ति बढ़ाने और खरपतवारों पर दमनकारी प्रभाव डालने में मदद करता है।

- **सिंचाई की विधि :** आम तौर पर सिंचाई विधियाँ भी खरपतवार घनत्व को प्रभावित करती हैं। लंबे समय तक सूखे की स्थिति में, यदि मूंगफली में सिंचाई की आवश्यकता हो तो तनाव की स्थिति से बचने के लिए इसे स्प्रिंकलर के माध्यम से दिया जाना चाहिए। यह पाया गया है कि स्प्रिंकलर विधि की तुलना में बाढ़ विधि से सिंचाई करने पर खरपतवार का अधिक प्रकोप पाया जाता है।

- **प्रतिस्पर्धी किस्मों का उपयोग करें :** मूंगफली की फसल में सिंचित वर्जिनिया स्प्रेडिंग प्रकार की मूंगफली की तुलना में वर्षा आधारित स्पेनिश गुच्छा प्रकार में खरपतवार प्रतिस्पर्धा अधिक होती है।

यांत्रिक विधियाँ

- **हाथ से निराई-गुड़ाई :** मूंगफली में खरपतवार नियंत्रण के लिए ये सबसे व्यापक रूप से अपनाई जाने वाली विधियाँ हैं। लेकिन बरसात के मौसम में, ज्यादा दिन साफ नहीं होते और परिणामस्वरूप, अंतर शस्य क्रियाएँ संचालन में देरी से होती है, जिसके कारण खरपतवार फसलों पर हावी हो जाते हैं और उपज में भारी कमी आती है। साथ ही, बढ़ती मजदूरी और कई बार जरूरत पड़ने पर पर्याप्त मजदूरों की अनुपलब्धता के कारण, उचित समय पर बड़े क्षेत्र में हाथ से खरपतवारों को नियंत्रित करना एक गंभीर समस्या बन गई है।

- **यांत्रिक निराई यंत्र का उपयोग :** मूंगफली में कुदाली का उपयोग आम तौर पर किया जाता है क्योंकि पंक्तियों के बीच में काफ़ी जगह होती है। आजकल हल्के वज़न वाले हस्त चलित वीडर उपलब्ध हैं जो खरपतवारों को प्रभावी ढंग से उखाड़ देते हैं और मिट्टी की जुताई करते हैं जिससे मिट्टी में उचित वायु संचार होता है। ऐसे हस्त चलित वीडर से खरपतवार निकालने में हाथ से खरपतवार निकालने की तुलना में कम समय लगता है। कुछ मोटर चालित वीडर भी उपलब्ध हैं जो खरपतवारों को नियंत्रित करने में बहुत कम समय लेते हैं लेकिन उनकी उच्च कीमत के कारण उनका बहुत ज्यादा उपयोग नहीं किया जाता है।

रासायनिक विधियाँ

निम्न खरपतवारनाशक को बुवाई के 48 घंटे के अंदर छिड़काव करें :-

- पेंडीमेथालिन खरपतवारनाशक का 750 ग्राम सक्रिय तत्व, 500 लीटर पानी में मिला कर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें ।

या

- पेंडीमेथालिन 30% + इमेजेथापायर 2% (मिश्रित घोल) खरपतवारनाशक का 800 ग्राम सक्रिय तत्व, 500 लीटर पानी में मिला कर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें ।

निम्न खरपतवारनाशक को खड़ी फसल में बुवाई के 15 से 20 दिन पश्चात छिड़काव करें :-

- सोडियम ऐसीफ्लुओरफेन 16.5% + क्लॉडिनोफॉप प्रोपरगिल 8% (मिश्रित घोल) खरपतवारनाशक का 245 ग्राम सक्रिय तत्व 500 लीटर पानी में मिला कर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें ।

या

- फ्लुअजीफॉप- पी- ब्यूटाइल 11.1% + फोमसेफन 11.1% (मिश्रित घोल) खरपतवारनाशक का 245 ग्राम सक्रिय तत्व 500 लीटर पानी में मिला कर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें ।

या

- इमेजेथापायर खरपतवारनाशक का 40 ग्राम सक्रिय तत्व 500 लीटर पानी में मिला कर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें ।

हिंदी भाषा एक ऐसी सार्वजनिक भाषा है, जिसे बिना भेद-भाव प्रत्येक भारतीय ग्रहण कर सकता है।

-मदन मोहन मालवीय

हिंदी हमारे राष्ट्र की अभिव्यक्ति का सरलतम स्त्रोत है।

-सुमित्रानंदन पंत

गैर कृषि क्षेत्रों के खरपतवार एवं उनका प्रबंधन

निशा महान, लोकनाथ सिंह, विनोद कुमार पांडेय, वरुण कुमार सिंह
बुंदेल खंड विश्वविद्यालय, झांसी (उ.प्र.)

खरपतवार शब्द को ''एक अवांछित पौधा या ऐसे पौधे जो फसल व पशुधन उत्पादन में हस्तक्षेप करते हैं'' के रूप में परिभाषित किया गया हैं। खरपतवार कृषि व गैर कृषि योग्य भूमि में बड़े पैमाने पर पाए जाते हैं जो कीटों व रोगों के लिए आश्रय प्रदान करके परजीवी पौधे के रूप में काम करते हैं।

''ऐसी भूमि जो बंजर पड़ी रहती है या जहाँ खेती नहीं की जाती है जैसे- चरागाहों के मैदान, जंगल, सड़क के किनारे, रेलवे लाइंस, औद्योगिक क्षेत्र इत्यादि में उगने वाले खरपतवारों को गैर कृषि क्षेत्र के खरपतवार कहा जाता है''।

गैर कृषि क्षेत्र में खरपतवार विभिन्न पारिस्थितिकी कारकों के प्रति उत्कृष्ट अनुकूलन क्षमता एवं तेजी से फैलने की क्षमता के कारण यह जैव विविधता, मृदा उर्वरता पर नकारात्मक प्रभाव डालते हैं तथा एलोपैथिक प्रभाव के कारण अन्य पौधों के लिए खतरा उत्पन्न करते हैं। यह खरपतवार अन्य पौधों के उत्पादन में कमी करके आर्थिक नुकसान का कारण बनते हैं तथा उनके विषाक्त तत्व मानव व पशुओं के स्वास्थ्य के लिए हानिकारक होते हैं। गैर कृषि क्षेत्रों में गाजर घास, दूब घास, मोथा, लेंटाना, कांस, भटकटैया, जॉहसन घास, सेसाइल जॉयवीड, अर्टिका डायोका तथा फ्लॉस फ्लावर जैसे कई एकवर्षीय और बहुवर्षीय खरपतवार लगातार खेती व गहन देखभाल की कमी के कारण उगते हैं। अत: इनका कारगर नियंत्रण अति आवश्यक है। गैर कृषि क्षेत्र में उगने वाले खरपतवारों का प्रभावी नियंत्रण यांत्रिक, रासायनिक और जैविक विधियों के संयोजन के द्वारा किया जा सकता है।

खरपतवार और उनका प्रबंधन

- *अर्टिका डायोका* - यह मूल रूप से यूरोप और उत्तरी अमेरिका का पौधा है। भारत में यह खरपतवार पहाड़ी क्षेत्रों में कृषि न की जाने वाली भूमि तथा प्राकृतिक इलाकों में समस्या उत्पन्न कर रहा है। इसे बिच्छू बूटी नाम से भी जाना जाता है, यह खरपतवार अपनी आक्रामकता फैलाने की क्षमता और आर्थिक तथा पर्यावरणीय प्रभाव के कारण सबसे खराब माना जाता है। इसके कांटे छूने पर जलन व खुजली उत्पन्न हो जाती है जो मानव व पशुओं के लिए असहजकारी है। यह खरपतवार संसाधनों के प्रति प्रतिस्पर्धा और एलिलोपैथिक प्रभाव के कारण चारागाहों, बागों और वानिकी पौधों की उत्पादकता कम कर रहा है। इसका प्रति पौधा 10 से 20 हजार बीज उत्पन्न कर सकता है। इसके बीज सुसुप्तावस्था में नहीं रहते हैं इसलिए परिपक्वता के 5 से 10 दिन बाद अंकुरित हो जाते हैं।

प्रबंधन

- बिच्छू बूटी में फूल आने से पहले कटाई करके बीज बनने तथा प्रसारण की क्रिया को रोका जा सकता है तथा इसके पौधों को जमीन की सतह से काटकर जैव सामग्री को जला दें या खाद में परिवर्तित करें। इसकी जैव सामग्री को सुखाकर मवेशियों के लिए चारे के रूप में भी उपयोग किया जा सकता है।
- पौधों को जड़ से उखाड़ कर भी नष्ट किया जा सकता है ताकि पुन: विकास न हो सके तथा जैव सामग्री को जैविक उर्वरक और खाद बनाने के लिए, तनों को फर्नीचर तथा ईंधन के रूप में उपयोग किया जा सकता है।
- बंजर भूमि में विकसित नये पौधों पर ग्लाइफोसेट की 1.5 किलोग्राम मात्रा प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें तथा घास व चारागाह में 2,4 -डी एथिल एस्टर की 0.75 किलोग्राम मात्रा प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करके नियंत्रण किया जा सकता है।
- बिच्छू बूटी के कुछ प्राकृतिक शत्रु जैसे- मोर तितली, छोटी कछुआ, लाल एडमिरल और कॉमा तितलियां व इनके लार्वा बिच्छू बूटी को खाते हैं। लेडी बर्ड बीटल तथा मिनट पायरेट बग, मांसाहारी मक्खियाँ (एम्पिडिडी, डोलिचोपोडिडी की प्रजातियां), परजीवी ततैया तथा नेटेल एफिड बिच्छू बूटी की आबादी कम करने में मदद करते हैं।
- *फोमा हर्बेरम* एक रोगजनक फंगस है, जो बिच्छू घास को संक्रमित करता है। कुछ प्रतिस्पर्धी घास की प्रजातियां भी बिच्छू घास की संख्या में कमी कर सकती हैं ।
- **फ्लॉस फ्लावर** - इसे अंग्रेजी में ''*एजरेटम ह्यूस्टोनियनम*''नाम से जाना जाता है, जो मूलत: मध्य अमेरिका से भारत में आया है अत: यह एक विदेशी खरपतवार है। भारत में इसे सजावटी पौधे के रूप में लाया गया था परंतु विभिन्न पारिस्थितिकी कारकों के प्रति अनुकूलता और तेजी से फैलने की क्षमता के कारण यह जैव विविधता के लिए खतरा बन गया। गुजरात राज्य में यह आज भी सजावटी पौधे के रूप में उगाया जाता है। पहाड़ों में इसके अंकुरण और विकास के लिए अनुकूल परिस्थितियों के कारण पहाड़ी क्षेत्रों में यह खरपतवार तेजी से फैल गया तथा धीरे-धीरे मैदानों तक पहुंच गया। वर्तमान में हिमाचल प्रदेश, पंजाब, हरियाणा, असम, झारखंड और उत्तर प्रदेश में इसकी गंभीर समस्या है। यह खरपतवार बीजों तथा जड़ों के माध्यम से प्रसारित होता है तथा प्रति पौधा लगभग 94 हजार बीज उत्पन्न करते हैं, इसके बीज तीन माह तक सुसुप्तावस्था में रहते हैं, बीजों का अंकुरण जून से अक्टूबर तक देखने को मिलता है। इसके फूल नीले

या बैगनी रंग के होते हैं, जिससे इसे आसानी से पहचाना जा सकता है। इसमें प्रीकोसेन -I और प्रीकोसेन -II नामक एल्कलॉइड्स पाए जाते हैं, जो जीवों में चक्कर, सर दर्द, त्वचा व आंख की खुजली का कारण बनते हैं तथा इसके एलीलोपैथिक प्रभाव के कारण अन्य पौधों की वृद्धि रुक जाती है, जिससे जैव विविधता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

प्रबंधन

- खरपतवार उगने के शुरुआती अवस्था में तथा कम प्रभावित क्षेत्र हो तो हाथ से उखाड़ कर पौधों को नष्ट कर देना चाहिए या फूल आने से पहले नियमित रूप से काटकर बीज बनने से रोका जा सकता है, जिससे पौधे के प्रसारण को रोका जा सकता है।
- ग्रीष्म ऋतु की गहरी जुताई करके पौधों को जड़ सहित नष्ट करके तथा मल्चिंग क्रिया द्वारा भी इस खरपतवार की संख्या को नियंत्रित किया जा सकता है। बड़े तथा बंजर क्षेत्र में जलाकर इस खरपतवार को नियंत्रित किया जा सकता है।
- खरपतवार की 2 से 3 पत्ती की अवस्था पर एट्राजिन की 1.5 किलोग्राम मात्रा प्रति हेक्टेयर की दर से मई-जून तथा सितंबर-अक्टूबर माह में प्रयोग करनी चाहिए। घास के मैदानों या चरागाहों में 1.5 किलोग्राम एट्राजिन को 150 किलोग्राम रेत के साथ मिलाकर प्रयोग करना चाहिए।
- पुराने पौधों में फूल आने से पहले 800 लीटर पानी में 1.5 किलोग्राम मात्रा ग्लाइफोसेट की प्रति हेक्टेयर की दर से मई- जून व सितंबर-अक्टूबर माह में प्रयोग करनी चाहिए।
- फ्लॉस फ्लावर के जैविक शत्रु जीव जैसे- लिलक वाइनी बोरर तथा *बैक्टोसीरो कॉकिस* इस खरपतवार के तनों, पत्तियां तथा जड़ों को नुकसान पहुंचाते हैं। *कोलेटोट्रिकम ग्लीओस्पोरियॉइड्स* और *अल्टरनेरिया अल्टरनाटा* फफूंदी इसके पत्तों पर आक्रमण करके वृद्धि को रोकते हैं।

कई प्रतिस्पर्धी पौधे जैसे- गिनी घास, सेटेरिया तेजी से बढ़कर इस खरपतवार को बढ़ने से रोक देते हैं। *कैसिया टोरा* जो की एक कवर क्रॉप है, जमीन को ढककर इसकी वृद्धि को नियंत्रित करती है तथा एजरेटम वायरस भी इस खरपतवार की वृद्धि को धीमा कर देता है।

- **गाजरघास** – इसे अंग्रेजी में "*पार्थेनियम हिस्टोरोफोरस*" कहा जाता है। इस खरपतवार की 20 प्रजातियां पूरे विश्व में पाई जाती हैं, भारत में यह खरपतवार तीन दशक पूर्व अमेरिका या कनाडा से आयात किए गए गेहूं के बीज के साथ प्रवेश किया था। यह भारत के लगभग सभी राज्यों में फैला हुआ है। गाजर घास एकवर्षीय शाकीय खरपतवार है जिसका प्रत्येक पौधा 10000 से 50000 अत्यंत सूक्ष्म बीज पैदा करता है, जो शीघ्र ही अंकुरित हो जाते हैं। यह 3 से 4 माह में अपना जीवन चक्र पूरा कर लेते हैं तथा वर्ष भर उगते दिखाई देता है। इस खरपतवार के लगातार संपर्क में रहने से मनुष्य में डर्मेटाइटिस, एक्जिमा, एलर्जी, बुखार तथा दमा जैसी बीमारियां हो जाती है। दुधारू पशुओं द्वारा इसका सेवन कर लेने से दूध में कड़वाहट आने लगती है तथा अधिक मात्रा में सेवन कर लेने से पशु की मृत्यु तक हो सकती है अतः यह मनुष्य तथा पशुओं के लिए हानिकारक है। यह खरपतवार तेजी से फैलने की क्षमता रखता है, इसी क्षमता के कारण यह समुद्री तटों से पहाड़ो तक विस्तृत भू-भाग में फैल कर जैव विविधता के लिए खतरा

बन गया है।

प्रबंधन

- नये पौधों को हाथ से उखाड़ कर नष्ट कर देना चाहिए तथा बड़े पौधों को फूल आने से पहले जड़ सहित उखाड़ कर या जलाकर नष्ट कर देना चाहिए।
- फूल आने से पहले पौधों की कटाई करके जैविक खाद बनाने में उपयोग किया जा सकता है, इसकी खाद में 1.05% नाइट्रोजन, 0.84% फास्फोरस, 1.11% पोटेशियम, 0.9% कैल्शियम तथा 0.5% मैग्नीशियम पाया जाता है, जो गोबर की खाद से अधिक है। खाद बनाने के लिए कटाई के बाद गहरी जुताई करके इसकी जड़ों को नष्ट कर देना चाहिए।
- रासायनिक नियंत्रण के लिए एट्राजिन की 1.5 से 3.5 किलोग्राम सक्रिय मात्रा या मेट्रीब्युजिन की 3 से 5 ग्राम मात्रा प्रति लीटर पानी में घोलकर या ग्लाइफोसेट की 10 से 15 मिली मात्रा प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करने से इसका नियंत्रण किया जा सकता है। रासायनिक शाकनाशियों का प्रयोग फूल आने से पहले करना चाहिए।
- *जाइगोग्रामा बाइकोलोराटा* जो की एक मेक्सिकन बीटल है, यह गाजर घास का प्राकृतिक शत्रु है इसका लार्वा और वयस्क पत्तियों को खाकर गाजर घास को सुखाकर मार देता है।

  कुछ प्रतिरोधी पौधे जैसे- चकोड़ा जो गाजर घास को विस्थापित कर सकता है, अक्टूबर-नवम्बर माह में चकोड़ा के बीज एकत्रित करके अप्रैल-मई में गाजर घास के प्रकोप से ग्रसित स्थान पर छिड़काव कर देने से वर्षा होने पर यह शीघ्र ही गाजर घास को विस्थापित कर देते हैं।
- ***लेंटाना कैमरा*** – इसका पौधा 1809 से 1810 में ऑस्ट्रेलिया से सजावटी पौधे के रूप में लाया गया था। यह अमेरिकी

उष्णकटिबंधीय क्षेत्र का मूल पौधा है। इसके पौधों में ट्यूबलर आकर के छोटे-छोटे फूल आते हैं जिसमें चार पंखुड़ियां होती है, फूल अलग-अलग कई रंगों में आते हैं, जैसे- लाल, पीला, सफेद, गुलाबी, नारगी जो पुष्पक्रम में स्थान, उम्र और परिपक्वता के आधार पर भिन्न-भिन्न होते हैं। यह वर्वेनेसी कुल का झाड़ीनुमा बहुवर्षीय पौधा है, जिसका एक पौधा 12000 तक बीज पैदा कर सकता है। इस खरपतवार से एक अजीब सी गंध आती है, यह एक विषैला पौधा है। इसके फूलों तथा पत्तियों में लेंटाडिन एवं लेमकैमेरेन नामक विषैला तत्व पाया जाता है, जिस कारण पशुओं द्वारा इसका सेवन कर लेने से पीलिया, भूख न लगना, मुख से अधिक लार आना, गुर्दा खराब होना जैसी बीमारियां पशुओं में हो जाती है। अधिक मात्रा में इसका सेवन कर लेने से पशु की मृत्यु भी हो सकती है। कैमरा एलीलोपैथिक रसायन भी उत्पन्न करता है, जो आसपास के पौधों के अंकुरण तथा जड़ विकास को बाधित कर जैव विविधता के लिए खतरा उत्पन्न करता है। यह कीटों व रोगों के विषाणुओं को आश्रय प्रदान करता है, जिससे जंगलों के उपयोगी पौधों पर कीटों व रोगों का प्रकोप बढ़ जाता है।

प्रबंधन

- यदि प्रभावित क्षेत्र बड़ा नहीं है तो इसके पौधों को जड़ सहित खोद कर नष्ट करना प्रभावी है। जलाकर खरपतवार को काफी हद तक फैलने से रोका जा सकता है।
- इसके डंठल का उपयोग फर्नीचर के निर्माण में किया जा सकता है, हिमालय प्रदेश में इससे टोकरी और चटाई बनाई जाती है जो सस्ती तथा टिकाऊ होती है। इसका उपयोग कई तरह की औषधियां के निर्माण में भी किया जाता है, इसकी पत्तियों में कवकनाशी तथा कीटनाशी गुण पाए जाते हैं।
- लेंटाना के नियंत्रण के लिए ग्लाइफोसेट की 10 से 15 मिली मात्रा प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

  लेंटाना के प्रभावी नियंत्रण के लिए अगस्त-सितंबर माह में पौधों को जमीन की सतह से 2 से 3 इंच ऊपर से काट लेना चाहिए तथा एक माह बाद जब कटे हुए भाग से नई पत्तियां निकल आए तब इन पर 1 प्रतिशत ग्लाइफोसेट के घोल का छिड़काव करने से पुन: वृद्धि नहीं होती है।

- टिंगिड बग (*टेलियोनेमिया स्कुपुलोसा*) का प्रयोग इस खरपतवार के जैविक नियंत्रण के लिए किया जाता है।
- **काँस** - यह घास कुल का एक बहुवर्षीय पौधा है, जो अप्रैल माह के बीच बढ़वार कर प्रजनन करता है। इसकी लंबाई 3 मीटर या इससे अधिक होती है, इसके फूल सफेद रंग के गन्ना के फूल के समान होते हैं। इसका प्रजनन गांठ, जड़ों, तनों के टुकड़ों और बीजों द्वारा होता है। इसके बीज रोयेदार होते हैं जिससे हवा द्वारा एक स्थान से दूसरे स्थान पर विस्थापित होते है। काँस का प्रकोप पश्चिमी समुद्री घाट से लेकर हिमालय के पहाड़ी क्षेत्र तक फैला हुआ है। काजीरंगा नेशनल पार्क में इस खरपतवार की समस्या विकराल रूप से है। इसका उपयोग गन्ना प्रजनन में किया जाता है, इसकी जड़े जमीन में फैली होती है जिससे मृदा कटाव को रोकता है। इसका उपयोग झोपड़ी, चटाई, रस्सी तथा सजावटी सामान बनाने के साथ-साथ पशुओं के लिए चारा, ईंधन व खेत के चारों ओर बाढ़ बनाने एवं अनेक प्रकार की बीमारियों में आयुर्वेदिक दवाओं के निर्माण में किया जाता है। यह खरपतवार गैर कृषि तथा कृषि भूमि दोनों में उगता है।

प्रबंधन

- इसकी जड़े गहरी होती है इसलिए ग्रीष्मकालीन गहरी जुताई करके इसकी जड़ों को नष्ट कर देना चाहिए।
- ग्लाइफोसेट नामक रासायनिक शाकनाशी की 1.5 से 2 किलोग्राम सक्रिय मात्रा या 10 से 15 मिली मात्रा प्रति लीटर पानी में मिलाकर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करना चाहिए। इस शाकनाशी का प्रयोग अप्रैल माह में 3 से 4 नये पत्ते आने की अवस्था पर करना चाहिए।
- **भटकटैया या कंटकारी** - यह सोलेनेसी कुल का पौधा है, जिसे अंग्रेजी में ''*सोलेनम जेंथोकार्पम*'' कहते हैं। यह फैलने वाला बहुवर्षीय खरपतवार है जिसके तने तथा पत्तियों में कांटे पाए जाते हैं। यह खरपतवार प्राय: शुष्क बंजर भूमियों तथा रास्तों के किनारों में पाया जाता है। इसका पुष्प नीले रंग का होता है तथा इसके बीज जहरीले होते हैं। आयुर्वेद में भटकटैया का उपयोग कई बीमारियों की औषधियां के निर्माण में किया जाता है तथा भारतीय ग्रन्थों के अनुसार

इसका उपयोग धार्मिक पूजा पाठ में भी किया जाता है, जैसे- दीवाली और होली के बाद पड़ने वाली दूज की पूजा में इसका उपयोग किया जाता है।

प्रबंधन

- गर्मियों की गहरी जुताई करके इस खरपतवार की संख्या कम की जा सकती है या गर्मियों में जब पौधे सूख जाए तब जलाकर नष्ट किया जा सकता है।
- ग्लाइफोसेट नामक खरपतवारनाशी की 1.5 से 2 किलोग्राम सक्रिय मात्रा प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करके नियंत्रण किया जा सकता है।
- **सेसाइल जॉयवीड** - यह खरपतवार अधिकतर उच्च आद्रता वाले स्थान पर उगता है, जैसे बगीचा, अधिक नमी चाहने वाले पौधों के पास, नहरों व जलाशयों के पास। यह फूल वाला पौधा है, जिसका उपयोग सब्जी के रूप में तथा औषधियों के निर्माण में किया जाता है इसके फूल सफेद रंग के 0.7 से 1.5 मिली मीटर लंबे होते हैं। इसके फूल दिसंबर से मार्च माह तक रहते हैं। इस पौधे का उपयोग आयुर्वेद में औषधीय के निर्माण में किया जाता था परंतु अनुकूल परिस्थितियों में इसका प्रकोप इतना बढ़ गया कि आर्द्र क्षेत्रों में यह जैव विविधता के लिए खतरा बन गया है।

प्रबंधन

- छोटे क्षेत्र में प्रकोप होने पर पौधों को उखाड़कर नष्ट कर देना चाहिए।
- अधिक प्रकोप होने पर एमिट्रोल, बेन्सल्फ्यूरॉन, 2,4-डी, एमसीपीए, ऑक्साडायजोन और प्रोपेनिल में से किसी भी खरपतवारनाशी का प्रयोग करके नियंत्रण किया जा सकता है।

समस्त भारतीय भाषाओं के लिए यदि कोई एक लिपि आवश्यक हो तो वह देवनागरी ही हो सकती है।

-जस्टिस कृष्ण स्वामी अय्यर

कृषक प्रशिक्षण और जागरूकता: खरपतवार प्रबंधन में सुधार की कुंजी

मुस्कान पोरवाल[1], बादल वर्मा[2] एवं अमित कुमार झा[1]
[1]जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)
[2]भा.कृ.अनु.प., खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)

भारत एक कृषि प्रधान देश है जहाँ जनसंख्या का बड़ा भाग आजीविका के लिए कृषि पर निर्भर करता है। परंतु उत्पादन को प्रभावित करने वाले अनेक अवरोधों में खरपतवार एक गंभीर समस्या है। खेती को लाभकारी और टिकाऊ बनाने के लिए खरपतवार प्रबंधन एक अत्यंत महत्वपूर्ण प्रक्रिया है, क्योंकि खरपतवार फसलों की वृद्धि में बाधा डालते हैं, मिट्टी के पोषक तत्वों का दोहन करते हैं, जल संसाधनों की खपत बढ़ाते हैं और उत्पादन को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करते हैं। इसके अतिरिक्त, ये कई रोगों और कीटों के वाहक भी हो सकते हैं। ऐसे में यदि किसानों को खरपतवारों की पहचान, उनकी जीवन-चक्र की समझ और प्रबंधन की समुचित तकनीकों की जानकारी हो, तो वे अपनी उपज में उल्लेखनीय सुधार कर सकते हैं। इस दिशा में कृषक प्रशिक्षण और जागरूकता कार्यक्रमों की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाती है।

खरपतवार: एक अदृश्य संकट

खरपतवार वे अनावश्यक और अवांछनीय पौधे होते हैं जो फसलों के साथ प्रतिस्पर्धा करते हैं। ये पौधे न केवल पोषक तत्वों को अवशोषित कर लेते हैं बल्कि प्रकाश, जल और स्थान जैसी आवश्यक चीजों पर भी कब्जा कर लेते हैं। इससे फसल की वृद्धि रुक जाती है और उत्पादन में भारी गिरावट आती है। राष्ट्रीय स्तर पर हुए कई अध्ययनों से पता चला है कि खरपतवारों के कारण 25% से लेकर 50% तक उपज की हानि हो सकती है (तालिका 1), विशेषकर यदि प्रबंधन समय पर न किया जाए। इसके अतिरिक्त, कई खरपतवार ऐसे भी होते हैं जो कीटों और रोगों के लिए आश्रय स्थल का कार्य करते हैं, जिससे फसलों पर दोहरा संकट आ पड़ता है।

तालिका 1: खरपतवारों का फसलों की उपज पर प्रभाव (यदि प्रबंधन न किया जाए)

फसल प्रकार	अनुमानित उपज हानि (%)	प्रमुख खरपतवार प्रकार
गेहूं	25-30%	*फेलेरिस माइनर, चिनोपोडियम* प्रजातियां
धान	30-35%	*इकाइनोक्लोआ, साइप्रस* प्रजातियां
मक्का	35-40%	*अमरेंथस, साइप्रस* प्रजातियां
सोयाबीन	20-40%	*डाइजीटेरिया, पार्थेनियम* प्रजातियां
गन्ना	20-35%	*साइनोडॉन डैक्टिलॉन, साइप्रस* प्रजातियां

वर्तमान स्थिति: जानकारी की कमी

भारत के अधिकतर छोटे और सीमांत किसान अभी भी पारंपरिक खेती के तौर-तरीकों पर निर्भर हैं। उनमें से अधिकांश को आधुनिक खरपतवार प्रबंधन तकनीकों जैसे रसायनिक नियंत्रण, यांत्रिक विधियों, जैविक नियंत्रण या एकीकृत खरपतवार प्रबंधन की जानकारी नहीं होती। ग्रामीण क्षेत्रों में औपचारिक शिक्षा की कमी, सूचना के स्रोतों तक सीमित पहुंच, प्रशिक्षण केंद्रों की कमी और कृषि अधिकारियों की अनुपलब्धता और नवीन तकनीकी जानकारी के अभाव के चलते किसान समय पर उचित निर्णय नहीं ले पाते। इसके परिणामस्वरूप या तो अत्यधिक रसायनों का प्रयोग होता है जिससे पर्यावरण और स्वास्थ्य को नुकसान पहुंचता है या फिर कोई प्रबंधन नहीं होता जिससे फसलों का भारी नुकसान होता है। खरपतवार प्रबंधन की सामान्य विधियाँ और उनकी विशेषताएँ तालिका 2 में दी है।

तालिका 2: खरपतवार प्रबंधन की सामान्य विधियाँ और उनकी विशेषताएँ

विधि	प्रमुख विशेषताएं	लाभ	सीमाएं
यांत्रिक नियंत्रण	हाथ से निराई, कुदाल, खरपतवार हटाने वाली मशीनें	सस्ता, पर्यावरण के अनुकूल	समय और श्रम की अधिक आवश्यकता
रसायनिक नियंत्रण	शाकनाशी का प्रयोग	त्वरित और प्रभावी नियंत्रण	अधिक प्रयोग से प्र्यावरण व फसल को नुकसान संभव
जैविक नियंत्रण	खरपतवारों के जैविक शत्रुओं का उपयोग	टिकाऊ, पर्यावरण-सम्मत	सीमित अनुप्रयोग, विस्तृत जानकारी की आवश्यकता
सांस्कृतिक विधियां	फसल चक्र, समय पर बुवाई, उचित दूरी	कम लागत, लंबे समय तक प्रभावी	प्रत्येक स्थान पर समान रूप से प्रभावी नही
एकीकृत खरपतवार प्रबंधन	उपरोक्त सभी तरीकों का संयोजन	संतुलित, प्रभावी और टिकाऊ	योजना और प्रशिक्षण की आवश्यकता

कृषक प्रशिक्षण की आवश्यकता

- **उद्देश्य :** खरपतवार प्रबंधन में कृषकों को प्रशिक्षित करने का मुख्य उद्देश्य उन्हें वैज्ञानिक जानकारी और व्यावहारिक कौशल प्रदान करना है, जिससे वे अपने खेतों में खरपतवार नियंत्रण को प्रभावी ढंग से कर सकें। सबसे पहले, प्रशिक्षण का उद्देश्य किसानों को विभिन्न प्रकार के खरपतवारों की सही पहचान कराना होता है, क्योंकि कई बार किसान उपयोगी पौधों को खरपतवार समझकर निकाल देते हैं, या हानिकारक खरपतवारों को अनदेखा कर देते हैं। इसके अलावा, उन्हें जैविक और रासायनिक नियंत्रण विधियों का अभ्यास करवाया जाता है, जैसे कि मल्चिंग, हाथ से निराई, जैविक घोलों का प्रयोग और आवश्यकतानुसार खरपतवारनाशकों का सुरक्षित उपयोग। प्रशिक्षण के माध्यम से किसानों में समयानुकूल निर्णय लेने की क्षमता भी विकसित की जाती है, ताकि वे फसल की अवस्था, खरपतवार की मात्रा और पर्यावरणीय परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए सही समय पर सही उपाय कर सकें। इस प्रकार का प्रशिक्षण किसानों को लागत कम करने, उत्पादन बढ़ाने और पर्यावरण को सुरक्षित रखने में मदद करता है (तालिका 3)।

तालिका 3: प्रशिक्षण के स्वरूप

प्रशिक्षण विधि	विवरण
क्षेत्र भ्रमण	खेतों में खरपतवार पहचान, नियंत्रण तकनीकों का लाइव प्रदर्शन
वीडियो-लेख्य सामग्री	मोबाइल ऐप्स, टी.वी. कार्यक्रम, यू-ट्यूब चैनल
व्यावहारिक प्रशिक्षण	खरपतवारनाशकों का सुरक्षित छिड़काव, यंत्रो का संचालन
कृषि मेले/ कृषक संगोष्ठी	अनुभव साझा करना, विशेषज्ञों से प्रत्यक्ष संवाद

- **कृषक प्रशिक्षण की भूमिका:** कृषक प्रशिक्षण कार्यक्रम किसानों को वैज्ञानिक तकनीकों से परिचित कराने का एक प्रभावी माध्यम है। ऐसे प्रशिक्षण शिविरों में कृषि वैज्ञानिक, विस्तार अधिकारी और तकनीकी विशेषज्ञ किसानों को व्यावहारिक और प्रयोगात्मक ज्ञान प्रदान करते हैं। खरपतवारों की पहचान, उनके जीवन चक्र, नियंत्रण के सही समय, उचित रसायनों के चयन, मात्रा, छिड़काव की विधि और उपकरणों की जानकारी प्रशिक्षण का हिस्सा होते हैं। इससे किसानों को यह समझने में सहायता मिलती है कि कौन-से खरपतवार उनकी फसल के लिए खतरनाक हैं और उन्हें किस प्रकार नियंत्रित किया जाए।

वर्तमान में कृषि विज्ञान केंद्र, राज्य कृषि विश्वविद्यालय, जिला कृषि विभाग और निजी कंपनियां मिलकर ऐसे प्रशिक्षण कार्यक्रम चला रही हैं। इनका उद्देश्य किसानों को आत्मनिर्भर बनाना है ताकि वे बाजार में उपलब्ध जानकारी और उत्पादों के भरोसे न रहकर स्वयं निर्णय ले सकें। एक प्रभावी प्रशिक्षण कार्यक्रम में व्यावहारिक प्रदर्शन, क्षेत्र भ्रमण, डेमोंस्ट्रेशन प्लॉट और चर्चा सत्रों का समावेश होता है।

जागरूकता अभियानों की आवश्यकता

सिर्फ प्रशिक्षण ही नहीं, व्यापक स्तर पर जागरूकता भी जरूरी है। किसान तभी तक किसी तकनीक को अपनाते हैं जब तक उन्हें उसके लाभ स्पष्ट दिखते हैं। जागरूकता अभियानों में पोस्टर, लघु फिल्में, सामुदायिक रेडियो, मोबाइल ऐप्स, संदेश सेवाएं, स्थानीय भाषा में पुस्तिकाएं और ग्राम पंचायत स्तर पर गोष्ठियां शामिल हो सकती हैं। इन माध्यमों से किसानों को नवीनतम जानकारी सरल और सुलभ रूप में उपलब्ध कराई जा सकती है। साथ ही, उदाहरण के तौर पर अन्य किसानों की सफलता की कहानियां और वीडियो साझा किए जाएं तो स्थानीय किसान अधिक प्रेरित होते हैं।

महिला किसानों की भागीदारी

ग्रामीण भारत में महिला किसान खेती में सक्रिय भूमिका निभाती हैं, विशेष रूप से खरपतवार नियंत्रण के कार्यों में। परंतु प्रशिक्षण कार्यक्रमों में उनकी भागीदारी सीमित रहती है। यह जरूरी है कि महिला किसानों को लक्षित कर विशेष प्रशिक्षण और जागरूकता अभियान चलाए जाएं। यदि उन्हें समुचित जानकारी और उपकरणों की सुविधा दी जाए तो वे अधिक प्रभावी ढंग से खरपतवार प्रबंधन कर सकती हैं। इसके अतिरिक्त, स्वयं सहायता समूहों और महिला मंडलों के माध्यम से सामूहिक जागरूकता बढ़ाई जा सकती है।

आधुनिक तकनीकों का समावेश

- **इंटरनेट ऑफ थिंग्स (IoT) और आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (AI) आधारित खरपतवार पहचान:** आज के डिजिटल युग में, खरपतवार प्रबंधन में इंटरनेट ऑफ थिंग्स और आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस का प्रयोग तेजी से बढ़ रहा है। अब किसान स्मार्टफोन के कैमरे की मदद से अपने खेतों में पाए जाने वाले खरपतवार की फोटो खींचकर तुरंत उसकी पहचान कर सकते हैं। इसके बाद, ऐप्स न केवल खरपतवार का नाम बताते हैं, बल्कि उचित खरपतवारनाशक और उसका सही मात्रा में प्रयोग भी सुझाते हैं। इससे न केवल समय की बचत होती है, बल्कि अंधाधुंध रसायनों के प्रयोग से होने वाले

पर्यावरणीय नुकसान को भी रोका जा सकता है। ऐसे कई मोबाइल एप्लिकेशन जैसे कि प्लांटिक्स, कृषि ज्ञान ऐप, शाकनाशी कैलकुलेटर, वीड मैनेजर और भारत एग्री इन तकनीकों से सुसज्जित हैं, जो किसानों को वैज्ञानिक सलाह, रसायन उपयोग की जानकारी, और मौसम आधारित सुझाव भी प्रदान करते हैं। इन ऐप्स के माध्यम से स्थानीय भाषा में जानकारी मिलने से महिला और वृद्ध किसान भी आसानी से लाभ उठा रहे हैं।

- **ड्रोन से छिड़काव :** ड्रोन तकनीक ने खरपतवार नियंत्रण को एक नई दिशा दी है। अब खरपतवारनाशकों का छिड़काव ड्रोन के माध्यम से सटीक और संतुलित रूप से किया जा सकता है, जिससे पूरे खेत में समान रूप से दवा का वितरण होता है। इससे एक ओर जहां मानव श्रम की आवश्यकता कम होती है, वहीं दूसरी ओर समय की बचत और फसल को कम नुकसान भी होता है। हालांकि, ड्रोन संचालन के लिए विशेष प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है, जिससे किसान उसे प्रभावी ढंग से चला सकें। कई संस्थान और निजी कंपनियाँ अब किसानों को ड्रोन उड़ाने, छिड़काव योजना बनाने और सुरक्षा उपायों की जानकारी देने वाले प्रशिक्षण सत्र आयोजित कर रही हैं। यह तकनीक विशेष रूप से उन क्षेत्रों में उपयोगी है जहाँ हाथ से छिड़काव कठिन होता है, जैसे दलदली जमीन या ढलवाँ खेत।

नीति समर्थन और संस्थागत भूमिका

- **केंद्र/राज्य सरकार की योजनाएँ :** खरपतवार प्रबंधन को प्रभावी बनाने के लिए केंद्र और राज्य सरकारें कई योजनाओं का संचालन कर रही हैं। इन योजनाओं का उद्देश्य किसानों को तकनीकी प्रशिक्षण देना, प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण करना, और फसल की उत्पादकता को बढ़ाना है। उदाहरण के लिए, ''आत्मनिर्भर कृषि योजना'' के अंतर्गत किसानों को तकनीकी जानकारी और डिजिटल उपकरणों के उपयोग का प्रशिक्षण दिया जाता है। ''राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन'' में खरपतवार नियंत्रण को एक प्रमुख घटक के रूप में

शामिल किया गया है ताकि उत्पादन में वृद्धि हो सके। वहीं, ''कृषि विस्तार सेवा योजना" गाँव स्तर पर कृषि वैज्ञानिकों और प्रशिक्षकों के माध्यम से किसानों को सलाह और सहयोग प्रदान करती है। इन योजनाओं के माध्यम से किसानों को सामग्री, ज्ञान और सहायता एक ही छत के नीचे उपलब्ध कराई जा रही है।

इसके साथ ही, कई निजी कंपनियाँ भी ''कॉर्पोरेट सामाजिक उत्तरदायित्व (CSR)" के अंतर्गत किसानों के बीच प्रशिक्षण कार्यक्रम चला रही हैं। यदि इन दोनों क्षेत्रों के प्रयासों को एकीकृत किया जाए और जिला स्तर पर समन्वय स्थापित किया जाए, तो यह अभियान अधिक प्रभावशाली बन सकता है।

- **कृषि विज्ञान केंद्र की भूमिका:** कृषि विज्ञान केंद्र खरपतवार नियंत्रण के क्षेत्र में स्थानीय समाधान और प्रशिक्षण का मजबूत मंच बनकर उभरा है। ये केंद्र किसानों के लिए फील्ड डेमो, प्रशिक्षण कार्यशालाएँ, और वैज्ञानिक परीक्षण जैसी गतिविधियाँ आयोजित करते हैं। कृषि विज्ञान केंद्र की विशेषता यह है कि वे स्थानीय जलवायु, मिट्टी और खरपतवार प्रजातियों के आधार पर उपयुक्त तकनीकी समाधान देते हैं। ''कृषक वैज्ञानिक संवाद" कार्यक्रमों के तहत किसान सीधे कृषि वैज्ञानिकों से अपने सवाल पूछ सकते हैं और वैज्ञानिक सुझाव प्राप्त कर सकते हैं। इसके अलावा, कृषि विज्ञान केंद्र स्थानीय समस्याओं के अनुसार रसायन, उपकरण और जैविक उपायों का परीक्षण करके उपयुक्त विकल्पों की अनुशंसा करता है। महिलाओं की भागीदारी को बढ़ावा देने के लिए कई कृषि विज्ञान केंद्र विशेष महिला प्रशिक्षण सत्र भी आयोजित कर रहे हैं।

एकीकृत खरपतवार प्रबंधन: भविष्य की राह

आज कृषि को लाभकारी बनाने के लिए एकीकृत खरपतवार प्रबंधन (Integrated Weed Management) को अपनाना अनिवार्य हो गया है। इसमें जैविक, यांत्रिक, रासायनिक और सांस्कृतिक तरीकों का समन्वय होता है। प्रशिक्षण कार्यक्रमों में यदि इस समेकित दृष्टिकोण पर बल दिया जाए, तो किसान अपनी आवश्यकताओं और स्थानीय परिस्थितियों के अनुरूप एक संतुलित रणनीति बना सकते हैं। उदाहरण के लिए, समय पर बुवाई, फसल चक्र परिवर्तन, क्लीन फार्मिंग, मल्चिंग और उपयुक्त शाकनाशी का संयोजन एक प्रभावी खरपतवार प्रबंधन रणनीति बन सकता है।

चुनौतियाँ और समाधान

प्रशिक्षण और जागरूकता के क्षेत्र में अनेक चुनौतियाँ भी हैं। जैसे कि:-

1. प्रशिक्षण केंद्रों की कमी : ग्रामीण क्षेत्रों में सीमित संख्या में प्रशिक्षण सुविधाएं उपलब्ध हैं।
2. कृषि अधिकारियों की संख्या में कमी : एक कृषि अधिकारी पर अनेक गांवों की जिम्मेदारी होती है जिससे वे सभी किसानों तक नहीं पहुँच पाते।
3. भाषाई और साक्षरता अवरोध : कई किसान तकनीकी भाषा को समझ नहीं पाते या पढ़ नहीं सकते।
4. महिला किसानों की अनदेखी : उनकी भूमिका महत्त्वपूर्ण होते हुए भी अक्सर योजनाओं में उन्हें शामिल नहीं किया जाता।

इन चुनौतियों से निपटने के लिए तकनीक का सहारा लिया जा सकता है। मोबाइल ऐप्स, टोल-फ्री हेल्पलाइन, स्थानीय स्तर पर प्रशिक्षित ''किसान मित्र'', पंचायत-स्तरीय कृषि सेवा केंद्र, और महिला-केंद्रित प्रशिक्षण शिविर इस दिशा में कारगर कदम हो सकते हैं।

निष्कर्ष

खरपतवार प्रबंधन, भारतीय कृषि की उत्पादकता और टिकाऊपन के लिए एक आवश्यक घटक है। परंतु यह तभी संभव है जब किसान इस दिशा में प्रशिक्षित और जागरूक हों। केवल तकनीक उपलब्ध कराना पर्याप्त नहीं है; उसके उपयोग के लिए जानकारी, क्षमता और आत्मविश्वास भी जरूरी है। इस दिशा में कृषक प्रशिक्षण और जागरूकता ही वह कुंजी है जो किसानों को ज्ञान से सशक्त कर सकती है। जब किसान शिक्षित और आत्मनिर्भर होंगे, तभी वे बेहतर निर्णय ले पाएंगे, उत्पादन बढ़ेगा, लागत घटेगी और भारत का कृषि क्षेत्र समृद्ध और सुरक्षित बनेगा।

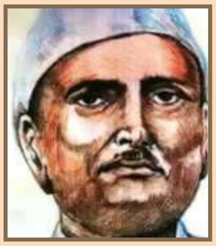

वही भाषा जीवित और जागृत रह सकती है जो जनता का ठीक-ठीक प्रतिनिधित्व कर सके और हिंदी इसमें समर्थ है।

-पीर मुहम्मद मूनिस

जलवायु परिवर्तन का फसलों और खरपतवारों के पारस्परिक संबंध व शाकनाशी प्रभावशीलता पर प्रभाव-एक समग्र दृष्टिकोण

चंद्रकांत सिंह, श्रीकांत डी., दीपक वी. पवार एवं जे.एस. मिश्र
भा.कृ.अनु.प., खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)

21वीं शताब्दी की सबसे ज्वलंत चुनौतियों में से एक जलवायु परिवर्तन है, जिसका दूरगामी प्रभाव परितंत्र, जैव विविधता, कृषि उत्पादन प्रणाली, और विशेष रूप से खाद्य सुरक्षा पर पड़ रहा है। तापमान में वृद्धि, वर्षा की अनिश्चितता, वायुमंडलीय CO_2 के स्तर में बदलाव और चरम मौसम की घटनाएं जैसे बाढ़ और सूखा - ये सभी ऐसे तत्व हैं जो न केवल फसलों की उत्पादकता को प्रभावित करते हैं, बल्कि खरपतवारों के विकास और व्यवहार को भी बदलते हैं। कृषि प्रणाली में फसल और खरपतवार के बीच प्रतिस्पर्धा एक महत्वपूर्ण जैविक घटना है। खरपतवार भूमि, जल, पोषक तत्वों, प्रकाश और स्थान के लिए फसलों से प्रतिस्पर्धा करते हैं और उपज में भारी हानि कर सकते हैं। जलवायु परिवर्तन की वर्तमान दिशा में यह प्रतिस्पर्धा और भी जटिल और तीव्र होती जा रही है। जलवायु परिवर्तन खरपतवारों की वृद्धि दर, प्रजातीय संरचना, वितरण सीमा और प्रतिरोध क्षमता को प्रभावित करता है। वहीं दूसरी ओर, यह फसलों की जैविक कार्यप्रणाली और उनकी खरपतवारों से लड़ने की क्षमता को भी प्रभावित करता है। इससे पारंपरिक खरपतवार प्रबंधन उपायों, जैसे शाकनाशियों की प्रभावशीलता पर भी प्रश्नचिन्ह उत्पन्न होते हैं। कई अनुसंधान यह दर्शा चुके हैं कि कुछ खरपतवार प्रजातियाँ बढ़ते तापमान और CO_2 स्तर में तेजी से बढ़ रही हैं, जबकि फसलें इन परिस्थितियों में अधिक संवेदनशील हो रही हैं।

एक अन्य चिंता का विषय यह भी है कि जलवायु परिवर्तन शाकनाशियों की जैव-रासायनिक क्रियाविधियों को भी प्रभावित करता है। तापमान और आर्द्रता में परिवर्तन शाकनाशियों की अवशोषण दर, स्थानांतरण, विघटन और प्रभावशीलता को बदल सकते हैं। इसके अतिरिक्त, खरपतवारों में शाकनाशियों के प्रति प्रतिरोधकता विकसित होने की दर भी बदल सकती है। इस लेख में हम विस्तार से चर्चा करेंगे कि जलवायु परिवर्तन फसल खरपतवार संबंधों को किस प्रकार प्रभावित करता है, शाकनाशी प्रभावशीलता पर इसके क्या प्रभाव हैं, और इन समस्याओं के समाधान के लिए कौन-कौन सी नई रणनीतियाँ अपनाई जा सकती हैं। यह विषय केवल वैज्ञानिक महत्व का नहीं है, बल्कि खाद्य सुरक्षा और कृषि टिकाऊपन के दृष्टिकोण से भी अत्यंत प्रासंगिक है।

1. फसल खरपतवार पारस्परिक संबंध पर जलवायु परिवर्तन का प्रभाव

जलवायु परिवर्तन के विभिन्न घटक जैसे तापमान में वृद्धि, वर्षा की अनिश्चितता, कार्बन डाइऑक्साइड की बढ़ती मात्रा, संयुक्त प्रभाव और चरम मौसमी घटनाएँ फसल-खरपतवार संबंधों को कई स्तरों पर प्रभावित करते हैं।

(क) तापमान में वृद्धिः

तापमान में वृद्धि का फसल खरपतवार पारस्परिक संबंध पर प्रभाव एक अत्यंत महत्वपूर्ण और व्यापक विषय है, जो सीधे तौर पर कृषि उत्पादकता, पर्यावरणीय संतुलन और खाद्य सुरक्षा को प्रभावित करता है। जलवायु परिवर्तन के कारण वैश्विक तापमान में लगातार वृद्धि हो रही है, और इसका प्रभाव फसलों एवं खरपतवारों की जैविक गतिविधियों और पारस्परिक प्रतिस्पर्धा पर स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। खरपतवारों में आमतौर पर उच्च तापमान के प्रति बेहतर सहनशीलता पाई जाती है। विशेष रूप से C_4 पथ वाली खरपतवार प्रजातियाँ जैसे चौलाईए, गाजरघास, सांवा आदि, उच्च तापमान में भी तेजी से वृद्धि करती हैं। इन प्रजातियों की प्रकाश संश्लेषण प्रक्रिया तापमान बढ़ने पर भी प्रभावी बनी रहती है, जबकि अधिकतर प्रमुख फसलें जैसे गेहूं, चावल, आलू आदि C_3 पथ की होती हैं, जो उच्च तापमान के प्रति संवेदनशील होती हैं। इस वजह से जैसे ही तापमान बढ़ता है, फसल की विकास दर धीमी पड़ जाती है, जबकि खरपतवारों की वृद्धि और फैलाव तेज हो जाता है। इससे संसाधनों जैसे पोषक तत्व, जल, और सूर्य प्रकाश के लिए प्रतिस्पर्धा बढ़ जाती है, जिसमें खरपतवार अक्सर विजयी होते हैं।

उच्च तापमान से खरपतवारों से संबंधित कीटों और रोगों का प्रसार भी तेज हो सकता है। कई बार ऐसे कीट और रोग पहले खरपतवारों में उत्पन्न होते हैं, और बाद में फसलों पर आक्रमण कर देते हैं, जिससे द्वितीयक नुकसान होता है। उदाहरण के लिए, गाजरघास जैसे खरपतवार एलर्जन, फंगल रोग और कई प्रकार के वायरस के वाहक बन सकते हैं। इन सब प्रभावों के कारण तापमान में वृद्धि फसलों और खरपतवारों के बीच पारिस्थितिक संतुलन को बिगाड़ देती है। इससे एक ओर तो फसल की उपज, गुणवत्ता और पोषण स्तर में गिरावट आती है, वहीं दूसरी ओर किसानों की उत्पादन लागत बढ़ती है, क्योंकि खरपतवार नियंत्रण के लिए अधिक श्रम, समय और संसाधनों की आवश्यकता होती है। इससे संपूर्ण कृषि प्रणाली पर दबाव बढ़ता है, और जलवायु-सहिष्णु प्रबंधन रणनीतियाँ विकसित करना अनिवार्य हो जाता है।

अतः यह स्पष्ट है कि तापमान में वृद्धि से न केवल फसलों की संवेदनशीलता बढ़ती है, बल्कि खरपतवारों की प्रतिस्पर्धात्मक शक्ति में भी वृद्धि होती है, जो दीर्घकालिक कृषि स्थिरता के लिए एक गंभीर चुनौती प्रस्तुत करती है। इसके समाधान हेतु वैज्ञानिक शोध, अनुकूल किस्मों का विकास, जैविक और रासायनिक नियंत्रण का समेकित उपयोग, तथा किसानों को जलवायु-स्थायी कृषि तकनीकों के प्रति जागरूक करना आवश्यक है।

(ख) वायुमंडलीय CO_2 में वृद्धिः

वायुमंडलीय CO_2 में वृद्धि का फसल खरपतवार पारस्परिक संबंध पर प्रभाव कृषि पारिस्थितिकी के लिए एक अत्यंत महत्वपूर्ण विषय है, जो सीधे फसलों की वृद्धि, खरपतवारों की प्रतिस्पर्धात्मक क्षमता और दोनों के बीच के संतुलन को प्रभावित करता है। औद्योगिकीकरण, वनों की कटाई और जीवाश्म ईंधनों के अत्यधिक उपयोग के कारण वायुमंडलीय CO_2 के स्तर में लगातार वृद्धि हो रही है। यह परिवर्तन न केवल जलवायु को प्रभावित करता है, बल्कि पौधों के प्रकाश संश्लेषण, जल उपयोग दक्षता तथा जैविक उत्पादकता पर भी गहरा प्रभाव डालता है।

CO_2 पौधों के लिए एक आवश्यक गैस है जो प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया में उपयोग होती है। जैसे-जैसे वायुमंडल में CO_2 की मात्रा बढ़ती है, वैसे-वैसे C_3 पौधों की प्रकाश संश्लेषण क्षमता बढ़ जाती है, क्योंकि उनके एंजाइम रूबिस्को (RuBisCO) की CO_2 के प्रति सहवर्तीता अधिक होती है। यह सैद्धांतिक रूप से फसलों जैसे गेहूं, धान, आलू आदि के लिए लाभकारी हो सकता है, क्योंकि वे सभी C_3 पथ वाली फसलें हैं। लेकिन यही लाभ कई C_3 प्रकार की खरपतवारों को भी मिलता है, जैसे कि बथुआ, हिरनखुरी, गाजरघास आदि। इन खरपतवारों की वृद्धि भी वायुमंडलीय CO_2 में वृद्धि से तेज हो जाती है, और वे फसलों के साथ संसाधनों के लिए और भी अधिक प्रभावी ढंग से प्रतिस्पर्धा करने लगती हैं। वहीं दूसरी ओर, C_4 प्रकार की खरपतवार जैसे चौलाई और नागरमोथा सामान्यतः उच्च तापमान और प्रकाश तीव्रता में अच्छा प्रदर्शन करती हैं, परंतु CO_2 की अधिकता का इन पर उतना सीधा लाभ नहीं होता जितना C_3 खरपतवारों को। फिर भी, जब CO_2 वृद्धि के साथ तापमान और आर्द्रता में भी परिवर्तन होता है, तो ये दोनों प्रकार की खरपतवारें अनुकूल वातावरण पाकर तेजी से फैल सकती हैं।

इस प्रकार, CO_2 के बढ़ते स्तर से खरपतवारों को भी उतना ही या उससे अधिक लाभ मिल सकता है जितना फसलों को, जिससे खरपतवारों की आक्रामकता, फैलाव और जैविक उत्पादन क्षमता बढ़ जाती है। यह स्थिति फसल प्रबंधन के लिए एक बड़ी चुनौती उत्पन्न करती है, क्योंकि इससे खरपतवारों की रोकथाम कठिन हो जाती है और उत्पादन लागत में वृद्धि होती है। अतः वायुमंडलीय CO_2 में वृद्धि के दीर्घकालिक प्रभावों को समझना और उसके अनुसार अनुकूल प्रबंधन रणनीतियाँ अपनाना आज की कृषि प्रणाली के लिए आवश्यक हो गया है।

(ग) संयुक्त प्रभावः CO_2 और तापमान :

संयुक्त रूप से बढ़ते हुए वायुमंडलीय CO_2स्तर और तापमान का प्रभाव फसल-खरपतवार प्रतिस्पर्धा पर अत्यधिक जटिल और महत्वपूर्ण होता है। C_3 पौधे, जैसे गेहूं, धान और चना, वायुमंडलीय CO_2 में वृद्धि से लाभान्वित होते हैं क्योंकि इससे उनकी प्रकाश संश्लेषण की दर और जल उपयोग दक्षता बढ़ती है। दूसरी ओर, C_4 खरपतवार जैसे चौलाई और सांवा ऊँचे तापमान में अधिक अनुकूल होते हैं और गर्मी व सूखे जैसी परिस्थितियों में बेहतर प्रदर्शन करते हैं। जब इन दोनों कारकों - CO_2 और तापमान में एक साथ वृद्धि होती है, तो कई बार यह प्रभाव फसलों के लिए लाभकारी होने के बजाय खरपतवारों के पक्ष में झुक जाता है। उदाहरण स्वरूप, गुल्ली डंडा जैसे C_3 खरपतवारों ने उच्च CO_2 और तापमान की स्थितियों में गेहूं पर अधिक प्रभावशाली प्रतिस्पर्धा दिखाई है। इसी प्रकार, शोधों में यह भी देखा गया है कि *लेप्टोक्लोआ चायनेंसिस* (C_4) और *अल्टरनेन्थेरा पैरॉनिकियोइड्स* (C_3) जैसे खरपतवारों की पत्ती का क्षेत्रफल, ऊँचाई और सूखी जैविक सामग्री संयुक्त परिस्थितियों में काफी बढ़ जाती है। इससे ये खरपतवार न केवल तेजी से फैलते हैं बल्कि अधिक बीज उत्पन्न कर मिट्टी में संग्रहीत करते हैं, जिससे अगले मौसम में उनकी सघनता और दबाव बढ़ जाता है। कुछ शोधों में यह भी पाया गया है कि C_3 खरपतवार जैसे *यूफोरबिया जेनिकुलाटा* ने मूंग जैसी फसलों की तुलना में अधिक प्रतिस्पर्धात्मक लाभ प्राप्त किया है। इन सभी तथ्यों से स्पष्ट होता है कि जलवायु परिवर्तन के प्रमुख घटक - CO_2 और तापमान - जब एक साथ क्रियाशील होते हैं, तो वे खरपतवारों को अधिक शक्तिशाली बना देते हैं, जिससे पारंपरिक फसल-घास संतुलन बिगड़ता है और फसल उत्पादन तथा खरपतवार नियंत्रण दोनों के लिए नई चुनौतियाँ उत्पन्न होती हैं। जलवायु परिवर्तन की परिस्थितियों में ओपन टॉप चैम्बर (OTC) एक प्रभावी उपकरण है, जो फसल-खरपतवार पारस्परिक संबंध और शाकनाशी प्रभावशीलता के अध्ययन में सहायक होता है। इससे नियंत्रित वातावरण में तापमान, CO_2 सघनता आदि को बढ़ाकर यह जाना जा सकता है कि बदलते पर्यावरणीय कारकों का फसलों, खरपतवारों और शाकनाशियों पर क्या प्रभाव पड़ता है। यह अध्ययन भविष्य की जलवायु-लचीली खरपतवार प्रबंधन रणनीतियाँ विकसित करने में मदद करता है।

चित्र 1: उन्नत ओपन टॉप चेम्बर (OTC) सेटअप: नियंत्रित वातावरण में जलवायु परिवर्तन के घटकों (जैसे CO_2, तापमान) तथा फसल-खरपतवार पारस्परिक क्रियाओं और शाकनाशी प्रभावशीलता पर अध्ययन करने हेतु स्थापित संरचनाएँ।

(घ) वर्षा और नमी की अनिश्चितता:

वर्षा और नमी की अनिश्चितता का फसल खरपतवार पारस्परिक संबंध पर प्रभाव वर्तमान जलवायु परिवर्तन परिदृश्य में एक अत्यंत महत्वपूर्ण विषय बन गया है। वर्षा की अनियमितता जैसे कि असमय वर्षा, अत्यधिक वर्षा या दीर्घकालिक सूखा तथा मिट्टी और वायुमंडल में नमी की कमी या असंतुलन न केवल फसलों की वृद्धि और उपज को प्रभावित करते हैं, बल्कि खरपतवारों की उपस्थिति, वितरण और प्रतिस्पर्धात्मक शक्ति को भी अत्यधिक प्रभावित करते हैं। जब वर्षा की मात्रा अत्यधिक होती है, तब खेतों में अधिक नमी के कारण जल-जमाव की स्थिति उत्पन्न होती है। इस परिस्थिति में विशेष रूप से जल-प्रेमी खरपतवार जैसे जलकुंभी, *अल्टरनेन्थेरा फिलोक्सेरोइड्स*, मार्सिलिया आदि तेजी से पनपते हैं। ये खरपतवार जल में या अधिक नमी वाली भूमि में अत्यंत तेजी से फैलते हैं और जलाशयों, नहरों, धान जैसे फसलों के खेतों में भारी समस्या उत्पन्न करते हैं।

वहीं दूसरी ओर, जब वर्षा की कमी होती है या सूखा पड़ता है, तब सूखा-सहिष्णु खरपतवार प्रजातियाँ जैसे *ट्रिबुलस टेरेस्ट्रिस* (गोखरू), दूब घास, सत्यानाशी आदि अधिक प्रभावशाली हो जाती हैं। ये खरपतवार कम जल और प्रतिकूल परिस्थितियों में भी जीवित रह सकते हैं, जबकि अधिकांश फसलें जल की कमी से ग्रस्त होकर मुरझा जाती हैं या उनका विकास रुक जाता है। इस प्रकार, वर्षा और नमी की अनिश्चितता से फसल खरपतवार संबंध में गंभीर असंतुलन उत्पन्न होता है। खरपतवारों को जलवायु के अनुसार जल्दी अनुकूलन करने की क्षमता होती है, जबकि फसलों की जैविक सीमाएँ उन्हें कमजोर बनाती हैं। इसका परिणाम यह होता है कि फसल की उत्पादकता घटती है, खरपतवार नियंत्रण की लागत बढ़ती है और कृषि प्रणाली की स्थिरता खतरे में पड़ जाती है।

तालिका 1: जलवायु परिवर्तन के तहत फसलों और खरपतवारों के पारस्परिक संबंधों में परिवर्तन

जलवायु परिवर्तन का पहलू	प्रभाव	उदाहरण
बढ़ा हुआ CO_2 स्तर	फसलों की वृद्धि में तेजी	C_3 फसलों की उत्पादकता में 20-25% तक वृद्धि हो सकती है।
बढ़ा हुआ तापमान	खरपतवारों की वृद्धि में तेजी	उच्च तापमान से खरपतवारों की वृद्धि दर में तेजी हो सकती है।
सूखा और जलवायु अस्थिरता	फसल और खरपतवार दोनों पर प्रभाव	सूखा से फसलों की वृद्धि में कमी और खरपतवारों की वृद्धि में तेजी हो सकती है।

2. शाकनाशी की प्रभावशीलता पर जलवायु परिवर्तन का प्रभाव

शाकनाशी, खरपतवार नियंत्रण का एक प्रमुख साधन है, परंतु इनकी प्रभावशीलता भी जलवायु परिवर्तन के प्रभाव में बदल रही है।

(क) तापमान का प्रभावः

कृषि क्षेत्र में खरपतवार नियंत्रण के लिए उपयोग होने वाली रासायनिक शाकनाशियों की कार्यक्षमता पर तापमान एक महत्वपूर्ण पर्यावरणीय कारक होता है। तापमान में परिवर्तन सीधे तौर पर शाकनाशी के रासायनिक गुण, पौधे में अवशोषण की क्षमता, और खरपतवारों की जैविक गतिविधियों को प्रभावित करता है, जिससे शाकनाशी की प्रभावशीलता बढ़ या घट सकती है। जब तापमान बढ़ता है, तो कई शाकनाशियों की वाष्पन दर बढ़ जाती है, जिससे वे पौधों की सतह से जल्दी उड़ जाती हैं और उनकी पौधे में अवशोषण की मात्रा कम हो जाती है। उदाहरण के लिए, ग्लाइफोसेट, 2,4-डी और अन्य सामान्य शाकनाशियों की प्रभावशीलता गर्मी के उच्च तापमान में कम हो सकती है क्योंकि उनका पौधे द्वारा अवशोषण कम हो जाता है और वे जल्दी क्षय हो जाती हैं। इसके अलावा, उच्च तापमान पौधों के पर्णरंध्र बंद कर सकते हैं, जिससे शाकनाशी के प्रवेश में बाधा आती है।

दूसरी ओर, कुछ शाकनाशी ऐसे होते हैं जिनकी प्रभावशीलता अधिक तापमान पर बेहतर होती है, क्योंकि गर्म मौसम में खरपतवार की वृद्धि और चयापचय सक्रिय हो जाता है, जिससे वे अधिक संवेदनशील हो जाते हैं। तापमान के बढ़ने से खरपतवार की वृद्धि तेज होती है, जिससे वे शाकनाशी के प्रति प्रतिरोध विकसित कर सकते हैं या शाकनाशी के प्रभाव को कम कर सकते हैं। इस प्रकार, तापमान में वृद्धि शाकनाशी की प्रभावशीलता को प्रभावित कर सकती है, जिससे खरपतवार नियंत्रण में कठिनाइयाँ बढ़ जाती हैं। इसलिए, किसानों को स्थानीय तापमान परिस्थितियों के अनुसार शाकनाशी प्रबंधन की रणनीति अपनानी चाहिए ताकि खरपतवारों का प्रभावी नियंत्रण सुनिश्चित किया जा सके।

(ख) आर्द्रता का प्रभावः

कृषि में खरपतवार नियंत्रण के लिए रासायनिक शाकनाशी की सफलता में वातावरण की आर्द्रता एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। आर्द्रता से तात्पर्य वायुमंडल में नमी की मात्रा से है, जो सीधे तौर पर शाकनाशी के प्रभाव, पौधों में उसके अवशोषण और खरपतवारों के विकास को प्रभावित करती है।

सबसे पहले, वातावरण में अधिक आर्द्रता होने पर पौधों की पत्तियों पर जल की परत बन जाती है, जिससे शाकनाशी के पौधों की सतह पर टिकने और अवशोषित होने की क्षमता कम हो सकती है। अगर स्प्रे किए गए रसायन की बूंदें जल्दी सूखने के बजाय पानी की परत में घुल जाती हैं या बह जाती हैं, तो उनका पौधे में प्रवेश कम हो जाता है और शाकनाशी की प्रभावशीलता घट जाती है। इसके अलावा, उच्च आर्द्रता में कई बार शाकनाशी की रासायनिक क्रियाएँ धीमी हो जाती हैं, जिससे खरपतवारों का नियंत्रण मुश्किल हो जाता है। वहीं, निम्न आर्द्रता की स्थिति में शाकनाशी के स्प्रे बूंदें तेजी से सूख जाती हैं, जिससे रसायन पौधे की सतह पर जल्दी जम जाते हैं और उनका प्रभाव सीमित रह सकता है। बहुत कम आर्द्रता में पौधों के पर्णरंध्र बंद हो सकते हैं, जिससे शाकनाशी का पौधे के अंदर जाना कठिन हो जाता है। इससे भी शाकनाशी की प्रभावशीलता कम हो सकती है।

अतः आर्द्रता के स्तर में परिवर्तन शाकनाशी की प्रभावशीलता को प्रभावित करता है और खरपतवार नियंत्रण की रणनीतियों को भी प्रभावित करता है। किसानों और प्रबंधकों को क्षेत्र विशेष की आर्द्रता परिस्थितियों के अनुसार शाकनाशी का सही चयन, समय और विधि अपनानी चाहिए ताकि खरपतवार नियंत्रण अधिक प्रभावी और टिकाऊ हो सके।

(ग) शाकनाशी प्रतिरोधकताः

शाकनाशी प्रतिरोधकता एक गंभीर और बढ़ती हुई समस्या है, जो आधुनिक कृषि प्रणाली में खरपतवार नियंत्रण को चुनौतीपूर्ण बना रही है। इसका तात्पर्य उन खरपतवार प्रजातियों से है जो पहले प्रभावी मानी जाने वाली शाकनाशियों के प्रभाव से सुरक्षित या असंवेदनशील हो जाती हैं। ऐसे खरपतवारों में शाकनाशी के प्रति प्रतिरोध विकसित हो जाता है, जिससे पारंपरिक रासायनिक नियंत्रण के उपाय अप्रभावी साबित होते हैं।

शाकनाशी प्रतिरोधकता का विकास मुख्यतः शाकनाशियों के अत्यधिक और बार-बार प्रयोग के कारण होता है। जब किसान एक ही प्रकार के शाकनाशी का लगातार उपयोग करते हैं, तो वे खरपतवारों की उन जातियों को चुनते हैं जो आनुवंशिक रूप से उस रसायन के प्रति कम संवेदनशील होती हैं। समय के साथ ये प्रतिरोधी जातियाँ अधिक प्रबल होकर पूरे खेत में फैल जाती हैं। जलवायु परिवर्तन के कारण तापमान, आर्द्रता, और CO_2 के स्तर में होने वाले बदलाव भी खरपतवारों की जैविक गतिविधियों को प्रभावित करते हैं, जिससे शाकनाशी प्रतिरोध के विकास की संभावना और बढ़ जाती है।

तालिका 2: जलवायु परिवर्तन के तहत शाकनाशी की प्रभावशीलता में परिवर्तन

जलवायु परिवर्तन का पहलू	प्रभाव	उदाहरण
बढ़ा हुआ CO_2 स्तर	शाकनाशी की प्रभावशीलता में कमी	उच्च CO_2 स्तर से खरपतवारों की वृद्धि में तेजी हो सकती है, जिससे शाकनाशी की प्रभावशीलता कम हो सकती है।
बढ़ा हुआ तापमान	शाकनाशी की प्रभावशीलता में कमी	उच्च तापमान से शाकनाशी की अवशोषण दर में कमी हो सकती है।
सूखा और जलवायु अस्थिरता	शाकनाशी की प्रभावशीलता में कमी	सूखा से शाकनाशी की सक्रियता में कमी हो सकती है।

प्रतिरोधी खरपतवारों का नियंत्रण कठिन होता है क्योंकि वे सामान्य मात्रा में दिए गए रसायनों से नष्ट नहीं होते। इसका परिणाम होता है कि किसानों को अधिक मात्रा में या महंगे रासायनिक उत्पादों का उपयोग करना पड़ता है, जो उत्पादन लागत बढ़ाता है और पर्यावरणीय जोखिम भी बढ़ाता है। कुछ खरपतवार, जैसे चौलाई, लोलियम प्रजातियां, और सांवा में विश्वभर में शाकनाशी प्रतिरोध की रिपोर्ट मिल चुकी हैं। अंततः, शाकनाशी प्रतिरोधकता जलवायु परिवर्तन और बदलते पर्यावरणीय कारकों के बीच एक जटिल चुनौती है, जिसे वैज्ञानिक शोध, तकनीकी नवाचार और किसानों की उचित जागरूकता से ही नियंत्रित किया जा सकता है ताकि टिकाऊ और प्रभावी खरपतवार प्रबंधन सुनिश्चित किया जा सके।

जलवायु परिवर्तन न केवल फसलों की जैविक और भौतिक परिस्थितियों को प्रभावित करता है, बल्कि खरपतवारों के व्यवहार, उनकी प्रतिस्पर्धात्मकता और शाकनाशी की प्रभावशीलता को भी व्यापक रूप से प्रभावित करता है। ऐसे में पारंपरिक तकनीकों पर पूरी तरह निर्भर रहना जोखिमपूर्ण हो सकता है। इसके लिए एक समन्वित और वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाते हुए जलवायु-अनुकूल, बहुआयामी रणनीतियों का विकास और कार्यान्वयन आवश्यक है। भविष्य की कृषि प्रणाली के लिए यह आवश्यक है कि हम खरपतवारों को केवल समस्या नहीं, बल्कि एक गतिशील जैविक तत्व मानें, जो जलवायु परिवर्तन की परिस्थिति में फसलों के साथ जटिल रूप से जुड़ा हुआ है। समग्र, लचीली और विज्ञान आधारित रणनीतियों के माध्यम से ही हम कृषि उत्पादन की निरंतरता, खाद्य सुरक्षा और पर्यावरणीय स्थिरता को सुनिश्चित कर सकते हैं।

चित्र 2: मुक्त वायु में कार्बन डाइऑक्साइड की समृद्धि तकनीक (FACE) सुविधा में फसल खरपतवार प्रतिस्पर्धा अध्ययन: खुले वातावरण में ऊँचे CO_2 स्तर पर गेहूँ और विभिन्न खरपतवार प्रजातियों के पारस्परिक प्रभाव और शाकनाशी की प्रभावशीलता का मूल्यांकन।

उत्तराखंड के पर्वतीय क्षेत्रों में प्राकृतिक खेती के अंतर्गत फूलगोभी में खरपतवार नियंत्रण

कोहिमा नूपुर, के.एस. पंत, ए.के जोशी, सविता, तेजस अशोक भोसल,
एस.सी. पंत, पारस सिंह एवं हेमंत
वीर चंद्र सिंह गढ़वाली उत्तराखंड औद्यानिकी एवं वानिकी विश्वविद्यालय, भरसार (उत्तराखंड)

प्राकृतिक खेती एक ऐसी कृषि पद्धति है जिसमें रासायनिक उर्वरकों एवं कीटनाशकों का प्रयोग पूरी तरह निषेध होता है और खेत की जैव विविधता एवं प्राकृतिक संतुलन को बनाए रखते हुए उत्पादन किया जाता है। उत्तराखंड के पर्वतीय क्षेत्रों में, जहां सीमित भूमि, एवं पर्यावरण अत्यंत संवेदनशीलता की स्थिति में प्राकृतिक खेती के अंतर्गत फूलगोभी में खरपतवार नियंत्रण में सबसे पहले निवारक उपायों को प्राथमिकता दी जाती है। इसके अंतर्गत शुद्ध बीजों का प्रयोग, खरपतवार मुक्त नर्सरी मिट्टी, स्वच्छ उपकरणों का उपयोग और संक्रमित गोबर या चारे से बचाव। इसके बाद यांत्रिक विधियाँ जैसे हाथ से निराई-गुड़ाई, खुरपी या कुदाल द्वारा खरपतवार निकालना तथा पंक्तियों के बीच निराई-गुड़ाई की विधिया अपनायी जाती हैं। जिससे न केवल खरपतवारों की वृद्धि रोकी जाती है, बल्कि खेत में नमी भी संरक्षित रहती है। हाथ से निराई-गुड़ाई, विशेष रूप से पौध रोपण के 15-25 दिन और 40-50 दिन बाद आवश्यक होती है। भौतिक विधियों में मल्चिंग (पुआल या पॉलीथीन से ढंकना) और मृदा सौर्यकरण (पारदर्शी प्लास्टिक शीट से मिट्टी को गर्म करना) प्रभावी सिद्ध हो रही हैं। इसके अतिरिक्त, जैविक विधियों में प्राकृतिक शत्रु कीटो द्वारा खरपतवार नियंत्रण तथा हरी खाद और कवर फसलें (जैसे सनई, ढैंचा) का प्रयोग भी लाभकारी होता है। इसके साथ ही, फसल चक्र और मिश्रित खेती अपनाकर खरपतवारों के जीवन चक्र को तोड़ा जा सकता है, जिससे उनकी संख्या में दीर्घकालिक कमी आती है। ये सभी विधियाँ फूलगोभी की अच्छी वृद्धि और अधिक उत्पादन सुनिश्चित करने में सहायक होती हैं। साथ ही, जीवामृत या घनजीवामृत का प्रयोग फसल को पोषण देने के साथ-साथ खरपतवारों के प्रति प्रतिरोधक क्षमता भी बढ़ाता है। खेत की नर्सरी और सिंचाई नालियों की नियमित सफाई भी प्राकृतिक खेती में खरपतवार नियंत्रण के महत्वपूर्ण भाग हैं।

उत्तराखंड का उच्च हिमालयी क्षेत्र एक विशिष्ट पारिस्थितिकी तंत्र प्रदान करता है जहाँ की ठंडी जलवायु और समशीतोष्ण परिस्थितियाँ अनेक प्रकार की फसलों की खेती के लिए उपयुक्त हैं। इस क्षेत्र में फूलगोभी एक महत्वपूर्ण शीतकालीन सब्जी के रूप में उभरकर सामने आई है। यह फसल उच्च ऊंचाई वाले क्षेत्रों में ग्रीष्म काल में भी अच्छी वृद्धि कर अधिक उत्पादन देती है, जिससे यह किसानों के लिए आजीविका का एक प्रमुख स्रोत बन चुकी है। फूलगोभी पोषण से भरपूर होती है। इसमें विटामिन-C, फाइबर, एंटीऑक्सीडेंट्स तथा कई सूक्ष्म पोषक तत्व पाए जाते हैं, जो शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने और कुपोषण को कम करने में सहायक होते हैं। इसका खाद्य भाग ''कर्ड" कहलाता है, जो एक पुष्प-पूर्व मांसल शीर्षस्थ विभज्योतक होता है। फूलगोभी में वाष्पशील यौगिक जैसे नाइट्राइट और आइसोथियोसाइनेट्स पाए जाते हैं, जो इसमें विशिष्ट स्वाद और सुगंध उत्पन्न करते हैं। यह स्वाद और सुगंध पकने के बाद भी बनी रहती है, जो इसे अन्य सब्जियों से अलग बनाती है। प्रति 100 ग्राम खाद्य भाग में लगभग 2.6 प्रतिशत प्रोटीन पाया जाता है, जिससे यह एक पोषक और स्वास्थ्यवर्धक सब्जी के रूप में अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाती है। फूलगोभी को बहुस्तरीय कृषि प्रणाली के अंतर्गत अन्य सब्जियों एवं दलहनी फसलों के साथ उगाने पर विशेष बल दिया जा रहा है, जिससे उत्पादन बढ़ाकर किसानों की आय में वृद्धि की जा सके। अत: आवश्यक है कि पर्वतीय क्षेत्रों में उपयुक्त फसल योजना और आधुनिक फसल प्रबंधन तकनीकों को अपनाया जाए। साथ ही, प्राकृतिक संसाधनों के सतत उपयोग तथा खरपतवार नियंत्रण के प्रभावी उपायों को अपनाकर इस क्षेत्र में फूलगोभी की खेती को और अधिक लाभदायक बनाया जा सकता है।

पर्वतीय क्षेत्रों में फूलगोभी की खेती के दौरान खरपतवार एक गंभीर समस्या के रूप में उभरते हैं, जो फसल के साथ पोषक तत्वों, जल और प्रकाश के लिए प्रतिस्पर्धा करते हैं। इसके परिणामस्वरूप फूलगोभी की वृद्धि एवं उपज में कमी आ जाती है। प्रयोगो में देखा गया है की खरपतवार फूलगोभी की फसल में 25-75 प्रतिशत तक उपज में हानि पहुंचते है। ये खरपतवार न केवल उत्पादन को प्रभावित करते हैं, बल्कि कई रोगों और कीटों के लिए आश्रय स्थल भी बन जाते हैं। विशेष रूप से चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार फूलगोभी की प्रारंभिक वृद्धि अवस्था में अधिक प्रभाव डालते हैं। इस फसल में पाए जाने वाले प्रमुख चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार हैं: बथुआ (*चिनोपोडियम एल्बम*), चौलाई (*एमरेंथस*), शहतरा (*फ्यूमेरिया पार्वीफ्लोरा*), वैंच (*विसिया स्पीशीज*), जंगली मेथी (*मेडिकागो डेंडिकुलाटा*), लट्टा (*एनागॉलिश आर्वेन्सिस*), जंगली पालक (*रूमेक्स डेंटेटस*), बन भिंडी (*मालवा पार्वीफ्लोरा*) चंगेरी (*ऑक्सालिस कार्निकुलेटा*) एवं पिटपापरा (*कोरोनोपस डिडिटस*)। इसी प्रकार, फूलगोभी की खेती में कुछ संकरी पत्ती वाले खरपतवार भी गंभीर चुनौती प्रस्तुत करते हैं, जो खेत में तेजी से फैलकर फसल की उत्पादकता

को प्रभावित करते हैं। ऐसे प्रमुख संकरी पत्ती वाले खरपतवार हैं: दूब (*सिनोडोन डेक्टीलॉन*), जंगली मारूआ (*एल्युसिन इंडिका*), मकड़ा घास (*डैकटाइलोटेनियम इजपटीअम*), कंगनी (*सीटेरिआ स्पीशीज*), गुली डंडा (*फेलेरिस माइनर*), सुआ घास (*डिजिटेरिया सैंग्विनेलिस*), पोआ घास (*पोआ एनुआ*) एवं पैनिकम (*पैनिकम रिपेन्स*)।

फूलगोभी की फसल में खरपतवार प्रबंधन

जब खेत में अत्यधिक मात्रा में खरपतवार उग आते हैं, तो यह फसल की निराई-गुड़ाई, देखभाल और कटाई के कार्य को बहुत कठिन बना देते हैं। मजदूरों को फसल के पौधों के बीच कार्य करना मुश्किल हो जाता है, जिससे न केवल श्रम अधिक लगता है बल्कि समय और लागत दोनों में वृद्धि हो जाती है। इसके अतिरिक्त, यह भी देखा गया है कि खरपतवारों की अधिकता के कारण फूलगोभी के फूलों में मिट्टी, फफूंद या कीट लगने की संभावना बढ़ जाती है, जिससे फसल की गुणवत्ता प्रभावित होती है। इस कारण से खेत की स्वच्छता, फसल की गुणवत्ता बनाए रखना, और समयबद्ध कटाई सुनिश्चित करने के लिए खरपतवार नियंत्रण अत्यंत आवश्यक है। जैसा की प्राकृतिक खेती में रासायनिक खरपतवारनाशकों का प्रयोग पूर्णतः वर्जित होता है, इसलिए इसमें खरपतवार नियंत्रण के लिए पहले निवारक उपायों को प्राथमिकता देनी चाहिए। यदि इन प्रयासों के बावजूद खेत में खरपतवार उग आते हैं, तो उनके नियंत्रण के लिए वैकल्पिक उपायों का उपयोग किया जा सकता है।

खरपतवार प्रबंधन की निवारक विधियाँ

खेत में खरपतवारों के प्रवेश को रोकने के लिए निवारक विधियों का उपयोग अत्यंत आवश्यक होता है। इन विधियों के माध्यम से खरपतवारों के बीजों का खेत में प्रसार रोका जा सकता है, जिससे फूलगोभी की फसल बिना किसी प्रतिस्पर्धा के स्वस्थ रूप से वृद्धि करते हुए अधिक उपज प्रदान कर सकती है। निवारक उपाय न केवल खरपतवारों की संख्या को घटाते हैं, बल्कि खेत की दीर्घकालिक स्वच्छता एवं उत्पादकता बनाए रखने में भी सहायक होते हैं। इन विधियों को निम्नलिखित रूप में अपनाया जा सकता है:

1. **बीज की शुद्धता सुनिश्चित करना:** यदि फूलगोभी के बीजों में खरपतवार के बीजों की मिलावट हो, तो ऐसे बीजों का उपयोग बुवाई में न करें। यदि कोई विकल्प न हो, तो बुवाई से पहले बीजों को छानकर खरपतवार बीजों को अलग कर देना चाहिए।

2. **स्वच्छ नर्सरी मिट्टी का प्रयोग करें:** नर्सरी के लिए ऐसी मिट्टी का चयन करें जो खरपतवार से मुक्त हो। साथ ही, रोपाई से पहले नर्सरी पौधों में उगे हुए खरपतवारों को पूरी तरह हटा दें।

3. **कच्चे गोबर के प्रयोग से बचें:** खेत में कच्चे गोबर का प्रयोग नहीं करना चाहिए, क्योंकि उसमें खरपतवारों के जीवित बीज हो सकते हैं, जो बाद में खेत में उग सकते हैं।

4. **पशुओं को दिया जाने वाला चारा पीसकर खिलाएं:** पशुओं को दिए जाने वाले दानों को अच्छी तरह पीसकर ही खिलाना चाहिए, क्योंकि कई खरपतवारों के बीज पशुओं के पाचन तंत्र से बिना नष्ट हुए गोबर के माध्यम से बाहर आ जाते हैं, जिससे खेतों में उनका प्रसार हो सकता है।

5. **सिंचाई नालियों की सफाई करें:** खेत की सिंचाई नालियों के किनारों को खरपतवारों से मुक्त रखें, क्योंकि यही स्थान खरपतवारों के फैलाव का प्राथमिक स्रोत बन सकते हैं।

6. **संक्रमित क्षेत्रों से आने वाले जानवरों को रोकें:** ऐसे जानवर जो खरपतवार प्रभावित क्षेत्रों से आ रहे हों, उन्हें खेत में प्रवेश न करने दें क्योंकि उनके शरीर या मल के साथ खरपतवार के बीज खेत में आ सकते हैं।

7. **मशीनों की सफाई करें:** खरपतवार प्रभावित क्षेत्रों से लाई गई कृषि यंत्रों और मशीनों को उपयोग से पहले अच्छी तरह साफ करें ताकि उनके साथ खरपतवार बीज खेत में न आएं।

खरपतवार प्रबंधन की अन्य विधियाँ

यदि खेत में निवारक विधियाँ अपनाने के बाद भी खरपतवार दिखाई देने लगें, तो उनके नियंत्रण के लिए सक्रिय नियंत्रण उपाय आवश्यक हो जाते हैं।ऐसे में विभिन्न यांत्रिक, भौतिक, जैविक एवं सांस्कृतिक विधियों द्वारा खरपतवारों को नियंत्रित किया जा सकता है। ये

उपाय न केवल फसल की वृद्धि को सहायता प्रदान करते हैं, बल्कि खेत को खरपतवारों से मुक्त भी बनाए रखते हैं। नीचे ऐसे कुछ प्रमुख नियंत्रण उपाय दिए गए हैं।

- **फसल चक्र एवं मिश्रित खेती**

फसल चक्र और मिश्रित खेती खरपतवार नियंत्रण की एक महत्वपूर्ण सांस्कृतिक विधि है, जो दीर्घकालिक रूप से प्रभावी साबित होती है। एक ही प्रकार की फसल को बार-बार लगाने से विशेष खरपतवारों का प्रसार बढ़ सकता है, जबकि फसल चक्र अपनाने से खरपतवारों के जीवन चक्र में विघ्न आता है और उनकी संख्या नियंत्रित रहती है। फूलगोभी के साथ धनिया, मेथी या पालक जैसी फसलें अंतरवर्ती फसल के रूप में लगाकर खरपतवारों की वृद्धि को दबाया जा सकता है। इससे न केवल खरपतवारों का विस्तार सीमित होता है, बल्कि खेत की उर्वरता भी बनी रहती है।

- **यांत्रिक विधियाँ**

फूलगोभी की खेती में खरपतवार नियंत्रण के सबसे सामान्य और प्रभावी उपायों में से एक हैं। इनमें उपकरणों की सहायता से खरपतवारों को भौतिक रूप से हटाया जाता है। फूलगोभी की फसल में पहली निराई पौध रोपण के 15-25 दिन बाद तथा दूसरी निराई 40-50 दिन बाद करनी चाहिए। प्रारंभिक वृद्धि अवस्था में की गई निराई-गुड़ाई अत्यंत प्रभावी होती है, क्योंकि इससे न केवल खरपतवार हटते हैं, बल्कि मिट्टी में वायु संचरण भी बेहतर होता है, जिससे जड़ों की वृद्धि को प्रोत्साहन मिलता है। खुरपी, कुदाल या अन्य साधनों द्वारा की गई हाथ से निराई के अतिरिक्त, पंक्तियों के बीच अंतर-कल्टीवेशन भी यांत्रिक नियंत्रण की एक प्रभावशाली तकनीक है।

- **भौतिक विधियाँ**

भौतिक विधियाँ खरपतवार नियंत्रण के प्रभावी उपायों में से हैं, जिनमें मुख्य रूप से मल्चिंग और मृदा सौर्यकरण जैसी तकनीकें शामिल हैं। मल्चिंग में फसल की पंक्तियों के बीच सूखी घास, पुआल या पॉलीथीन बिछाई जाती है, जिससे खरपतवारों का अंकुरण रुक जाता है और मिट्टी में नमी बनी रहती है। इस प्रक्रिया से खरपतवारों को प्रकाश नहीं मिल पाता, जिससे उनकी वृद्धि नियंत्रित होती है। वहीं, मृदा सौर्यकरण में गर्मियों के दौरान खेत की मिट्टी को पारदर्शी प्लास्टिक शीट से ढक दिया जाता है, जिससे सूर्य की गर्मी से खरपतवार बीज निष्क्रिय हो जाते हैं। यह विधि विशेष रूप से नर्सरी तैयार करते समय अत्यधिक प्रभावी होती है, क्योंकि इसमें खरपतवारों के अंकुरण को प्रारंभिक अवस्था में ही रोका जा सकता है।

- **जैविक विधियाँ**

जैविक विधियाँ पर्यावरण के प्रति संवेदनशील और प्राकृतिक शत्रुओं का उपयोग करने वाली प्रभावी तकनीकें हैं। इनमें कुछ खरपतवारों पर कीट या रोगजनक जैविक एजेंटों का उपयोग किया जाता है, जो उनके नियंत्रण में सहायक होते हैं, जैसे *जाइगोग्रामा बाइकोलोराटा* द्वारा गाजरघास खरपतवार का नियंत्रण। इसके अतिरिक्त, हरी खाद और कवर फसलों (जैसे – सनई, ढैंचा) का उपयोग भी खरपतवारों को दबाने में मदद करता है, जिससे उनकी वृद्धि पर अंकुश लगता है और मिट्टी की उर्वरता में वृद्धि होती है। यह विधि न केवल खरपतवारों को नियंत्रित करती है, बल्कि मिट्टी के स्वास्थ्य को भी बनाए रखती है।

- **फसल चक्र एवं मिश्रित खेती**

इस प्रकार हम कह सकते है की फूलगोभी में खरपतवारो को समूल नष्ट न करते हुए आर्थिक क्षति स्तर से नीचे नियंत्रित कर फूलगोभी से अधिक उपज प्राप्त की जा सकती हैं, इससे खेत से प्राकृतिक उत्पाद प्राप्त ही ओने के साथ साथ जैव विविधता भी यथावत बनी रहेगी।

हिन्दी उन सभी गुणों से अलंकृत है जिनके बल पर वह विश्व की साहित्यिक भाषाओं की अगली श्रेणी में समासीन हो सकती है।

-राष्ट्रकवि मैथलीशरण गुप्त

अमरावती में अमरबेल की समस्या : अरहर का एक घातक परजीवी खरपतवार

एम.एस. रघुवंशी[1], अभय शिराले[1], सिरिशा अडामाला[1], रितिक बिस्वास[1], आर.के. नैताम[1], एच.एल. खरबीकर[1], पी.सी. मोहाराना[1], हर्ष ठाकुर[2], प्रफुल्ल महल्ले[2], ज्योति डाश[1], जी.आर. डोंगरे[3] एवं एन.जी. पाटिल[1]

[1]भाकृअनुप-राष्ट्रीय मृदा सर्वेक्षण और भूमि उपयोग नियोजन ब्यूरो, नागपुर (महाराष्ट्र)
[2]कृषि विज्ञान केंद्र, दुर्गापुर, अमरावती (महाराष्ट्र)
[3]भाकृअनुप-खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)

विकसित कृषि संपर्क अभियान के तहत राष्ट्रीय मृदा सर्वेक्षण और भूमि उपयोग नियोजन ब्यूरो, नागपुर ने कृषि विज्ञान केंद्र, दुर्गापुर, अमरावती के साथ मिलकर अमरावती के अलग-अलग गांवों में कृषक गोष्ठियां एवं इसके अंर्तगत समस्याओं पर परामर्श किये गये। अरहर की खेती और विविधता के मुख्य क्षेत्र उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, कर्नाटक, गुजरात, आंध्रप्रदेश, तेलंगाना और बिहार राज्यों में हैं। देश में अरहर की खेती के कम क्षेत्र अरुणाचल प्रदेश, छत्तीसगढ़, केरल, ओडिशा, राजस्थान, तमिलनाडु और उत्तराखंड राज्यों में हैं। महाराष्ट्र में विशेषकर अमरावती जैसे जिले, महत्वपूर्ण अरहर (जिसे तुअर कहा जाता है) के मुख्य उत्पादक हैं। अमरावती में अरहर की लगभग 4895 हैक्टेयर में खेती के साथ-साथ इसका उत्पादन 6200 टन और 1267 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर होता है।

ऐसा देखा गया है कि अमरावती में अरहर की खेती के लिए परजीवी खरपतवार अमरबेल एक बड़ा खतरा है। और किसानों ने भी अरहर की फसल में अमरबेल की ज्वलंत समस्या बताई है। यह अरहर के पौधों को गंभीर रूप से नुकसान पहुंचाता है और पौधे को भी मार देता है, जिससे पैदावार पर भारी नकारात्मक असर होता है। जैसा विदित है कि परजीवी मेजबान पौधे के साथ जुड़ जाता है और पोषक तत्वों को खींचता है और अंतत: ग्रसित पौधा दम तोड देता है। वैसे तो अरहर को कई जैविक तनावों का सामना करना पड़ता है जैसे अनेक रोगों में (फाइटोफ्थोरा ब्लाइट, स्टेरिलिटी मोजेक रोग, विल्ट और अल्टरनेरिया ब्लाइट), कीटों में (फली छेदक, फलीमक्खी, मारुका, स्केलकीट, आदि), नेमाटोड में (रूट नेमाटोड और सिस्ट नेमाटोड) और एक महत्वपूर्ण परजीवी खरपतवार अमरबेल (डोडर) जो इस फसल को काफी नुकसान पंहुचाते हैं।

अमरबेल की प्रकृति के अनुसार यह एक परजीवी (होलोपैरासिटिक) बेल है जिसमें जड़ें नहीं होती हैं और यह जीवित रहने के लिए पूरी तरह से अपने मेजबान पौधे पर निर्भर रहती है। संक्रमित करते वक्त यह प्रतान (टेंडरिल) भेजती है जो मेजबान पौधे से जुड़ जाती है और तने में घुसने के बाद पानी और पोषक तत्वों को खींचने के लिए हस्टोरिया

(विशेष संरचनाएँ) विकसित करती है। अरहर की फसल पर इसके प्रभाव से शाखाओं पर विशेषत: सूखना, पौधे की वृद्धि में कमी और यहाँ तक कि पौधे की मृत्यु भी शामिल है। इसके बीज स्थायी रुप से कई वर्षो तक मिट्टी में व्यवहार्य रह सकते हैं, जिससे इसे खत्म करना मुश्किल हो जाता है।

अमरावती में अरहर की खेती हर किसान करता है। यह एक कठोर, व्यापक रूप से अनुकूलित और सूखा सहिष्णु फसल है। यह कई तरह के वातावरण और फसल प्रणालियों में उगाने के लिये उपयोगी हैं (चौधरी ऐटअल, 2010)। ये आगे बताते है कि कई जैविक और अजैविक तनावों के कारण अरहर फसल की औसत उत्पादकता काफी कम दर्ज की गयी है। बरसात के मौसम में जब वर्षा असामायीक होने से फसल खरपतवारों से बुरी तरह प्रभावित होती है। क्योंकि खरपतवार ज्यादातर अरहर के साथ संसाधनों के लिए भी प्रतिस्पर्धा करते रहते हैं और फसल की उपज और गुणवत्ता को कम करते हैं। अमरावती जिले में किसानों के द्वारा भी यही दलील दी गई कि अरहर पर परजीवी खरपतवार जैसे अमरबेल फसल को बहुत ग्रसित करती है। अरहर पर इस परजीवी की पहचान कस्कुटाहाइलिना के रूप में की गई (कोटास्थने एट अल, 1980)। किसानों ने यह भी बताया कि परजीवी द्वारा हमला किए गए अरहर के पौधे अविकसित दिखे और उनमें समय से पहले सूखने की प्रवृत्ति देखी गई।

एक अनुसंधान से ज्ञात होता है कि पौधे की ऊंचाई, प्राथमिक शाखाएं और तने का व्यास असंक्रमित पौधों की तुलना में क्रमशः 38.70, 64.30 और 45.20 प्रतिशत तक कम दर्ज किया गया और संक्रमित पौधों की ऊंचाई और प्राथमिक शाखाओं की संख्या सामान्य पौधों की तुलना में अधिक परिवर्तनशील पाई गई। इसके अलावा, यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण हो जाता है कि जीवित संक्रमित पौधे सामान्य पौधों में पहले फूल आने के 20 दिनों के बाद भी फूल नहीं देते थे और तो और ये संक्रमित पौधे हल्के पीले रंग के होकर मुरझाने लगते है तथा कुछ समय बाद (प्रजनन चरण की शुरुआत से पहले) मरने लगते है। इसलिए, नुकसान 100 प्रतिशत तक भी हो सकता है। अमरावती के जंगलों में पाए जाने वाले पुष्पीय पौधे परजीवी बंदगुल (*कुस्कुटा चिनेंसिस*) और अमरवेल (*कैस्कुटा रिफ्लेक्सा*) हैं। यह अमरावती के कई क्षेत्रों में विशेष रूप से तिलहन, दलहन और चारा फसलों को संक्रमित कर रहे है, और इसे एक आक्रामक खरपतवार के रूप में पहचाना गया है। इसका आर्थिक प्रभाव महत्वपूर्ण है और विशेष रूप से चारा फसलों जैसे अल्फाल्फा और क्लोवर जहां अमरबेल का संक्रमण चारा फसलों की पैदावार को काफी कम कर सकता है। दालों में, अमरबेल (*कुस्कुटा ग्रोनोवी*) के संक्रमण से फसल को भारी नुकसान दर्ज किया गया है और किसानों और स्थानीयजनो की अर्थव्यवस्था पर इसका असर पड़ रहा है।

जबलपुर स्थित भाकृअनुप-खरपतवार अनुसंधान निदेशालय में किये गये अनुसंधान से यह पता चलता है कि खेत की फसलों में अमरबेल संक्रमण के कारण अरहर की उपज में 24.8 प्रतिशत की क्षति होती है। उन्होंने सुझाव दिया कि 1000 ग्राम/ हैक्टेयर की दर से पेंडिमेथालिन का पूर्व-उद्भव अनुप्रयोग प्रभावी रूप से अमरबेल संक्रमण को कम कर सकता है। निष्कर्ष में, अमरबेल अपने परिपक्वता समूह के बावजूद अरहर का एक घातक अनिवार्य तना परजीवी माना गया है। यदि संक्रमण प्रारंभिक अवस्था में होता है, तो यह व्यक्तिगत पौधे के आधार पर कुल उपज हानि का कारण बन सकता है। इसलिए इसके नियंत्रण हेतु उपयुक्त शाकनाशी का पूर्व-उद्भव अनुप्रयोग करना आवश्यक हो जाता है और खेत में रोपण करने से पूर्व अमरबेल मुक्त अरहर के बीजों का उपयोग करना चाहिये।

नियमित रूप से खेतों का निरीक्षण करना और इसे हाथों से हटाना इसके प्रसार को रोकने में मदद कर सकता है। फसल चक्र अपनाने जैसे अन्य फसलों के साथ अरहर की फसल को लगाने से भी अमरबेल की वृद्धि को कम करने में मदद मिल सकती है। शोधकर्ता अरहर की ऐसी किस्मों को विकसित करने पर काम कर रहे हैं जो अमरबेल के संक्रमण के प्रति अधिक प्रतिरोधी या सहनशील हों। कुस्कुटा के पौधे उगने से पहले शाकनाशी का छिड़काव करने से खरपतवार को नियंत्रित करने में मदद मिल सकती है।

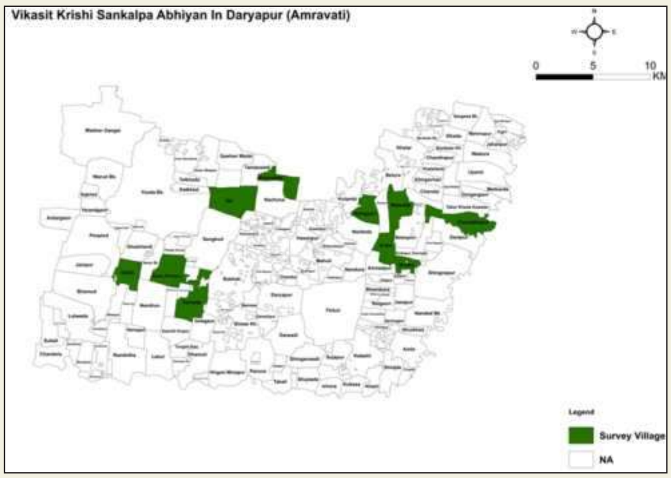

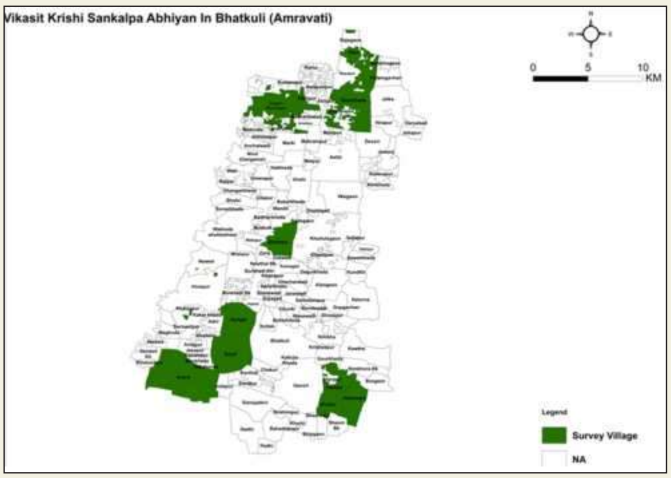

अमरावती तालुका में घातक परजीवी खरपतवार-अमरबेल की समस्या

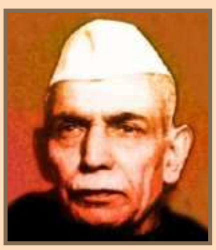

हिंदी हमारे देश और भाषा की प्रभावशाली विरासत है।

- माखनलाल चतुर्वेदी

एकीकृत खरपतवार प्रबंधन

पवन कुमार पारा[1], पंकज शुक्ला[1] एवं किरण शर्मा[2]

[1]भा.कृ.अनु.प., खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)

[2]जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

भारत में बढ़ती आबादी की बढ़ती जरूरतों को पूरा करने के लिए कृषि उत्पादकता में वृद्धि की आवश्यकता है। लगभग सभी फसलों में, प्रति इकाई क्षेत्र में कम और स्थिर उपज भारतीय कृषि का एक विशिष्ट पहलू बन गई है। इस पृष्ठभूमि में, खाद्य उत्पादन में आवश्यक वृद्धि केवल उत्पादकता में ऊर्ध्वाधर वृद्धि के माध्यम से ही महसूस की जा सकती है, क्योंकि क्षैतिज वृद्धि यानी क्षेत्र के विस्तार की संभावनाएं न्यूनतम हैं। ऊर्ध्वाधर वृद्धि में जबरदस्त गुंजाइश है जिसे बेहतर जीनोटाइप और किसान-अनुकूल इनपुट तकनीक प्रदान करके हासिल किया जा सकता है। ऐसी ही एक तकनीक जो खाद्यान्न के उत्पादन में पर्याप्त वृद्धि करने की क्षमता रखती है, वह एकीकृत खरपतवार प्रबंधन तकनीक है क्योंकि खरपतवार अकेले ही विभिन्न जैविक तनावों के कारण होने वाले नुकसान के लगभग एक तिहाई के लिए जिम्मेदार होते हैं।

एकीकृत खरपतवार प्रबंधन

फसल उत्पादन में खरपतवारों को नियंत्रित करने के लिए विभिन्न विधियों का वैज्ञानिक एवं संतुलित ढंग से संयुक्त उपयोग करना, जिससे खरपतवारों की वृद्धि को आर्थिक नुकसान की सीमा से नीचे रखा जा सके।

खरपतवारों के कारण फसलों में नुकसान

हाल ही में किए गए एक अध्ययन के अनुसार, खरपतवार आज उत्पादित सभी तिलहनों के लगभग एक तिहाई, सभी खाद्यान्नों के आधे और दालों के बराबर मात्रा के लिए जिम्मेदार हैं। अनुमानों के अनुसार, अकेले भारत की कृषि योग्य भूमि में खरपतवार प्रबंधन पर प्रति वर्ष लगभग 100 बिलियन रुपये खर्च होते हैं। फसल, खरपतवार संक्रमण, पौधे की प्रजाति और प्रबंधन उपायों के आधार पर, खरपतवार 65 प्रतिशत तक की उपज हानि का कारण बन सकते हैं। परिणामस्वरूप, खरपतवार नियंत्रण भारत की बढ़ती खाद्य और फाइबर मांगों को पूरा करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता रहेगा।

तालिका 1: कुछ महत्वपूर्ण फसलों में खरपतवारों के कारण उपज में कमी

फसल	उपज में कमी की सीमा (%)	फसल	उपज में कमी की सीमा (%)
धान	9.1-51.4	गन्ना	14.1-71.7
गेहूँ	6.3-34.8	अलसी	30.9-39.1
मक्का	29.5-74.0	कपास	20.7-61.0
बाजरा	6.2-81.9	गाजर	70.2-78.0
मूंगफली	29.7-32.9	मटर	25.3-35.5

खरपतवारों द्वारा फसलों को कई प्रकार से नुकसान पहुँचाया जाता है।

कृषि में खरपतवार बहुत महत्वपूर्ण विषय है। खरपतवार वे अवांछित पौधे होते हैं, जो मुख्य फसल के साथ उग आते हैं और विभिन्न प्रकार से फसल उत्पादन को प्रभावित करते हैं। इनके द्वारा होने वाले नुकसान के कारण निम्नलिखित हैं।

1. पोषक तत्वों की प्रतिस्पर्धा

खरपतवार मिट्टी में मौजूद नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटाश आदि आवश्यक पोषक तत्वों का अधिकांश भाग अवशोषित कर लेते हैं, जिससे फसल पौधों को पोषक तत्वों की कमी हो जाती है और उनकी वृद्धि रुक जाती है।

2. जल की प्रतिस्पर्धा

खरपतवार मिट्टी के जल को तेजी से अवशोषित कर लेते हैं, जिससे फसल को जल की कमी होने लगती है, विशेषकर वर्षा-आधारित कृषि में।

3. सूर्य प्रकाश की प्रतिस्पर्धा

खरपतवार फसल की तुलना में तेजी से बढ़ते हैं और ऊँचाई में भी अधिक होते हैं, जिससे फसल पौधों को पर्याप्त प्रकाश नहीं मिल पाता, प्रकाश संश्लेषण प्रभावित होता है और उत्पादन घटता है।

4. स्थान और वायु का अवरोध

खरपतवार खेत में घना आवरण बना देते हैं, जिससे फसल पौधों को स्थान व हवा की कमी होती है। इससे पौधों का विकास अवरुद्ध हो जाता है।

5. रोग व कीटों का आश्रय स्थल

कई खरपतवार फसल में लगने वाले रोगों व कीटों के लिए आश्रय स्थल और वाहक का कार्य करते हैं।

उदाहरण:

- गाजरघास एलर्जी और रोग फैलाने वाला खरपतवार।
- *साइप्रस रोटंडस* कई कीटों का शरण स्थल।

6. उत्पादन में कमी

खरपतवारों के कारण फसल की उत्पादन क्षमता में 15-50% तक की कमी आ सकती है, कभी-कभी अधिक कमी भी दर्ज की गई है।

7. कटाई व प्रसंस्करण में कठिनाई

खरपतवारों की अधिकता से कटाई, गहाई और भंडारण में कठिनाई आती है और गुणवत्ता प्रभावित होती है।

8. अतिरिक्त लागत

खरपतवार नियंत्रण हेतु किसानों को अतिरिक्त श्रम, समय और धन खर्च करना पड़ता है।

खरपतवारों में शाकनाशी प्रतिरोध

यद्यपि शाकनाशियों ने फसल की पैदावार और उत्पादन क्षमता बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है, लेकिन एक ही वर्ग के शाकनाशियों के अत्यधिक उपयोग और बार-बार इस्तेमाल से शाकनाशी प्रतिरोधी खरपतवार बायोटाइप उत्पन्न हो सकते हैं। यद्यपि भारत में शाकनाशियों का उतना व्यापक उपयोग नहीं किया जाता जितना औद्योगिक देशों में किया जाता हैं। ब्यूटाक्लोर और आइसोप्रोटूरान के निरंतर उपयोग से क्रमश: *इकाइनोक्लोआ कोलोना* और *फेलेरिस माइनर* में प्रतिरोध उत्पन्न हो सकता है, जिससे देश की धान-गेहूँ प्रणाली की व्यवहार्यता के लिए गंभीर खतरा पैदा हो सकता है।

खरपतवार वनस्पतियों का स्थानांतरण

इनपुट उपलब्धता और फसल क्रम में परिवर्तन के कारण खरपतवार वनस्पतियों के घटक भिन्न हो गए हैं। धान-गेहूँ प्रणाली में कम खेती की लागत और *फलारिस माइनर* जैसे समस्या वाले खरपतवारों पर बेहतर नियंत्रण संसाधन बचत तकनीकों जैसे कि शून्य जुताई और बिस्तर रोपण के कार्यान्वयन से होगा। इसके अलावा, यह बारहमासी खरपतवारों के पक्ष में खरपतवार वनस्पतियों में बदलाव का कारण बन सकता है, साथ ही शाकनाशी के उपयोग में वृद्धि भी हो सकती है। परिणामस्वरूप, प्रभावी खरपतवार प्रबंधन रणनीतियों को लागू किया जाना चाहिए।

निवारक रणनीतियाँ

निवारक रणनीतियाँ आम तौर पर फसल के खेतों में खरपतवारों की वर्तमान आबादी और विविधता को लक्षित नहीं करती हैं, बल्कि विभिन्न बाहरी स्रोतों से खरपतवारों के आने को रोकने पर ध्यान केंद्रित करती हैं, साथ ही फसल के खेतों में मौजूदा खरपतवारों से भविष्य के वर्षों में खरपतवारों के बने रहने पर भी ध्यान केंद्रित करती हैं।

1. **शुद्ध और साफ फसल के बीज और बीज प्रमाणीकरण –** बुवाई से पहले, खरपतवार के बीज, टूटे हुए, सिकुड़े हुए दाने और बीमार बीज निकालने के लिए बीजों को अच्छी तरह से छान लें। यह सुनिश्चित करने के लिए बीजों का गहन निरीक्षण करें कि कोई खरपतवार के बीज मौजूद नहीं हैं। यदि खरपतवार के बीजों को उनके तुलनीय आकार के कारण फसल के बीजों से अलग करना असंभव है, तो प्रमाणित फसल के बीज का ही उपयोग करें।
2. **अच्छी तरह से विघटित खाद, सीवेज और कीचड़-** अच्छी तरह से विघटित खाद का उपयोग करें और खाद बनाने का तापमान 4-5 महीने तक 55-70°C के बीच रखें। (सिंथेटिक यूरिया) के उपचार के लिए एक्रोसायनामाइड, मेथमए मायलोन और अमोनियम थायोसाइनेट जैसे रसायनों का उपयोग किया जा सकता है। कृषि क्षेत्रों में उपयोग करने से पहले, खरपतवार के बीजों को हटाने के लिए सीवेज और कीचड़ को पर्याप्त रूप से साफ किया जाना चाहिए।
3. **मशीनरी आदि के माध्यम से खरपतवारों की आवाजाही को रोकें –** हार्वेस्टर, बीज क्लीनर, घास बेलर और अन्य कृषि उपकरणों को दूषित क्षेत्र से बाहर ले जाने से पहले, उन्हें साफ करें। खरपतवार से प्रभावित क्षेत्रों से बजरी, रेत और गंदगी का संयम से उपयोग करें। बारहमासी खरपतवारों में बीज, कंद और प्रकंदों की जाँच नर्सरी स्टॉक में की जाती है। खरपतवार से प्रभावित क्षेत्रों से किसी भी जीवित पशु को साफ क्षेत्रों में न ले जाने दें।
4. **गैर-फसल क्षेत्र को साफ रखें –** सिंचाई और जल निकासी चौनलों, बाड़ लाइनों, सड़क के किनारों, बाड़ के कोनों और अन्य गैर-फसल क्षेत्रों से खरपतवारों को दूर रखें। परिपक्व बीजों को मुख्य भूमि पर फैलने से रोकें।
5. **सतर्कता बरतें-** किसान को अपने खेत का नियमित रूप से निरीक्षण करना चाहिए ताकि कोई नया खरपतवार न उगे। नतीजतन, जब कोई नई खरपतवार प्रजाति पाई जाती है, तो उसे समय पर नियंत्रित कर

पनपने से रोका जाना चाहिए। ताकि यह पहले से मौजूद खरपतवार वनस्पतियों में शामिल न हो जाए।

6. **कानूनी और संगरोध उपायों का पालन करें**- संगरोध को सख्ती से लागू किया जाना चाहिए। हानिकारक खरपतवारों के अंतरराज्यीय और अंतर्राष्ट्रीय परिवहन को नियंत्रित करने के लिए कानूनी उपायों की आवश्यकता है।

7. भौतिक (यांत्रिक और मैनुअल) विधियाँ

- ✓ **हाथ कुदाल के प्रयोग से निराई-गुड़ाई - जब** खरपतवार कुछ हद तक बढ़ गए हों तब खरपतवारों को हाथ से या खुरपी या दरांती जैसे औजारों का उपयोग करके हटाने की विधि वार्षिक और द्विवार्षिक पौधों के नियंत्रण में प्रभावी है। बारहमासी खरपतवारों के केवल ऊपरी हिस्से को नियंत्रित करती है। *कॉनवोल्वुलस आर्वेन्सिस* जिसकी जड़ प्रणाली उथली है, उसे नियंत्रित किया जा सकता है।
- ✓ **खुदाई** - बारहमासी खरपतवारों के मामले में मिट्टी की गहरी परत से खरपतवारों के भूमिगत प्रसार वाले हिस्सों को हटाने के लिए खुदाई बहुत उपयोगी है। उन्हें क्रॉबर या पिकैक्स आदि से खोदकर खत्म किया जा सकता है।
- ✓ **ड्रेजिंग और चेनिंग** - जलीय खरपतवारों को उनकी जड़ों और प्रकंदों के साथ मिट्टी से यांत्रिक रूप से बाहर निकालना ड्रेजिंग कहलाता है। चेनिंग के मामले में, एक बहुत बड़ी और भारी चेन को खाई के तटबंधों के साथ ट्रैक्टरों के साथ खाई के तल पर खींचा जाता है।
- ✓ **जलाना और फ्लेमिंग**- यह गैर-फसल वाले क्षेत्रों और रेंज भूमि में परिपक्व अवांछित वनस्पति को खत्म करने का सबसे सस्ता तरीका है। पश्चिमी देशों में कपास, प्याज, सोयाबीन और फलों के बागों जैसी फसलों में चुनिंदा खरपतवार नियंत्रण के लिए फ्लेमिंग का उपयोग किया जाता है। यह पंक्तिब) खरपतवारों को नियंत्रित करने के लिए फ्लेम थ्रोअर से 100° डिग्री सेल्सियस तक के तापमान पर हरे खरपतवारों का क्षणिक प्रदर्शन है।
- ✓ **मृदा सौरीकरण** - यह बीजों से उत्पन्न होने वाले खरपतवारों के विरुद्ध प्रभावी है। 2-4 सप्ताह के लिए गर्मियों के महीनों के सबसे गर्म भाग के दौरान 20-25 मिमी पॉलीइथिलीन (पीई) फिल्म की पारदर्शी, बहुत पतली प्लास्टिक शीट के साथ मिट्टी को ढंकना। यह गैर-फिल्मित क्षेत्र की तुलना में नियंत्रण क्षेत्रों पर तापमान 10-12 डिग्री सेल्सियस तक बढ़ा देता है।
- ✓ **जुताई** - जुताई से खरपतवार मिट्टी के ऊपर आ जाते हैं। यह जड़ और तने की छंटाई की चोट के माध्यम से पौधों को कमजोर कर सकता है, जिससे उनकी प्रतिस्पर्धात्मकता या पुनर्योजी क्षमता कम हो जाती है पूर्व संयंत्र जुताई मौजूदा खरपतवारों को दबाने में मदद करती है।
- ✓ **मल्चिंग** - मल्च मिट्टी की सतह पर एक भौतिक अवरोध प्रदान करता है और सतह तक पहुँचने वाले लगभग सभी प्रकाश को अवरुद्ध करता है ताकि मल्च के नीचे उगने वाले खरपतवारों को जीवित रहने के लिए पर्याप्त प्रकाश न मिले। उदाहरण के लिए- पॉलीथीन शीट, प्राकृतिक सामग्री जैसे धान की भूसी, मूंगफली के छिलके, चूरा आदि। पश्वलीथीन शीट की दक्षता अधिक (अधिक पॉलीथीन) होती है यदि इसे निरंतर शीट में लगाया जाता है। यह वार्षिक खरपतवारों और बारहमासी खरपतवारों के नियंत्रण प्रभावी है।
- ✓ **खेत में पानी भरना** - यह तकनीक धान के खेत में खरपतवारों को नियंत्रित करने की एक विश्वव्यापी फसल पद्धति है।

8. सस्य विधियाँ

उचित फसल स्टैंड और शुरुआती अंकुरण शक्ति - पर्याप्त पौधों की आबादी की कमी से भारी खरपतवार संक्रमण का खतरा होता है, जिसे बाद में नियंत्रित करना मुश्किल हो जाता है। इसलिए, इस तरह की प्रथाएँ अपनानी चाहिये

- सबसे अधिक अपनाई जाने वाली फसलों और फसल किस्मों का चयन
- उच्च व्यवहार्य बीजों का उपयोग
- कीटनाशकों, निष्क्रियता तोड़ने वाले रसायनों और अंकुरण बूस्टर के साथ पूर्व रोपण बीज और मिट्टी का उपचार
- पर्याप्त बीज दर

चयनात्मक फसल अनुकरण- फसल पौधे खरपतवारों के साथ बेहतर प्रतिस्पर्धा करते हैं क्योंकि वे बहुत जल्दी जमीन को बंद कर देते हैं। चयनात्मक अनुकरण इस प्रकार प्राप्त किया जा सकता है

- जिप्सम या चूने जैसे मिट्टी के संशोधनों का उपयोग करके फसल के पक्ष में मिट्टी की स्थिति को ठीक किया जा सकता है।
- उचित मात्रा में उचित प्रकार के खाद और उर्वरकों का उपयोग फसल की वृद्धि में सुधार करता है।
- फसल के बीजों को नाइट्रोजन स्थिरीकरण और फॉस्फोरस घुलनशील जीवों के साथ टीका लगाने से कुछ फसलों जैसे फलीदार फसल और गैर फलीदार खरपतवार के चयनात्मक अनुकरण में मदद मिल सकती है। मक्का, गन्ना, कपास जैसी विस्तृत पंक्ति वाली फसलों में चयनात्मक अनुकरण पोषक तत्वों के पर्णीय अनुप्रयोग द्वारा प्राप्त किया जा सकता है।

- ✓ **उचित रोपण विधि**- कोई भी रोपण विधि जो मिट्टी की सतह को खुरदरा और सूखा छोड़ती है, वह शुरुआती विकास को हतोत्साहित करेगी।

✓ **फसल चक्रण**– एक ही भूमि पर लगातार अलग-अलग फसलें उगाना फसल चक्रण कहलाता है। मोनोक्रश्रपिंग कुछ खरपतवारों की निरंतरता और सहभागिता को बढ़ावा देती है। फसल चक्रण फसल से जुड़े और फसल से बंधे खरपतवारों जैसे कि गेहूं में *एवेना फतुआ* और ल्यूसर्न में *कुसकुटा* को नियंत्रित करने में प्रभावी है। सरसों में ओरोबैंकी प्रजाति को फसल चक्रण द्वारा नियंत्रित किया जा सकता है।

✓ **स्टेल बीज वेड** – इस विधि में अच्छी तरह से तैयार खेत को सिंचाई या बारिश से भिगोकर और खरपतवारों को अंकुरित होने दिया जाता है। इन खरपतवारों को पैराक्वाट जैसे संपर्क शाकनाशियों का उपयोग करके और यांत्रिक तरीकों से नियंत्रित किया जाता है और फिर फसल बोई जाती है।

✓ **प्रतिस्पर्धी फसल**– यह फसल बहुत जल्दी अंकुरित होती है और बड़ी छतरी विकसित करती है, जो कम समय में कुशल प्रकाश संश्लेषण करने में सक्षम होती है। इनमें सतही और गहरी दोनों तरह की जड़ें होती हैं। प्रतिस्पर्धी फसल गैर-प्रतिस्पर्धी फसल की तुलना में जल्दी जमीन को कवर करती है। उदाहरण के लिए, लोबिया, ल्यूसर्न, बरसीम, एवं बाजरा।

✓ **अंतर-फसल उगाना**– अंतर-फसल एकल फसल की तुलना में खरपतवारों को बेहतर तरीके से दबाती है और इस प्रकार खरपतवार प्रबंधन के तरीकों के रूप में फसलों का उपयोग करने का अवसर प्रदान करती है। कई छोटी अवधि की दालें जैसे, हरा चना और सोयाबीन मुख्य फसल की उपज में कमी किए बिना खरपतवारों को प्रभावी ढंग से दबा देती हैं।

✓ **न्यूनतम जुताई**– गहरी और लगातार जुताई कुछ कारणों से उपयोगी हो सकती है, लेकिन यह प्रमुख खरपतवार के बीजों और प्रकंदों को मिट्टी की सतह पर लाने का काम करती है। शून्य जुताई खरपतवार के बीजों को पूरी तरह से दफनाने से बचाती है और वार्षिक खरपतवारों की स्थिरता को कम करती है, लेकिन यह बारहमासी खरपतवारों की जोरदार वृद्धि को प्रेरित करती है।

✓ **ग्रीष्मकालीन जुताई**–ग्रीष्मकालीन जुताई या अश्वफ-सीजन जुताई का अभ्यास फसल की खेती में बारहमासी खरपतवार आबादी की वृद्धि की जाँच करने के लिए प्रभावी सांस्कृतिक तरीकों में से एक है। अप्रैल, मई और जून के महीने में किसान खरपतवारों सहित कई मिट्टी जनित कीटों को नियंत्रित करने के लिए अपनी जमीन को धूप में रखते हैं। बरमूडा घास और नट सेज जैसे उथली जड़ वाले बारहमासी पौधों की जड़ें, प्रकंद और कंद।

9. **रासायनिक विधि** – सड़क के किनारे, बाड़ की कतारों और रास्तों पर खरपतवारों को नियंत्रित करने के लिए सदियों से साधारण नमक, राख आदि का इस्तेमाल किया जाता रहा है। चयनात्मक खरपतवार नियंत्रण में वास्तविक सफलता 1945 में मिली, जब पी.डब्ल्यू. जिमरमैन और ए.ई. हिचकोक द्वारा संयुक्त राज्य अमेरिका और इंग्लैंड में स्वतंत्र रूप से 2,4-डी और एमसीपीए की खोज की गई। 2,4-डी और एमसीपीए दोनों ही अनाज के लिए अत्यधिक चयनात्मक और चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों के लिए उचित पाए गए। कृषि की दृष्टि से विकसित देशों में, कुल कीटनाशकों में से 45% से अधिक खरपतवारनाशकों का उपयोग किया जाता है। भारत में, कुल कीटनाशकों में खरपतवारनाशकों का हिस्सा केवल 8% है।

10. **खरपतवार प्रबंधन के रूप में एलिलोपैथी**– एलिलोपैथी एक प्राकृतिक प्रक्रिया है जिसका उपयोग फसल उत्पादन में जैविक खरपतवार प्रबंधन के लिए एक उपकरण के रूप में किया जा सकता है। खरपतवारनाशकों के प्रति खरपतवार प्रतिरोध से निपटने के लिए नए तरीके विकसित करने के लिए इसका उपयोग किया जा सकता है।

    सफेद सरसों के बीज के अंकुरण को सूरजमुखी के अर्क (*सिनापिस अल्बा* एल.) द्वारा पूरी तरह से दबा दिया गया था। *फेलारिस माइनर, चेनोपोडियम एल्बम., कोरोनोपिस डिडिमस, मेडिकागो पॉलीमोर्फा*, और *रुमेक्स डेंटेटस* सभी को सूरजमुखी के जलीय अर्क (सीवी. सनक्रॉस-42 पत्तियों) से प्राप्त एन्युयोनोन द्वारा बाधित किया गया था।

11. **जैविक विधियाँ**– कीट, शाकाहारी मछलियाँ, अन्य जानवर, रोग फैलाने वाले जीव और प्रतिस्पर्धी पौधे सभी का उपयोग उनकी वृद्धि को रोकने के लिए किया जाता है। जैविक प्रबंधन विधियों का उपयोग करके खरपतवारों को खत्म नहीं किया जा सकता है, हालाँकि खरपतवारों की संख्या को नियंत्रित किया जा सकता है। यह रणनीति सभी प्रकार के खरपतवारों के लिए काम नहीं करती है। जैविक नियंत्रण के लिए सबसे अच्छे लक्ष्य पेश किए गए खरपतवार हैं। शुरुआती अवधि के जैविक खरपतवार नियंत्रण के दो महत्वपूर्ण उदाहरण ऑस्ट्रेलिया में ओपंटिया एसपीपी (काँटेदार नाशपाती) और *लैंटाना* का विशेष कीट जैव एजेंटों के साथ नियंत्रण है।

तालिका 2: खरपतवार नियंत्रण के लिए प्रयुक्त विभिन्न जैव-एजेंट

खरपतवार	जैव–एजेंट	देश	जैव एजेंट का प्रकार
चोंड्रिला जंशिया	*पुकिनिया कोन्ड्रिलिना*	ऑस्ट्रेलिया	पादप रोगजनक
यूपेटोरियम रिपरियम	*एन्टीलोमा कम्पोजिटरम*	यूएसए	पादप रोगजनक
हाइड्रिला वर्टिसिलाटा	*हाइड्रेलिया पाकिस्ताने*	यूएसए	शूट फ्लाई
ओरोबैंकी कॉर्निया	*स्केलेरोटिनिया प्रजाति*	यूएसए	पादप रोगजनक
पार्थेनियम हिस्टेरोफोरस	*जाइगोग्रामा बाइकोलोराटा,* *एपिब्लेमा स्ट्रेनुआना,* *कोनोट्राचेलस एसपी.*	भारत ऑस्ट्रेलिया ऑस्ट्रेलिया	पत्ती खाने वाला भृंग तना खाने वाला कीट तना खाने वाला कीट
रुमेक्स प्रजातियाँ	*यूरोमाइसिस रुमिसिस* *गैस्ट्रोफिसा विरिडुला*	यूएसए यूएसए	पादप रोगजनक बीटल
ट्रिबुलस टेरेस्ट्रिस	*माइक्रोलारिनिस लारेनी*	यूएसए	
सिरसियम आर्वेन्से	*सेप्टोरिया सिरसी*	यूएसए	
साइपरस रोटंडस	*बैक्ट्रा वेरुटाना*	भारत, पाकिस्तान,	
इकाइनो क्लोआ प्रजातियाँ	(चावल के खेतों में) *एम्मालोसेरा एसपी.*	ट्रिपोज एसपीपी स्टेम बोरिंग मॉथ झींगा	

तालिका 3: खरपतवार नियंत्रण में उपयोग किए जाने वाले कुछ वाणिज्यिक माइकोहर्बिसाइड्स

उत्पाद	सामग्री	खरपतवार नियंत्रित
डे–वाइन	*फाइटोफ्थोरा पामिवोरा* के फंगल बीजाणुओं का एक तरल निलंबन। यह खरपतवार में जड़ सड़न का कारण बनता है।	स्ट्रेंगलर–वाइन. (*मोरेनिया ओडोराटा*) खट्टे फलों के बागों में.
कॉलेजो	*कोलेटोट्राइकम ग्लोस्पोरियोडेस* सब स्पी. एस्किनोमोन के फंगल बीजाणुओं से युक्त गीला करने योग्य पाउडर।	संयुक्त वेच (*एस्किनोमोन एसपी*)। चावल के खेतों में। बायोहर्बिसाइड खरपतवार में तने और पत्ती के झुलसने का कारण बनता है।
बाईपोलरिस	*बाइपोलारिस सोर्गिकोला* के कवक बीजाणुओं का निलंबन।	जॉनसन घास (*सोरघम हैलेपेन्स*)
बाईपोलरिस	*स्ट्रेप्टोमाइसेस हाइग्रोस्कोपिकस* के किण्वन उत्पाद के रूप में उत्पादित एक माइक्रोबियल विष।	गैर–विशिष्ट, सामान्य वनस्पति।
लुबोआ–2	*कोलेट्रोट्रीकम ग्लोस्पोरियोडेस*	लुबोआ–2

निष्कर्ष

एकीकृत खरपतवार प्रबंधन एक विज्ञान-आधारित निर्णय लेने वाला दृष्टिकोण है जिसमें खरपतवार की आबादी को आर्थिक सीमा से नीचे करने के लिए एक ही विधि पर निर्भर रहने के बजाय कई खरपतवार नियंत्रण विधियाँ शामिल हैं। यह रणनीति अधिक प्रभावी है क्योंकि एक विधि से बचे हुए खरपतवार को दूसरे तरीके से नियंत्रित किया जा सकता है। नतीजतन, यह तकनीक खेत में बीज बैंक की स्थिति को कम करने में सहायता करती है। खरपतवार वनस्पतियों में बदलाव और खरपतवार पौधों में प्रतिरोध के विकास जैसी कई कठिनाइयों को इस रणनीति का उपयोग करके रोका जा सकता है। आज की आवश्यकता एक एकीकृत खरपतवार नियंत्रण रणनीति की है, और इन अवांछित पौधों से दीर्घकालिक राहत प्राप्त करने के लिए इस पद्धति को बढ़ावा दिया जाना चाहिए। एकीकृत खरपतवार प्रबंधन दृष्टिकोण पर्यावरण के अनुकूल है क्योंकि किसान पूरी तरह से शाकनाशियों पर निर्भर नहीं होता हैं।

खण्ड-ख

ज्वार फसल उत्पादन की उन्नत सस्य तकनीकी

निशा सप्रे
अखिल भारतीय समन्वित ज्वार सुधार अनुसंधान परियोजना,
कृषि महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)

ज्वार घास कुल की एक महत्वपूर्ण मोटे अनाज वाली एक बहुउपयोगी फसल है। इसका उपयोग दाने, पशु आहार एवं बायोफ्यूल बनाने के लिए किया जाता है। वर्षा आधारित कृषि के लिये ज्वार सबसे उपयुक्त फसल है। ज्वार सूखे के लिए सहनशील फसल होती है। अतः यह शुष्क एवं अर्धशुष्क क्षेत्रों की प्रमुख फसल है। भारतवर्ष में सामान्यतः इसे खरीफ/वर्षा ऋतु में उगाया जाता है। वर्षा आधारित कृषि के लिए ज्वार सबसे उपयुक्त फसल है। इसकी जल उपयोग क्षमता गेहूँ एवं धान की अपेक्षा अच्छी होती है अतः कम वर्षा में भी इसकी उपज अच्छी प्राप्त होती हैं है। वर्षा ऋतु में दाने की उपज 45-50 क्विं/हेक्टर एवं हरे चारे की उपज 100-120 क्विंटल/हेक्टर तक प्राप्त होती है। ज्वार की फसल सूखे और जलमग्न दोनी स्थितियों के लिए सहनशील होती है अतः मौसम सहिष्णु फसल होने के कारण मौसम परिवर्तन के आज के परिवेश में ज्वार की फसल को आसानी से प्रचलित फसलचक्र में समावेश किया जा सकता है। संपूर्ण विश्व में ज्वार उत्पादन में भारत का पाँचवा स्थान हैं। भारतवर्ष ज्वार खेती मुख्यतः महाराष्ट्र, कर्नाटक, मध्यप्रदेश, तमिलनाडू, राजस्थान एवं आंध्रप्रदेश में की जाती है। भारतवर्ष के कुल ज्वार उत्पादन का लगभग 57% क्षेत्र महाराष्ट्र एवं कर्नाटक में एवं लगभग 12% मध्यप्रदेश, तमिलनाडू, राजस्थान एवं आंध्र प्रदेश में है। मध्य प्रदेश में इसकी खेती समान्यतः आदिवासी बाहुल्य वाले क्षेत्रों जैसे - अलीराजपुर, झाबुआ, बड़वानी, दतिया, गुना के साथ-साथ खरगोन, खण्डवा, बड़वानी, छिन्दवाड़ा, बैतूल, राजगढ़, रीवा, सागर, ग्वालियर इत्यादि क्षेत्रों में की जाती है। वर्तमान में मध्य प्रदेश में ज्वार की खेती लगभग 1.4 लाख हेक्टेयर क्षेत्रफल में की जा रही है। मध्य प्रदेश में ज्वार का क्षेत्रफल विगत वर्षो से कम होने के बावजूद राज्य की औसत उपज राष्ट्र की औसत उपज से लगभग 27 प्रतिशत अधिक है। ज्वार स्वास्थ के लिए भी बहुत लाभदायक फसल है। इसका आटा ग्लूटीन फ्री होता है एवं रेशे की मात्रा भी अधिक होती है। अतः इसका उपयोग स्वास्थ्य के लिए गेहूँ की अपेक्षा अधिक लाभदायक होता है। उच्च रक्तचाप, मधुमेह एवं गेहूँ के आटे से एलर्जी वाले मरीजों के लिए यह एक बहुत ही उपयोगी फसल है। इसके अलावा ज्वार के दाने से एल्कोहल एवं इसके रस से उत्तम इथेनॉल भी बनाया जाता है। जिसका उपयोग बायोफ्यूल की तरह किया जाता है। इसके अतिरिक्त ज्वार दानों का उपयोग कुक्कुट दानों तथा पशु आहार में भी किया जाता है। यद्यपि ज्वार का प्रत्यक्ष उपभोग कम हो रहा है परंतु प्रसंस्करण उत्पाद जैसे पोहा, रवा, रोस्टेड दाना, पॉप के अतिरिक्त बेकरी उद्योग में शहरी क्षेत्रों के लिए मांग बढ़ रही है।

भूमि का चुनाव एवं खेत की तैयारी

ज्वार उत्पादन के लिए मटियार, दोमट या मध्यम गहरी, पर्याप्त जीवाश्म एवं 6.0 से 8.0 पी.एच. वाली मृदा सबसे उपयुक्त होती है। भूमि में पानी का निकास अच्छा होना चाहिये। इसके अतिरिक्त हल्की एवं बलुई भूमि में भी इसकी खेती आसानी से की जा सकती है। भूमि उर्वरकता, खरपतवार एवं कीट नियंत्रण की दृष्टि से ग्रीष्म कालीन गहरी जुताई 3 साल में एक बार आवश्यक है। बुवाई के समय खेत को ट्रेक्टर से चलने वाले कल्टीवेटर या बैलजोडी से चलने वाले बखर से जुताई कर जमीन को अच्छी तरह से भुरभुरी कर ले एवं इस समय 5 टन/हेक्टेयर हिसाब से गोबर की खाद मृदा में अच्छी तरह से मिला दें एवं पाटा चला कर समतल कर बोनी हेतु तैयार कर ले।

उपयुक्त जलवायु

मध्य प्रदेश के उन क्षेत्रों में जहां 450 से 700 मि.ली. औसत वर्षा तथा अधिकतम तापमान 37 से 40 डि.से. एवं न्यूनतम तापमान 10-12 डि.से. ज्वार फसल उत्पादन के लिए उपयुक्त होता है।

उन्नत किस्में :- मध्यप्रदेश के लिए अनुशंसित किस्मों के बारे में विवरण तालिका क्रमांक-1 में दिया गया है ।

तालिका 1: सम्पूर्ण देश एवं मध्यप्रदेश के लिए अनुशंसित किस्में

क्र.	किस्म	पकने की अवधि	पैदावार किलोग्राम /हेक्टर		टिप्पणी
			अनाज	कडबी	
(अ)	संकर किस्में				
1	सी.एस.एच. 14	90-95	3000-3200	9000-9500	अंतरवर्तीय खेती के लिए उपयुक्त
2	सी.एस.एच. 16	105-110	4000-4200	9000-9500	सम्पूर्ण देश के लिए अनुशंसित
3	सी.एस.एच. 17	100-105	3800-4200	9000-9500	सम्पूर्ण देश के लिए अनुशंसित
4	सी.एस.एच. 18	110-112	3800-4400	12000-13000	सम्पूर्ण देश के लिए इन्दौर में विकसित
5	सी.एस.एच. 23	105-110	3500-4000	10000-11000	सम्पूर्ण देश के लिए अनुशंसित
6	सी.एस.एच. 25	100-105	3500-4000	11000-12000	सम्पूर्ण देश के लिए अनुशंसित
7	सी.एस.एच. 30	110-115	3500-4000	11000-12000	सम्पूर्ण देश के लिए अनुशंसित
(ब)	विपुल उत्पादन वाली किस्में				
1	राज विजय ज्वार-1862	110-115	3500-4000	12000-13000	सम्पूर्ण मध्य प्रदेश के लिए विकसित ज्वार की नई किस्म
2	जवाहर ज्वार 938	110-115	3300-3500	12000-13000	सम्पूर्ण मध्य प्रदेश के लिए
3	जवाहर ज्वार 1041	110-115	3300-3600	12500-13000	सम्पूर्ण मध्य प्रदेश के लिए
4	जवाहर ज्वार 1022	100-105	3000-3300	9500-10000	सम्पूर्ण मध्य प्रदेश में हल्की जमीन व कम वर्षा वाले क्षेत्रों के लिए उपयुक्त
5	राज विजय ज्वार-2357	108-110	3500-4200	1300-14000	सम्पूर्ण मध्य प्रदेश में हल्की जमीन व कम वर्षा वाले क्षेत्रों के लिए उपयुक्त
6	सी.एस.वी. 31	110-115	3300-3500	10000-11000	सम्पूर्ण देश के लिए अनुशंसित
7	सी.एस.वी. 17	110-115	3300-3600	12000-12500	सम्पूर्ण देश के लिए अनुशंसित
8	सी.एस.वी. 36	110-115	3300-3500	10000-11000	सम्पूर्ण देश के लिए अनुशंसित
9.	सी.एस.वी. 39	110.115	3300-3500	10000-11000	सम्पूर्ण देश के लिए अनुशंसित
10	सी.एस.व्ही. 27	112-115	2800-3000	18000-19000	सम्पूर्ण मध्य प्रदेश में हल्की जमीन व कम वर्षा वाले क्षेत्रों के लिए उपयुक्त

सी.एस.व्ही. 54 (इथेनाल के लिए किस्म)

- पकने की अवधि 121-127 दिन
- हरा जैव भार उपज - 50 टन/हेक्टर
- शुष्क जैव भार उपज 26 टन/हेक्टर
- इथेनॉल की उपज 360 ली./टन शुष्क भार

जवाहर ज्वार 1041

जवाहर ज्वार 2357

राज विजय ज्वार 1862

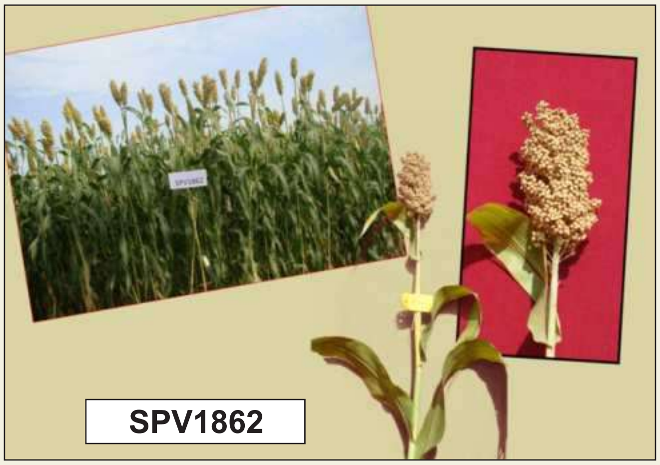

SPV1862

बीज उपचार :

फसल को बीज एवं मृदा जनित बीमारियों से बचाने के लिए फफूंद नाशक दवा मेटालेक्सिल 25 डब्ल्यु.पी. 1 ग्राम दवा के पश्चात् थायामिथोक्झाम 70 डब्ल्यू. एस. की 3 ग्राम दवा प्रति किलो बीज के हिसाब से उपचारित करें। तत्पश्चात् बोवनी के पूर्व 10 ग्राम एजोस्प्रिलियम एवं पी.एस.एम. कल्चर का उपयोग प्रति किलो बीज के हिसाब से अच्छी तरह मिलाकर करें। कल्चर के उपयोग से ज्वार की उपज में 17.6 प्रतिशत वृद्धि की जा सकती है।

बुवाई का उपयुक्त समय :

ज्वार मुख्यत: खरीफ के मौसम में बोई जाती है, परंतु उत्पादन की दृष्टि से ज्वार की फसल को मानसून आने के एक सप्ताह पूर्व सूखे में बोनी करने से उपज में 22.7 प्रतिशत वृद्धि पायी गयी है एवं तना मक्खी का प्रकोप कम होता है।

ज्वार फसल में बुवाई समय का प्रबंधन

बीज दर

बीज दर, बुवाई की विधि पर निर्भर होती है। साधारणतया एकल फसल के लिए 5.0 किलो ग्राम बीज/हेक्टेयर आवश्यक होता है। अन्तर्वर्तीय फसल पद्धति में बीज दर अन्तर्वतीय फसल की कतारों के अंतर व कतारों के अनुपात पर निर्भर होती है। साधारणतया एक हेक्टर क्षेत्र के लिए लगभग 8-10 किलोग्राम स्वस्थ एवं 80 से 85 प्रतिशत अंकुरण क्षमता वाला बीज पर्याप्त होता है।

बुवाई की विधि गहराई एवं कतारों का अन्तर

ज्वार के बीज की बुवाई 5-7 से.मी. की गहराई पर भूमि के प्रकार एवं भूमि में उपलब्ध नमी के अनुसार करना चाहिए। अच्छे अंकुरण के लिए बीज की बुवाई पर्याप्त नमी में करना चाहिये। बीज शैया का तापमान 15-20 से.ग्रे. उचित होता है। कतार से कतार की दूरी 45 से.मी. तथा पौधें से पौधें की दूरी 12-15 से.मी. रखनी चाहिए। ज्वार की विपुल उत्पादन देने वाली जातियों तथा संकर जातियों में पौध संख्या 1,80,000 (एक लाख अस्सी हजार) प्रति हेक्टर रखने की अनुसंशा की जाती है।

ज्वार की बुवाई बीज सह उर्वरक सीड ड्रिल या बैल चलित सीड ड्रिल से कतारों में करना लाभप्रद पाया गया है एवं इसे अनुमोदित भी किया गया है। यदि ज्वार की बोवनी रिज एवं फरों विधि से की जाती है तो सामान्य सीड ड्रिल की अपेक्षा 28 प्रतिशत अधिक उत्पादन एवं लगभग 14 प्रतिशत नमी संरक्षित की जा सकती है। इस विधि से सुखें कालखंड या अधिक वर्षा की स्थिती में फसल उत्पादन पर विपरित प्रभाव नहीं पड़ता। अत: इस विधि से बोवनी की जाना कई दृष्टि से फायदेमंद सिद्ध हुआ है।

पौध विरलन

ज्वार के लिए सामान्यत: सिफारिश की गई बीज दर का उपयोग कर उचित मृदा नमी में करने से पर्याप पौध संख्या प्राप्त होती है । उचित पौध संख्या बनाये रखने के लिए (1,80,000) एक लाख अस्सी हजार प्रति हेक्टर पौध विरलन बुवाई के दो सप्ताह बाद या जब पौधे 8-10 से.मी. ऊँचे हो जाये तब आवश्यकता से अधिक पौधे निकाल कर करना चाहिए।

कुड एवं नाली पद्धति से ज्वार की बुआई

ज्वार के साथ अंतरवर्तीय फसले

ज्वार विभिन्न दलहनी एवं दूसरी फसलें जैसे लघु धान्य के साथ मिश्रित फसल के रूप में उगाई जाती है। ज्वार की दो कतारें तथा सोयाबीन की दो कतारे 30 से.मी. (2:2) एकान्तर प्रणाली में बोनी करने से ज्वार की पूरी उपज और सोयाबीन की लगभग 6 से 8 क्विंटल प्रति हेक्टर उपज मिलती है। इसी तरह यदि 45 से.मी. की दूरी पर ज्वार की 4 कतारे और 45 से.मी. की दूरी पर तुवर की दो कतारें (4:2) अथवा ज्वार की दो कतार एवं तुवर की एक कतार (2:1) एकान्तर प्रणाली द्वारा सम्पूर्ण खेत की बोवनी करने से ज्वार की पैदावार में आंशिक कमी आयेगी, परंतु तुवर की लगभग 6-8 क्विंटल अतिरिक्त उपज प्रति हेक्टर भी प्राप्त होगी।

ज्वार एवं अरहर की अंतरवर्तीय फसल (2:1) कतार अनुपात

खाद एवं उर्वरक

गोबर की खाद अथवा कम्पोस्ट खाद उपलब्ध हो तो पॉच टन प्रति हेक्टेयर देना लाभदायक पाया गया है। अच्छी उपज के लिये 80 किलो ग्राम नत्रजन, 40 किलो स्फुर, तथा 40 किलो ग्राम पोटाश प्रति हेक्टर देना चाहिये। बोनी के समय नत्रजन की आधी मात्रा तथा स्फुर और पोटाश की पूरी मात्रा बीज सह उर्वरक सीड़ ड्रिल से देना चाहिऐ। नत्रजन की शेष मात्रा जब फसल 30-35 दिनों की हो जाये, या पौधे जब घूटनों की ऊंचाई के हो तब पौधों से लगभग 10-12 से.मी. की दूरी पर साईड ड्रेसिंग के रूप में देकर डोरा चलाकर भूमि में मिला दें।

निदाई गुड़ाई (समय एवं विधि)

ज्वार फसल पर खरपतवार नियंत्रण हेतु कतारों के बीच व्हील हो या डोरा बोअनी के 15 से 20 दिन बाद एवं 30 से 35 दिन बाद चलावें। इसके पश्चात कतारों के अंदर हाथों द्वारा निंदाई करें।

फसल संरक्षण (रसायन एवं एकीकृत प्रबंधन)

(अ) खरपतवार नियंत्रण

ज्वार में रासायनिक खरपतवार नियंत्रण के लिए एट्राजीन 0.5-1.0 किलो प्रति हेक्टर सक्रिय तत्व को 500 लीटर पानी में मिलाकर बोनी के तुरंत एवं अंकुरण के पूर्व छिडकाव करें।

ज्वार आधारित अन्तर्वर्तीय फसल में प्रभावी खरपतवार नियंत्रण हेतु एलाक्लोर खरपतवारनाशी की 1.5 किलोग्राम सक्रिय तत्व की 75 प्रतिशत मात्रा को 500 लीटर पानी में मिलाकर अंकुरण के पूर्व छिडकाव करने से अधिक उपज एवं आय मिलती है। अगिया की रोकथाम कi लिए 2-4 डी का सोडियम साल्ट, 2 किलो सक्रिय तत्व प्रति हेक्टर का छिडकाव करें। जब अगिया की संख्या कम हैं तब इसे उखाडकर नष्ट कर दें।

ज्वार फसल में खरपतवार प्रबंधन का प्रभाव

कीट नियंत्रण

ज्वार की फसल में अनेक प्रकार के कीट पाए जाते है इनमें प्रमुख रूप से तना छेदक मक्खी यानि शूट फ्लाय, तना छेदक इल्ली यानी स्टेम बोरर और भुट्टो के कीट इनमें मुख्यत: मिज मक्खी, भुट्टो की बग एवं विभिन्न प्रकार की इल्लियों से भुट्टों को भी हानि पहुँचाई जाती है।

तना छेदक इल्ली

इस कीट की वयस्क मादा मक्खी पत्तों की निचली सतह पर 10 से लेकर 80 के गुच्छों में अंडे देती है जिनसे 4 से 5 दिनों में इल्लियां निकलकर पत्तों के भोगंलों में प्रवेश करती है। तनों के अंदर वे सुरंग बनाती है और अतंत: नाडा बनाती है इस कीट की पहचान पत्तों में बने छेदों से की जा सकती है। जो इल्लियां भोगंलों में प्रवेश के समय बनाती है।

तना छेदक मक्खी

यह कीट वयस्क घरेलू मक्खी की तुलना में आकार में छोटी होती है। इसकी मादा पत्तों के नीचे सफेद अंडे देती हैं। इन अंडे से 2 से 3 दिनों में इल्लियां निकलकर पत्तों के भोगंलों से होते हुवे तनो के अंदर प्रवेश करती है और तनों के बढने वाले भाग को खा कर खत्म करती है यानी नाड़ा बनाती है। ऐसे पौधों में भुट्टे नही बन पाते।

तना छेदक इल्ली का नाडा

तना छेदक मक्खी का नाडा

भुट्टो के कीट

इनमें मीज मक्खी प्रमुख है। सामान्यत: तापमान जब गिरने लगता है तब कीट दिखाई देता है। इस कीट की वयस्क मादा मक्खी नारंगी-लाल रंग की होती है। जो फूलों के अंदर अंडे देती है, अंडो से 2 से 3 दिन में इल्लियां निकलकर फूलों के अंडकोपो को खाकर नक्ट करती है। परिणामस्वरूप भुट्टो में कई जगह दाने नही बन पाते।

भुट्टो के कीट

एकीकृत कीट प्रबंधन

- गर्मी में खेतों की गहरी जुताई तीन वर्ष में एक बार करने से कीटों की सुसुप्त अवस्थाऐं नष्ट हो जाती है। परिणाम स्वरूप कीट प्रकोप में कमी देखी जाती है।
- ज्वार कटाई के तुरन्त बाद फसल अवशेषों को उखाड़कर नष्ट करें या कम्पोस्ट बनाऐं ।
- तना छेदक मक्खी को आकर्षित करने के लिए मछली पाउडर प्रपंच 10-12 प्रति हेक्टेयर की दर से फसल अवस्था 30-35 दिन तक ही खेतों में लगायें ।
- ज्वार की फसल को मानसून आने के एक सप्ताह पूर्व सुखें में बोवनी की जाने से कीटों से हानि कम देखी गई है।
- समय समय पर ग्रसित डेडहार्ट (यानी नाड़ा) को 20-45 दिन की फसल अवस्था में निकाल कर नष्ट करना चाहिए।

- बीज के नीचे बोवनी के समय टेमिक-10 जी. दानेदार दवा 10-15 किलो प्रति हेक्टेयर की दर से डालना चाहिऐं। यदि बोवनी किसी कारणवश देरी से की जाती है तो बीज दर सवाया की जानी चाहिए।
- बोनी पूर्व बीजोपचार थायोमिथेक्झाम 30% एफ.एस. की 3 मि.ली. प्रति किलो बीज की दर से करने से तनाछेदक मक्खी तथा इल्ली के प्रकोप को कम किया जा सकता है।
- बोवनी के 30-35 दिनों की अवस्था में पौधों की पत्तियों के भोंगलो में कार्बोफ्यूरान 3 प्रतिशत दानेदार कीटनाशक दवा के 5-6 दाने प्रति पौधों के मान से डालने से तना छेदक इल्ली का प्रकोप काफी हद तक कम किया जा सकता है। इस प्रकार दवा की मात्रा 8-10 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर उपयोगी होती है।
- इयर हेड बग, भुट्टे की मीज या विभिन्न प्रकार की इल्लियों का प्रकोप आर्थिक क्षतिस्तर अवस्था पर हो तो साइपरमेथ्रिन 25 ई.सी. 0.05 मि.ली. प्रति लीटर पानी के मान से सिर्फ एक बार छिड़काव करें।

रोग नियंत्रण

संकर एवं उन्नत किस्मों की पत्तियों पर पर्ण चित्ती रोग कम दिखाई देते है क्योकि उनमें इन रोगों के लिए प्रतिरोधिकता का आनुवाशिक गुण है। कंडवा रोग भी उन्नत किस्मों में नही दिखाई देता। पौध सड़न अथवा कंडवा का नियंत्रण बीज को कवकनाशी दवा से उपचारित करने से संभव है चुंकि ज्वार की नई किस्में लगभग 100 से 115 दिनों में पकती है, दाने पकने की अवस्था में वर्षा होने से दानों पर काली अथवा गुलाबी रंग की फफूंद की बढवार दिखाई देती है। दाने पोचे हो जाते है, उनकी अंकूरण क्षमता कम हो जाती है, ऐसे दाने मानव आहार के लिये उपयुक्त नही होता है।

भुट्टे का मोल्ड

देरी से बोई गई ज्वार फसल एवं देरी तक वर्षा अर्थात सितम्बर के अंत से अक्टूबर माह के बीच होने पर भुट्टों के दानों में मोल्ड नामक बीमारी की संभावना होती है। अत: इसके नियंत्रण के लिये प्रोपिकोनाझोल 0.02 प्रतिशत का छिड़काव फूल की अवस्था तत्पश्चात 10-15 दिन के अंतराल पर पुन: दोहराया जा सकता है।

दानों में मोल्ड

एर्गौट

एर्गौट: यह बीमारी ज्वार में फूल आने की अवस्था में आती है। यह एक कवक जनित बीमारी है जो कि ज्वार के फूलों के अंडाशय को संक्रमित करती हैं और उन्हे सफेद, कवकीय व चिपचिपे द्रव्य में बदल देती है।

डाउनी मिल्ड्यु : इस बीमारी के प्रबंधन के लिए गर्मी में गहरी जुताई करना चाहिए। यदि बीमारी प्रतिवर्ष देखी जाय तो मेटालेक्सिल 25 प्रतिशत डब्ल्यू पी. 1 ग्राम दवा प्रति किलोग्राम बीज की दर से बीजोपचार करना चाहिए, तत्पश्चात यदि पत्तों पर बीमारी दिखाई दे तो मेटालेक्सिल एम. झेड. 3 ग्राम प्रति लीटर पानी के घोल का छिड़काव करें ।

फसल की कटाई एवं गहाई

फसल की कटाई कार्यकीय परिपक्वता पर करना चाहिये। ज्वार के पौधों की कटाई कर के ढेर लगा देते है। बाद में पौध से भुट्टो को अलग कर लेते है तथा कडबी को सुखाकर अलग ढेर लगा देते है, यह बाद में जानवरों को खिलाने में काम आती है भुट्टों को ट्रेक्टर या बैलों से गहाई करना चाहिए। दानों को सुखाकर जब नमी 10 से 12 प्रतिशत हो तब भंडारण करना चाहिए।

लाभ एवं लागत अनुपात

ज्वार की फसल उत्पादन में औसतन लागत रूपये 30,000/- प्रति हेक्टेयर सामान्यत: आती है। जिससे लगभग रूपये 88,450/-की आमदनी प्राप्त की जा सकती है। परिणाम स्वरूप शुद्ध आय लगभग रूपये 58,450/- प्राप्त की जा सकती है। जिसका औसतन अनुपात 2.95 आसानी से प्राप्त किया जा सकता है।

प्रान्तीय ईर्ष्या-द्वेष को दूर करने में जितनी सहायता इस हिंदी प्रचार से मिलेगी, उतनी दूसरी किसी चीज से नहीं मिल सकती ।

- सुभाषचंद्र बोस

सफेद मूसली की खेती

कनिका उपाध्याय
उद्यानिकी एवं वानिकी महाविद्यालय, झालावाड़
कृषि विश्वविद्यालय, कोटा (राज.)

सफेद मूसली का वानस्पतिक नाम *क्लोरोफाइटम बोरिविलेनम* है इसकी जड़ें कई तरह की दवाइयां बनाने के लिए प्रयोग की जाती है। यह एक वार्षिक जड़ी-बूटी है, जिसकी औसतन ऊंचाई 1-1.5 फुट होती है। इसके पत्तें सितारे के आकार, 2 से.मी. तिरछे और पीले-हरे रंग के होते है। इसके फल हरे से रंग के और मुख्य रूप से जुलाई-दिसंबर में लगते है। इसकी जड़ें गुच्छे में और काले बीजों वाली होती है। भारत में उष्ण और उप-उष्ण वाले क्षेत्र जैसे- असम, महाराष्ट्र, आंध्र-प्रदेश और कर्नाटक सफेद मूसली उगाने वाले क्षेत्र है। सफेद मूसली देशी औषधीय पौधों की 20-विषम प्रजातियों में से एक है जो व्यापक चिकित्सीय अनुप्रयोगों और एक विशाल वैश्विक बाजार का आनंद लेती है। इसमें शुक्राणुजन्य गुण होते हैं और यह नपुंसकता को ठीक करने में मदद करता है क्योंकि यह ग्लाइकोसाइड्स से भरपूर होता है। इसकी फासीकुलेटेड जडों में सैपोनिन होता है और आयुर्वेदिक औषधीय प्रणाली में स्वास्थ्य को बढावा देने वाली दवा या टॉनिक के रूप में उपयोग किया जाता है।

सफेद मूसली की उन्नत किस्में

सामान्य सफेद मूसली की कई प्रजातियां होती है, लेकिन सफेद मूसली की एमसीबी -405, एमसीबी - 412, एमसीटी -405, एमडीबी 13 और 14 की प्रजातियों को ही प्रमुख माना जाता है। इसमें जड़ों की मोटाई भी एक समान होती है, जिससे इसकी बाजार में अच्छी कीमत भी मिलती है। इसके अलावा *क्लोरोफाइटम ट्यूवरोजम, क्लोरोफाइटम एटेनुएटम, क्लोरोफाइटम बोरिमिलियनम* और *क्लोरोफाइटम वोरिविलिएनम* भी सफेद मूसली की मुख्य प्रजातियां है।

सफेद मूसली का पौधा

जलवायु एवं मृदा

सफेद मूसली की खेती के लिए गरम और आर्द्र जलवायु वाले इलाके, जहां औसत सालाना बारिश 60 से 115 सेंटीमीटर तक होती है। ऐसे इलाकों को इसकी खेती के लिए उपयुक्त माना गया है। सफेद मूसली के लिए दोमट, रेतीली दोमट, लाल दोमट और कपास वाली लाल मिट्टी जिस में जीवाश्म काफी मात्रा में हों, अच्छी मानी जाती है। खेती के लिए खेत की मिट्टी का पीएच मान 7.5 तक होना चाहिए। ज्यादा पीएच मान वाले भूमि में इसकी खेती करने से बचे। सफेद मूसली की जड़ें औषधीय महत्व की हैं। अतः इसकी खेती हेतु जमीन थोड़ी नर्म होनी चाहिए जिससे जड़ें अधिक विकसित हो सकें। अच्छी जल निकासी वाली रेतीली व लवणीय मिट्टी जिसमें जीवाश्म की पर्याप्त मात्रा हो, इसकी खेती के लिए सर्वश्रेष्ठ मानी जाती है। ज्यादा नर्म मिट्टी होने पर कंद पतली रह जाती है तथा ज्यादा पोली जमीन अनुपयुक्त होती है। इसकी खेती हेतु पानी की काफी आवश्यकता होती है। इसे साधारणतः जून माह में लगाया जाता है तथा जून-जुलाई-अगस्त महीनों में प्राकृतिक वर्षा होती रहती है, परन्तु यदि वर्षा न हो तो 10 दिन के बाद खेत में पानी देना उपयुक्त रहता है। पौधे के पत्ते सूखकर झड़ने के बाद भी हल्की सिंचाई करनी चाहिए जिससे जड़ों का उचित विकास हो सके।

प्रवर्धन एवं बीजशैय्या

सफेद मूसली के लिए जून माह का प्रथम या द्वितीय सप्ताह बुवाई के लिए उपयुक्त होता है। बारिश से पहले यानि मई माह में जमीन को एक-दो बार जोतकर सिंचाई के दौरान जमीन में नमी तैयार कर सफेद मूसली के बीज को रोपा जाता है। सफेद मूसली की बिजाई के लिए उचित समय जून से अगस्त तक का होता है। पौधे के विकास के अनुसार पौधों के बीच 10-12 इंच का फासला रखे। इसकी बिजाई नए पौधे मुख्य खेत में रोपाई करके की जाती है। सफेद मूसली के बीजों की रोपाई में 4 से 5 क्विंटल बीज प्रति हेक्टेयर के हिसाब से लगता है, बीजों की रोपाई हाथ द्वारा या सीड ड्रिल मशीन की मदद से बुवाई कर सकते है। सफेद मूसली की बुआई के लिए पूर्व की फसल से निकाली गई कंदों का प्रयोग किया जाता है। यदि एक पौधे में 20 फिंगर्स हैं, तो उससे 20 बीज बनाए जा सकते हैं। इसके छोटे कंदों को बीज के रुप में प्रयोग कर सकते है।

सफेद मूसली की जड

खाद एवं उर्वरक

सफेद मूसली की खेती में अधिक उवर्रक की जरूरत नहीं होती है, क्योकि इसमें रासायनिक उवर्रक का अधिक उपयोग होने से फसल की गुणवत्ता प्रभावित होती है। जिससे इसकी फसल को बाजार में उचित दाम नहीं मिल पाते है इसलिए इसकी फसल को उपजाने में गोबर की खाद तथा वर्मी कम्पोस्ट खाद का ही इस्तेमाल करे। इसके इस्तेमाल से फसल में फंगस जैसे रोगो का भी असर कम देखने को मिलता है।

पौध लगाने की दूरी

एक एकड़ में सफेद मूसली के लगभग 80 हजार पौधे लगाए जाते हैं। इसके बीजो की रोपाई में दो लाइनों के बीच में तकरीबन 20 सेंटीमीटर की दूरी होनी चाहिए तथा लगाए जा रहे बीजो के बीच में 10 सेंटीमीटर की दूरी होनी चाहिए। बीजों की रोपाई करते समय यह जरूर ध्यान दे, कि रोपाई में इस्तेमाल किये जा रहे गुच्छो के अंदर 2 या 3 फिंगर जरूर हो, रोपाई के बाद इन गढ्ढो को ठीक से ढक दे। खेत में बीजों को लगाने के पश्चात खेत की सिंचाई को कर देना चाहिए, बारिश के मौसम के अनुसार जरूरत पड़ने पर ही सिंचाई करे।

खरपतवार नियंत्रण

सफेद मूसली की फसल में खरपतवार पर नियंत्रण के लिए इसे अधिक देख-रेख की आवश्यकता होती है, क्योकि इसकी जड़ो को किसी भी तरह के नुकसान से बचाना होता है। इसलिए खेत में बुवाई के लगभग 15 से 20 दिन उपरांत निराई-गुडाई कर देना चाहिए, और समय समय पर खेत में खरपतवार दिखने पर उसे हाथ से निकालते रहना चाहिए।

दैहिक विकार

सफेद मूसली के पौधों में किसी खास तरह के रोग देखने को नहीं मिलते है, किन्तु इसके बीजों को खेत में लगाते समय उपचारित नहीं किया गया तो पौधों में कवक और फफूंद जैसे रोग लग जाते है, यह रोग कीट रोग होते है। इसलिए खेत में खरपतवार नियंत्रण पर अधिक ध्यान देना चाहिए। इसके बावजूद अगर फसल में रोग लग जाते है, तो उसकी रोकथाम के लिए पौधों पर बायोपैकूनील या बायोधन दवाई का उचित मात्रा में छिडकाव करना चाहिए, इसके अतिरिक्त ट्राईकोडर्मा की तीन किलो की मात्रा को गोबर की खाद में मिलाकर छिडकाव कर दे।

तुडाई एवं भंडारण

सफेद मूसली की फसल नवम्बर माह के अंत तक खुदाई के लिए तैयार हो जाती है, किन्तु खुदाई करने से पहले यह जरूर देख ले कि फसल खुदाई के लिए तैयार हो गयी है या नहीं, जिसकी पहचान पौधों को देख कर की जा सकती है। फसल के तैयार हो जाने के बाद पौधे की पत्तिया पीली पड कर सुख जाती है, और छिलका भी कठोर हो जाता है, इसके अलावा जड़ो का रंग गहरा भूरा हो जाता है। इसके बाद खेत में पानी डालकर जड़ो की खुदाई कर निकल ले। यदि आप चाहे तो फसल के तैयार होने के तीन महीने के बाद तक इसकी खुदाई कर सकते है। तब तक इसकी जड़े बिल्कुल सूख जाती है। ऐसा इसलिए किया जाता है, जिससे इसकी जड़ो से बीज तैयार हो जाये। इसके लिए मूसली के ऊपरी भाग को हटाकर उस पर मिट्टी चढा दे। मूसली की जड़ो को निकालने से पहले खेत में पानी छोड दे, इससे मूसली की जड़ो को भूमि से निकलने में आसानी होती है, और जड़े टूटती भी नहीं है। जब मूसली की जड़ो को खेत से खुदाई कर निकल लिया जाता है। तब उसे चाकू की सहायता से अंगुली नुमा बनी जड़ो को अलग कर लेना चाहिए इसके बाद इस अलग की हुई अंगुलियों को पानी में डाल कर साफ कर मिट्टी हटा लेना चाहिए और चाकू से इसके छिलके को निकल दे। छिलका निकालने के बाद फिर इसे पानी में डाल कर साफ कर ले इन साफ हुई जड़ो का रंग भूरा दिखाई देने लगता है। इसके बाद इन्हें अच्छे से सुखाने के लिए चार से पांच दिन के तक धूप में रख दे। जब यह जड़े सूख जाती है, तब इन्हे पैकिंग कर बाजार में बेच दिया जाता है।

उपज एवं आर्थिक लाभ

सफेद मूसली की पैदावार की बात करे तो एक हेक्टेयर में यह लगभग 12 क्विंटल तक की पैदावार देती है। सूखी हुई मूसली की पैदावार लगभग 4 क्विंटल से अधिक होती है, बाजार में सफेद मूसली की कीमत 500 रुपये प्रति किलो है। इसकी फसल से 4 से 5 लाख तक की कमाई कर सकते है।

सफेद मूसली के फायदे

गाजर उत्पादन की उन्नत तकनीक

मुकेश कुमार मीणा, अर्चना अनोखे एवं जी.आर. डोंगरे
भाकृअनुप-खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)

गाजर की खेती वैसे तो पूरे देश में की जाती है लेकिन उत्तर प्रदेश, बिहार, राजस्थान, महाराष्ट्र, एवं कर्नाटक में बड़े स्तर पर की जाती है। यह एक जड़ वाली महत्वपूर्ण फसल है। गाजर का उपयोग मुख्यत: सब्जी, सलाद, अचार, जूस, मुरब्बा और मिठाई आदि बनाने के लिए किया जाता है और गाजर का ऊपरी पत्ती वाला भाग पशुओं के आहार के लिए उपयोग में लिया जाता हैं। गाजर जड़ वाली फसलों में सबसे ज्यादा स्वादिष्ट फसल मानी जाती हैं तथा इसमें अनेक गुण मौजूद होते हैं। इसमें आयरन, कॉपर, मैग्नीज, विटामिन ए, विटामिन सी, विटामिन के, फोलेट, पैटोथेनिक एसिड आदि तत्व भरपूर मात्रा में पाये जाते हैं। ये तत्व कोलेस्ट्रॉल का स्तर सामान्य रखने में मदद करते हैं, जो दिल का दौरा पड़ने के खतरे को कम करता है। गाजर में 'विटामिन ए' भरपूर होने के कारण आंखों की रोशनी बनाये रखने में लाभकारी होता हैं, इसमें पाया जाने वाला कैरोटिन बालों के लिए अच्छा होता हैं। यदि गाजर की खेती वैज्ञानिक तकनीक से करें, तो इसकी फसल से अच्छा उत्पादन और लाभ प्राप्त किया जा सकता है।

उपयुक्त जलवायु:

यह एक शीतकालीन फसल है। इसके बीज अंकुरण के लिए 8-24 डिग्री सेन्टीग्रेड तापमान तथा जड़ों की अच्छी वृद्धि के लिए 17-24 डिग्री सेन्टीग्रेड तापमान उपयुक्त रहता है। जड़ों के अच्छे रंग और अच्छे आकार के लिए 15-22 डिग्री सेन्टीग्रेड तापमान उपयुक्त रहता है। गाजर के रंग तथा आकार पर तापमान का बड़ा असर पड़ता है।

भूमि का चयन

गाजर की खेती विभिन्न प्रकार की मिट्टी में की जा सकती है, परन्तु उचित जल-निकास वाली जीवांश युक्त रेतीली अथवा हल्की रेतीली दोमट मिट्टी इसकी खेती के लिए उत्तम होती है। भारी मिट्टी में इसकी जड़ो का आकार और रंग अच्छा नहीं बन पाता। 6.5-7 पीएच मान वाली भूमि इसकी खेती के लिए उपयुक्त मानी जाती है, परन्तु इसे लगभग 8 पीएच मान तक सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है।

खेत की तैयारी

गाजर की अच्छी फसल के लिए भूमि को अच्छी तरह से तैयार करना अत्यन्त आवश्यक है। भूमि की 12-15 इंच की गहराई तक अच्छी तरह से जुताई करनी चाहिए, जिसके लिए एक बार तवा हल (डिस्क प्लाऊ) से गहरी जुताई तथा तीन-चार बार हैरो चलाकर पाटा लगा देना चाहिए, ताकि मिट्टी एकदम भुरभुरी हो जाये।

उन्नत किस्में

अच्छे गुणों वाली मोटी, लम्बी, लाल या नारंगी रंग की जड़ों वाली गाजर अच्छी मानी जाती है। गाजर के जड़ के बीच का कठोर भाग कम और गूदा अच्छा होना चाहिए। गाजर की किस्मों को मुख्यत: दो वर्गों में बांटा जा सकता है, जो इस प्रकार है, जैसे- यूरोपियन किस्में एवं एशियाई किस्में।

यूरोपियन किस्में:

इसकी प्रमुख किस्में नैन्टीज, पूसा यमदागिनी, चैन्टने आदि है। इन गाजर किस्मों को ठण्डे तापमान की आवश्यकता होती है। यह किस्में गर्मी सहन नहीं कर पाती है। इसलिए इसकी बुवाई के लिए अक्टूबर-नवंबर का समय उपयुक्त होता है. इसकी जड़े सिलैंड्रीकल, मध्यम लम्बी, पुंछनुमा सिरेवाली और गहरे नारंगी रंग की होती है।

एशियाई किस्में:

ये गाजर की किस्में अधिक तापमान सहन कर लेती है, जो इस प्रकार है, जैसे:- गाजर न-29, दुर्गा-4, पूसा केशर, पूसा मेघाली, हिसार गेरिक, पूसा रुधिर, पूसा आंसिता, पूसा जमदग्नि, हिसार रसीली, हिसार मधुर और चयन न-223 प्रमुख है। इनकी अगेती बुवाई अगस्त से सितम्बर में की जाती है। हालाँकि इसकी बुवाई अक्टूबर तक की जा सकती है।

बीज मात्रा

गाजर के बीज की मात्रा बीज की गुणवत्ता, भूमि का प्रकार एवं बुवाई के समय आदि पर भी निर्भर करता है, लेकिन सामान्यत: प्रति हेक्टेयर के लिए 4 से 6 किग्रा तक बीज की आवश्यकता होती है। अगेती फसल की बुआई हेतु अपेक्षाकृत अधिक बीज की आवश्यकता पड़ती है जो प्रति हैक्टेयर 5 से 8 किग्रा तक हो सकती हैं। हल्की क्षारीय भूमि में बुवाई पश्चात पपड़ी बनने की दशा में सघन बुवाई करने की वजह से भी बीज की मात्रा बढ़ जाती है।

बुवाई का समय

गाजर की बुवाई किस्म, भूमि एवं जलवायु के आधार पर अगस्त से लेकर नवम्बर तक की जाती है, परन्तु अक्टूबर में बोई जाने वाली फसल उत्पादन तथा गुणवत्ता दोनो दृष्टि से सर्वोतम मानी जाती है।

बुवाई की विधि

गाजर की बुवाई भारी मिट्टी में मेड़ों पर जबकि रेतीली मिट्टी में समतल क्यारियों में करनी चाहिए। बुवाई क्यारियों में 1.5-2.0 सेमी गहराई पर 30-40 सेमी की दूरी पर बनी पंक्तियों में करनी चाहिए। बीजों को बारीक छनी हुई रेत में मिलाकर बुवाई करने से बीजों का वितरण समान होता है तथा बीज भी कम लगता है। गाजर के बीज को 12 से 24 घंटे तक पानी में भिगोने के पश्चात छाया में सुखाकर बुवाई करने से बीज आसानी से व जल्दी अंकुरित हो जाते हैं। गाजर का बीज उगने के दो से तीन सप्ताह के भीतर प्रत्येक पक्ति में लगभग 6-8 सेमी की दूरी छोड़कर शेष पोधों को निकाल देना चाहिए, इससे पौधों की बढ़वार के लिए पर्याप्त स्थान मिलता है तथा जड़ों का विकास भी अच्छा होता है।

खाद और उर्वरक

गाजर की अच्छी पैदावार हेतु बुवाई से लगभग 3-4 सप्ताह पूर्व 25-30 टन प्रति हेक्टेयर पूर्णतया पकी हुई गोबर की खाद को खेत में भली भाँति मिला देनी चाहिए। हालांकि उर्वरकों का प्रयोग मिट्टी की जाँच के आधार पर करना चाहिए। सामान्य भूमि की दशा में 60 किग्रा नत्रजन, 50 किग्रा फास्फोरस तथा 45 किग्रा पोटाश प्रति हैक्टेयर प्रयोग करना चाहिये। नत्रजन की आधी तथा फास्फोरस और पोटाश की पूरी-पूरी मात्रा अंतिम जुताई के समय तथा नत्रजन की शेष बची आधी मात्रा आवश्यकतानुसार बुवाई के लगभग एक माह पश्चात निराई-गुड़ाई के समय अथवा बुवाई के 40-45 दिनों बाद देनी चाहिए।

सिंचाई प्रबंधन

बुवाई के बाद मेंड़ों को तब तक नम रखना जरूरी है, जब तक कि बीजों का अंकुरण न हो जाए। इस के बाद भूमि में पर्याप्त नमी बनाये रखने के लिए आवश्यकतानुसार 8-10 दिनों के अंतराल पर सिंचाई करनी चाहिए। कम सिंचाई की दशा में जड़े सख्त हो जाती हैं और इनमें कसैलापन भी आ सकता है, जबकि आवश्यकता से अधिक सिंचाई करने से गाजर की जड़ों में मिठास की कमी हो जाती है तथा उपज में भारी कमी हो सकती है। अत: गाजर की सिंचाई पत्तियों के मुरझाने से पहले करनी चाहिए।

खरपतवार नियंत्रण

गाजर की फसल के साथ उगे खरपतवार उसकी बढ़वार व उपज पर खराब असर डालते हैं। इसलिए गाजर की फसल को बुवाई से लगभग 4-6 सप्ताह तक खरपतवारों से मुक्त रखना चाहिए। इसके लिए समय-समय पर निराई गुड़ाई करके खरपतवारों को निकालते रहना चाहिए। यदि फसल मेड़ पर बोई गई है तो गुड़ाई के साथ-साथ मेड़ों पर मिट्टी भी चढ़ा देनी चाहिये। शाकनाशी रसायनों जैसे पेंडामेथलीन 1.0 किलोग्राम (प्रति हेक्टेयर) की दर को 500 लीटर पानी में घोल बनाकर बुवाई से 48 घंटे के अंदर समानांतर छिडकाव करे। जिससे शुरुवात में ही खरपतवारों से निजात मिल जाती है।

कीट और रोग नियंत्रण

आमतौर पर गाजर की फसल में कीट व बीमारियों का प्रकोप अपेक्षाकृत कम होता है विशेषकर शुष्क क्षेत्रों में। कभी-कभी देर वाली फसल में फफूँद जनित सफेद चूर्णिल आसिता नामक बीमारी का प्रकोप होता है। इस बीमारी के लगने से पत्तों और डंठल पर सफेद धब्बे नजर आने लगते हैं, जो आगे चलकर बादामी रंग के हो जाते हैं। इसकी रोकथाम के लिए 0.1 प्रतिशत बेनलेट अथवा बावस्टीन के घोल का छिड़काव 8-10 दिन के अन्तराल पर करना चाहिए। इसके अलावा गाजर में कट वर्म, जंग मक्खी, गाजर की सुरसुरी इत्यादि कीटों का भी प्रकोप पाया जाता हैं।

कट वर्म: यह कीट रात के समय पौधों को आधार से काट देता है। इस की रोकथाम के लिए 0.1 फीसदी क्लोरपाइरीफोस के घोल से जमीन को अच्छी तरह भिगो दें।

जंग मक्खी: इस कीट के शिशु पौधों की जड़ों में छेद बनाते हैं, जिस से पौधे मर भी सकते हैं। इस कीट की रोकथाम के लिए क्लोरपाइरीफोस 20 ईसी का 2.5 लीटर प्रति हेक्टेयर की दर से हलकी सिंचाई के साथ इस्तेमाल करना चाहिए।

गाजर की सुरसुरी: इस कीट के सफेद टांगरहित शिशु गाजर के ऊपरी हिस्से में सुरंग बना कर नुकसान पहुंचाते हैं इस कीट की रोकथाम के लिए इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एसएल 1 मिलीलीटर या डाइमेथोएट 30 ईसी 2 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

गाजर फसल की खुदाई और सफाई

गाजर बुवाई के 95 से लेकर 110 दिन के भीतर खुदाई के लिए तैयार हो जाती है, परन्तु यह प्राय: इसकी किस्म, बुवाई के समय, भूमि के प्रकार, आदि पर निर्भर करता है। गाजर की खुदाई करने से पहले एक हल्की सिंचाई कर देनी चाहिए जिससे कि गाजर आसानी से उखड़ जाए। गाजर की खुदाई हमेशा ठंडे मौसम में अर्थात् सुबह के समय करना उचित रहता है। खुदाई के पश्चात जड़ों पर लगी मिट्टी हटाने के लिए इन्हें पानी से साफ करने की आवश्यकता होती हैं। गाजर की जड़ों की सफाई हेतु एक विशेष प्रकार की मशीन का प्रयोग किया जाता है, जिससे इन पर लगी हुई मिट्टी की सफाई के साथ-साथ जड़ों पर लगे सूक्ष्म रोम तथा ऊपरी हल्की सफेद झिल्ली भी साफ हो जाती है। जिससे गाजर सुर्ख लाल, साफ एवं आकर्षक दिखने लगती है और बाजार भाव भी अच्छा मिलता है। हस्त चालित मशीन एक बार में 15 से 20 किग्रा गाजर की सफाई करती है, जबकि ट्रैक्टर, विद्युत मोटर या डीजल इंजन द्वारा चालित मशीन इसकी कार्य क्षमता के अनुसार एक से लेकर पाँच क्विंटल प्रति लोड तक सफाई कर सकती है।

गाजर की उपज

गाजर की पैदावार और गुणवत्ता किस्म, बुवाई के समय, भूमि के प्रकार, आदि पर निर्भर करती है। इसकी अगेती फसल अगस्त बुवाई वाली से औसतन लगभग 20-25 टन, मध्यम फसल सितम्बर से अक्टूबर बुवाई वाली से 30-40 टन तथा देर वाली फसल (नवम्बर बुवाई) से 30-35 टन प्रति हेक्टेयर तक उत्पादन प्राप्त होता है।

गाजर का भंडारण

सामान्य दशा में गाजर को 3-4 दिन से अधिक भंडारित नहीं किया जा सकता है, परन्तु छिद्रित पॉलीथीन में रखकर इसे लगभग दो सप्ताह तक भंडारित किया जा सकता है, जबकि छिद्रित पॉलीथीन में पैक की हुई गाजर शीतगृह में 1-2 डिग्री सेल्सियस तापक्रम व 90-95 प्रतिशत आद्रता पर तीन माह तक आसानी से संरक्षित की जा सकती है।

मैं उन लोगों में से हूं, जो चाहते हैं और जिनका विचार है कि हिंदी ही भारत की राष्ट्र भाषा हो सकती है।

-बाल गंगाधर तिलक

नैनोकण-संवर्धित नील हरित शैवाल: कवक रोग प्रबंधन के लिए नवोन्मेष दृष्टिकोण

हिमांशु महावर[1], शोभित थापा[2], राधा प्रसन्ना[3] एवं रोबिन गोगोई[3]
[1]भा.कृ.अनु.प., खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)
[2]भाकृअनुप- राष्ट्रीय कृषि उपयोगी सूक्ष्मजीव ब्यूरो, मऊ (उ.प्र.)
[3]भाकृअनुप- भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

परिचय: फसल रोगों के विरुद्ध संघर्ष

पौधों के रोग वैश्विक खाद्य सुरक्षा के लिए लंबे समय से खतरा रही हैं। कृषि पद्धतियों में प्रगति, जैसे कि उच्च उपज वाली फसलों की किस्मों के विकास, के बावजूद कई फसलों में अभी भी रोग प्रकोप के कारण महत्वपूर्ण उपज हानि होती है। रासायनिक कीटनाशक इन रोगों के प्रबंधन के लिए एक मानक तरीका रहा है। हालाँकि, विषाक्तता, रोगजनक प्रतिरोध और गैर-लक्ष्य जीवों पर उनके पर्यावरणीय प्रभाव पर बढ़ती चिंताओं ने टिकाऊ, पर्यावरण के अनुकूल विकल्पों की खोज को बढ़ावा दिया है।

उभरते समाधानों में, नील हरित शैवाल (साइनोबैक्टीरिया) और नैनोकणों का संयोजन विशेष रूप से आशाजनक है। नील हरित शैवाल, जैवसक्रिय यौगिक बनाने की अपनी प्रभावशाली क्षमता के साथ, हानिकारक रोगजनकों को दबा सकते हैं और पौधों के स्वास्थ्य को बढ़ावा दे सकते हैं। जब नील हरित शैवाल को धातु के नैनोकण, जैसे की जस्ता, रजत या ताम्बा, के साथ मिश्रित किया जाता है, तो यह इसके प्राकृतिक रक्षा तंत्र को और मजबूत करता है, जिससे एक शक्तिशाली तालमेल बनता है। यह अभिनव दृष्टिकोण फसलों में होने वाले कवक रोगों के प्रबंधन के लिए बहुत संभावना दिखाता है, जो टिकाऊ कृषि की खोज में आगे बढ़ने का मार्ग प्रदान करता है।

नील हरित शैवाल: कषि के छोटे सूत्रकणिका

साइनोबैक्टीरिया या नीला-हरा शैवाल (प्रक्केंद्रकी) जीवों का एक विविध समूह है जो पारिस्थितिकी तंत्र में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। यह ऑक्सीजनिक प्रकाश संश्लेषण करने और कठोर वातावरण में जीवित रहने की अपनी उल्लेखनीय क्षमता के लिए सबसे ज्यादा जाने जाते हैं। प्रकृति में, साइनोबैक्टीरिया वायुमंडलीय नाइट्रोजन का योगिकीकरण, कार्बन डाइऑक्साइड का न्यनीकरण एवं जैवसक्रिय यौगिकों का उत्पादन करते हैं जो पौधों की वृद्धि का समर्थन और हानिकारक सूक्ष्मजीवों का दमन करते हैं। कृषि में, नील हरित शैवाल ने प्राकृतिक जैव उर्वरक के रूप में ध्यान आकर्षित किया हैं। वे मिट्टी की उर्वरता में सुधार करते हैं और नाइट्रोजन से मिट्टी को समृद्ध करके और लाभकारी सूक्ष्मजीव गतिविधि को बढ़ावा देकर फसल की पैदावार बढ़ाते हैं। पोषक तत्वों की कमी वाली स्थितियों में पनपने की उनकी क्षमता उन्हें टिकाऊ और पर्यावरण के अनुकूल खेती के लिए भी उपयुक्त बनाती है।

जैव नियंत्रण कर्मक के रूप में नील हरित शैवाल

जैव उर्वरक के रूप में उनकी भूमिका के अलावा, नील हरित शैवाल में शक्तिशाली जैव नियंत्रण गुण भी होते हैं। वे द्वितीयक उपापचयण (मेटाबोलाइट्स) की एक श्रृंखला का उत्पादन करते हैं जिनमें रोगाणुरोधी गतिविधि होती है, जो उन्हें पौधों के रोगों को नियंत्रित करने के लिए प्रभावी कर्मक बनाती है। ये उपापचयण, जैसे कि बेंजोइक एसिड, पेप्टाइड्स, एल्कलॉइड, टरपेनोइड्स आदि रोगजनक कोशिका झिल्ली को बाधित, प्रोटीन संश्लेषण का संदमन एवं रोगजनक अस्तित्व के लिए आवश्यक प्रमुख प्रकिण्वों को निष्क्रिय कर सकते हैं।

नील हरित शैवाल की जैव नियंत्रण क्षमता विभिन्न फसल रोगों, विशेष रूप से मिट्टी जनित रोगजनकों तक फैली हुई है जो टमाटर और कपास जैसी फसलों को प्रभावित करते हैं। रासायनिक कीटनाशकों की आवश्यकता को कम करके, नील हरित शैवाल पौधों की बीमारियों के प्रबंधन के लिए एक अधिक टिकाऊ, पर्यावरण के अनुकूल विकल्प प्रदान करते हैं। पौधों की रक्षा तंत्र को बढ़ाने में उनकी भूमिका- जैसे कि पॉलीफेनोल ऑक्सीडेज (पीपीओ) और पेरोक्सीडेज (पीओ) जैसे रक्षा प्रकिण्वों की सक्रियता उनकी प्रभावशीलता को और बढ़ाती है।

नैनोकण: बड़ी क्षमता वाले छोटे कर्मक

नील हरित शैवाल की कृषि में अपार संभावनाएं हैं, और नैनोकणों के साथ एकीकरण के माध्यम से उनकी पूरी क्षमता को और अधिक बढ़ाया जा सकता है। नैनोटेक्नोलॉजी (नैनोस्केल पर परमाणुओं और अणुओं में हेरफेर करने का विज्ञान) ने कृषि में नए दरवाजे खोले हैं। नैनोकण, अपने अद्वितीय भौतिक और रासायनिक गुणों से, पौधों और मिट्टी प्रणालियों के साथ परस्पर प्रभाविक क्रिया कर सकते हैं जो पारंपरिक कृषि रसायन नहीं कर सकते।

पदार्थों के आकार को नैनोस्केल आयामों (100 नैनोमीटर से कम) तक कम करने पर बने यह नैनोकण, बढ़ी हुई प्रतिक्रियाशीलता, अधिक सतह क्षेत्र और बढ़ी हुई दक्षता प्रदर्शित करते हैं। यह उन्हें उन्नत कृषि रसायन विकसित करने, पोषक तत्व वितरण में सुधार करने और कृषि प्रणालियों में समग्र रासायनिक भार को कम करने के लिए आदर्श बनाता है। हालांकि, कृषि में नैनोकणों के बढ़ते उपयोग से मिट्टी के स्वास्थ्य पर उनके संभावित प्रभाव के बारे में चिंताएँ पैदा होती हैं, विशेष रूप से लाभकारी सूक्ष्मजीवों के संबंध में।

नैनोकण और सूक्ष्मजीवी अंतक्रिया: एक जटिल संबंध

नैनोकणों और सूक्ष्मजीवों के बीच अंतर्क्रिया अनुसंधान का एक आकर्षक क्षेत्र है। जबकि नैनोकणों का उपयोग आमतौर पर उनके रोगाणुरोधी गुणों के लिए किया जाता है, सूक्ष्मजीव, विशेष रूप से अनुकूली क्षमताओं वाले, नैनोकणों का प्रतिरोध, अनुकूलन या यहां तक कि संश्लेषण भी कर सकते हैं। यह समझना कि नैनोकण सूक्ष्मजीवों के साथ सकारात्मक और नकारात्मक दोनों तरह से कैसे अंतर्क्रिया करते हैं, कृषि में उनकी क्षमता का दोहन करने के लिए महत्वपूर्ण है।

नैनोकण ऑक्सीडेटिव तनाव के माध्यम से सूक्ष्मजीव कोशिकाओं को बाधित कर सकते हैं, डीएनए, प्रोटीन और कोशिका झिल्ली को नुकसान पहुंचा सकते हैं। उनकी विषाक्तता कण आकार, आकृति और सतह गुणों जैसे कारकों से प्रभावित होती है। दिलचस्प बात यह है कि नील हरित शैवाल सहित कुछ सूक्ष्मजीवों ने नैनोकणों की उपस्थिति से निपटने या यहां तक कि पनपने के लिए तंत्र विकसित किए हैं। इन अनुकूल रणनीतियों में नैनोकणों के अवशोषण को कम करना, धातु-अनुबंधन अणुओं का उत्पादन करना या हानिकारक कणों को खत्म करने के लिए उत्प्रवाह पंपों का उपयोग करना शामिल है।

धातु नैनोकणों की कवकरोधि शक्ति

विभिन्न प्रकार के नैनोकणों में से, धातु नैनोकण, विशेष रूप से रजत (Ag), जिंक ऑक्साइड (ZnO) और कॉपर ऑक्साइड (CuO), अपने शक्तिशाली रोगाणुरोधी गुणों के लिए जाने जाते हैं। विशेष रूप से रजत नैनोकणों ने असाधारण प्रतिकवक गतिविधि का प्रदर्शन किया है, जो उन्हें पौधों के रोगजनकों की एक श्रृंखला के खिलाफ अत्यधिक प्रभावी बनाता है। उनकी क्रिया के तरीके में कवक कोशिका भित्ति को नष्ट करना, झिल्लियों को नुकसान पहुंचाना अथवा कोशिका विलुप्ति को प्रेरित करना शामिल है। जिंक ऑक्साइड नैनोकण कवक कोशिका संरचना को खराब करके और कोनिडियोफोर के विकास को बाधित करके प्रतिकवक प्रभाव भी प्रदर्शित करते हैं। नील हरित शैवाल जैसे अन्य सूक्ष्मजीवों के साथ संयोजन में उपयोग किए जाने पर उनकी रोगाणुरोधी क्रिया को और बढ़ाया जा सकता है, जो कवक रोगजनकों के खिलाफ एक सहक्रियात्मक प्रभाव प्रदान करता है।

सहक्रियता: टमाटर रोग प्रबंधन में नैनोकण-संवर्धित नील हरित शैवाल

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली में हाल ही में किए गए एक अध्ययन में नैनोकण-संवर्धित *कैलोथ्रिक्स एलेनकिनी*, एक प्रकार के नील हरित शैवाल की क्षमता का पता लगाया गया, जो टमाटर के दो प्रमुख फफूंद रोगों के खिलाफ एक जैव नियंत्रण कर्मक के रूप में पाया गया है: जैसे *अल्टरनेरिया अल्टरनेटा* से होने वाला *अल्टरनेरिया* झुलसा रोग (ब्लाइट) एवं *फ्यूजेरियम सोलानी* से होने वाला *फ्यूजेरियम* जड़-विघलन (रूट रॉट)।

अध्ययन से परिणाम:

रजत और तांबा नैनोकण: *सी. एलेनकिनी* ने रजत (Ag) और तांबा (Cu) नैनोकणों के प्रति महत्वपूर्ण अनुकूलन क्षमता प्रदर्शित की, दोनों नैनोकणों ने नील हरित शैवाल की नाइट्रोजन-योगिकीकरण क्षमता और प्रोटीन की मात्रा को बढ़ाया। सूक्ष्म विश्लेषण के तहत, नैनोकण *सी. एलेनकिनी* की सतह पर एकत्रित हुए, जिससे उल्लेखनीय रूपात्मक परिवर्तन हुए।

बढ़ी हुई कवकरोधि गतिविधि: *सी. एलेनकिनी* में नैनोकणों को शामिल करने से इसकी कवकरोधि गतिविधि में उल्लेखनीय वृद्धि हुई। उदाहरण के लिए, रजत नैनोकणों ने *अल्टरनेरिया* की वृद्धि को 45 प्रतिशत तक कम कर दिया, जबकि रजत नैनोकण -संवर्धित *सी. एलेनकिनी* ने इसे केवल 48 घंटों में 33 प्रतिशत तक कम किया। इसी तरह तांबा नैनोकणों-संवर्धित *सी. एलेनकिनी* ने *फ्यूजेरियम सोलानी* के खिलाफ कवकरोधि प्रभाव प्रदर्शित किये।

पौधों की सुरक्षा में सुधार: पॉलीफेनोल ऑक्सीडेज (पीपीओ) और पेरोक्सीडेज (पीओ) जैसे रक्षा प्रकिण्वों की बढ़ी हुई गतिविधि से यह पता चल की नैनोकणों और *सी. एलेनकिनी* के बीच सहक्रियता ने पौधों की सुरक्षा तंत्र को बेहतर बनाया। परिणामस्वरूप पौधे स्वस्थ हुए और उनमें पर्णहरित (क्लोरोफिल) और कैरोटीनाभ (कैरोटीनॉयड) का स्तर अधिक रहा, जो पौधों की मजबूती के लिए महत्वपूर्ण है।

रोग की गंभीरता में कमी: रजत नैनोकण -संवर्धित *सी. एलेनकिनी* के उपयोग ने टमाटर के पौधों में रोग की गंभीरता को 58 प्रतिशत तक कम कर दिया, जबकि तांबा नैनोकण-संवर्धित *सी. एलेनकिनी* ने *फ्यूजेरियम* जड़-विघलन की गंभीरता को 76 प्रतिशत तक कम कर दिया। इसके अलावा, मिटटी के फॉस्फोलिपिड फैटी एसिड प्रोफाइल और सूक्ष्मजीवों की संख्या में परिवर्तन से यह भी पता चला कि इस दृष्टिकोण ने जड़ संरचना में सुधार किया और मिट्टी में कवक जैवसंहति को कम किया।

निष्कर्ष: संधारणीय रोग प्रबंधन का एक नया युग

नैनोकण-संवर्धित नील हरित शैवाल (*कैलोथ्रिक्स एलेनकिनी*) का अनुप्रयोग टमाटर की फसलों में कवक रोगों के प्रबंधन के लिए एक क्रांतिकारी दृष्टिकोण का प्रतिनिधित्व करता है। नील हरित शैवाल की प्राकृतिक जैव नियंत्रण क्षमताओं को नैनोकणों की रोगाणुरोधी शक्ति के साथ जोड़कर, यह रणनीति पौधों की सुरक्षा को बढ़ाती है, रोगजनक विकास को दबाती है, और समग्र पौधे के स्वास्थ्य को बढ़ावा देती है। यह पर्यावरण के अनुकूल समाधान रासायनिक उपचारों के लिए एक संधारणीय विकल्प प्रदान करता है, जो एक ऐसे भविष्य का मार्ग प्रशस्त करता है जहाँ कृषि पर्यावरण के साथ सामंजस्य में पनप सकती है।

उत्तर भारत के उच्च पर्वतीय क्षेत्रें में शिमला मिर्च की खेती: एक लाभकारी विकल्प

सविता, ए.के. जोशी, कोहिमा नूपुर, पारस सिंह, हेमन्त एवं अनिल सिंह
औद्यानिकी महाविद्यालय, वी.सी.एस.जी. उत्तराखंड औद्यानिकी एवं वानिकी विश्वविद्यालय, भरसार, पौड़ी गढ़वाल (उत्तराखंड)

शिमला मिर्च एक महत्वपूर्ण सब्जी फसल है जो अपने पोषण, मूल्य, स्वाद और रंगीन स्वरूप के कारण बहुत लोकप्रिय है। भारत के पहाड़ी क्षेत्रों में इसकी खेती विशेष रूप से लाभकारी सिद्ध हो रही है क्योंकि वहाँ की समशीतोष्ण जलवायु इसके लिए अत्यंत उपयुक्त है। शिमला मिर्च में विटामिन-ए, विटामिन-बी और एंटीऑक्सीडेंट्स भरपूर मात्रा में पाए जाते हैं। जो इसे स्वास्थ्य के लिए लाभकारी बनाते हैं। बाजार में इसकी माँग साल भर बनी रहती है, जिससे यह फसल किसानों के लिए एक अच्छा आय का स्रोत बन सकती है। आधुनिक कृषि तकनीकों और उचित प्रबंधन से पहाड़ी क्षेत्रों में इसकी खेती अत्यधिक सफल और लाभदायक हो सकती है। उत्तराखंड जो हिमालय की तलहटी में स्थित एक पर्वतीय राज्य है। विविध कृषि जलवायु क्षेत्रों के कारण बागवानी फसलों की खेती के लिए उपयुक्त माना जाता है। यहाँ की ठंडी जलवायु और उपजाऊ मिट्टी विशेष रूप से शिमला मिर्च की खेती के लिए अनुकूल है। इसका स्वाद तीखा न होकर मीठा होता है। इसका प्रयोग सलाद, सब्जियों और फास्ट फूड में बड़े पैमाने पर किया जाता है। हाल के वर्षों में ग्रीनहाउस और पॉलीहाउस तकनीकों के माध्यम से इसकी खेती को और अधिक व्यवसायिक रूप दिया जाने लगा है।

उन्नत किस्में

उत्तराखंड में शिमला मिर्च की उन्नत और उच्च उत्पादकता देने वाली किस्में जैसे कि अरका बसंत, अरका गौरव, इंदरा, स्वर्णा लोकप्रिय है। इन किस्मों की विशेषता यह है कि ये रोग प्रतिरोधी होती हैं और कम समय में अच्छी उपज देती हैं।

बुआई एवं नर्सरी तैयार करना

भारत के पर्वतीय क्षेत्रों में फरवरी-मार्च में पौधशाला में बीज की बुआई करते हैं। शिमला मिर्च की मुक्त परागित किस्म हेतु एक हेक्टेयर क्षेत्रफल लगाने के लिए 600-700 ग्राम व संकर किस्म की 500-600 ग्राम बीज की आवश्यकता पडती है। इतनी बीज की मात्रा से 50,000-60,000 अंकुरित पौधे प्राप्त होते हैं जो कि एक हेक्टेयर क्षेत्रफल के रोपण के लिए उपयुक्त है। पौध तैयार करने के लिए क्यारी में अच्छी प्रकार सड़ी गोबर की खाद मिला देना चाहिए। पौधशाला की क्यारी जमीन की सतह से 15-20 सेमी. ऊँची होनी चाहिए जिससे वर्षाकाल में क्यारी पानी से ना डूबे तथा पौध खराब ना हो सके। बीज को पंक्तियों में 5 सेमी. की दूरी एवं 2.5 सेमी. की गहराई पर बुआई करते हैं। बुआई उपरान्त बीज के ऊपर गोबर की सड़ी हुई महीन खाद या वर्मी कम्पोस्ट से ढक देना चाहिए। क्यारी के चारों तरफ फ्यूराडान पाउडर से उपचारित मिट्टी को फैला देना चाहिए। जिससे चीटीं आदि का प्रकोप ना हो। इसके लिए ऊपर घास-फूस की पर्त रख देते हैं ताकि बीज का अच्छा अंकुरण प्राप्त हो। समय-समय पर क्यारी को फौव्वारे से सिंचाई करते रहना चाहिए। प्रारम्भ मे उत्तम जमाव के लिए दिन में दो बार हल्की सिंचाई करते हैं, लेकिन 2-3 दिनों के बाद केवल एक बार सिंचाई करने की आवश्यकता पडती है। जमाव होने के बाद पूरी क्यारी में 0.4 प्रतिशत कैप्टान/कैप्टाफ/कॉपर आक्सीक्लोराइड का छिड़काव करना चाहिए ताकि पौधे गलन की समस्या से मुक्ति पायी जा सके। शिमला मिर्च की पौध को मिट्टी के गमले या कार्टून बॉक्स या प्लास्टिक ट्रे में भी उगाया जा सकता है। इन पात्रों में अच्छी तरह से सड़ी गोबर की खाद भरकर उनमें बीज की बुआई कर दी जाती है। बीज बुआई के समय इस बात का ध्यान देना चाहिए कि पात्र के नीचे की तरफ से पानी निकलने की सुविधा हो। बीज बुआई के 22-25 दिनों उपरान्त पौधे रोपण के योग्य हो जाते हैं तथा उन मे 4-5 पत्ती विकसित हो जाती है। शिमला मिर्च के पौधों के रोपण हेतु पंक्ति से पंक्ति की दूरी 60 सेमी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 45 सेमी. रखते हैं। पौधों का रोपण सायंकाल में करते हैं लेकिन बदली के मौसम में किसी भी समय की जा सकती है। पौध रोपण के तुरन्त बाद हल्की सिंचाई कर देनी चाहिए। हल्की सिंचाई करने से पौधे स्थापित हो जाते हैं।

सस्य क्रियायें

खेत की तैयारी

शिमला मिर्च की खेती क्षारीय मृदा को छोड़कर सभी प्रकार की मिट्टियों में सफलतापूर्वक की जा सकती है। गुणवक्ता युक्त अधिक उपज के लिए उचित जल निकास तथा जीवांशयुक्त मिट्टी उत्तम होती है। अतः भूमि की प्रकृति बलुई दोमट या दोमट होनी चाहिए। ऐसी मिट्टी जिसका पी.एच. मान 6.0-7.5 के बीच हो, खेती के लिए उपयुक्त है। यदि भूमि रेतीली या भारी हो तो उसमें पर्याप्त मात्रा में प्राकृतिक खाद का प्रयोग करना चाहिए। इस प्रकार चुनी हुई जमीन की पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करनी चाहिए और बाद की 3-4 जुताई हैरो या कल्टीवेटर से करके पाटा चला देना चाहिए, जिससे भूमि समतल और भुरभुरी हो जाये। जुताई के समय अगर खेत में खरपतवार या फसल के अवशेष हो तो निकाल देना चाहिए। शिमला मिर्च की जड़ें 92-122 सेमी. की गहराई तक प्रवेश करती हैं लेकिन पोषक तत्वों के अवशोषण हेतु प्रभावी जड़ें केवल 31 सेमी. तक रहती हैं।

पोषण तत्व प्रबंधन

मृदा परीक्षण के उपरान्त ही प्राकृतिक खादों एवं उर्वरकों का उपयोग करना चाहिए। सामान्यत: खेत की तैयारी के समय 20-25 मीट्रिक टन गोबर की सड़ी खाद या 10-20 मीट्रिक टन वर्मीकम्पोस्ट प्रति हेक्टेयर खेत में अच्छी तरह मिला देना चाहिए। इसके अलावा तत्व के रूप में मुक्त परागित किस्म के लिए 100 किग्रा. नत्रजन, 50 किग्रा. फॉस्फोरस एवं 50 किग्रा. पोटाश, जबकि संकर किस्मों के लिए 150 किग्रा. नत्रजन, 75 किग्रा. फॉस्फोरस एवं 75 किग्रा. पोटाश का प्रयोग करना चाहिए। फॉस्फोरस एवं पोटाश की पूरी मात्रा नत्रजन की तिहाई मात्रा पौध रोपण के समय तथा शेष नत्रजन की मात्रा को तीन बराबर भागों में बाँटकर पौध रोपण के बाद क्रमश: 25, 45 व 60 दिनों उपरान्त फसल में प्रयोग करना चाहिए।

पौध को सहारा देना

शिमला मिर्च में जब फलन प्रारम्भ होता है तो पौधों पर वजन बढ़ जाता है, जिससे पौधे अधिक भार के कारण गिर जाते है। अत: पौधों को बांस एवं लकड़ी से सहारा देकर बचाया जा सकता है।

खाद एवं उर्वरक प्रबंधन

शिमला मिर्च की बेहतर उपज के लिए संतुलित पोषण बहुत जरूरी है। जैविक और रासायनिक खादों का उचित मिश्रण फायदेमंद होता है। गोबर की सड़ी हुई खाद 20 से 25 टन प्रति हेक्टेयर, नत्रजन 100 किग्रा. प्रति हेक्टेयर दो भागों में, फॉस्फोरस 60 किग्रा., पोटाश 60 किग्रा. प्रति हेक्टेयर उर्वरकों को रोपण के समय और फसल बढ़ने की अवस्था में बाँटकर देना लाभकारी होता है।

खरपतवार प्रबंधन एवं निराई गुडाई

शिमला मिर्च में खरपतवार प्रबंधन हेतु पलवार का उपयोग उत्तम पाया गया है। शिमला मिर्च में निराई-गुड़ाई अधिक खर्चीली है। अत: रासायनिक विधि से खरपतवार नियंत्रण हेतु पौध रोपण के पूर्व पेण्डीमेथेलिन 30 ईसी के 01 ली. सक्रिय तत्व की मात्रा 1000 ली. पानी में घोल बनाकर छिड़काव कर देना चाहिए। पौध रोपण के 2-3 दिनों बाद एलाक्लोर नामक खरपतवारनाशी की 02 ली. मात्रा प्रति हेक्टेयर प्रयोग कर खरपतवार को नष्ट किया जा सकता है। जब पौध बढ़ने लगे तब एक बार निराई करके जड़ों के पास मिट्टी चढ़ा देनी चाहिए, जिससे पौधे गिरते नहीं है।

सिंचाई

शिमला मिर्च की प्रभावी जड़ें कम गहराई तक विकसित होती हैं। पौधे ना तो सतही सिंचाई सहन कर सकते हैं और ना ही सूखे को। अत: सफल खेती के लिए बार-बार हल्की सिंचाई करने की आवश्यकता पड़ती है।

तुड़ाई एवं उपज

फलों की तुड़ाई तभी करनी चाहिए जब उनका पूर्ण विकास हो गया हो और फल चमकदार हो गये हों। सामान्यतया पौध रोपण के 60-90 दिनों के उपरान्त प्रथम तुड़ाई की जाती है। पूर्ण रूप से विकसित फलों को ऊपर की ओर मोड़कर तोड़ना चाहिए जिससे फलों से डंठल लगा रहे। अधिकांश किस्मों में 8-10 बार तुड़ाई की जाती है। शून्य डिग्री सेन्टीग्रेट तापमान व 90-95 प्रतिशत सापेक्ष-आर्द्रता पर 40 दिनों तक शिमला मिर्च का भण्डारण किया जा सकता है। सामान्यत: प्रति पौधा 20-25 फल लगते हैं। मुक्त परागित किस्म से औसत उपज 20 मीट्रिक टन प्रति हेक्टेयर प्राप्त होती है लेकिन संकर किस्मों से 50 मीट्रिक टन प्रति हेक्टेयर उपज प्राप्त होती है।

भण्डारण और विपणन

शिमला मिर्च को सामान्य तापमान पर 3-5 दिन तक रखा जा सकता है, लेकिन शीतगृह में 10 से 15 दिन तक सुरक्षित रखा जा सकता है। उत्तराखंड में स्थानीय मंडियों जैसे हल्द्वानी, देहरादून और रामनगर में इसकी अच्छी मांग रहती है। इसके अलावा मैदानी राज्यों जैसे दिल्ली, पंजाब, उत्तरप्रदेश में भी उत्तराखंड की शिमला मिर्च की आपूर्ति होती है।

रोग प्रबंधन

आर्द्रगलन : आर्द्रगलन मुख्यत: नर्सरी में लगने वाला रोग है। बीज या तो भूमि के अन्दर ही फफूँद के प्रकोप से सड़ जाते हैं या जमने के बाद पौधों का भूमि की सतह से लगा तना पतला हो जाता है और बाद में विगलित होकर गिर जाता है। अधिकनम और गर्म भूमि में यह रोग तेजी से बढ़ जाता है। बीज शोधन ट्राइकोडर्मा 4.0 ग्राम अथवा टेबुकोनाजोल या थीरम 2.5 ग्राम प्रति किग्रा. बीज की दर से उपचारित करना चाहिए। भूमि शोधन एवं उचित जल निकास से रोग नियंत्रण होता है। नर्सरी में थीरम या कैप्टान 3.0 ग्राम प्रति ली. पानी में घोलकर छिड़काव करने से भी रोग का प्रकोप कम होता है।

डाईबैक : सामान्यत: डाईबैक का प्रकोप फल एवं टहनियों पर होता है। रोग का लक्षण सर्वप्रथम पौधों के शीर्ष भाग के सूखने के रूप में प्रकट होता है। फफूंद के प्रकोप से पौधों के उत्तक नष्ट हो जाते हैं और पौधा ऊपर से नीचे की तरफ सूखने लगता है। रोग का आक्रमण पक रहे फलों पर भी होता है। फलों पर काले व पीले छोटे-छोटे धब्बे बनते हैं। धब्बों का घेरा गहरे रंग का होता है। उग्र अवस्था में फल सिकुड़ जाते है। बीज कार्बेन्डाजिम 2.0-2.5 ग्राम प्रति किग्रा. की दर से शोधित करके बोयें। रोग लक्षण दिखाई देते ही मैन्कोजेब 2.5 किग्रा. या कॉपर आक्सीक्लोराइड 3.0 किग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से 800-1000 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

पर्ण कुंचन : पर्ण कुंचन रोग विषाणु द्वारा होता है तथा एक पौधे से दूसरे पौधे पर प्रसार कीट द्वारा होता है। इसके प्रकोप से पत्तियाँ छोटी, मोटी एवं विकृत हो जाती हैं। रोग ग्रस्त पौधा बौना हो जाता है और लक्षण के रूप में लीफ कर्ल (पत्ती कुंचन), तथा पत्ती में कोशिकाओं का मोटा होना एवं सिकुड़ जाना दिखाई पड़ता है। शिमला मिर्च की फसल भी मिर्च की ही भाँति प्रभावित होती है और उपज 50 प्रतिशत तक कम हो जाती है। लीफ

कर्ल का प्रसार सफेद मक्खी के द्वारा होता है। इसकी रोकथाम के लिए रोगी पौधों को उखाड़कर नष्ट कर देना चाहिए। फल आने से पहले फसल पर हर 10–15 दिनों के अंतर पर नीम का तेल 0.75–1.0 लीटर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़कना चाहिए अथवा मैलाथियान 2.0 ग्राम या इमिडाक्लोप्रिड 0.5 ग्राम या थायोमेथक्जान 0.5 ग्राम प्रति ली. की दर से अदल–बदल कर छिड़कना चाहिए। कीटना"ाी रसायन एवं तेल को साथ मिलाकर छिड़कने से भी लाभ होता है। छिड़काव के 8–10 दिनों बाद तक फल को खाने के प्रयोग में नही लाना चाहिए।

एन्थ्रेक्नोज या फल विगलन : एन्थ्रेक्नोज या फल विगलन कवक जन्य बीमारी है इस रोग के प्रभाव से पौधों की पत्तियों, तनों एवं फूलों पर भूरे धब्बे के रूप में प्रकट होता है। ट्राईकोडर्मा 10–12 ग्राम पाउडर को 1 किग्रा. बीज पर लेपन करें। जड़ शोधन 10–12 ग्राम पाउडर को 1 ली. पानी में घोलकर उसमें नर्सरी के पौधों की जड़ों को 10 मिनट तक भिगोयें और रोपाई करें। मृदा शोधन 4 किग्रा. पाउडर को 3–4 कुन्तल कम्पोस्ट/वर्मीकम्पोस्ट के साथ मिलायें। फसल की बुआई से पूर्व प्रति एकड़ की दर से इस कम्पोस्ट को मिट्टी में मिलायें। बीज बुआई से पूर्व बीज को टेबुकोनाजोल की 2 ग्राम मात्रा प्रति किग्रा. बीज में मिलाकर शोधित करना चाहिए। टेबुकोनाजोल 1 ग्राम मात्रा को प्रति ली. की दर से पानी में घोलकर संक्रमण की दशा में खड़ी फसल पर छिड़काव करना चाहिए।

पत्तियों पर जीवाणु धब्बा रोग : जीवाणु धब्बा रोग से प्रभावित पौधों की नई पत्तियों पर पीले, हरे तथा पुरानी पत्तियों पर जल सिक्त काले धब्बे बनते हैं। रोग ग्रस्त फलोंपर फफोले जैसे धब्बे विकसित होते हैं। स्यूडोमोनास फ्लोरेसेंट 5–10 ग्राम पाउडर को 1 किग्रा. बीज पर लेपन करें। जड़ शोधन 5–10 ग्राम पाउडर को 1 ली. पानी में घोलकर उसमें नर्सरी के पौधों की जड़ों को 10 मिनट तक भिगों दें और फिर रोपण करें। खड़ी फसल में संक्रमण होने पर कॉपर ऑक्सीक्लोराइड की 3 ग्राम मात्रा को प्रति ली. पानी की दर से घोलकर 8–10 दिनों के अंतराल पर 2–3 बार छिड़काव करना चाहिए।

कीट प्रबंधन

थ्रिप्स : थ्रिप्स पत्तियों एवं अन्य मुलायम भागों से रस चूसने वाला कीट हैं। इसके अधिक प्रकोप से पत्तियाँ सिकुड़ जाती हैं तथा मुरझाकर गिर जाती हैं। इमिडाक्लोप्रिड कीटनाशी 0.5 मिलीलीटर या थियामेथाक्सम 0.2 या फिप्रोनिल 1 या एबामेक्टिन 0.5 ग्राम मात्रा को प्रति ली. पानी की दर से घोलकर 10–15 दिनों के अंतराल में छिड़काव कर देना चाहिए।

मकड़ी या अष्टपदी : मकड़ी या अष्टपदी छोटे आकार के पीले रंग के कीट होते हैं। इनके पृष्ठ भाग पर सफेद धारियाँ होती हैं। इसके प्रकोप से पत्तियों का आकार छोटा हो जाता है और ये गुच्छे जैसी दिखती हैं। डाइकोफाल 2.5 मिलीलीटर लीटर मात्रा को प्रति ली. की दर से पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

माहूँ – माहूँ पौधे का रस चूसता है और विषाणु रोग फैलाता है। फसल पर इमिडाक्लोप्रिड 0.5 मिलीलीटर या स्पाइनोसैड 0.2 या स्पिन्टोरम 0.2 ग्राम या फ्लोनिकैमिड या डाइनोटफ्यूरान 0.2 ग्राम मात्रा प्रति ली. पानी में घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

निष्कर्ष

शिमला मिर्च की खेती भारत के पहाड़ी क्षेत्रों के किसानों के लिए एक लाभदायक विकल्प बन सकती है। सही वैज्ञानिक तकनीकों, जैविक विधियों और आधुनिक कृषि प्रबंधन को अपनाकर किसान इस फसल से अच्छा लाभ कमा सकते हैं। सरकार द्वारा उपलब्ध योजनाएं, प्रशिक्षण और सब्सिडी का लाभ उठाकर पहाड़ी किसान आत्मनिर्भर बन सकते हैं।

भारतेंदु और द्विवेदी ने हिंदी की जड़ पाताल तक पहुंचा दी है, उसे उखाड़ने का जो दुस्साहस करेगा वह निश्चय ही भूकंप-ध्वस्त होगा।

–शिवपूजन सहाय

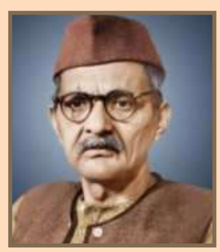

पर्वतीय राज्यों में अदरक की सफल खेती : 20 सूत्रीय प्रबंधन

ए.के. जोशी, सविता, पारस सिंह, एस.सी. पंत, कोहिमा नूपुर, राजेंद्र भट्ट एवं हेंमत

औद्यानिकी महाविद्यालय, वी.सी.एस.जी. उत्तराखंड औद्यानिकी एवं वानिकी विश्वविद्यालय, भरसार, पौड़ी गढ़वाल (उत्तराखंड)

अदरक भारत की एक महत्वपूर्ण मसाले वाली फसल है, जिसकी पैदावार में भारत अग्रणी स्थान पर है। यह पर्वतीय राज्यों की प्रमुख नकदी फसलों में से एक है, विशेष रूप से उत्तराखंड और हिमाचल प्रदेश में। हालांकि, इन राज्यों के किसान अक्सर अदरक सड़न जैसी बीमारी के कारण भारी नुकसान का सामना करते हैं। इस समस्या के समाधान हेतु किसानों के बीच सहभागी ग्रामीण मूल्यांकन अभ्यास आयोजित किया गया, जिससे उनकी समस्याओं का समाधान विकसित हो सके। इसके परिणामस्वरूप वैज्ञानिकों, किसानों और PRA के बीच विचार-विमर्श के आधार पर अदरक की सफल खेती के लिए एक 20 सूत्रीय फसल प्रबंधन कार्यक्रम तैयार किया गया। यह कार्यक्रम न केवल खेती को अधिक प्रभावी बनाने में मदद करता है, बल्कि किसानों की आय और उत्पादन क्षमता बढ़ाने में भी सहायक सिद्ध हो सकता है।

खेत की तैयारी: बीच (प्रकंद) बोने से पहले 10 दिन (धूप वाले) के अंतराल पर खेत की तीन बार जुताई करें। पहली जुताई लोहे के हल से करे। जुताई से पहले, अगर संभव हो तो खेत की सिंचाई करें। 10 दिन (धूप वाले) के बाद, दूसरी और तीसरी जुताई देसी हल से लगाातार करें।

सूर्यीकरण (सोलराइजेशन): अप्रैल-मई में क्यारी तैयार करने से पहले पारदर्शी पॉलीथीन (100-150 गेज) से सिंचित मिट्टी का सूर्यीकरण किया जा सकता है।

बीज की सुरक्षा व प्रारंभिक उपचार: अदरक के टुकड़ो को 30 मिनट तक गर्म पानी (45-50°C) में भिगोकर पंखे के नीचे सुखाए। बीज के टुकड़ो को सुबह की धूप में 45 मिनट तक धूप में भी सुखाया जा सकता है। बीज के टुकड़ो को पारदर्शी पॉलीथीन की दो परतों में फैला दें। हवा बंद करने के लिए किनारों पर मिट्टी से ढक दें। दो परतो के बीच अदरक की परत 30 से.मी. मोटी होनी चाहिए।

मिट्टी में पोषक तत्वों का संतुलन: तीसरी जुताई के समय एफ.वाई.एम. (20-25 क्विंटल/बीघा) एन.पी.के. (12:32:16) 20 कि.ग्रा./ बीघा मिलाएं।

मृदा जनित रोगों की रोकथाम: ट्राइकोडर्मा (20-25 कि.ग्रा.) को गोबर की खाद (25 क्विंटल/बीघा) के साथ मिलाकर प्रयोग करना मृदा जनित रोगों की रोकथाम में अधिक प्रभावी होगा।

क्यारियां तैयार करना: खेत में ढलान के विपरीत 1.5 फीट चौड़ी नाली के साथ ऊंची क्यारियां तैयार करें।

जल निकासी: पूरी फसल अवधि के दौरान जल निकासी का प्रावधान बनाए रखा जाना चाहिए।

बीज प्रबंधन: कटाई के समय स्वस्थ मातृ प्रकंद वाले पौधों से बीज चुनें। कटाई का काम पाला पड़ने से पहले करना चाहिए। जड़ो और रोगग्रस्त प्रकंदो को दबा देना चाहिए। बीज प्रकंद स्वस्थ, सशक्त और उभरी हुई आंखों वाले होने चाहिए। बीज दूर के उत्पादकों (कम से कम 50 किलोमीटर दूर स्थित) से खरीदें।

प्रकंद तैयार करना: बुवाई से पहले, प्रकंदो को केवल सर्जिकल ब्लेड से 2-3 टुकड़ो (प्रत्येक 25-30 ग्राम) में काटा जाना चाहिए।

बीज उपचार: इसे दो बार किया जाता है, एक बार भंडारण से पहले और दूसरी बार बुवाई से पहले। कटे हुए प्रकंदो के छिलके को सख्त करने के लिए 4-5 दिनों के लिए एक कमरे में रखा जाता है। 80 किलो प्रकंदो को डायथॉन एम-45 (250 ग्राम), बाविस्टिन (100 ग्राम) और क्लोरपाइरीफॉस (200 मि.ली.) के 100 लीटर घोल में एक घंटे के लिए भिगोएं। इसी घोल का इस्तेमाल 70-80 किलो अदरक को फिर से उपचारित करने के लिए किया जा सकता है। प्रकंदो को तब तक सुखाएं जब तक कि उनकी सतह से सारी नमी वाष्पित न हो जाए। बुवाई से पहले बीजों को टुकड़ों में काटकर उपचारित करना चाहिए।

बीज भंडारण: दिसंबर में लेकिन ठंड होने से पहले काटी गई प्रकंदो की कटाई भंडारण और बीज के उद्देश्य के लिए सबसे अच्छी होती है। इसे तीन तरीकों से किया जाता है -

- **गढ्ढा भण्डारण:** मध्य पहाड़ियों में प्रचलित।
- **बंद कमरे में भण्डारण:** निम्न पहाड़ियों में प्रचलित।
- **ईंट कंक्रीट भण्डारण:** गोदामों में किया गया है।

बीज की बुवाई: 1.5 क्विंटल प्रति बीघा बीज आदर्श मात्रा है। बीजों को 15-20 सेंटीमीटर ऊंची क्यारियों में 30 X 20 सेंटीमीटर की दूरी पर बोना उचित होता है। इससे फसल की वृद्धि और उत्पादकता में मदद मिलेगी।

अंतरफसल: मक्का के साथ अंतरफसल-अदरक की हर तीसरी पंक्ति के बाद मक्का की एक पंक्ति बोई जाती है, अधिमानत: उत्तर दक्षिण दिशा में।

निराई-गड़ाई और मिट्टी चढ़ाना: ये काम जून, जुलाई और अगस्त में तीन बार करें।

मल्चिंग (पौधों की सुरक्षा हेतु आवरण):

- अच्छी तरह से सड़े हुए एफ.वाई.एम. को मिलाए।
- ट्राइकोडर्मा से उपचारित 50 प्रतिशत सड़ा हुआ गोबर (प्रति 100 कि.ग्रा. गोबर में 0.5 कि.ग्रा.) का प्रयोग करें।
- पाइन सुइयों/भूसे/पत्तियों के साथ घास की मल्चिंग करें।

सिंचाई प्रबंधन: आवश्यकतानुसार सिंचाई करें। लेकिन खड़ी फसल में नवंबर के बाद सिंचाई बंद कर दें।

स्प्रे शेड्यूल:

- तना छेदक को नियंत्रित करने के लिए जलाई, सितम्बर और अक्टूबर में क्लोरपाइरीफॉस (25 मिली/10 लीटर पानी) का छिड़काव करें।
- जब फसल में पीली पत्तियां दिखाई दें तो पौधों पर ब्लाइटोक्स-50 (30 मिली/10 लीटर पानी) का छिड़काव करें।
- सितम्बर में स्ट्रेप्टोसाइक्लिन (20 मिली/10 लीटर पानी) का 15 दिन के अंतराल पर छिड़काव करें।

फसल चक्र: 3-4 साल के बाद खेत में अनाज, धान और गेंदा की फसलें उगाएं। निमेटोड संक्रमण को रोकने के लिए धान चक्र सबसे अच्छा है।

- **अदरक की फसल** को सौंठ या बीज बनाने के लिए दिसंबर में काटा जाना चाहिए। खेत में ही उसे सुखाना एक आवश्यक प्रक्रिया है। दिसंबर में पाला पड़ने से पहले पीले मुरझाउ या सूखे डंठलों को काट लें। ऐसे ही छोड़ी गई अदरक की जड़ अधिक स्वस्थ और मजबूत होगी।

कटाई: जब पत्तियां मुरझा जाएं और पाला न पड़े, तब फसल की कटाई करें। यह कार्यक्रम पर्वतीय किसानों के लिए एक क्रांतिकारी पहल है, जो अदरक की खेती को अधिक लाभदायक और टिकाऊ बनाता है। इसके प्रभाव से न केवल उनकी उत्पादन क्षमता में वृद्धि होती है, बल्कि यह उनके आर्थिक स्तर को भी बेहतर बनाता है। यह अदरक की खेती के क्षेत्र में एक नई दिशा प्रदान करता है।

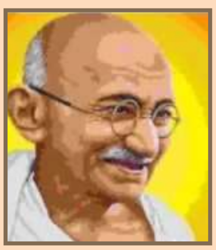

राष्ट्रीय व्यवहार में हिन्दी को काम में लाना देश की उन्नति के लिए आवश्यक है।

-महात्मा गांधी

समाज के हर पथ पर हिन्दी का कारवां तेजी से बढ़ता जा रहा है।

-रामवृक्ष बेनीपुरी

मक्का की फसल में फॉल आर्मी वर्म का प्रबन्धन

अखिलेश कुमार, स्मिता सिंह, राजेश सिंह, ब्रजेश कुमार तिवारी एवं ए. के. पाण्डेय

कृषि विज्ञान केंन्द्र, रीवा (म.प्र.)

'फॉल आर्मीवर्म' कीट को भारत में पहली बार मई 2018 में कर्नाटक में मक्के की फसल में देखा गया था, उसके बाद ये कीट देश के कई राज्यों में तेजी से पैर पसार चुका है। पिछले वर्ष इस कीट का प्रकोप मध्य प्रदेश के मक्का उत्पादक जिलों में देखा गया है एवं इस वर्ष भी उत्पादन की दृष्टि से यह कीट एक बहुत ही गम्भीर चिंता का विषय है। मक्का की फसल में फॉल आर्मीवर्म एक बहुत ही विनाशकारी कीट है जो फसल पर एक समूह (फौज) के रूप में आक्रमण करता है तथा फसल में एक गंभीर नुकसान करने की क्षमता रखता है, अफ्रीकन एवं अमेरिकन महाद्वीप में मक्का की फसल में फॉल आर्मीवर्म (*स्पोडोप्टेरा फ्रुजीपरडा*) का प्रकोप होने के बाद इस कीट का प्रकोप भारत के अनेक राज्यो में दिखाई दे रहा है जिसमें प्रमुख रूप से कर्नाटक, तेलेंगाना, आन्ध्रप्रदेश, तमिलनाडु, महाराष्ट्र, छत्तीसगढ़, उड़ीसा, गुजरात, मध्यप्रदेश, राजस्थान, बिहार एवं पश्चिम बंगाल है। नवीनतम जानकारी के अनुसार इस कीट का प्रकोप मिज़ोरम, नगालैंड, त्रिपुरा, और इसके आस पास के राज्यो में मक्के की फसल में देखा गया। इस कींट की सूडीं की अवस्था क्षतिकारक होती है और इस कींट से लगभग 35 से 40 प्रतिशत फसलों में नुकसान होता है। यह कीट बहुभक्षी होता है जो कि मक्का के अतिरिक्त गन्ना, ज्वार, बाजरा, या अन्य धान्य फसलों को नुकसान पहुंचाता है जिसके काटने चबाने वाले मुखांग होते हैं। इस प्रकार इस कीट के प्रकोप से आगामी मक्का की फसलों में प्रबन्धन करके बचा जा सकता है। इस कीट के प्रौढ़ एक रात में 100 किलोमीटर तक उड़ने की क्षमता रखते है। इस कीट का वैज्ञानिक नाम *स्पोडोप्टेरा फुजीपरडा* है जो कि रात्रिचर होता है। सोयाबीन की उत्पादकता लगातार कम होने के कारण पिछले तीन वर्षों से किसान भाई मक्का फसल का उत्पादन अधिक रकबे में ले रहे हैं जिसके कारण इस कीट का प्रबंधन सही समय पर करना और भी महत्वपूर्ण हो गया है।

फॉल आर्मीवर्म' कीट

क्षति की प्रकृतिः

यह कीट मक्के के छोटे-छोटे पौधों को जड़ से ही काटकर खेतों में गिरा देते हैं, एवं पौधे कि प्रारंभिक अवस्था में इल्लियां समूह में पत्तियां खुरचकर हरा भाग खाती हैं जिसके फलस्वरूप सफेद धब्बे दिखाई देने लगते हैं, इल्लियों पौधे की पोंगली के अंदर छुपी रहती है, बड़ी इल्लियाँ पत्तियों को खाकर उसमे छोटे से लेकर बड़े गोल छेद कर नुकसान पहुंचाती है इल्लियों का विष्ट भी पत्तियों पर साफ दिखाई देती है एवं बड़ी अवस्था की इल्लियाँ भुट्टों एवं मंजरियों को भी खाकर नुकसान पहुंचाती है।

कीट की पहचानः

इस कीट की सूंडी का मुख्य पहचान सिर पर उल्टे 'Y' आकार का चिन्ह है और पिछले भाग पर एक ही स्थान पर चार धब्बे वर्गाकार आकृति

में पाये जाते है। इसकी छः अवस्थाए पायी जाती है। फॉल आर्मीवर्म कीट की इल्लियाँ मुलायम त्वचा वाली होती हैं और बढने़ के साथ ही रंग में हल्के हरे या गुलाबी से लेकर भूरे रंग के हो जाते हैं। और प्रत्येक उदर खंड में चार काले धब्बों और पीठ के नीचे हल्की पीली रेखाओं से पहचाने जाते हैं। इसकी पूछ के अंत में काले बड़े धब्बे होते हैं जो कि उदर खंड आठ पर वर्गाकार पैटर्न और उदर खंड नौ पर समलंबाकर आकार के में व्यवस्थित होते हैं, जिसकी वजह से यह आसानी से किसी भी अन्य प्रजाति से अलग पहचाना जा सकता है।

जीवन चक्र : फाल आर्मी वर्म का जीवन चक्र ग्रीष्मकाल में लगभग 30 दिनों तक होता है बसंत एवं शरद ऋतु में जीवन काल 60 दिनों का हो जाता है तथा शीतकाल में यह बढ़कर 80 से 90 दिनों का होता है जो मौसम के अनुसार इस कीट की कई पीढियां होती है।

अंडे : इसके अंडे उभरे हुए डोम के आकर के होते हैं जिसकी गोलाई 0.4 एवं ऊंचाई 0.3 मिमी होती है मादा अपने अंडे समूह में पत्ती के निचली सतह पर देना पसंद करती है परंतु इसके अधिक प्रकोप होने पर पत्तियों की ऊपरी सतह एवं तनों पर भी देती है गर्म वातावरण में अंडकाल 2-3 दिनों का होता है।

इल्ली: अंडे से निकली इल्लियाँ हलके पीले रंग की होती है तथा सिर का रंग काला एवं नारंगी होता है इल्ली के बढने़ के साथ साथ हरा, पीला एवं काला रंग हो जाता है व्यस्क इल्ली का रंग हलके भूरे से गहरा भूरा होता है। पूर्ण विकसित इल्ली 30 से 36 मिमी लम्बी होती है एवं वातावरण के अनुसार इसकी यह 12 से 20 दिनों की होती है।

शंखी: पूर्ण विकसित इल्ली भूमि में मिट्टी एवं रेशमी से कोय बनाकर शंखी में परिवृ्तत हो जाती है। शंखी अवस्था 7 से 35 दिनों की होती है जो कि बाहरी वातावरण एवं तापक्रम पर निर्भर करती है।

व्यस्क : व्यस्क पतंगा रात्रिचर होता है इसकी लम्बाई 2 से 3 सेमी तथा पंख फैलाने पर लम्बाई 3 से 4 सेमी होती है इसके अग्र पंख गहरे भूरे, धूसर काले रंग के हलके तथा गहरे चित्तेदार होते है। नर पतंगे के अग्र पंख मटमैला सफेद रंग का होता है तथा किनारे पर भूरी लकीर होती है, पतंगे 2 से 3 सप्ताह तक जीवित रहते है।

निरीक्षण – मक्के के बुवाई के पहले, फेरोमोन ट्रैप प्रति एकड़ और फसल लगने के बाद लगाना चाहिए ।

शुरूवाती देखभाल – मक्का का बीज जमने के तुरंत बाद से –

- पौध अवस्था से लेकर पौधों में पत्ती का वृत्ताकार गुच्छा (पोंगली) की अवस्था बनने तक (3-4 सप्ताह की अवस्था) यदि 5 प्रतिशत पौधों में क्षति होती है तो प्रबन्धन प्रक्रिया अपनानी चाहिए।
- 5-7 सप्ताह बाद पौधे की मध्य अवस्था से लेकर अंत तक की अवस्था तक जिसके मध्य में यदि 10 प्रतिशत और अंत में 20 प्रतिशत हानि / क्षति पहुचती है तो प्रबन्धन की आवश्यकता होती है।
- मक्के में रेशम के गुच्छे की शुरूवाती एवं बाद की अवस्था पर कीटनाशक का प्रयोग नही करना चाहिए, लेकिन यदि कार्न की क्षति 10 प्रतिशत से अधिक हो रही है तो कीटनाशक का छिड़काव करना चाहिए।

सस्य प्रबन्धन –

- गर्मी में गहरी जुताई करना चाहिए।
- समय पर एवं लाइन में बुवाई करना चाहिए।
- मक्के के साथ अरहर, मूँग एवं उर्द की अन्तर्वती फसलों की खेती करना चाहिए।
- 10वर्ड परच्र (पक्षी स्थल) प्रति एकड़ का प्रयोग 30 दिन तक करना चाहिए।
- मक्के की फसल के चारों तरफ ट्रैप फसल के रूप में 3-4 पंक्ति नेपियर लगाना चाहिए और इस कीट का प्रकोप ट्रैप फसल पर होने पर उस पर एन. एस. के. ई. (NSKE) का 5 प्रतिशत या नीम का तेल (1500 पी.पी.एम.) 5 मिली/लीटर पानी में डालकर छिड़काव करना चाहिए।
- संतुलित उर्वरक, उचित पौध संख्या के साथ साफ- सुथरी खेती करना चाहिए।
- हाइब्रिड मक्के की खेती में यदि कार्न का कवर भाग अगर कसा/टाइट होगा तो कीट का प्रकोप कम होगा।

यांत्रिक प्रबन्धन –

- कीट के अण्डे के समूह एवं नवजात सूड़ी को हाथ से एकत्रित कर मारना या मिट्टी के तेल में डाल देना चाहिए।
- शुरूवाती दौर में इस कीट का प्रकोप होने पर शुष्क बालू का प्रयोग प्रभावित पौधे के पत्ती का वृत्ताकार गुच्छा (पोंगली) वाले भाग में करना चाहिए।
- प्रौढ़ कीट के सामूहिक नियंत्रण के लिए 15 फेरोमोन ट्रैप प्रति एकड़ प्रयोग का करना चाहिए।

जैविक प्रबन्धन –

- प्राकृतिक शत्रुओ की संख्या बढ़ाने के लिए दाल वाली फसलों के साथ अन्तर्वती खेती एवं फूल वाली फसलों को बढ़ावा देना चाहिए।
- ट्राकइकोग्रामा परजीवी कीट के 50,000 अण्डें को प्रति एकड़ सप्ताह के अन्तराल पर ङ्कयोग करना चाहिए।
- जैव कीटनाशी का प्रयोग 5 प्रतिशत क्षति (पौध अवस्था से पत्ती का वृत्ताकार गुच्छा (पोंगली) वाली अवस्था तक) एवं 10 प्रतिशत कार्न क्षति पर उपयुक्त फॅफूदीनाशी एवं जीवाणुनाशी का प्रयोग करना चाहिए।

- फफुँदनाशी मेटारायजियम एनीसोप्ली पाउडर ($1x10^8$ सी.एफ. यू/ग्राम) की 5 ग्राम मात्रा प्रति लीटर पानी में मिलाकर बुवाई के 15-25 दिन बाद 10 दिन के अन्तराल से छिड़काव करना चाहिए।
- वीटी की 2 ग्राम मात्रा प्रति लीटर पानी मिलाकर छिड़ाकव करना चाहिए।

रासायनिक प्रबन्धन -

- **प्रथम अवस्था -** (पौध अवस्था से लेकर शुरूवाती पत्ती का वृत्ताकार गुच्छा (पोंगली) वाली अवस्था) 5 प्रतिशत क्षति को कम करने के लिए अण्डे से निकले नवजात इल्ली को नष्ट करने के लिए 5 प्रतिशत एन. एस. के. ई. (NSKE) या नीम का तेल 1500 पी.पी. एम. की 5 मिली/ली. पानी में मिलाकर प्रयोग करना चाहिए।
- **द्वितीय अवस्था -** (मध्य पत्ती का वृत्ताकार गुच्छा (पोंगली) वाली भाग से देर से चक्रक अवस्था) - इस कीट की द्वितीय एवं तृतीय सूँडी अवस्था के प्रबन्धन हेतु जिसमें 10-20 प्रतिशत तक क्षति होती है। इस अवस्था पर *स्पानेटोराम* 11.7 प्रतिशत एस.सी. की 420 - 470 मिली. प्रति हेक्टेयर या थायोमेथोक्ज़ाम 12.6% + लैम्बडासायहलोथिन 9.5% की 0.5 मिली/ लीटर या क्लोरेन्ट्रनीलीप्रोल 18.5% एस. सी. की 0.4 मिली/ लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करना चाहिए।

  जहर चारा- इसका प्रयोग द्वितीय अवस्था के अन्तर्गत जब सूँडी अपने अंतिम अवस्था (5-6 इन्सटार) में पहुंच जाय तो प्रयोग करना चाहिए। जिसमें 10 किग्रा. धान की भूसी + 2 किग्रा. गुड़ को 2-3 लीटर पानी के साथ मिलाकर 24 घण्टे के लिए खमीर बनने के लिए, इसके बाद 100 ग्राम थायोडीकार्ब 75 डब्लू पी को फील्ड में छिड़काव करने से एक घण्टे पहले मिलाना चाहिए। इस चारे का प्रयोग पौधे के पत्ती का वृत्ताकार गुच्छा (पोंगली) वाला भाग (Whorl) पर करना चाहिए।
- **तृतीय अवस्था -** (बुवाई के 8 सप्ताह बाद रेशम गुच्छा एवं रेशम गुच्छा के बाद) इस अवस्था में कीटनाशक प्रबन्धन लाभदायक नही होता है। ऐसी अवस्था में कीट को हाथ से पकड़ कर मार देना चाहिए।

मैं दुनिया की सभी भाषाओं की इज्जत करता हूं, पर मेरे देश में हिंदी की इज्जत न हो, ये मैं सह नहीं सकता।

-आचार्य विनोबा भावे

हिंदी भारत की राष्ट्रभाषा तो है ही, यही जनतंत्रात्मक भारत में राजभाषा भी होगी।

-सी. राजगोपालाचारी

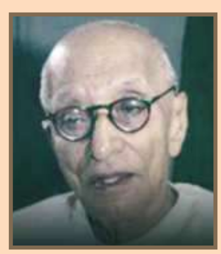

कृषि में कीटों को नियंत्रित करने में जैव ध्वनिकी (बायोएकॉस्टिक्स) की भूमिका

अंचल शर्मा एवं आई.बी. मौर्य
उद्यानिकी एवं वानिकी महाविद्यालय, झालावाड़ (राज.)

कृषि कई अर्थव्यवस्थाओं की रीढ़ है, खासकर भारत जैसे देशों में जहां आबादी का एक बड़ा हिस्सा अपनी आजीविका के लिए खेती पर निर्भर है। सफल फसल उत्पादन के लिए सबसे बड़ा खतरा कीटों का आक्रमण है। ये कीट पैदावार को काफी कम कर सकते हैं, खाद्य गुणवत्ता को प्रभावित कर सकते हैं और किसानों को गंभीर आर्थिक नुकसान पहुंचा सकते हैं। परंपरागत रूप से, इन कीटों से निपटने के लिए रासायनिक कीटनाशकों का उपयोग किया जाता रहा है, लेकिन इनके अत्यधिक उपयोग से कई पर्यावरणीय और स्वास्थ्य संबंधी खतरे पैदा हुए हैं। हाल के वर्षों में, वैज्ञानिक और शोधकर्ता पर्यावरण के अनुकूल और टिकाऊ विकल्पों की खोज कर रहे हैं। ऐसी ही एक आशाजनक विधि कीट नियंत्रण में जैव ध्वनिकी का उपयोग है।

जैव ध्वनिकी क्या है?

जैव ध्वनिकी एक अंत:विषय क्षेत्र है जो जानवरों में ध्वनि के उत्पादन, संचरण और ग्रहण का अध्ययन करने के लिए जीव विज्ञान और ध्वनिकी को जोड़ता है। कृषि के संदर्भ में, जैव ध्वनिकी फसल के खेतों में कीटों का पता लगाने, निगरानी करने और कभी-कभी उन्हें नियंत्रित करने के लिए ध्वनि-आधारित तकनीकों के उपयोग को संदर्भित करता है। कई कीट और जानवर प्रजनन, चारागाह और रक्षा जैसी विभिन्न गतिविधियों के लिए ध्वनि उत्पन्न करते हैं या उन पर प्रतिक्रिया करते हैं। इन ध्वनि पैटर्न को समझकर, शोधकर्ता कीटों की आबादी को नियंत्रित करने के लिए अभिनव तरीके विकसित कर सकते हैं।

कीटों का पता लगाना और निगरानी करना

कृषि में बायोएकॉस्टिक्स के प्राथमिक अनुप्रयोगों में से एक कीटों का प्रारंभिक पता लगाना और निगरानी करना है। बोरर, दीमक, टिड्डे और वीविल जैसी कई कीट प्रजातियाँ भोजन करते या चलते समय विशिष्ट ध्वनियाँ उत्पन्न करती हैं। ये ध्वनियाँ अक्सर मानव कान के लिए अश्रव्य होती हैं, लेकिन संवेदनशील माइक्रोफोन और सेंसर का उपयोग करके इनका पता लगाया जा सकता है। उदाहरण के लिए, लाल ताड़ के वीविल के लार्वा पेड़ के तने के अंदर अलग-अलग चबाने की आवाजें निकालते हैं। बागानों में बायोएकॉस्टिक सेंसर लगाकर, किसान दिखाई देने वाले नुकसान से पहले कीटों की उपस्थिति का पता लगा सकते हैं। इससे समय पर हस्तक्षेप करने और बड़ी फसल के नुकसान को रोकने में मदद मिलती है।

ध्वनि के माध्यम से व्यवहार में व्यवधान

बायोएकॉस्टिक्स का एक और आकर्षक अनुप्रयोग कीटों के व्यवहार में व्यवधान उत्पन्न करना है। कई कीट प्रजनन संचार के लिए ध्वनि पर निर्भर करते हैं। उदाहरण के लिए, नर झींगुर और मच्छर मादाओं को आकर्षित करने के लिए विशिष्ट प्रजनन कॉल उत्पन्न करते हैं। इन ध्वनियों की नकल करके या उन्हें जमा करके, वैज्ञानिक कीटों को भ्रमित कर सकते हैं और उनके प्रजनन की संभावनाओं को कम कर सकते हैं। ध्वनिक हस्तक्षेप के रूप में जानी जाने वाली इस तकनीक का उपयोग गैर-विषाक्त कीट नियंत्रण विधि के रूप में किया जा सकता है। इसी तरह, कीटों को भगाने के लिए ध्वनियों का भी उपयोग किया जा सकता है। कुछ आवृत्तियाँ कीटों के लिए अप्रिय या खतरनाक होती हैं और उन्हें फसल के खेतों से दूर भगा सकती हैं।

सटीक कृषि के साथ एकीकरण

आधुनिक कृषि में तेजी से सटीक खेती की तकनीकें अपनाई जा रही हैं जो कुशल संसाधन प्रबंधन के लिए डेटा और प्रौद्योगिकी का उपयोग करती हैं। कीट गतिविधि के बारे में वास्तविक समय की जानकारी प्रदान करने के लिए बायोएकॉस्टिक उपकरणों को इंटरनेट ऑफ थिंग्स (IoT), ड्रोन और एल्गोरिदम के साथ एकीकृत किया जा सकता है। यह डेटा किसानों को कीट नियंत्रण उपायों को कब और कहाँ लागू करना है, इस बारे में सही निर्णय लेने में मदद करता है, जिससे अनावश्यक कीटनाशकों का उपयोग कम होता है। इसके अलावा, बायोएकॉस्टिक निगरानी प्रणाली 24×7 काम कर सकते हैं, जिससे न्यूनतम मानवीय हस्तक्षेप के साथ निरंतर निगरानी प्रदान की जा सकती है।

बायो/कॉस्टिक कीट नियंत्रण के लाभ

पर्यावरण के अनुकूल: बायोएकॉस्टिक्स में रसायनों का उपयोग नहीं होता है, जो इसे पर्यावरण, लाभकारी कीटों और मानव स्वास्थ्य के लिए सुरक्षित बनाता है।

प्रारंभिक पहचान: ध्वनि-आधारित निगरानी प्रारंभिक अवस्था में कीटों का पता लगा सकती है, जिससे बड़ी क्षति से पहले प्रभावी नियंत्रण में मदद मिलती है।

लागत-प्रभावी: समय के साथ, बायोएकॉस्टिक सिस्टम को स्थापित करने और बनाए रखने की लागत बार-बार कीटनाशक के इस्तेमाल से कम हो सकती है।

गैर-आक्रामक: बायोएकॉस्टिक विधियाँ मिट्टी या पौधे की संरचना को प्रभावित नहीं करती हैं।

डेटा-संचालन: स्मार्ट कृषि प्रणालियों के साथ एकीकरण बेहतर डेटा संग्रह और विश्लेषण की अनुमति देता है।

चुनौतियाँ और सीमाएँ

अपनी क्षमता के बावजूद, कृषि में बायोएकॉस्टिक्स के उपयोग में कुछ चुनौतियाँ हैं:

तकनीकी जटिलता: बायोएकॉस्टिक सिस्टम को स्थापित करने और कैलिब्रेट करने के लिए तकनीकी दक्षता की आवश्यकता होती है।

परिवेशी शोर: खेतों में पृष्ठभूमि शोर से कीट ध्वनियों को अलग करना मुश्किल हो सकता है।

प्रारंभिक सेटअप की लागत: हालांकि लंबे समय में लागत प्रभावी है, लेकिन छोटे पैमाने के किसानों के लिए शुरुआती निवेश अधिक हो सकता है।

प्रजाति-विशिष्टता: कई बायोएकॉस्टिक उपकरण प्रजाति-विशिष्ट हैं और सभी प्रकार के कीटों के लिए काम नहीं कर सकते हैं।

भविष्य की संभावनाएँ

बायोएकॉस्टिक कीट नियंत्रण का भविष्य उज्ज्वल है, खासकर मशीन लर्निंग, सेंसर तकनीक और सिग्नल प्रोसेसिंग में प्रगति के साथ। शोधकर्ता एआई-आधारित सिस्टम विकसित कर रहे हैं जो स्वचालित रूप से कीटों की आवाजों की पहचान कर सकते हैं और अलर्ट जारी कर सकते हैं। व्यक्तिगत किसानों द्वारा उपयोग के लिए पोर्टेबल बायोएकॉस्टिक किट भी डिजाइन किए जा रहे हैं। सरकारें और कृषि एजेंसियाँ ऐसी पर्यावरण-अनुकूल तकनीकों को बढ़ावा देने और सब्सिडी देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती हैं।

बायोएकॉस्टिक्स कृषि में कीट प्रबंधन के लिए एक टिकाऊ, कुशल और अभिनव दृष्टिकोण प्रदान करता है। ध्वनि की शक्ति का उपयोग करके, हम एक ऐसे भविष्य की ओर बढ़ सकते हैं जहाँ फसल सुरक्षा प्रभावी और पर्यावरणीय दोनों रूप से जिम्मेदार है।

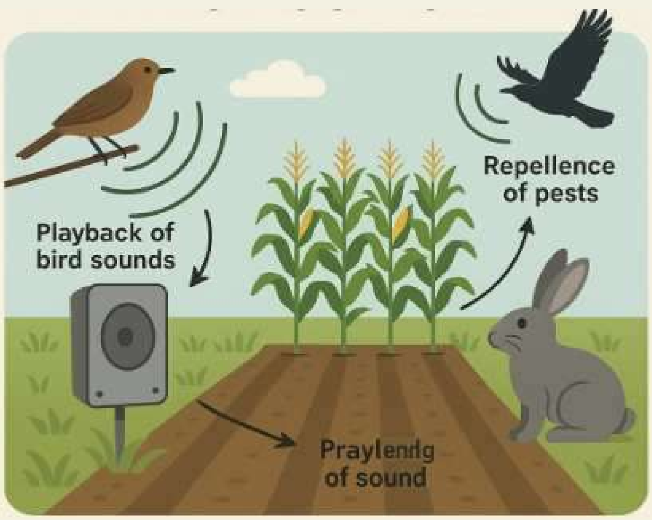

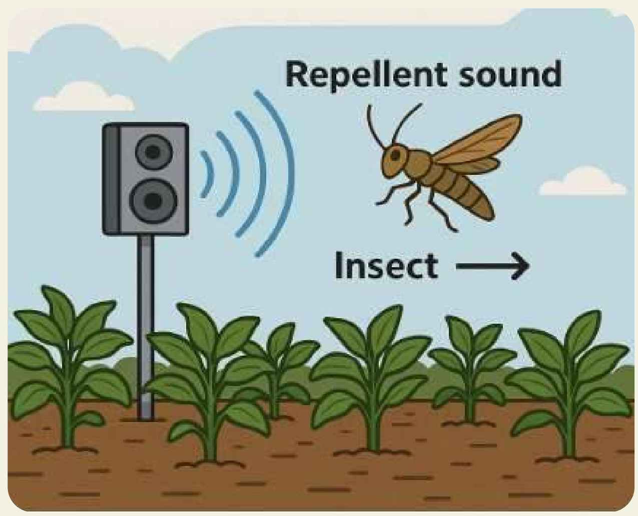

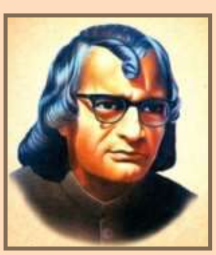

हिन्दी हमारे राष्ट्र की अभिव्यक्ति का सरलतम स्त्रोत है।

-सुमित्रानंदन पंत

ड्रैगन फ्रूट की आधुनिक खेती हेतु पौध संरक्षण के उपाय

द्वारका[1] एवं निशा चढ़ार[2]
[1]जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय, कृषि महाविद्यालय, पन्ना (म.प्र.)
[2]महाराजा छत्रसाल बुंदेलखंड विश्वविद्यालय, शासकीय स्नातकोत्तर उत्कृष्ट महाविद्यालय, टीकमगढ़ (म.प्र.)

यह कैक्टैसी परिवार में सबसे सुंदर फल वाली चढ़ाई वाली कैक्टस प्रजाति है, जिसमें सुंदर फूल होते हैं और इसे ''नोवल वूमेन'' या ''रात की रानी/क्वीन ऑफ द नाईट'' का उपनाम दिया जाता है। फल का रसदार गूदा स्वादिष्ट होता है। ड्रैगन फ्रूट या स्ट्रॉबेरी नाशपाती या कमलम या नाईट ब्लूमिंग (*हिलोसेरियस* स्पी. व *सेलेनिकेरिय* स्पी.), एक जड़ी-बूटी वाला बारहमासी चढ़ने वाला कैक्टस, जिसे व्यापक रूप से लाल पिटाया के नाम से भी जाना जाता है, इसने हाल ही में भारतीय उत्पादकों के बीच बहुत ध्यान आकर्षित किया है, न केवल अपने आकर्षक लाल या गुलाबी रंग और फल के रूप में आर्थिक मूल्य के कारण, बल्कि इसकी उच्च एंटीऑक्सीडेंट क्षमता, विटामिन और खनिज सामग्री के लिए भी मूल्यवान है। ड्रैगन फ्रूट अजैविक तनावों के प्रति सहनशील और कीटों और बीमारियों के प्रति प्रतिरोधी है। दक्षिणी मेक्सिको, ग्वाटेमाला और कोस्टा रिका का मूल निवासी होने के कारण, ड्रैगन फ्रूट को 90 के दशक के अंत में भारत में लाया गया था और अभी भी इसकी खेती का क्षेत्र धीरे-धीरे बढ़ रहा है। वर्तमान में भारतीय बाजारों में उपलब्ध अधिकांश ड्रैगन फ्रूट वियतनाम, थाईलैंड, मलेशिया और श्रीलंका से आयात किए जाते हैं। कैक्टस परिवार होने के कारण और फूल आने के लिए लंबे दिन की आवश्यकता होती है, ड्रैगन फ्रूट की खेती दक्षिणी, पश्चिमी और उत्तर पूर्वी भारत के शुष्क और ठंढ-मुक्त कृषि-जलवायु क्षेत्रों में अच्छी तरह से अनुकूलित है। जीरोफाइट्स के गुणों वाला एक क्रसुलेसियन एसिड मेटाबोलिज्म (सीएएम) पौधा होने के कारण, इसमें उच्च तापमान और पानी की कमी वाले क्षेत्रों सहित कृषि-जलवायु की एक विस्तृत श्रृंखला में बढ़ने की क्षमता है। ड्रैगन फ्रूट की व्यावसायिक खेती 500-1500 मिमी तक वर्षा के साथ 1700 मीटर की ऊंचाई तक की जा सकती है।

प्रमुख कीट -

1. **ओरिएंटल फल मक्खी (*बेक्ट्रोसेरा डॉरसेलिस*, डिप्टेरा, टेफ्रीटिडी)** - यह कीट एशिया में उष्ण कटिबंध में सबसे अधिक क्षेत्र का मूल निवासी है, लेकिन आजकल, यह अफ्रीका और यूएसएयू (हवाई) के कुछ क्षेत्रों में पाया जा सकता है, जो 490 फलों और सब्जियों (ड्रैगन फल शामिल) को संक्रमित करता है। इसे फसल का सबसे महत्वपूर्ण और विनाशकारी कीट माना जाता है और अगर उत्पादकों द्वारा अनियंत्रित छोड़ दिया जाए तो यह गंभीर नुकसान पहुंचा सकता है। इसके अलावा, इसे एक संगरोध कीट माना जाता है, और निर्यात किए जाने वाले फलों के लिए कटाई के बाद कीटाणुशोधन की आवश्यकता होती है। आमतौर पर भारी बारिश के बाद कीट बड़ी संख्या में देखे जा सकते हैं। मुख्य नुकसान लार्वा की गतिविधि से फलने की अवस्था में होता है। अधिक विशेष रूप से, मादा कीट फल की त्वचा में अंडे देती है। अंडे के फूटने के बाद, लार्वा फल के अंदर सुरंगें खोल देता है, जिससे फल सड़ जाते हैं या फल समय से पहले गिर जाते हैं।

प्रबंधन - कीटों की आबादी और आर्थिक नुकसान को कम करने के लिए, किसानों को एकीकृत कीट प्रबंधन उपायों की एक विस्तृत श्रृंखला में निवेश करने और उन्हें लागू करने की आवश्यकता है। फलों को थैले में बांधने से फल मक्खियों और क्षति को रोका जा सकता है, और लटकने वाले मिथाइल यूजेनॉल ट्रैप को भी दीर्घकालिक नियंत्रण विधि के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है। स्पॉट-स्प्रेइंग कीटनाशक हाइड्रोलिसिस प्रोटीन फूड चारा का भी उपयोग किया जा सकता है। इस कीट के प्रबंधन में बगीचें की साफ-सफाई महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

2. **मीली बग (*फेरिसा विरगाटा*, हेमिप्टेरा, स्यूडोकॉक्सिडी)** - पाउडर या फिलामेंट सफेद मोम के साथ कवर किया गया छोटा, मुलायम शरीर वाला, रस स्त्रावित वाला, यह छोटा पैर वाला और शायद ही कभी गतिशील होता है। यह आमतौर पर पत्तियों या तने की सतह पर जुड़ा होता है, जहाँ यह पौधे के रस को सोख लेता है। यह कीट मधुरस नामक एक मीठा तरल उत्सर्जित करता है, जो चींटियों को आकर्षित करता है।

प्रबंधन - इस कीट को नियंत्रित करने का तरीका उचित कीटनाशक अनुप्रयोगों द्वारा होता है। अगर मिलीबग का घनत्व कम है तो एक तरल साबुन और सोयाबीन के तेल के पायस का भी उपयोग किया जा सकता है।

3. **चींटियाँ -** विशिष्ट प्रजातियों के आधार पर, यह कीट फसल के विकास के किसी भी चरण में ड्रैगन फ्रूट पर हमला करता है। कुछ प्रजातियां विकास, अंकुर, कली या फल को सीधे नुकसान पहुंचाएंगी, जिसके परिणामस्वरूप पौधे की वृद्धि में देरी होगी या पौधे को चोट लगेगी। आमतौर पर इस कीट को नियंत्रित करने के लिए चारे का प्रयोग किया जाता है। एक अन्य अनुशंसित नियंत्रण उपाय प्रभावित पौधे के हिस्सों पर साबुन या क्लोरपाइरीफॉस-आधारित कीटनाशक का छिड़काव करना है।

4. **स्केल कीट या शाल्क कीट** – यह कीट तने या शाखाओं की सतह पर हमला करता है। पानी की खुराक के साथ तरल साबुन का छिड़काव करके इसे नियंत्रित किया जाएगा।

5. **फूल भृंग** – यह कीट फूल के प्रजनन भागों को फलों के विकास में बाधा उत्पन्न करता है। यह वास्तव में रासायनिक नियंत्रण द्वारा नियंत्रित करना है। खरपतवार नियंत्रण इस कीट को नियंत्रित करने और इसकी आबादी को नियंत्रित करने की विधि है।

6. **एफिड्स** – द्रुमयूका, माहू या एफिड छोटे आकार के कीट हैं जो पौधों का रस चूसते हैं। ये एफिडोडिया कुल में आते हैं। माहू समशीतोष्ण क्षेत्रों में कृषि में उगायी जाने वाली फसलों के सर्वाधिक विनाशकारी शत्रु हैं।

7. **थ्रिप्स** – थ्रिप्स, ऑर्डर थाइसानोप्टेरा, झालरदार पंखों वाले छोटे, पतले कीट होते हैं। पौषकों के ऊतक की एपिडर्मल (बाहरी) परत को छेदकर और कोशिका सामग्री को चूसकर भोजन करते हैं, जिसके परिणामस्वरूप पत्ती की सतह छिल जाती है, उसका रंग फीका पड़ जाता है, या चांदी जैसी हो जाती है।

प्रबंधन के उपाय:-

- सघन छत्रछाया से बचने के लिए छंटाई करें।
- वैकल्पिक पौषकों के साथ अंतरफसल न करें।
- प्यूपा कम करने के लिए गीली घास डालें।
- खेत की तैयारी के दौरान सभी पौधों के अवशेषों और स्वयंसेवी पौधों को जुताई के समय पलट कर नष्ट कर दें।
- खेत के चारों ओर कृषि-वानिकी और फूलों की पट्टियों के प्राकृतिक आवासों को शामिल करके प्राकृतिक शत्रुओं को बढ़ाएं।
- लैम्ब्डा-साइहेलोथ्रिन, साइपरमेथ्रिन, इमिडाक्लोप्रिड, एसिटामिप्राइड आदि का छिड़काव 1.0 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी की दर से करने की सलाह दी जाती है।
- डेल्टामेथ्रिन जैसे कीटनाशकों को 1.0 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें।
- एसीफेट 75 एसपी प्रति 1.0 ग्राम प्रति लीटर या क्विनालफॉस 25 ईसी 2.0 मिली प्रति लीटर या क्लोरपाइरीफॉस 25 ईसी 2.0 मिली प्रति लीटर या प्रोफेनोफॉस 50 ईसी प्रति 2.0 मिली या थायडिकार्ब 75 डब्लूपी 2.0 ग्राम प्रति लीटर का छिड़काव करें।

8. **नेमाटोड** – नेमाटोड के सामान्य लक्षणों में उपज में गिरावट के साथ पीलापन, बौनापन और मुरझाना शामिल है।

प्रबंधन – सस्य तरीकों में ग्रीष्मकालीन जुताई, जैविक खाद, फसल चक्र और संक्रमित फसल अवशेषों को नष्ट करना शामिल है। कार्बनिक पदार्थों की भारी मात्रा में मल्चिंग से *एच. मल्टीसिंक्टस* की संख्या कम हो जाती है। फलदार तनों को ऊपर उठाने से समय से पहले गिरने से रोकने में मदद मिलती है। क्रोटेलेरिया के साथ अंतरफसल लगाने से जड़ में आर. सिमिलिस की आबादी कम हो जाती है और पौधों की वृद्धि बढ़ जाती है। गन्ना, ज्वार, तम्बाकू, कसावा और अंगूर के फल के साथ फसल चक्र से *आर. सिमिलिस* के नियंत्रण से केले की उपज में उल्लेखनीय वृद्धि हुई। फसल के बाद उगाए गए चावल या हरे चने से पी. कॉफी, *एच. मल्टीसिंक्टस* और *आर. सिमिलिस* की संख्या कम हो जाती है और पौधों की वृद्धि बढ़ जाती है। भौतिक तरीकों में रोपण से पहले 20 मिनट के लिए 550 सेल्सियस पर गर्म पानी में संक्रमित ऊतकों को छीलकर और कीटाणुरहित करके निकालना शामिल है। केरल में, रोपण से पहले प्रकंद को 'धूप में सुखाने' की प्रथा को नेमाटोड के नियंत्रण में प्रभावी पाया गया है।

रासायनिक नियंत्रण – रोपण के समय 250 ग्राम ए.आई. प्रति पौधे पर नीम केककेले नेमाटोड के खिलाफ उपयोग किए जाने वाले सबसे प्रभावी और लोकप्रिय दानेदार नेमाटॅड हैं। 2-3 ग्राम ए.आई. प्रति पौधे पर ईथोप्रॉप उच्च लागत लाभ अनुपात के साथ नेमाटोड आबादी को कम करता है। चूसने वालों का रोपण पूर्व उपचार करने से संक्रमण कम हो जाता है या खत्म हो जाता है। कॉर्म को छीलना यानी संक्रमित हिस्से को हटाने के बाद ऑक्सामाइल (1 प्रतिशत) में डुबाने से *आर. सिमिलिस* और *एच. मल्टीसिंक्टस* दोनों खत्म हो गए। रोपण के समय मिट्टी में 4 ग्राम फेंसल्फोथियोन या ऑक्सामाइल प्रति पौधा लगाने और चार महीने बाद बार-बार उपचार करने से नेमाटोड की आबादी में कमी आई और उपज में वृद्धि हुई। नेमाटोड आबादी के प्रबंधन का सबसे अच्छा तरीका रोपण से पहले क्रमशः 42 और 17 ग्राम प्रति चूसक में फेंसल्फोथियान के साथ पेरिंग (चूसने वालों के संक्रमित हिस्से को हटाना) और प्रोलिनेजिंग (कुछ नेमाटोड के साथ चूसने वालों की कोटिंग) द्वारा प्राप्त किया जाता है।

बायोकंट्रोल: आशाजनक जैविक एजेंटों में कवक, पेसिलोमाइसेस लिलासिनस, वीएएम और जीवाणु, पाश्चुरिया पेनीट्रेंस शामिल हैं।

प्रतिरोध: कदाली, कुन्नन, पिसांग सेरिबू और आयिरंका पूवन जैसे कुछ जर्मप्लाज्म कम नेमाटोड आबादी का समर्थन करने के लिए जाने जाते हैं।

एकीकृत: रोपण से पहले सकर्स को छीलने और 55 डिग्री सेल्सियस पर 20 मिनट तक गर्म पानी में डुबाने, नीम की खली 400 ग्राम प्रति पौधा और कार्बोफ्यूरान 20 ग्राम प्रति पौधा लगाने से नेमाटोड की आबादी काफी कम हो जाती है और पौधे की वृद्धि में सुधार होता है।

प्रमुख रोग-

1. **कवक और जीवाणु के कारण तना सड़न** – यह या तो एक जीवाणु या एक कवक संक्रमण के कारण होता है। यह तने और ब्लेड के पीलेपन और सड़ांध के रूप में प्रकट होता है, जो *जैन्थोमोनास* और *इरवीनिया* बैक्टीरिया या कोलेटोट्राइकम एक कवक के कारण होता है। यह लाल-भूरे रंग के घावों के रूप में प्रकट होता है, घावों का केंद्र सफेद हो जाता है।

प्रबंधन – साप्ताहिक अंतराल में फसल के लिए प्रमाणित और रोगजनक के लिए उपयुक्त कॉपर कवकनाशी, मैंकोजेब और मेटालैक्सिल 1-2 मिली प्रति लीटर पानी का छिड़काव संक्रमण को नियंत्रित कर सकता है और पौधों की रक्षा कर सकता है। इसके अलावा, किसानों को सलाह दी जाती है कि वे संक्रमित पौधे के हिस्सों को छाँटकर नष्ट कर दें।

2. **तना और फल नासूर (*निओसायटेलीडियम डिमिडायटम*)** – यह कवक रोग दक्षिण फ्लोरिडा में सबसे अधिक प्रचलित है। दक्षिण पूर्व एशिया, मध्य पूर्व और उत्तरी अमेरिका में ड्रैगन फलों के बागानों में गंभीर समस्याएं दर्ज की गई हैं। एक छोटे से नारंगी केंद्र के साथ धंसे हुए क्लोरोटिक धब्बों के साथ तने पर लक्षण। खेल बड़े, उत्तल, नारंगी से लाल-भूरे रंग के खेलों में बदल जाएंगे, जो अक्सर बड़े भूरे घावों को बनाने के लिए विलीन हो जाते हैं।

प्रबंधन – इस रोग को नियंत्रित करने के लिए स्वच्छता बनाए रखने की सलाह दी जाती है। स्वच्छता कार्यक्रम के लक्ष्य है। रोगग्रस्त तनों को हटाकर और नष्ट करके रोगजनक आबादी को निम्न स्तर पर रखना। चंदवा के भीतर वायु प्रवाह और कवकनाशी के प्रवेश को बढ़ाने के लिए।

3. **एन्थ्रेक्नोज** – एन्थ्रेक्नोज, आम तौर पर पत्तियों पर काले घावों का होना हैं। गंभीर मामलों में यह टहनियों और तनों पर धंसे हुए घावों और नासूर का कारण भी बन सकता है।

प्रबंधन– कटाई से पहले मैंकोजेब 2.0 ग्राम प्रति लीटर या कार्बेन्डाजिम 1 ग्रामप्रतिलीटर या थायोफैनेट मिथाइल 1.0 ग्राम प्रतिलीटर या क्लोरोथालोनिल 2.0 ग्राम प्रतिलीटर का 15 दिनों के अंतराल पर 3 बार छिड़काव करने से एन्थ्रेक्नोज नियंत्रित होगा।

4. **ब्राउन स्पॉट/भूरा धब्बा** – लक्षण पत्तियों की ऊपरी और निचली दोनों सतहों पर गहरे भूरे, अनियमित धब्बों के रूप में शुरू होते हैं। जब घावों को बैक लाइट के सामने रखा जाता है तो उनमें आमतौर पर पीला या क्लोरोटिक प्रभामंडल दिखाई देता है। निकटवर्ती घाव अक्सर विलीन होकर अनियमित आकार के धब्बे बनाते हैं। पत्तियाँ पीली से भूरे रंग की हो जाती हैं।

प्रबंधन – खेत की स्वच्छता (गिरे हुए रोगग्रस्त फलों, पत्तियों और लताओं का संग्रह और निपटान)। घनत्व कम करने के लिए लताओं की छंटाई करें और इस प्रकार फसल के भीतर नमी कम करें। तांबा आधारित फफूंदनाशकों का समय पर छिड़काव करें।

5. **सॉफ्ट/नरम सड़न** – नरम सड़न के लक्षणों में नरम, गीला, सड़ा हुआ, भूरा या क्रीम रंग के ऊतक शामिल हैं। सड़न सतह पर शुरू होती है और अंदर की ओर बढ़ती है। संक्रमित ऊतक गहरे भूरे या काले किनारों द्वारा स्वस्थ ऊतक से स्पष्ट रूप से चित्रित होते हैं। फलों पर उथले नेक्रोटिक धब्बे मसूर की दाल के माध्यम से संक्रमण के परिणामस्वरूप होते हैं।

प्रबंधन – नियंत्रण में मरने वाले तनों को काटना और कश्वपर सल्फेट का छिड़काव करना शामिल है – समस्या शुरू होने से पहले सफेदी करना, समय पर कश्वपर आधारित फफूंदनाशकों का छिड़काव करना। इस रोग के प्रबंधन के लिए कश्वपर अश्वक्सी क्लोराइड (0.2 प्रतिशत) का उपयोग किया जा सकता है।

6. **फ्रूट रॉट/फलों का सड़ना** – *मोनिलिनिया* या *बोट्राइटिस* के कारण पके फलों के सड़ने से सख्त, गोलाकार धब्बे बन जाते हैं जो फलों पर तेजी से फैलते हैं। मोनिलिनिया फल पर गहरे भूरे रंग के घावों का कारण बनता है जो अंततः *स्यूडोस्क्लेरोटिया* (कवक ऊतक) के विकास से काले हो जाते हैं, जबकि बोट्राइटिस भूरे रंग के बीजाणुओं के साथ हल्के भूरे से भूरे रंग के घावों का कारण बनता है।

प्रबंधन – नियंत्रिण के लिए खरपतवार मुक्त योजना बनाए रखें और लक्षण दिखाई देने पर रोगग्रस्त पौधों (जैसे तने, फल और फूल) को तुरंत हटा दें और त्याग दें।

7. **तना कैंकर** – प्रारंभिक लक्षण लाल-भूरे रंग के घाव हैं जो शाखाओं या पत्ती के डंठल के आधार पर दिखाई देते हैं। छोटे घाव लंबे, धंसे हुए, गहरे भूरे रंग के नासूर में विकसित हो सकते हैं जो तने के ऊपर और नीचे फैलते हैं।

प्रबंधन – अत्यधिक रोशनी पौधे को जीवाणु सड़न जैसी बीमारियों के प्रति संवेदनशील बनाती है। इसके अलावा, धूप की जलन और कैल्शियम की कमी से रोग बढ़ जाता है। इसलिए, ड्रैगन फ्रूट की फसल की सुरक्षा के लिए किसानों को समय पर पता लगाने और आवश्यक सावधानियां बरतने की जरूरत है।

- स्टेम कैंकर लक्षण-टीकाकरण के 12, 26, 41, 55, 68 और 89 दिनों में चरण
- स्टेम एन्थ्रेक्नोज और
- फल एन्थ्रेक्नोज।

भारत में कुछ किसानों के खेतों में फल मक्खियों जैसे *बैक्ट्रोसेरा डॉर्सालिस* और *बैक्रोसेरा करेक्टा* के हमले की सूचना मिली थी और इनके कारण उपज में 35 प्रतिशत तक की हानि होती है (खान व साथी, 2016)। फल की अवस्था के आधार पर 3-7 दिनों के बाद भी उनके संक्रमण का पता लगाना मुश्किल होता है। हालाँकि, यह संक्रमण के तुरंत बाद फल के संक्रमित हिस्से का रंग बदल देता है, विशेष रूप से त्वचा और गूदे के संपर्क बिंदु पर। पानी और मिट्टी में पोषक तत्वों की आपूर्ति का अनुचित अनुपात और अत्यधिक जलवायु परिस्थितियाँ पौधों और फलों से संबंधित कई बीमारियों और विकारों का कारण बन सकती हैं। फलों से संबंधित विकार आकार, आकार, रंग और स्वाद आदि में परिवर्तन के माध्यम से प्रकट होते हैं। भारत में, लगभग 2-5 प्रतिशत ड्रैगन फ्रूट किसानों ने फलों के शरीर के अंदर सफेद जालीदार संरचना बनने की सूचना दी है। यह जांच का विषय है क्योंकि यह एक प्रकार का विकार या बीमारी है जिसमें फल बनने के

लिए जिम्मेदार कारक भी शामिल है। इसलिए, फलों के अंदर रोगों/विकारों की पहचान के लिए गैर-विनाशकारी विधि/यंत्रों को डिजाइन करने की आवश्यकता है। ड्रैगन फ्रूट पकने के दौरान चूहे और पक्षियों जैसे शिकारियों के लिए अतिसंवेदनशील होता है और वे 5-8 प्रतिशत तक नुकसान पहुंचा सकते हैं। चूहों और पक्षियों द्वारा फलों को होने वाले नुकसान को रोकने के लिए पौधों को जाल की आवश्यकता होती है।

ओरिएंटल फल मक्खी

मीली बग

चींटियाँ

स्केल कीट या फल्क कीट

फूल भृंग

एफिड्स

थ्रिप्स

नेमाटोड

तना सड़न

तना और फल नासूर

एन्थ्रेक्नोज

ब्राउन स्पॉट/भूरा धब्बा

सॉफ्ट/नरम सड़न

फ्रूट रॉट/फलों का सड़ना

तना कैंकर

शिमला मिर्च की फसल में समन्वित नाशीजीव प्रबंधन

गजेन्द्र सिंह[1] एवं अर्चना अनोखे[2]

[1]कृषि विज्ञान केन्द्र, अमिहित, जौनपुर (उ.प्र.)
[2]भा.कृ.अनु.प.-खरपतवार अनुसंन्धान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)

हमारे देश में उगाई जाने वाली विभिन्न प्रकार की सब्जियों में शिमला मिर्च (*कैप्सिकम एनम*) का एक महत्वपूर्ण स्थान है । शिमला मिर्च विटामिन, खनिजों तथा पोषक तत्वों की प्रचुरता के कारण भोजन में प्रमुख स्थान रखती है। हमारे देश में इसकी निम्न उत्पादकता तुलनात्मक रूप से अन्य देशो की अपेक्षा कम होती है। इसकी निम्न उत्पादकता के कारणों में एक प्रमुख कारण नाशीजीवों जैसे कीट, रोग तथा सूत्रकृमि आदि का लगातार बढ़ता जा रहा प्रकोप है। इन नाशीजीवों के द्वारा होने वाली क्षति को कम करने के लिए अधिक मात्रा मे रासायनिक दवाईयों का छिड़काव, 10-12 बार किया जाता है। जिसके कारण रासायनिक दवाईयों का उपभोक्ताओ के स्वास्थ्य पर न केवल प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है बल्कि ये रासयनिक नाशीजीवो मे प्रतिरोधी क्षमता का विकाश, पर्यावरण प्रदूषण तथा किसानो के स्वास्थ्य पर भी बुरा प्रभाव डालते है और खेतो मे उपस्थित प्राकृतिक शत्रुओ को भी नष्ट कर देते है, इसलिए ऐसी परिस्थिति मे इस समस्या को कम करने के लिए नाशीजीव प्रबंधन की आवश्यकता है।

प्रमुख नाशीजीव

चेपा : यह नाशीजीव फरवरी से मार्च तक सक्रिय रहता है तथा इसकी पंख एवं पंख विहीन दो प्रकार की प्रजातियाँ पायी जाती हैं। इसका आक्रमण मुख्यतः शुष्क एवं ठंडे वातावरण में होता है जब तेज वर्षा होती है तो यह बह जाता है। चेपा पौधों के मुलायम हिस्सों तथा पत्तियों के नीचे की सतह धरातल से रस द्रव को चूसता है जिससे पौधों के विकास की शक्ति में कमी आ जाती है। पत्तियों पर ये शहद जैसे पदार्थ बूंदों का स्राव भी करते हैं जो मक्खियों तथा चीटियों को आकर्षित करती है। ये नाशीजीव विषाणु रोगों को भी फैलाते हैं।

सफेद मक्खी: इसके अर्भक पत्तियों पर चिपके रहते हैं। प्रौढ़ों का आकार सूक्ष्म पतंग मोथ के समान पीलापन लिए होता है। अर्भक तथा प्रौढ़ अधिकतर पत्तियों के निचले सतह (निचले धरातल) से रस द्रव को चूसते हैं और शहद जैसे पदार्थ की बूंदों का स्राव करते हैं जो चिपचिपापन पैदा करके पत्तियों का आकार मोड़ छोटा कर देते हैं। यह कीट पत्ती मोड़क रोग को फैलाता है। उच्च आर्द्रता सफेद मक्खी की संख्या वृद्धि बढ़ाने में सहायक पायी गई है।

थ्रिप्स : ये सूक्ष्म, पतले तथा रेंगते हुए पत्तियों एवं फूलो पर पाए जाते हैं। शुष्क मौसम में वृद्धि के कारण इनका प्रकोप बढ़ जाता है। यह नर्सरी से मुख्य खेत में पहुचते हैं। अर्भक तथा प्रौढ़ पत्तियों के ऊतकों से रस द्रव चूसते हैं। थ्रिप्स फसल को पूरे जीवन काल तक नुकसान करते हैं। इनके द्वारा पौधों के प्ररोह, आंख और फूलों पर आक्रमण किया जाता है जिससे ग्रसित अंगों की संरचना बिगड़ जाती है। प्रभावित पौधे बौने तथा पत्ती विहीन हो जाते हैं और नयी कलिया आँखें भंगुर होकर गिर जाती हैं।

फल भेदक : ये नाशीजीव पौधे के प्रजनन के समय सक्रिय होते हैं लेकिन ये पत्तियों को भी प्रभावित करते हैं। पूर्ण विकसित सूंडी हरे सेब के रंग जैसी होती है। प्यूपा भूमि के अन्दर बनते हैं। लार्वा फलों में छेद करके नुकसान करता है और फल के आन्तरिक भाग को खा जाता है। तथा बड़ा गोलाकार छिद्र बना देता है।

तम्बाकू की सूंडी: यह नाशीजीव वानस्पतिक वृद्धि तथा फल निर्माण की अवस्था में आक्रमण करके काफी नुकसान करता है। यह कीट रात्रिचर होता है लेकिन दिन में भी अपनी अग्रिम अवस्था में बड़ी संख्या में पाया जाता है।

कट वर्म: यह कीट जनवरी-मार्च में आता है तथा इसकी सूंडी रात में सक्रिय होती है। सूंडी पौधे के आधार पर शाखाओं को भी काटती है तथा सूंडी कटे हुए पौधों के हिस्सों को खींचकर मिट्टी में खाने के लिए ले जाती हैं। तनों तथा शाखाओं के कटे स्थान पर इनकी उपस्थिति अवश्य होती है।

उकठा रोग (*फ्युजेरियम सोलेनाई*): के कारण होने वाले मृदा रोग में, पौधे में मुरझाने (उकट्टा) के लक्षण चित्रित होते हैं व पत्तियां ऊपर व नीचे की तरफ मुड़ जाती हैं। प्रारंभ में, उकट्ट अधिकतर रुके पानी वाले निचले क्षेत्रों में पैच में प्रकट होता है और शीघ्रता से जल वाहिकाओं के साथ सिंचाई के माध्यम से फैल जाता है। समय के साथ लक्षण स्पष्ट होते जाते हैं, संवहनी बंडल भूरे रंग में बदल जाता है और विशेष रूप से ग्रीवा क्षेत्र और जड़ों में यह फीके रंग का हो जाता है।

विषाणु (वायरस): मोजेक हल्के हरे तथा गहरे हरे चकत्ते पत्तियों पर दिखाई देते हैं परिणामस्वरुप पौधों की वृद्धि रुक जाती है और पौधे बौने हो जाते हैं। पीलापन लिए हुए पत्तियों का आकार, छोटी-छोटी झाडूनुमा बन जाता है। यह रोगचेंपा के द्वारा फैलता है। पौधे मरते नष्ट नही होते हैं लेकिन उत्पादन लगभग 40 प्रतिशत कम हो जाता है।

मूल ग्रन्थि सूत्रकृमि: ये नाशीजीव पौधों की जड़ों को नुकसान कर, जल तथा पोषक तत्वों को ग्रहण करने में अवरोध रूकावट पैदा करके प्रभावित करते हैं। पौधे की जड़ों पर सूजन लिए हुए गांठें होती हैं। पौधे बौने एवं रंग विहीन बदरंग होकर नष्ट हो सकते हैं। ग्रसित पौधे शुष्क और गर्म मौसम में सूख जाते हैं।

सूर्य तापीय (सूर्य तपन) धब्बे : पौधे के बाह्य सतह आकार पर होने वाला असामान्य प्रभाव है जो सूर्य की किरणों द्वारा सीधे सम्पर्क में आने वाले फलों को प्रभावित करता है। फलों पर सूर्य की किरणों से सीधे सम्पर्क में आने वाले भाग की तरफ सफेद बेजान धब्बे प्रकट हो जाते हैं। इसके कारण फलों का गूदा हल्का शुष्क एवं परतदार हो जाता है तथा फल के एक तिहाई हिस्से को प्रभावित कर सकता है। पौधे पर कम पत्तियों का पौधे पर होना इस स्थिति को और गम्भीर बना देता है। उचित प्रजाति का चयन करके घनी पत्तियों वाले पौधों से इस समस्या से निदान पाया जा सकता है।

समन्वित नाशीजीव प्रबन्धन क्रियाएं (प्रणाली)

नर्सरी के समय

- आद्र गलन रोग सड़न एवं अन्य मृदा जनित रोगों से बचाव के लिए विशेषज्ञ की देख-रेख में स्थापित निर्देशानुसार प्रोटोकॉल के अनुसार मिट्टी का सूर्य तापीकरण तीन से छह सप्ताह तक सिंचाई के बाद 45 गेज (0.45 मि.मी.) की पारदर्शी पौलिथीन शीट से दोनों तरफ से कस कर ढ़के, ताकि मिट्टी में पर्याप्त नमी बनी रहे।

- पाला तथा ठण्ड से बचाव के लिए दिसम्बर-जनवरी के मध्य पौधशाला की क्यारियों के एक तरफ खसखस की टाट्टी लगाएं। रात को पाले से बचावके लिए पॉलीथीन की चादर से ढकें जिसे दिन के समय अवश्य हटा दें।
- जड़ सड़न तथा मृदा-जनित रोगों से बचाव हेतु पौधशाला की क्यारियां को अच्छी जल निकासी के लिए भूमि के धरातल से लगभग 10 से.मी. के ऊंचाई तैयार पर करें।
- विश्वसनीय स्रोत से प्राप्त 150 ग्रा. *ट्राइकोडर्मा* की सूक्ष्म स्ट्रेन को 3 कि.ग्रा. गोबर की खाद में मिलाएं और 7-14 दिनों के लिए संवर्धन के लिए छोड़ दें व उसके पश्चात 3 वर्ग मीटर क्यारी में ट्राईकोडर्मा संवर्धित खाद को मिट्टी में मिला दें।
- बीज का शोधन *ट्राइकोडर्मा विरिडी* से 7-10 ग्राम प्रति कि.ग्रा बीज की दर से करें। *स्यूडोमोनास फ्लोरेसेंस* 10 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर अथवा *ट्राइकोडर्मा विरिडी* 4 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से, उपचार के रूप में भी उपयोग किया जा सकता है।
- आद्रगलन के प्रबंधन के लिए 75 डब्ल्यूपी 0.25 प्रतिशत की दर या कैप्टन 75 डब्ल्यूएस 0.2-0.3 प्रतिशत की दर या मेटलैक्सिल मैनकोजेब प्रति 0.3 प्रतिशत के साथ आवश्यकता आधारित मिट्टी में ड्रेंचिंग करें।

मुख्य फसल

- भूमि में अतिरिक्त पानी की निकासी के लिए पर्याप्त व्यवस्था होनी चाहिए, ताकि विशेष रूप से ढलान के निचले सिरे पर, पानी का ठहराव ना हो पाए।
- फफूंद एवं मृदा जनित मुरझा रोग के प्रबंधन के लिए विश्वसनीय स्रोत से प्राप्त ट्राइकोडर्मा के प्रभावी स्ट्रेन को 5 कि.ग्रा. प्रति हे. की दर से सड़ी गोबर की खाद पर बिखराव करें। ट्राइकोडर्मा गोबर में मिला दें और मिलाते समय हर मोड़ पर पानी से हल्का छिड़काव करे, उसके बाद बोरी से ढ़कने के बाद 10-15 दिनों के लिए छाया में रख दें उक्त

गोबर की खाद को कम से कम एक टन अच्छी तरह से सड़ी हुई कम्पोस्ट खाद के साथ मिलाएं और भूमि की तैयारी के समय एक एकड़ क्षेत्र में बिखराव करें ।

- सफेद मक्खियों से बचाव के लिए अवरोधक या बाधा फसलों के रूप में जैसे मक्का, ज्वार, बाजरा या फली आदि की 2-3 पंक्तियां लगायें।
- 4 डेल्टा स्टिकी ट्रैप प्रति एकड़ की दर से लगाएं, यह ट्रैप टिड्डों, चेंपा तथा सफेद मक्खी आदि के प्रबंधन में सहायक होते हैं।
- नीम सार (एन.एस.के.इ.) 5 प्रतिशत का छिड़काव आवश्यकतानुसार चेपा, थ्रिप्स, टिड्डे और सफेद मक्खी के लिए करें। नीम के बीज के अर्क को 5 प्रतिशत के 2-3 छिड़काव थ्रिप्स के लिए जब इसका स्तर 1-2 हो, पौध रोपण के 15-20 दिन के अन्तराल पर करें। इससे थ्रिप्स की अधिकतर संख्या कम हो जाएगी। यदि थ्रिप्स और सफेद मक्खी की संख्या ज्यादा बनी रहती है तो स्पाईनोसेड 45 एस.सी. (0.3 मिली. प्रति लीटर) या फिप्रोनिल 5 एस.सी. (2 मिली. प्रति लीटर) या इमिडाक्लोरोप्रिड 17.80 एस एल का 0.3 मिली. प्रति लीटर अथवा पानी के घोल में छिड़काव करें।
- परभक्षी पक्षियों को आकर्षित करने के लिए, टी आकार के पक्षियों के बैठने के लिए बांस के 25 डंडे प्रति हे. की दर से गाड़े जायें।
- पौध रोपण के समय पौध को *स्यूडोमोनास फ्ल्युरेंसेस* के 10 मि.ली. प्रति लीटर पानी के घोल के साथ में 10 मिनट तक डुबोकर रखें।
- 5 फेरोमोंस प्रपंच प्रति हैक्टर की दर से खेत में लगाएं ताकि *हेलीकोवर्पा, स्पोडोप्टेरा* के प्रौढ़ की निगरानी कर सकें।
- अण्डे का परजीवी, *ट्राइकोग्रामा* प्रजाति को एक लाख प्रति हैक्टर की दरसे एक सप्ताह के अन्तराल पर 4-5 बार छोड़ें।
- समय-समय पर एच.एन.पी.वी. एवं एस.एल.पी.वी. का 250 ली. प्रति हैक्टर पौधरोपण के 60 दिन पर या प्रारंभिक अवस्था में 2-3 बार छिड़काव अथवा जब जरुरत हो तब छिड़काव करें।
- जैव नाशीजीव नाशकों (जैसे एमामेक्टिन बेंजोएट 5 प्रतिशत प्रति डब्ल्यू.जी.) 0.4 ग्राम प्रति लीटर अथवा स्पाइनोसैड 45 एससी 0.32 मि.ली. प्रति लीटर की दर से जब सूंडी छोटी हो छिड़काव करें। इन जैव नाशीजीव नाशकों का छिड़काव शाम के समय करें।
- रासायनिक कीटनाशकों इन्डोक्साकार्व 14.5 एस.सी. 0.66-1.11 मिली. ली. प्रति लीटर अथवा नोवालुरोन 10 ई.सी. 0.75 मिली.ली. प्रति लीटर की दर से फूल बनने के समय एवं फल बनने के समय फल भेदक से बचने के लिए छिड़काव करें।
- समय-समय पर फलभेदक से ग्रसित फलों तथा पौधों के रोगग्रसित भागों को अलग करके नष्ट करते रहने से कीट तथा रोगों के प्रकोप को कम कर सकते हैं। फसल के अवशेषों को नष्ट करने से कीट एवं बीमारियों को बढ़ने से रोका जा सकता है। फसल की कटाई के बाद खेत की तुरंत जुताई करें।
- समय-समय पर पत्ती मोड़क या झुलसा (मौजेक) रोग ग्रसित पौधों को उखाड़ कर नष्ट करते रहें।
- पत्तियों कों पर्याप्त विकास से सूर्य के तपन से फल को होने वाली सन स्काल्ड क्षति को कम कर सकते हैं।
- जहाँ भी संभव हो ड्रिप सिंचाई का सहारा लें *फ्युजेरियम* मुरझान और अन्य मिट्टी जनित रोगों के प्रबंधन के लिए पानी के ठहराव को न होने दें, अत्यधिक रुके हुये पानी की निकासी शीघ्रता से करें।
- एक ही रासायनिक कीटनाशक का बार-बार या अनुचित छिड़काव के कारण सफेद मक्खियों, अन्य चूसक कीटो में कीट पुनरुत्थान हो जाता है इसलिए केवल सिफारिश की गई रासायनिक कीटनाशकों का बिना दोहराए अंतिम उपाय के रूप में विवेकपूर्ण ढंग से प्रयोग करें। किसी विशेष रसायन के उपयोग से पहले कीटनाशक प्रतिरोध की जांच कर लें, ताकि छिड़काव करने वाले कीटनाशक का उचित चुनाव किया जा सके।
- सूर्य तपन से फसल को बचाने के लिए खेत में ढेंचा की एक कतार बार्डर पर लगानी चाहिए, जिससे फसल को गर्म हवाओं से बचाया जा सके।

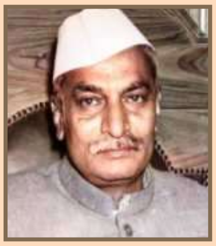

हिन्दी चिरकाल से ऐसी भाषा रही है जिसने मात्र विदेशी होने के कारण किसी शब्द का बहिष्कार नहीं किया।

-डॉ. राजेंद्र प्रसाद

फॉल आर्मीवर्म एवं आभासी आर्मीवर्म का जीवन-चक्र एवं समेकित कीट प्रबंधन

राजेश मीणा[1], मोगली रम्मैया[1], अर्चना अनोखे[2], मुकेश कुमार मीणा[2] एवं मुकेश कुमार ढिल्लों[1]

[1]भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली

[2]भाकृअनुप-खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)

इस कीट की दुनिया भर में छह महाद्वीपों में लगभग 30 विभिन्न प्रजातियाँ दर्ज की गई हैं। नोक्टुइडे परिवार के सदस्यों को आमतौर पर कटवर्म या आर्मीवर्म के रूप में जाना जाता है और यह सुपर कुल नोक्टुओइडिया में सबसे विवादास्पद परिवार है, क्योंकि इसके कई समूह नोक्टुओइडिया के अन्य परिवारों के साथ लगातार बदल रहे हैं। वर्तमान में, सुपर कुल नोक्टुओइडिया में लगभग 1,089 कुल और 11,772 प्रजातियों के साथ नोक्टुइडे दूसरा सबसे बड़ा परिवार है। स्पोडोप्टेरा के कैटरपिलर एशियाई उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में कृषि फसलों के सबसे महत्वपूर्ण कीट हैं और उष्णकटिबंधीय और समशीतोष्ण एशिया, ऑस्ट्रेलिया और प्रशांत द्वीपों में व्यापक रूप से पाए जाते हैं। स्पोडोप्टेरा की प्रजातियां पूरी तरह से बहुभक्षी हैं और इनमें नए प्रक्षेत्रों पर आक्रमण करने तथा नई जलवायु और पारिस्थितिक स्थितियों के अनुकूल होने की भारी क्षमता होती है। सभी प्रजातियों में से, फॉल आर्मीवर्म एक प्रमुख आक्रामक कीट है जो मक्का और कई फसलों को गंभीर रूप से नुकसान पहुंचाता है। फॉल आर्मीवर्म के नुकसान के लक्षण लगभग सभी आर्मीवर्म के समान होते हैं, इसलिए इन कीटों को ईटीएल से नीचे रखने के लिए उचित पहचान और उचित प्रबंधन प्रथाओं की आवश्यकता होती है।

फॉल आर्मीवर्म, *स्पोडोप्टेरा फ्रुगीपरडा*, (नोक्टुइडे : लेपिडोप्टेरा):

यह प्रजाति संयुक्त राज्य अमेरिका से अर्जेंटीना तक पश्चिमी गोलार्ध के उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों की मूल निवासी है। मई 2018 में, इस कीट की पहली रिपोर्ट कर्नाटक के शिवमोग्गा में कृषि और बागवानी विज्ञान विश्वविद्यालय के परिसर में मक्का (जिया मेज) के खेतों में देखी गई थी।

वैकल्पिक होस्ट:- यह बहुभक्षी कीट है। यह घास, मक्का, मीठी मक्का, ज्वार, खरपतवार, डिजिटेरिया प्रजाति, रिजका, जौ, कुट्टू, कपास, बाजरा, मूंगफली, चावल, गन्ना, सोयाबीन, तंबाकू, गेहूं, चौलाई की प्रजाति और सब्जियाँ आदि को पसंद करता है।

पहचान :- वयस्क मोथ के सिर से पिछले पंख तक के सिरे में 32 से 40 मिमी लंबी धारियां होती, आगे का पंख भूरे या स्लेटी रंग का होता है और पिछला पंख सफेद होता है। इसमें थोड़ी यौन द्विरूपता होती है, जिसमें नरों के पास अधिक पैटर्न होते हैं एवं उनके प्रत्येक अग्र पंख पर एक अलग सफेद धब्बा होता है।

कैटरपिलर:-पहला लार्वा इंस्टार हल्के रंग का और बड़ा गहरा सिर वाला होता है। जैसे-जैसे वे इंस्टार के माध्यम से विकसित होते हैं, वे सफेद लंबाई वाली रेखाओं के साथ भूरे रंग के हो जाते हैं। उनमें कांटों के साथ काले धब्बे और दूसरे अंतिम खंड पर पूर्ण चौकोर आकार में व्यवस्थित बालों के साथ चार काले दाने जैसे धब्बे भी विकसित होते हैं, जिनकी व्यवस्था अन्य खंडों के धब्बों से भिन्न होती है।

जीवन-चक्र:- फॉल आर्मीवर्म का जीवन चक्र गर्मियों के दौरान 30 दिनों के अन्दर पूरा हो जाता है, तथा बसंत एवं शरद ऋतु के मौसम में 60 दिनों के अन्दर पूरा होता है। सर्दियों के दौरान, इन कैटरपिलर का जीवन चक्र लगभग 80 से 90 दिनों तक चलता है। एक वर्ष में एक कीट की पीढ़ियों की संख्या जलवायु के आधार पर भिन्न होती है, लेकिन अपने जीवन काल में एक मादा आम तौर पर लगभग 1,500 अंडे देती है। क्योंकि लार्वा शुषुप्तावस्था में प्रवेश नहीं कर पाता, इसलिए यह ठंड तापमान में जीवित नहीं रह पाता। आर्मीवॉर्म का अंडा गुंबद के आकार का होता है और इसका व्यास लगभग 0.4 मिमी और ऊंचाई 0.3 मिमी होती है। मादाएं पत्तियों के नीचे की तरफ अंडे देना पसंद करती हैं, लेकिन अधिक संख्या के कारण उन्हें कहीं भी दे देती हैं। गर्म मौसम में अंडे कुछ ही दिनों में लार्वा में बदल जाते हैं।

क्षति के लक्षण:- लार्वा मक्के की पत्तियों को खाते हैं और मक्के के टेसल एवं बालों पर भी आक्रमण करते हैं। इनकी क्षति पत्तियों, टेसल एवं बालों पर कटे-फटे छेदों के रूप में दिखाई देती है। अधिक मात्रा में खाने से मक्का ऐसे दिखाई देती है जैसे ओलों से क्षतिग्रस्त हो गयी हो। लार्वा कीटनाशक अनुप्रयोगों से कुछ हद तक सुरक्षित रहते हैं। लार्वा छह अलग-अलग इंस्टार से गुजरते हैं, जिनमें से प्रत्येक शारीरिक उपस्थिति और पैटर्न में थोड़ा भिन्न होता है। लार्वा प्रक्रिया 14 से 30 दिनों तक चलती है, यह तापमान पर निर्भर करता है। इसके बाद लार्वा 7 से 37 दिनों तक जमीन के नीचे मिट्टी और रेशम के कोकून में प्यूपेट करते हैं। प्यूपा चरण की अवधि और अस्तित्व पर्यावरण के तापमान पर निर्भर करता है। एक बार निकलने के बाद, वयस्क लगभग 10 दिनों तक और कभी-कभी 21 दिनों तक जीवित रहते हैं, मादा अपने अधिकांश अंडे जीवन की शुरुआत में ही देती है।

क्षति के लक्षण

फाल आर्मीवर्म (*स्पोडोप्टेरा फ्रुगीपरडा*) का एकीकृत प्रबंधन

- किसानों को शिक्षित करना।
- रेडियो, टीवी और अन्य मीडिया के माध्यम से चेतावनी।
- फाल आर्मीवर्म की निगरानी के लिए फेरोमोन जाल लगाना।
- फॉल आर्मीवर्म की पहचान करना।
- फॉल आर्मीवर्म की जैव-पारिस्थितिकी पर अध्ययन करना।
- प्रक्षेत्र में फाल आर्मीवर्म के प्राकृतिक शत्रुओं का संग्रह करना।
- प्राकृतिक शत्रुओं के बचाव के लिए अत्यधिक खतरनाक कीटनाशक छिड़काव से बचना चाहिए।
- नियमित रूप से फसल की निगरानी करें और अंडों के समूह को इकट्ठा करके उन्हें नष्ट कर दें।
- मक्का विशेषकर मीठे मक्के की छिटकवा विधि की बुआई से बचें।
- 8-10 प्रति एकड़ की दर से फेरोमोन ट्रैप लगाना चाहिए।
- वैकल्पिक होस्टों से बचने के लिए स्वच्छ खेती करनी चाहिए।
- उर्वरकों के संतुलित प्रयोग से फॉल आर्मीवर्म (सैनिक कीट) की घटनाओं को कम करने में मदद मिलती है, क्योंकि उर्वरकों के संतुलित प्रयोग से पौधे की प्रतिरक्षा बढ़ती है।
- उपयुक्त फसलों के साथ अन्तरवर्ती फसल लगाएं। फाल आर्मीवर्म अन्तरवर्ती पर अंडे देने से बचती है और यह प्राकृतिक शत्रुओं के निर्माण में भी मदद करता है।
- फसल के शुरुआती चरण में 10 प्रति एकड़ की दर से पक्षियों के लिए पक्षी बसेरा लगाने से इनकी संख्या को कम करने में मदद मिलती है।
- नेपियर घास जैसी आकर्षक फसलों का उपयोग करना चाहिए जो अंडे देने के लिए आकर्षित करती है।
- फाल आर्मीवर्म के लिए डेस्मोडियम एक प्रतिकारक के रूप में कार्य करता है।
- परजीवी कीट जैसे कि टेलीनोमस रीमस, चेलोनस इंसुलरिस, ट्राइकोग्रामा एसपी, और लार्वा पैरासिटोइड्स कोटेसिया मार्जिवेंट्रिस के अंडे को फसलो में छोड़ना चाहिए। जो लगभग सभी कटवर्म और आर्मीवर्म को नियंत्रित करता है।
- जैव-कीटनाशकों का प्रयोग करना चाहिए।
- नीम के बीज की गिरी का अर्क (नीम फॉर्मूलेशन 1500 पीपीएम) प्रयोग करना चाहिए।
- जब प्रकोप कम हो, तो पौधों के केन्द्र में क्लोरपाइरीफॉस 20 ईसी/2 मिलीलीटर या क्विनालफॉस 25 ईसी/2 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी का छिड़काव करें।
- बाद के इंस्टार्स के प्रबंधन के लिए जैव कीटनाशकों जैसे स्पिनोसैड 45 एससी/0.3 मिली प्रति लीटर, इमामेक्टिन बेंजोएट 5 एसजी 0.4 ग्राम/लीटर पानी का पौधों में घोल बनाकर डालें।
- जब कीट का प्रकोप बहुत अधिक हो (यदि आवश्यक हो) तो क्लोरेंट्रानिलिप्रोल/0.3 मिली या इंडोक्साकार्ब 1 मिली/लीटर या लैम्ब्डा-साइहलोथ्रिन/1 मिली/लीटर पौधों घोल बनाकर डालें।

निष्कर्ष :-

फॉल आर्मीवर्म (*स्पोडोप्टेरा फ्रुगीपरडा*) हाल ही में अफ्रीकी महाद्वीप में पाया गया है और पहले ही भारत सहित कई देशों में पहुंच चुका है। भारत में, इस कीट ने 2018 में मक्के की फसल को भारी नुकसान पहुंचाया था। क्योंकि भारत में, गर्म और नमीयुक्त गर्मी के मौसम में मक्के की बुआई करने से कीट को तेजी से बढ़ने और अधिक क्षेत्रों में फैलने के लिए अनुकूल वातावरण मिलता है। इसलिए, प्रभावी नियंत्रण पर ध्यान केंद्रित किया जाना चाहिए, क्योंकि स्थायी प्रबंधन विकसित किए बिना इस कीट से बचना असंभव है। इसके अलावा, कृषक समुदायों के बीच कीट के जीवन चरणों के बारे में जागरूकता बढ़ाने साथ ही इसके प्राकृतिक शत्रुओं की तलाश करने, फसल के सही चरणों को समझने की तत्काल आवश्यकता है, नही तो उच्च आर्थिक क्षति हो सकती है। फाल आर्मीवार्म और कीट के स्थायी प्रबंधन के लिए प्रबंधन अनुप्रयोग और कम लागत वाली कृषि संबंधी प्रथाओं और अन्य परिदृश्य प्रबंधन प्रथाओं को लागू करना चाहिए। आर्मीवार्म के टिकाऊ प्रबंधन के लिए कम लागत, पर्यावरण की दृष्टि से सुरक्षित और प्रभावी तकनीकी हस्तक्षेप (जैसे एकल और पिरामिड-जीन बीटी मक्का) को लघु, मध्यम और दीर्घकालिक में लागू करना महत्वपूर्ण है। चूंकि फाल आर्मीवार्म भारत में एक नया आक्रामक कीट है, इसलिए इसके जीवन- चक्र, पारिस्थितिकी, प्रसार तंत्र और प्रभावी निवारक कार्यवाहियों के बारे में कई जानकारी की कमियां हैं जिनकी छोटे किसानों के लिए विज्ञान-आधारित, प्रभावी प्रबंधन रणनीतियों की सिफारिश करने से पहले जांच की जानी चाहिए।

हरी खाद से भूमि की उर्वरता मे सुधार

उत्कर्ष सिंह, आनंद सिंह, अभिनन्दन सिंह, विश्व विजय रघुवंशी एवं मयंक मणि त्रिपाठी

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)

सघन कृषि पद्धति के विकास एवं नगदी फसलों के क्षेत्रफल में बढोतरी के कारण, हरी खाद के प्रयोग में वर्तमान समय में भारी कमी आई है लेकिन आजकल बढ़ते उर्जा संकट, उर्वरकों के मूल्यों में वृद्धि तथा कार्बनिक खादो (गोबर की खाद, कम्पोस्ट) की सीमित आपूर्ति से आज हरी खाद का महत्व और अधिक बढ़ गया है। यदि किसान भाई अपने खेत में हरी खाद का प्रयोग करते हैं तो उनके उत्पादन में वृद्धि के साथ-साथ पर्यावरण का भी संरक्षण होता है तथा उत्पादन लागत भी कम होगी।

हरी खाद की फसल उस फसल को कहते हैं जिसकी खेती मुख्यत: भूमि में पोषक तत्वों को बढ़ाने के साथ-साथ उसमें जैविक पदार्थो की पूर्ति करने के उद्देश्य से की जाती है। इसके लिए प्राय: दलहनी एवं गैर दलहनी फसलों को उनकी हरी अवस्था में मिट्टी में मिला दिया जाता है तथा इस क्रिया को हरी खाद देना कहते हैं।

हरी खाद के लिए उपयुक्त फसल का चयन

हरी खाद के लिए मुख्यत: दलहनी फसलें ही अधिक लाभदायक होती हैं। हरी खाद में प्रयुक्त होने वाली फसलों में निम्न विशेषताएं होनी चाहिए:-

- कम समय में अधिक वनस्पतिक वृद्धि हो।
- फसलों के वनस्पतिक भाग मुलायम एवं बिना रेशे वाले हो तथा कम समय में मृदा में अपघटित हो जाए।
- फसलों की जड़ों में अधिक मात्रा में ग्रंथियां हो ताकि वायुमंडल की नाइट्रोजन को अधिक मात्रा में स्थिरीकरण कर सके।
- फसल की जल मांग बहुत कम हो।
- कीटों व रोगों से प्रभावित न हो।
- विभिन्न प्रकार की मृदाओं (क्षाणिय, लवणीय) में अच्छी बढ़वार हो।
- जलवायु की विभिन्न परिस्थितियों जैसे अधिक तापमान, कम तापमान, कम या अधिक वर्षा को सहन करने वाली हो।

हरी खाद उगाने की विधि

सिंचित अवस्थाओं में मानसून आने के 35 से 45 दिन पूर्व या असिंचित अवस्था में मानसून आने के तुरंत बाद खेत की हल्की जुताई करके हरी खाद की फसल को बोना चाहिए। हरी खाद बोने के समय 15 से 20 किलोग्राम नत्रजन तथा 40 से 45 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर की दर से फास्फोरस देना चाहिए।

हरी खाद के लिए फसल को बुवाई करते समय खेत में पर्याप्त नमी का होना आवश्यक है तथा बरसात न होने की दशा में 15 दिन के अंतराल पर एक या दो सिंचाई कर देनी चाहिए जिसमें फसल की बढ़वार अच्छी होती है तथा फसल के वानस्पतिक भाग मुलायम होते है।

फसल को खेत में मिलाते समय ध्यान रखें कि फसल अपरिपक्व अवस्था में हो तथा फूल निकलना प्रारंभ हो गऐ हो। इस अवस्था में वनस्पति वृद्धि अधिक होती है तथा पौधों की शाखाएं व पत्तियां मुलायम होती हैं एवं फसल का कार्बन नाइट्रोजन अनुपात भी कम होता है। सनई की फसल में 50 से 55 दिन बाद एवं ढैंचा की फसल में 45 दिन बाद यह अवस्था आती है।

फसल को पलटने के लिए मिट्टी पलटने वाले हल या रोटावेटर से पलट कर फसल को मृदा में अच्छी प्रकार मिला देनी चाहिए। इसके बाद खेत में 5 से 10 दिन तक 4 से 5 सेंटीमीटर पानी भरा रहना चाहिए जिससे पौधों का अपघटन तेजी से हो।

हरी खाद के लाभ

1. हरी खाद नत्रजन व कार्बनिक पदार्थो के साथ-साथ मिट्टी में कई पोषक तत्व भी उपलब्ध कराती है।
2. हरी खाद के प्रयोग से मृदा में वायु संचार जलधारण क्षमता में वृद्धि, सूक्ष्मजीवों की संख्या एवं क्रियाशीलता में वृद्धि के साथ-साथ उसकी उर्वरा शक्ति एवं उत्पादन क्षमता में भी बढ़ोतरी होती है।
3. मृदा में पोषक तत्वों का संरक्षण एवं एकत्रीकरण कर मृदा की अघोसतह में सुधार होता है।
4. हरी खाद के प्रयोग से मृदा क्षरण में कमी होती है।
5. हरी खाद के प्रयोग से खरपतवार नियंत्रण में मदद मिलती है।
6. फसलों के उत्पादन में वृद्धि के साथ-साथ रसायनिक उर्वरकों का उपयोग कम करके धन की बचत कर टिकाऊ खेती कर सकते हैं।
7. मिट्टी की भौतिक संरचना अच्छी होती है।

बागवानी फसलों में सिंचाई प्रबंधन

मनु त्यागी, पुनीत शर्मा एवं बिक्रमजीत सिंह

कृषि विज्ञान केंद्र, पठानकोट (पंजाब)

जल अमूल्य है। भारतवर्ष में भूजल का 80 प्रतिशत कृषि क्षेत्र उपयोग करता है। सिंचाई जल की नियमित उपलब्धता द्वारा कृषि, बागवानी एवं पुष्पोत्पादन के क्षेत्र में गुणवत्तायुक्त उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है। परन्तु शहरीकरण, औद्योगिकरण एवं जनसंख्या में वृद्धि होने के कारण दिन प्रतिदिन जल संसांधनों पर दबाव पड़ रहा है। भूजल स्तर में आ रही गिरावट यह दर्शाती है कि आने वाले समय में सिंचाई हेतु पानी की सुनिश्चित आपूर्ति देश के लिए चिंता का विषय बन सकती है। अतः सिंचाई जल का सही मात्रा में समयनुसार दक्षतापूर्ण प्रबंधन अनिवार्य है। इससे न केवल पैदावार में स्थिरता अपितु गुणवत्ता व उचित मूल्य भी प्राप्त किया जा सकता है।

सिंचाई प्रबंधन बहुत से कारकों जैसे जलवायु, मृदा के प्रकार, फसल की विशेषताएं आदि पर निर्भर करता है। सिंचाई का समय व सिंचाई की मात्रा निर्धारित करने के लिए इन कारकों से जुडी विशिष्ट तथा अस्थाई परिवर्तिता से अवगत होना आवश्यक है।

सिंचाई प्रबंधन हेतु प्रमुख कारक

- **जलवायु:** सिंचाई आवृति और अंतराल को निर्धारित करने में जलवायु एक महत्वपूर्ण कारक है। उच्च तापमान , कम आपेक्षिक आर्द्रता एवं तेज़ हवाओं की स्थिति में निरंतर सिंचाई आवश्यक है। यह अवस्था विशेष रूप से शुष्क क्षेत्रों व गर्मियों के मौसम में होती है। दूसरी ओर वर्षा ऋतु के दौरान नम जलवायु के कारण कम सिंचाई की जरुरत होती है। अतः इस परिस्थिति में आवश्यकता अनुसार लंबे अंतराल पर सिंचाई करनी चाहिए।

- **मृदा विशेषताएं :** सिंचाई जल की आवश्यकता मृदा की किस्म पर निर्भर करती है। मृदा नमी की वह स्थिति जिस पर पौधे मुरझा कर सूखने लगते हैं, म्लानी बिंदु कहलाता है। इस बिंदु पर पहुंचने से पहले ही सिंचाई करना आवश्यक है। मृदा की जल धारण क्षमता तथा म्लानी बिंदु पर फसल की प्रकृति के अनुसार सिंचाई की जाती है। अनुभवों के अनुसार देखा गया है कि चिकनी मिटटी की जल प्रतिरोधक क्षमता अधिक होती है। इस तरह की मृदाओं में जल उपलब्धता लंबे समय तक बनी रहती है। इसलिए ऐसी मृदाओं में लम्बे अंतराल पर सिंचाई करनी चाहिए। वहीं दूसरी ओर बलुई मिट्टी में पानी की उपलब्धता बनाए रखने के लिए सिंचाई की आवृति अधिक होनी चाहिए। इस प्रकार की मिट्टी में छोटे अंतराल पर सिंचाई करना उपयुक्त है। इसके अतिरिक्त मृदा की गहराई भी एक महत्वपूर्ण कारक है, जो सिंचाई की आवृति को निर्धारित करता है। बागवानी के लिए गहरी मृदाएँ (1.2 मीटर या अधिक) आदर्श मानी जाती हैं। इन मृदाओं की जल भंडारण क्षमता अधिक होती है। फलदार वृक्षों की जड़ें बहुत गहरी और व्यापक होती हैं जिससे लंबी अवधि के लिए जल की आपूर्ति संभव है। दूसरी ओर, कम गहरी मृदाओं में नियमित सिंचाई आवश्यक होती है।

- **फसल विशेषताएँ :** फसल विशेषताएँ जैसे फसल का प्रकार, विकास अवस्था आदि को देखते हुए सिंचाई की मात्रा व आवृति निर्धारित करनी चाहिए। फसलों में जल तनाव के प्रति संवेदनशील तथा जल निष्कासन क्षमता भिन्न-भिन्न होती है। कुछ फसलों में ऐसी किस्में होती हैं जो अधिक गर्मी व सूखे के प्रति संवेदनशील होती हैं, ऐसी फसलों में निरंतर सिंचाई आवश्यक हैं। इसके अतिरिक्त फलदार वृक्षों की जड़ों का प्रकार व फैलाव भी सिंचाई की आवृति तय करता है। यदि वृक्ष की जड़ प्रणाली गहरी एवं घनी है इस स्थिति में लंबे अंतराल पर सिंचाई करें। वहीं अगर जड़ प्रणाली रेशेदार है इस स्थिति में छोटे अंतराल पर सिंचाई करनी चाहिए।

फसल अवस्था व फसल वृद्धि के विभिन्न चरणों पर भी सिंचाई आवश्यकता पर निर्भर करती है। पौधे की प्रारंभिक अवस्था में जड़ों का विकास कम होता है तब सिंचाई जल्दी-जल्दी करनी चाहिए, बाद में जड़ें गहरी होने के बाद यह अवधि बढ़ जाती है। इसके वानस्पतिक तथा फूल विभेदन अवस्था में भी सिंचाई की आवश्यकता एक दूसरे के विपरीत होती है। फसलों में क्रांतिक अवस्था के समय सिंचाई करने से पैदावार में बढ़ोतरी होती है तथा गुणवत्ता फसल प्राप्त करने के लिए फल विकास अवस्था के दौरान बागों में सिंचाई आवश्यक है। बाग़ फलत से पूर्व तथा फलत के उपरांत सिंचाई आवश्यकताएँ भिन्न-भिन्न होती है।

विभिन्न बागवानी फसलों की क्रांतिक अवस्थाएं व महत्वपूर्ण वृद्धि चरण एवं उनके लिए उपयुक्त सिंचाई प्रबंधन का विवरण निम्नलिखित तालिका में दर्शाया गया है।

तालिका 1: बागवानी फसलों में क्रांतिक अवस्थाएं

क्रं.	फसल	क्रांतिक अवस्था
1	आम	फसल उपरांत से इसके पूर्ण वानस्पतिक विकास तक
2	लीची	फसल उपरांत
3	नीबू जाति	पुष्पन व फलत उपरांत
4	अमरूद	फल विकास के समय
5	नाशपाती	फल वृद्धि के समय
6	आडू	फल पकने से 25-30 दिन पूर्व
7	आलू भुखारा	फल लगने से इसके पूर्ण विस्तार तक
8	बेर	फल के वानस्पतिक विकास के समय

तालिका 2: प्रमुख बागवानी फसलों में सिंचाई प्रबंधन

क्रं.	फसल	सिंचाई प्रबंधन
1	आम	फसल उपरांत (मार्च से जून तक) 10 दिनों के अंतराल पर सिंचाई करें।
2	लीची	मई के दूसरे हफ्ते से जून तक सप्ताह में 2 सिंचाई दें।
3	नीबू जाति	फलदार वृक्षों को मौसम के अनुसार 15 दिनों के अंतराल पर सिंचाई करनी चाहिए।
4	अमरूद	फसल वृद्धि हेतु गर्मियों में 15 दिनों में सर्दियों में 3 दिनों के अंतराल में सिंचाई करना फायदेमंद है।
5	अंगूर	फरवरी माह में (कांट-छांट उपरांत) एक सिंचाई तथा मार्च के पहले हफ्ते दूसरी सिंचाई दें। फलत पश्चात (मई के पहले हफ्ते तक) 10 दिनों के अंतराल व मई-जून में मौसम अनुसार 3-4 दिनों के अंतराल पर सिंचाई करें।
6	नाशपाती	फलदार वृक्षों में 5-7 दिनों के अंतराल पर सिंचाई आवश्यक है तथा जनवरी के महीने में सिंचाई नहीं करें।
7	आलू भुखारा	फलने वाले वृक्षों को गर्मियों में 6-7 दिन के अंतराल पर सिंचाई दें तथा नवंबर में यदि भूमि शुष्क हो तो 2-3 सिंचाई करें।
8	बेर	फल विकास हेतु अक्टूबर से फरवरी तक 3-4 हफ्तों के अंतराल पर सिंचाई करनी चाहिए।

गुणवत्तायुक्त उत्पादन व पानी की सार्थक बचत हेतु महत्त्वपूर्ण सुझावः-

- जलवायु और मिट्टी की किस्म के अनुसार सिंचाई प्रबंधन करें।
- छोटे पौधों की जड़े कम गहरी होती हैं। अतः नये बागों में गर्मी में 7 दिन व जाड़े में 15 दिन के अंतराल पर सिंचाई करना आवश्यक है।
- फूल आना प्रारंभ होने पर भारी सिंचाई नहीं करनी चाहिए। इस दशा में फूल एवं फल अधिक मात्रा में झड़ते हैं।
- जल सदुपयोग हेतु पृष्ठीय सिंचाई विधि द्वारा सिंचाई करें। परंतु इस विधि द्वारा जल एवं पोषक तत्वों का उचित एवं दक्ष प्रबंधन संभव नहीं है। अतः न्यूनतम जल से अधिकतम गुणवत्तायुक्त फसल उत्पादन प्राप्त करने के लिए सूक्ष्म सिंचाई विधि अपनाएं।

सूक्ष्म सिंचाई

- सूक्ष्म सिंचाई विधि द्वारा उपज में बढ़ोतरी के साथ-साथ पानी की भी बचत होती है, जो तालिका 3 में दर्शायी गयी है।

सूक्ष्म सिंचाई के लाभ

- फसल के उत्पादन में 2-4 गुना तक बढ़ोत्तरी व गुणवत्ता स्तर में सुधार होता है।
- जल, ऊर्जा, श्रम व समय की बचत होती है।
- बागों में अनावश्यक खरपतवार पैदा नहीं होते हैं।
- उर्वरकीकरण द्वारा उर्वरकों का अनावश्यक क्षय मे लगभग 40 प्रतिशत उर्वरक की बचत होती है।
- ऊँची-नीची जमीनों में इस सिंचाई पद्धति को सफलता-पूर्वक अपनाया जा सकता है।

तालिका 3: विभिन्न फसलों में सूक्ष्म सिंचाई विधि द्वारा पानी देने पर सतही विधि की तुलना में पानी की बचत और उपज में वृद्धि का विवरण

क्र.सं.	फसल	पानी की बचत (प्रतिशत)	उपज में वृद्धि (प्रतिशत)
1	अंगूर	65-70	30
2	अनार	50-55	30
3	अमरूद	55-60	25
4	सेब	50-55	20
5	नीबू	81	35
6	नारियल	65	12

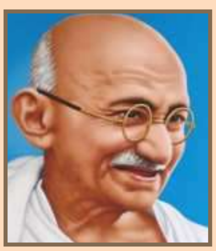

हृदय की कोई भाषा नहीं है, हृदय-हृदय से बातचीत करता है और हिंदी हृदय की भाषा है।

-महात्मा गांधी

राष्ट्रीय एकता की कड़ी हिन्दी ही जोड़ सकती है।

-बालकृष्ण शर्मा 'नवीन'

जलवायु सहनशील कृषि प्रणाली की ओर : स्थिरता की दिशा में एक मार्ग

ए. जमालुद्दीन, पी.के. सिंह, संतोष कुशवाहा, श्रीकांत दसारी एवं हिमांशु महावर
भाकृअनुप-खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)

जलवायु परिवर्तन और कृषि

जलवायु परिवर्तन का तात्पर्य मौसम की प्रवृत्तियाँ में होने वाले उन दीर्घकालिक परिवर्तनों से है, जो बड़े क्षेत्रों में होते हैं। ये परिवर्तन प्राकृतिक प्रक्रियाओं और मानवीय गतिविधियों, जैसे जीवाश्म ईंधन का दहन, वनों की कटाई और औद्योगिक उत्सर्जन आदि के कारण होते हैं। 19वीं शताब्दी के उत्तरार्ध से मानवीय हस्तक्षेप इस परिवर्तन का मुख्य कारक बन चुका है। वैज्ञानिक प्रमाण दर्शाते हैं कि 1880 के बाद से वैश्विक औसत सतही तापमान में कम से कम 1.1°C की वृद्धि हो चुकी है। आंकलन के अनुसार, यदि तापमान में 1.5°C की वृद्धि होती है, तो विश्व की लगभग 14% आबादी हर पाँच वर्षों में एक बार भीषण लू का सामना करेगी और समुद्र तल बढ़ने से लगभग 46 मिलियन लोग विस्थापित हो सकते हैं। विशेषज्ञों ने चेतावनी दी है कि भले ही उत्सर्जन में भारी कटौती की जाए, फिर भी वैश्विक तापमान के इस 1.5°C की सीमा को पार करने की संभावना अत्यधिक है। इसलिए, अपरिवर्तनीय क्षति को रोकने के लिए तात्कालिक और सामूहिक वैश्विक प्रयास आवश्यक है।

कृषि, जिसमें मृदा संरक्षण, फसल उत्पादन, पशुपालन, मत्स्य पालन और जलीय कृषि जैसी संबंधित गतिविधियाँ शामिल हैं, वैश्विक खाद्य प्रणाली का एक महत्वपूर्ण स्तंभ है। यह प्रणाली खाद्य उत्पादन, प्रसंस्करण, वितरण, परिवहन और उपभोग की आपस में जुड़ी प्रक्रियाओं का एक नेटवर्क है। खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने के अतिरिक्त, कृषि विकासशील देशों में आर्थिक और सामाजिक विकास में भी महत्वपूर्ण योगदान देती है। उदाहरण के तौर पर, एशिया-प्रशांत क्षेत्र में लगभग 30% श्रमिक कृषि-आधारित कार्यों में संलग्न है। इसके साथ ही यह सतत् विकास लक्ष्य 2 (एसडीजी 2) 'शून्य भूख' को हासिल करने में भी निर्णायक भूमिका निभाती है, जिससे बढ़ती जनसंख्या के लिए खाद्य उपलब्धता और पहुँच सुनिश्चित होती है।

हालाँकि, जलवायु परिवर्तन इस आवश्यक क्षेत्र के लिए एक गंभीर और बढ़ती हुई चुनौती बन गया है। यह वर्षा के पैटर्न को बदलकर, गंभीर/असामान्य मौसम घटनाओं की आवृत्ति बढ़ाकर और औसत तापमान में वृद्धि करके कृषि उत्पादकता को बाधित करता है, जिससे फसल की पैदावार, पशुधन स्वास्थ्य, मत्स्य संसाधनों और कृषि पर निर्भर लाखों लोगों की आजीविका प्रभावित होती है। एक दोहरी चुनौती यह है कि, जहाँ एक ओर कृषि जलवायु परिवर्तन की मार झेलती है, वहीं दूसरी ओर वह इस संकट में महत्वपूर्ण योगदान भी देती है। कृषि गतिविधियों से भारी मात्रा में ग्रीनहाउस गैसें, विशेष रूप से कार्बन डाइऑक्साइड, मीथेन और नाइट्रस ऑक्साइड, उत्सर्जित होती हैं, जो वायुमंडल में ऊष्मा को रोककर वैश्विक तापमान वृद्धि को और तीव्र करती है। विशेष रूप से, कृषि मिथेन और नाइट्रस ऑक्साइड जैसी गैर-कार्बन डाइऑक्साइड गैसों का सबसे बड़ा स्रोत है, जिनका वैश्विक तापमान वृद्धि पर कार्बन डाइऑक्साइड से कहीं अधिक प्रभाव होता है, जिससे इस क्षेत्र का पर्यावरणीय प्रभाव और बढ़ जाता है।

कृषि पर जलवायु परिवर्तन के प्रभाव

जलवायु परिवर्तन कृषि क्षेत्र के विभिन्न घटकों जैसे- फसल उत्पादन, भूमि उपयोग, पशुपालन व मत्स्य पालन, किसानों और उपभोक्ताओं को प्रभावित करता है।

फसल उत्पादन पर प्रभाव

कुछ समशीतोष्ण क्षेत्रों में हल्की गर्मी से फसल की अवधि बढ़ सकती है, लेकिन अत्यधिक तापमान सामान्यत: फसलों के विकास चक्र को तेज कर देता है, जिससे उपज में गिरावट आती है। इसके अतिरिक्त, बढ़ता हुआ तापमान और आर्द्रता की स्थिति कीट व रोगों के प्रसार के लिए अनुकूल परिस्थितियाँ पैदा करती है, जिससे फसल नुकसान और बढ़ता है।

अनिश्चित वर्षा, बार-बार सूखा, बाढ़ और असमय मानसून सिंचाई समय निर्धारण को बाधित कर फसलों को सीधे नुकसान पहुँचाते हैं। भारत में अध्ययन दर्शाते हैं कि यदि उपयुक्त अनुकूलन उपाय नहीं अपनाए गए तो वर्ष 2050 तक वर्षा आधारित धान की उपज में 20% और वर्ष 2080 तक 40% तक गिरावट आ सकती है। प्रमुख खाद्य फसलों की ऐसी गिरावट खाद्य सुरक्षा और किसानों की आय दोनों के लिए खतरा है, विशेषकर उन क्षेत्रों में जहाँ खेती वर्षा पर निर्भर है।

भूमि संसाधनों पर प्रभाव

जलवायु परिवर्तन कृषि के लिए आवश्यक भूमि संसाधनों को गंभीर रूप से प्रभावित करता है। तापमान में वृद्धि से मिट्टी में मौजूद जैविक पदार्थ तेजी से विघटित होते हैं, जो पौधों के लिए पोषक तत्वों का एक महत्वपूर्ण स्रोत होते हैं, जिससे मिट्टी की उर्वरता घटती है। लंबे समय तक सूखा मिट्टी को सूखा और भुरभुरा बना देता है, जिससे वह कटाव के प्रति अधिक संवेदनशील हो जाती है और फसलों के लिए जल उपलब्धता घट जाती है। इसके विपरीत, अत्यधिक वर्षा की घटनाएँ आकस्मिक बाढ़ का कारण बनती हैं, जो मिट्टी की सबसे उपजाऊ सतही परत को बहा ले जाती

हैं। मिट्टी की संरचना और पोषक तत्वों की गुणवत्ता में गिरावट के कारण भूमि की स्वस्थ पौधों की वृद्धि को समर्थन देने की क्षमता कम हो जाती है, जिससे दीर्घकालिक कृषि उत्पादकता प्रभावित होती है और संवेदनशील क्षेत्रों में मरुस्थलीकरण का खतरा बढ़ जाता है।

पशुपालन व मत्स्य पालन पर प्रभाव

जलवायु परिवर्तन पशुधन को दो तरह से प्रभावित करता है। एक तो उच्च तापमान सीधे पशुओं पर तनाव डालता है, जिससे उनकी प्रतिरोधक क्षमता घटती है, रोगों का प्रकोप बढ़ता है और उत्पादकता व प्रजनन क्षमता घटती है। जलवायु परिवर्तन पर अंतरसरकारी पैनल (आईपीसीसी) के अनुसार प्रत्येक 1°C तापमान वृद्धि पर जानवर 3-5% कम चारा खाते हैं, जिससे दूध उत्पादन व वृद्धि दर प्रभावित होती है। दूसरा तापमान व वर्षा पैटर्न में बदलाव से कीट-पतंगों और रोग वाहक परजीवियों का जीवनचक्र और प्रसार क्षेत्र बदलता है, जिससे पशुओं में रोगों का प्रकोप बढ़ता है। उदाहरण के लिए राजस्थान में लगातार व अधिक वर्षा के चलते मवेशियों में लंपी स्किन रोग तेजी से फैला है।

मत्स्य पालन और जलीय कृषि भी अत्यधिक संवेदनशील क्षेत्र है। समुद्र स्तर में वृद्धि, महासागरीय अम्लीकरण और जल तापमान में बदलाव से मछलियों के प्रजनन व प्रवास पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। इससे मत्स्य भंडार घटते हैं और इस क्षेत्र पर आश्रित लाखों लोगों की आजीविका संकट में पड़ जाती है। उच्च उत्सर्जन परिदृश्य में, वर्ष 2050 तक उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों की विशिष्ट आर्थिक क्षेत्र में मछली पकड़ने की संभावित सीमा 40% तक घट सकती है।

किसान व कृषि श्रमिकों पर प्रभाव

फसलों, पशुपालन व मत्स्य पालन पर इसके प्रभाव के अतिरिक्त, जलवायु परिवर्तन किसानों और कृषि श्रमिकों के स्वास्थ्य व आजीविका को भी गंभीर रूप से प्रभावित करता है। बढ़ती गर्मी से खेतिहर मजदूरों में गर्मी का तनाव (हीट स्ट्रेस) व गर्मी से संबंधित बीमारियों और दुर्घटनाओं का खतरा बढ़ता है। चूँकि वैश्विक कार्यबल का एक-चौथाई हिस्सा कृषि क्षेत्र में कार्यरत है, इसलिए जनसंख्या का एक महत्वपूर्ण हिस्सा व्यावसायिक स्वास्थ्य जोखिमों के प्रति संवेदनशील हो जाता है।

अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (आईएलओ) के अनुसार, गर्मी के तनाव से कृषि श्रमिकों के सबसे अधिक प्रभावित होने की आशंका है, वर्ष 2030 तक गर्मी के तनाव के कारण वैश्विक श्रमिक कार्यो के 66% घंटे बर्बाद हो जाएंगे। इसके अतिरिक्त, छोटे व सीमांत किसान, जो विश्व की 84% खेती योग्य भूमि का प्रबंधन करते हैं, विशेष रूप से जोखिम में हैं। उनके पास सीमित संसाधन, बुनियादी ढांचा और जोखिम से निपटने की क्षमता के कारण ये किसान जलवायु संबंधी झटकों के प्रति अत्यंत संवेदनशील हैं। अनुमान है कि वर्ष 2050 तक 80% लघु किसान कम से कम एक जलवायु संकट के प्रति मध्यम से उच्च स्तर तक प्रभावित हो सकते हैं, जिससे उनकी आजीविका और खाद्य सुरक्षा पर गंभीर खतरा उत्पन्न हो सकता है।

तापमान में निरंतर वृद्धि के कारण कुछ कृषि क्षेत्रों को अनुपजाऊ होने की संभावना है, जिससे बड़ी संख्या में कृषि श्रमिकों का विस्थापन हो सकता है। यह स्थिति विशेष रूप से महिलाओं के लिए चिंताजनक है, जो दक्षिणी एशिया और उप-सहारा अफ्रीका जैसे क्षेत्रों में कृषि कार्यबल का 60% से अधिक हिस्सा हैं। महिलाओं को उनकी श्रम-गहन भूमिकाओं के लिए अक्सर अवैतनिक या कम भुगतान पर काम करती हैं, जिससे वे जलवायु परिवर्तन के कारण नौकरी छूटने की स्थिति एवं आर्थिक कठिनाइयों के प्रति संवेदनशीलता और बढ़ जाती है। इसके अतिरिक्त, जलवायु में अस्थिरता के कारण घटती फसल उपज भी किसानों की आय पर नकारात्मक प्रभाव डालती है। भारत में, अनुमान है कि यदि अनुकूलन उपाय नहीं किए गए, तो जलवायु परिवर्तन के कारण औसत कृषि आय में 15% तक की गिरावट आ सकती है, जबकि सदी के अंत तक सबसे अधिक संवेदनशील क्षेत्रों में यह गिरावट 25% तक पहुँच सकती है।

खाद्य सुरक्षा व उपभोक्ताओं पर प्रभाव

जलवायु परिवर्तन का कृषि पर प्रतिकूल प्रभाव अंततः उपभोक्ताओं तक पहुँचता है, जिससे भुखमरी, खाद्य असुरक्षा और कुपोषण की घटनाएँ बढ़ती हैं। खाद्य सुरक्षा का मतलब है कि सभी लोगों को हर समय पर्याप्त, सुरक्षित, पौष्टिक और पसंद अनुसार भोजन उपलब्ध हो। लेकिन असामान्य मौसम की घटनाएँ खाद्य उत्पादन और आपूर्ति श्रृंखला को बाधित कर गंभीर खाद्य संकट पैदा कर देती हैं। मौजूदा स्थिति में वर्ष 2050 तक लगभग 3 अरब लोग पोषण असुरक्षा की चपेट में आ सकते हैं।

साथ ही, जलवायु परिवर्तन मिट्टी की उर्वरता घटाकर फसलों के पोषण स्तर को भी प्रभावित करता है। शोध बताते हैं कि अधिक CO_2 के वातावरण में उगाई गई फसलों में प्रोटीन, लौह व जस्ता की मात्रा 17% तक कम हो जाती है। जिससे पोषण की गुणवत्ता में गिरावट के चलते कमजोर वर्गों के लिए अपनी आहार संबंधी ज़रूरतों को पूरा करना कठिन हो सकता है। वर्ष 2050 तक अनुमान है कि 30 करोड़ लोग जिंक व प्रोटीन की कमी और 1.4 अरब महिलाएँ व बच्चे आयरन की कमी के खतरे में होंगे। इसके अलावा सूखा, बाढ़ जैसी घटनाएँ फसलें बर्बाद कर बाजारों में भारी अस्थिरता लाती हैं। उदाहरण के लिए फरवरी 2024 में पश्चिम अफ्रीका में सूखे के चलते कोकोआ उत्पादन घटने से वैश्विक कीमतें रिकॉर्ड स्तर पर पहुँच गईं। इसी तरह, जुलाई 2023 में भारत में देर से आई भारी मानसून बारिश ने धान फसलों को नुकसान पहुँचाया और सरकार को कुछ किस्मों के निर्यात पर रोक लगानी पड़ी। इससे वैश्विक खाद्य कीमतों में तेजी आई और खाद्य आयातक देशों में असुरक्षा बढ़ गई।

कृषि का जलवायु परिवर्तन में योगदान

जहाँ एक ओर कृषि क्षेत्र जलवायु परिवर्तन के प्रभावों के प्रति सबसे अधिक संवेदनशील है, वहीं यह स्वयं भी इस संकट में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। वैश्विक स्तर पर कृषि-खाद्य प्रणाली, जिसमें फसल उत्पादन, भूमि उपयोग, पशुपालन, मत्स्य पालन और आपूर्ति श्रृंखला

शामिल है, कुल ग्रीनहाउस गैस (GHG) उत्सर्जन का लगभग 26% हिस्सा है। केवल फसल उत्पादन ही खाद्य प्रणाली से जुड़ी कुल उत्सर्जन का करीब 27% योगदान करता है, जिसका प्रमुख कारण नाइट्रोजन आधारित उर्वरकों का अत्यधिक उपयोग है। ये उर्वरक नाइट्रस ऑक्साइड (N_2O) गैस छोड़ते हैं, जिसकी ताप-संरक्षण क्षमता, कार्बन डाइऑक्साइड (CO_2) की तुलना में लगभग 300 गुना अधिक है। इसके अतिरिक्त, जलभराव वाली धान की खेती भी बड़ी मात्रा में मीथेन (CH_4) गैस का उत्सर्जन करती है, जो वैश्विक मीथेन उत्सर्जन का लगभग 12% है।

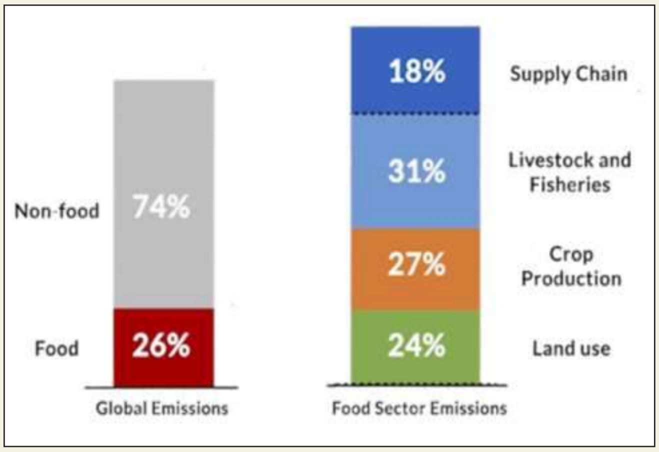

चित्र 1: खाद्य उत्पादन से वैश्विक ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन

भूमि उपयोग में बदलाव, विशेष रूप से कृषि भूमि के विस्तार के लिए वनों की कटाई और एक ही फसल को बार-बार उगाना (मोनोक्रॉपिंग) एवं अत्यधिक चराई जैसी अव्यवस्थित गतिविधियाँ, कुल खाद्य-सम्बंधित उत्सर्जन का लगभग 24% उत्पन्न करती हैं। ये गतिविधियाँ मिट्टी की उर्वरता और जैव विविधता को घटाती हैं तथा वायुमंडल में CO_2 की मात्रा को बढ़ाती है। चिंताजनक बात यह है कि हर साल लगभग 24 अरब टन उपजाऊ मिट्टी नष्ट हो रही है, और यदि यही प्रवृत्ति जारी रही, तो 2050 तक पृथ्वी का 95% भूमि क्षेत्र क्षरण की चपेट में आ सकता है। पशुपालन और मत्स्य पालन भी जलवायु परिवर्तन में कृषि क्षेत्र के योगदान को और अधिक बढ़ाते हैं। विशेष रूप से, गाय-बकरी जैसे जुगाली करने वाले पशु पाचन प्रक्रिया के दौरान मीथेन का उत्सर्जन करते हैं। पशु-आधारित खाद्य उत्पाद, प्रति इकाई उत्पादन, पौध-आधारित खाद्य वस्तुओं की तुलना में अधिक ग्रीनहाउस गैसें उत्सर्जित करते हैं।

इसी प्रकार, अत्यधिक मछली पकड़ने (ओवरफिशिंग) ने समुद्रों की प्राकृतिक कार्बन अवशोषण क्षमता को कम कर दिया है। बीते 50 वर्षों में वाणिज्यिक मछली पकड़ने की गतिविधियों ने समुद्री पारिस्थितिकी तंत्र से लगभग 318.4 मिलियन मीट्रिक टन बड़ी मछलियाँ निकाल दी हैं, जिससे अप्रत्यक्ष रूप से लगभग 37.5 मिलियन मीट्रिक टन कार्बन वायुमंडल में उत्सर्जित हुआ है। इन सभी उत्सर्जन स्रोतों को देखते हुए यह स्पष्ट है कि केवल कृषि और खाद्य प्रणाली ही इस सदी में वैश्विक तापमान वृद्धि को 1.5°C की गंभीर सीमा से आगे ले जाने की क्षमता रखती है, यदि उत्सर्जन में शीघ्र रोकथाम न की जाए। इस चुनौती को और जटिल बना रहा है वैश्विक खाद्य माँग में वृद्धि और निम्न तथा मध्यम आय वाले देशों में उपभोग पद्धति में बदलाव, जिससे कृषि प्रणालियों और प्राकृतिक संसाधनों पर दबाव और भी अधिक बढ़ रहा है।

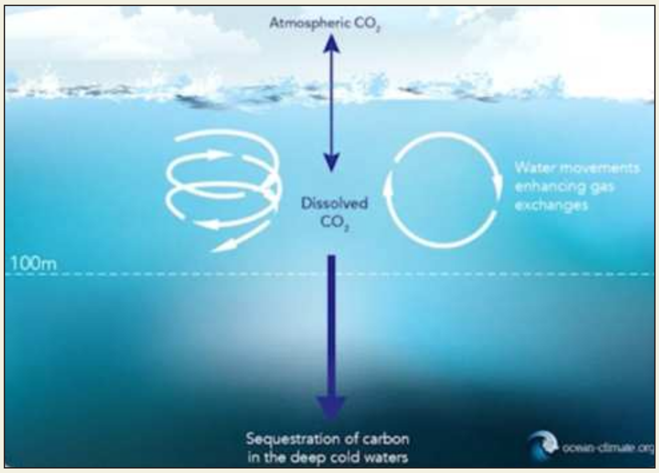

चित्र 2: महासागर कार्बन पंप तंत्र का योजनाबद्ध आरेख

(source: ocean&climate.org)

कृषि में जलवायु लचीलापन विकसित करना

जलवायु परिवर्तन से उत्पन्न होती जा रही चुनौतियों का सामना करने के लिए कृषि क्षेत्र को एक साथ शमन (Mitigation) और अनुकूलन (Adaptation) - दोनों रणनीतियों को अपनाना आवश्यक है। शमन रणनीतियों का उद्देश्य कृषि गतिविधियों से होने वाले ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को कम करना है, जबकि अनुकूलन रणनीतियाँ कृषि प्रणालियों को बदलते जलवायु प्रभावों के अनुकूल बनाने पर केंद्रित होती हैं।

शमन उपायों में पशु अपशिष्ट से निकलने वाली मिथेन गैस को एनेरोबिक डाइजेस्टर के माध्यम से पकड़ना, और धान की खेती में सिस्टम ऑफ राइस इंटेंसिफिकेशन (SRI) जैसी तकनीकें अपनाना शामिल है, जिसमें समय-समय पर खेत से पानी निकालना और सिंचाई करना होता है, ताकि मिथेन उत्सर्जन घटाया जा सके। इसके साथ ही, कृषि वानिकी यानी कृषि भूमि में पेड़ों का समावेश करना, वायुमंडलीय कार्बन अवशोषित करने के साथ-साथ पारिस्थितिकी और आजीविका लाभ प्रदान करता है।

वहीं, अनुकूलन रणनीतियाँ जलवायु परिवर्तन के प्रतिकूल प्रभावों से निपटने के लिए कृषि प्रणालियों में लचीलापन लाने पर बल देती हैं। इसमें सूखा और ऊष्मा-सहिष्णु फसल किस्मों को अपनाना, बूंद-बूंद (ड्रिप) और फौहारा (स्प्रिंकलर) सिंचाई प्रणाली के माध्यम से जल उपयोग दक्षता बढ़ाना तथा एक ही किस्म की जगह विभिन्न फसलों की खेती (फसल विविधीकरण) कर उत्पादन जोखिम कम करना शामिल है। उल्लेखनीय है कि कृषि वानिकी और बेहतर मिट्टी प्रबंधन जैसे कई उपाय शमन और अनुकूलन दोनों में सहायक होते हैं और बहुउद्देशीय लाभ प्रदान

करते हैं। इन दोहरी चुनौतियों से निपटने के लिए कई सतत् कृषि पद्धतियाँ उभर कर आई हैं। क्लाइमेट-स्मार्ट एग्रीकल्चर (सी.एस.ए.), जिसे संयुक्त राष्ट्र खाद्य और कृषि संगठन (एफ.ए.ओ.) ने परिकल्पित किया है, एक समग्र रूपरेखा प्रदान करती है, जिसका लक्ष्य सतत् रूप से कृषि उत्पादकता बढ़ाना, लचीलापन विकसित करना और ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन कम करना है। सी.एस.ए. के अंतर्गत उन्नत किस्मों की फसलें और पशु नस्लें अपनाना, जल प्रबंधन दक्षता बढ़ाना, संरक्षण आधारित कृषि पद्धतियाँ और कृषि वानिकी को बढ़ावा देना शामिल है।

इसी के पूरक रूप में, पुनरुत्पादक कृषि (रीजनरेटिंव एग्रीकल्चर) मिट्टी की सेहत सुधारने और क्षतिग्रस्त पारिस्थितिक तंत्र को पुनः जीवंत करने पर केंद्रित है। इसके लिए संरक्षण जुताई, फसल चक्र, कम्पोस्टिंग और आच्छादन/आवरण फसलों (कवर क्रॉपिंग) जैसे उपाय अपनाए जाते हैं, जिससे खेत की उत्पादकता के साथ-साथ पारिस्थितिकीय स्वास्थ्य में भी सुधार होता है। इसके अतिरिक्त, भारत प्राकृतिक खेती को आगे बढ़ा रहा है, जो सिंथेटिक रासायनिक आदानों से बचाती है और प्राकृतिक, कृषि-उत्पन्न संसाधनों पर निर्भर करती है। भारत में प्राकृतिक खेती को सक्रिय रूप से प्रोत्साहित किया जा रहा है, जो रासायनिक उर्वरकों एवं कीटनाशकों के उपयोग से बचते हुए खेत में उपलब्ध प्राकृतिक व जैविक संसाधनों पर आधारित होती है। यह पद्धति उत्पादन लागत घटाने, मिट्टी की उर्वरता बढ़ाने, किसान आय में वृद्धि करने और पौष्टिक, रसायन-मुक्त खाद्य उत्पादन सुनिश्चित करने के साथ-साथ पर्यावरणीय स्थिरता और ग्रामीण आजीविका सशक्तिकरण में योगदान देती है।

जलवायु लचीलापन बढ़ाने के लिए प्रमुख रणनीतियाँ

जलवायु-सहिष्णु कृषि प्रणाली के विकास के लिए चार समेकित रणनीतियाँ अनिवार्य हैं: नीतिगत सुधार, साक्ष्य सृजन और नवाचार, वित्तीय संसाधनों की व्यवस्था, और क्षमता निर्माण। ये सभी कृषि को टिकाऊ, उत्पादक और जलवायु-अनुकूल क्षेत्र में परिवर्तित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं।

नीतिगत सुधार

कृषि को टिकाऊ दिशा में ले जाने के लिए नीतिगत सुधार अत्यंत आवश्यक हैं। इसके अंतर्गत प्राकृतिक संसाधनों को हानि पहुँचाने वाली और उत्सर्जन बढ़ाने वाली गतिविधियों को मिलने वाली वित्तीय प्रोत्साहन राशि को समाप्त कर, उसे कृषि वानिकी और वन-पशुपालन संयोजन जैसी टिकाऊ प्रणालियों की ओर पुनर्निर्देशित करना चाहिए।

भारत की राष्ट्रीय एग्रोफॉरेस्ट्री नीति (2014) इसका एक अग्रणी उदाहरण है, जिसके तहत कृषि और पशुपालन प्रणाली में पेड़ लगाने को प्रोत्साहन दिया गया है, जिससे उत्पादकता और लचीलापन दोनों में वृद्धि होती है। साथ ही, किसानों विशेषकर छोटे और सीमांत किसानों को जलवायु जोखिमों से सुरक्षित रखने के लिए आय विविधीकरण, सस्ती सूक्ष्म वित्त योजनाएँ, फसल बीमा, और रीयल-टाइम जलवायु परामर्श सेवाएँ उपलब्ध कराना चाहिए। मत्स्य पालन क्षेत्र में समुद्री संरक्षित क्षेत्रों का विस्तार कर मछली स्टॉक बहाल करने, समुद्री पारिस्थितिकी तंत्र संतुलित करने और कार्बन अवशोषण पर अधिक मछली पकड़ने के प्रभाव को घटाया जा सकता है।

साक्ष्य सृजन और नवाचार

जलवायु अनुकूल निर्णय लेने के लिए किसानों को ठोस, समयबद्ध और स्थानीय स्तर पर सटीक साक्ष्य की आवश्यकता होती है। किसान-जनित पारंपरिक ज्ञान, वैज्ञानिक अनुसंधान और एआई, ड्रोन, रिमोट सेंसिंग जैसी डिजिटल तकनीकों का समावेश कर, कीट व आपदा पूर्वानुमान, फसल प्रणाली अनुकूलन तथा लचीली फसल और पशु नस्लों की पहचान की जा सकती है। भारत का जलवायु परिवर्तन पर रणनीतिक ज्ञान हेतु राष्ट्रीय मिशन (NMSKCC) इसका उत्कृष्ट उदाहरण है, जिसके अंतर्गत तमिलनाडु कृषि विश्वविद्यालय ने नदी बेसिनों में जलवायु प्रभावों का मॉडल तैयार किया और व्यावहारिक अनुकूलन रणनीतियाँ विकसित की हैं। विज्ञान, तकनीक और किसान अनुभव का यह एकीकरण व्यावहारिक, स्थान-विशिष्ट और आर्थिक रूप से लाभकारी समाधान सुनिश्चित करता है।

वित्त जुटाव

जलवायु लचीली कृषि को बढ़ावा देने हेतु वित्तीय संसाधनों का विस्तार अनिवार्य है। वर्तमान में वैश्विक जलवायु वित्त का मात्र 4% ही कृषि-खाद्य प्रणालियों में निवेशित है। इस अंतर को कम करने के लिए सार्वजनिक और निजी निवेश दोनों को सक्रिय करना होगा। इसमें ब्लेंडेड फाइनेंस (सह-वित्त) मॉडल एक प्रभावी उपाय है, जो रियायती सार्वजनिक फंड को निजी पूंजी के साथ जोड़कर जलवायु-स्मार्ट परियोजनाओं में निवेश जोखिम को कम करता है। वैश्विक उदाहरणों में एग्री-3 फंड और ग्रीन फंड शामिल हैं, जो सतत कृषि, वनों के संरक्षण और जैव विविधता बढ़ाने वाले कृषि मूल्य श्रृंखलाओं का समर्थन करते हैं। इस प्रकार की वित्तीय पहलों का विस्तार टिकाऊ तकनीकों को अपनाने, ग्रामीण आजीविका सुधारने और कार्बन अवशोषण व पर्यावरणीय लाभ दिलाने में सहायक हो सकता है।

क्षमता निर्माण

जलवायु अनुकूल को सशक्त बनाने के लिए किसानों, कृषि विस्तार कार्यकर्ताओं और नीति-निर्माताओं की ज्ञान और कौशल क्षमता का विकास अत्यंत आवश्यक है। प्रभावी कृषि विस्तार प्रणाली जलवायु-स्मार्ट तकनीकों, अनुकूलन पद्धतियों और जोखिम प्रबंधन रणनीतियों को किसानों तक पहुंचाने का कार्य करती है। भारत में कृषि विज्ञान केंद्र (कृ.वि.के.) इस दिशा में उत्कृष्ट उदाहरण हैं, जो किसानों और ग्रामीण युवाओं को स्थानीय जरूरतों के अनुसार प्रशिक्षण और तकनीकी जानकारी उपलब्ध कराते हैं। साथ ही, शासकीय संस्थाओं और नीति-निर्धारकों की क्षमता सशक्त कर, जलवायु अनुकूल लक्ष्यों के

अनुरूप नीति निर्माण व संसाधन आवंटन को कारगर बनाना संभव है। नियमित ज्ञान साझा मंच और प्रशासनिक अधिकारियों के लिए जलवायु-सहिष्णु कृषि पर विशेष प्रशिक्षण से नीति क्रियान्वयन और अनुकूलन आधारित प्रशासनिक ढांचे को और अधिक मजबूत किया जा सकता है।

भारत का जलवायु-लचीली कृषि के लिए नीतिगत ढांचा

भारत ने कृषि क्षेत्र में जलवायु जोखिमों का सामना करने के लिए राष्ट्रीय और राज्य स्तर पर समन्वित प्रयासों के ज़रिए एक व्यापक नीतिगत ढांचा तैयार किया है। कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय देश में कृषि नीतियों के निर्माण और क्रियान्वयन की केंद्रीय प्राधिकरण के रूप में कार्य करता है। इसके अंतर्गत राष्ट्रीय जलवायु परिवर्तन कार्य योजना (NAPCC) के एक भाग के रूप में राष्ट्रीय सतत् कृषि मिशन (NMSA) का संचालन किया जा रहा है, जिसका उद्देश्य भारतीय कृषि को जलवायु-अनुकूल रणनीतियों के ज़रिए अधिक लचीला बनाना है। इसे पूरा करने में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद की जलवायु अनुकूल कृषि पर राष्ट्रीय नवाचार (NICRA) परियोजना भी अहम भूमिका निभा रही है। जलवायु अनुकूल कृषि पर राष्ट्रीय नवाचार का फोकस अनुसंधान, जलवायु-स्मार्ट तकनीकों का प्रदर्शन, और किसानों की क्षमता विकास पर है, ताकि वे असामान्य मौसम घटनाओं के प्रति बेहतर ढंग से अनुकूलन कर सकें। इसमें कृषि विज्ञान केंद्र (कृ.वि.के.) जमीनी स्तर पर अनुकूलन पद्धतियों के प्रचार-प्रसार में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं।

केंद्र सरकार की इन पहलों के अतिरिक्त, अन्य मंत्रालयों ने भी जलवायु-स्मार्ट कृषि को प्रोत्साहित करने वाली योजनाएँ लागू की है। नवीन और नवीकरणीय ऊर्जा मंत्रालय के नेतृत्व में प्रधानमंत्री कुसुम (PM-KUSUM) योजना चलाई जा रही है, जिसके तहत डीजल पंपों की जगह सौर ऊर्जा संचालित सिंचाई प्रणालियाँ अपनाने को बढ़ावा दिया जा रहा है। जल शक्ति मंत्रालय की प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई (PMKSY) योजना सिंचाई अवसंरचना के विस्तार और जल-संरक्षण तकनीकों को प्रोत्साहित करने पर केंद्रित है। वहीं मत्स्य पालन, पशुपालन और डेयरी मंत्रालय की प्रधानमंत्री मत्स्य संपदा (PMMSY) योजना टिकाऊ मत्स्य प्रबंधन को सहयोग प्रदान करती है। राज्य स्तर पर भी कई उल्लेखनीय पहलें अपनाई जा रही हैं। केरल ने ऊर्जा-कुशल और सौर-संचालित सिंचाई प्रणालियों को बढ़ावा दिया है। गोवा में फसल विविधीकरण और फसल बीमा पर ज़ोर दिया जा रहा है। महाराष्ट्र ने विश्व बैंक के सहयोग से जलवायु लचीली कृषि परियोजना शुरू की है, जो छोटे किसानों के लिए सूखा-रोधी रणनीतियाँ विकसित करने पर केंद्रित है। इसी तरह ओडिशा ने श्रीअन्न (मिलेट) मिशन प्रारंभ किया है, जो जलवायु-अनुकूल बाजरा फसलों की खेती को प्रोत्साहित कर खाद्य सुरक्षा और किसानों की आय बढ़ाने का कार्य कर रहा है।

निष्कर्ष

कृषि क्षेत्र एक ओर जहाँ जलवायु परिवर्तन के प्रति अत्यधिक संवेदनशील है, वहीं दूसरी ओर यह स्वयं भी जलवायु परिवर्तन में महत्त्वपूर्ण योगदान देता है। इस दोहरे संकट का समाधान करने के लिए एक समेकित रणनीति अपनाना आवश्यक है, जिसमें एक ओर ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को कम करने के लिए शमन प्रयास किए जाएँ और दूसरी ओर कृषि तंत्र को अधिक लचीला व अनुकूल बनाने के लिए अनुकूलन उपाय अपनाए जाएँ। क्लाइमेट-स्मार्ट एग्रीकल्चर (CSA), पुनरुत्थानकारी कृषि और प्राकृतिक खेती जैसी पद्धतियाँ टिकाऊ, कम-कार्बन कृषि प्रणालियाँ स्थापित करने की दिशा में प्रभावी मार्ग प्रदान करती हैं। ये न केवल पर्यावरणीय क्षति को कम करती हैं, बल्कि मिट्टी की सेहत सुधारने, उत्पादकता बढ़ाने और ग्रामीण समुदायों की आजीविका सुरक्षित करने में भी मदद करती हैं।

भारत की नीतिगत और संस्थागत संरचना-जिसमें राष्ट्रीय मिशन, राज्य स्तरीय कार्यक्रम और जमीनी स्तर की पहलें शामिल हैं, जलवायु अनुकूल कृषि विकास के लिए एक अनुकरणीय और विस्तार योग्य ढांचा प्रस्तुत करती है। आने वाले समय में इन प्रयासों की सफलता इस बात पर निर्भर करेगी कि हम पर्याप्त वित्तीय संसाधन कैसे जुटाते हैं, नवाचार को किस प्रकार बढ़ावा देते हैं और कृषि क्षेत्र की सभी इकाइयों में क्षमता निर्माण कैसे करते हैं। इसके लिए किसानों, नीति-निर्माताओं, शोधकर्ताओं, वित्तीय संस्थानों और नागरिक समाज के सहभागितापूर्ण बहु-हितधारक दृष्टिकोण को अपनाना अत्यंत आवश्यक होगा, ताकि खाद्य सुरक्षा, प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण और सतत् आजीविका को जलवायु जोखिमों के बढ़ते प्रभाव के बीच सुरक्षित रखा जा सके।

हमें किसी के भी साथ किसी भी तरह की प्रतियोगिता करने की कोई जरूरत नहीं है। हम जैसे हैं, अच्छे हैं। हमें अपने आप को स्वीकार करना चाहिए।

-ओशो

किसानों को समर्पित केंद्र एवं मध्य प्रदेश राज्य की योजनाएँ

मोनिका रघुवंशी, पिजुश काँती मुख़र्जी, अर्चना अनोखे एवं दीपक पवार

भाकृअनुप-खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)

"किसानों को समर्पित केंद्र एवं मध्य प्रदेश राज्य की योजनाएँ" विषयक यह लेख उन प्रमुख नीतियों और कार्यक्रमों का विश्लेषण करता है जो केंद्र सरकार और मध्य प्रदेश राज्य सरकार द्वारा किसानों के कल्याण हेतु संचालित की जा रही हैं। इसमें प्रधानमंत्री किसान सम्मान निधि, प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना जैसे केंद्र सरकार के प्रयासों के साथ-साथ मुख्यमंत्री किसान कल्याण योजना और राज्य स्तरीय सिंचाई व विपणन समर्थन योजनाओं को सम्मिलित किया गया है। लेख इन योजनाओं के उद्देश्य, लाभ और किसानों के जीवन पर पड़ने वाले प्रभावों का विवेचन करता है, जिससे कृषि क्षेत्र में समृद्धि लाने की दिशा में उठाए गए कदमों की समग्र तस्वीर प्रस्तुत होती है।

केंद्र सरकार की योजनाएँ

1. प्रधानमंत्री किसान सम्मान निधि योजना (प्रारंभ तिथि- 29 फरवरी 2019):

यह एक केंद्र सरकार की योजना है जिसका उद्देश्य भूमिधारी किसानों की वित्तीय आवश्यकता को पूरा करना है (कुछ अपवादों को छोड़कर)। इसके अंतर्गत पात्र किसानों के परिवारों को प्रति वर्ष ₹6,000 की वित्तीय सहायता प्रदान की जाती है, जो तीन समान किश्तों में (चार-चार महीने पर) प्रत्यक्ष लाभ अंतरण (DBT) के माध्यम से उनके बैंक खातों में भेजी जाती है।

2. प्रधानमंत्री किसान मानधन योजना:

यह योजना छोटे और सीमांत किसानों की बुजुर्गावस्था और सामाजिक सुरक्षा हेतु बनाई गई है। इसके अंतर्गत 18 से 40 वर्ष की आयु वाले किसान जिनके पास 2 हेक्टेयर तक की कृषि योग्य भूमि है और जिनका नाम 01.08.2019 तक राज्य/संघ राज्य क्षेत्र के भू-अभिलेखों में दर्ज है, वे पात्र हैं। 60 वर्ष की आयु प्राप्त करने पर ₹3000 मासिक पेंशन मिलती है। किसान की मृत्यु के उपरांत, उसकी पत्नी को 50% पेंशन (परिवार पेंशन) मिलती है (केवल पत्नी को)। योजना में शामिल होने वाले किसानों को ₹55 से ₹200 तक की मासिक अंशदान राशि जमा करनी होती है (आयु के अनुसार)। लाभ लेने के लिए नजदीकी कॉमन सर्विस सेंटर में आवेदन करना होता है।

3. प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना (प्रारंभ तिथि- 18 फरवरी 2016):

यह योजना किसानों को फसल हानि के जोखिम से सुरक्षा देती है। इसके मुख्य बिंदु: यह कृषि मंत्रालय द्वारा संचालित प्रमुख योजना है। ऋणी किसानों (जिन्होंने फसल ऋण या किसान क्रेडिट कार्ड लिया है) के लिए अनिवार्य है; अन्य किसानों के लिए वैकल्पिक।

प्रीमियम दरें:

- खरीफ फसल: 2%
- रबी फसल: 1.5%
- वाणिज्यिक/बागवानी फसलें: 5%

4. पर ड्रॉप मोर क्रॉप:

यह सूक्ष्म सिंचाई (ड्रिप और स्प्रिंकलर) को बढ़ावा देने के लिए एक केंद्र प्रायोजित योजना है। यह योजना अब प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना के अंतर्गत आती है।

उद्देश्य:

- पानी की दक्षता बढ़ाना
- छोटे स्तर पर जल संरक्षण
- ऑन-फार्म वॉटर मैनेजमेंट को बढ़ावा देना

5. राष्ट्रीय मधुपालन और शहद मिशन (प्रारंभ: 2020, आत्मनिर्भर भारत अभियान के तहत):

उद्देश्य: देश में वैज्ञानिक मधुमक्खी पालन को बढ़ावा देना और शहद उत्पादन को बढ़ाकर 'मीठी क्रांति' लाना।

मुख्य बातें:

- प्रशिक्षण (विशेष रूप से महिलाओं के लिए)
- इंफ्रास्ट्रक्चर और मार्केटिंग सहायता

सब्सिडी:

- सामान्य राज्यों के लिए: 50%
- एफपीओ के लिए: 75%
- पूर्वोत्तर और हिमालयी राज्यों के लिए: 90%
- गुणवत्ता नियंत्रण, निर्यात प्रोत्साहन और अनुसंधान पर ज़ोर

6. कृषि आधारभूत संरचना निधि (एग्रीकल्चरल इन्फ्रास्ट्रक्चर फंड ए.आई.एफ):

उद्देश्य: किसानों और कृषि उद्यमियों को फसल कटाई के बाद के प्रबंधन और सामुदायिक खेती के संसाधनों के लिए ऋण सुविधा प्रदान करना।

लाभार्थी: किसान, एफपीओ (किसान उत्पादक संगठन/फार्मर प्रोडूसर ऑर्गनाइजेशन), स्टार्टअप्स, सहकारी समितियाँ, राज्य एजेंसियाँ, आदि।

लाभ:

- अधिकतम ₹2 करोड़ तक का ऋण
- 7 वर्षों तक 3% ब्याज सब्सिडी
- 25 विभिन्न स्थानों पर परियोजनाएँ लागू करने की अनुमति
- परियोजना लागत का न्यूनतम 10% लाभार्थी द्वारा योगदान अनिवार्य
- एस.टी/एस.सी. के लिए 24% अनुदान आरक्षित
- महिला और हाशिए पर मौजूद वर्गों को प्राथमिकता

समयावधि:

- योजना: 2020-21 से 2032-33
- ऋण वितरण: 2025-26 तक पूरा किया जाएगा

7. ब्याज अनुदान योजना (इंटेरेस्ट सब्वेंसन स्कीम - आईएसएस):

उद्देश्य: किसानों को सस्ती दर पर अल्पकालिक फसल ऋण उपलब्ध कराना।

लाभ:

- ₹3 लाख तक के फसल ऋण पर 7% वार्षिक ब्याज दर।
- समय पर भुगतान करने पर अतिरिक्त 3% की छूट (अर्थात प्रभावी दर 4%)।
- यह सुविधा फसल उत्पादन, पशुपालन, मत्स्य पालन, आदि के लिए लागू है।

8. मृदा स्वास्थ्य प्रबंधन (सोइल हेल्थ मेनेजमेंट-एसएचएम) (प्रारंभ तिथि: 19 फरवरी 2015):

योजना का नाम: सोईल हेल्थ कार्ड स्कीम

उद्देश्य:

- वैज्ञानिक परीक्षण आधारित पोषक तत्वों का प्रबंधन
- उर्वरकों का संतुलित उपयोग
- मृदा की गुणवत्ता में सुधार

मुख्य विशेषताएँ:

- 12 प्रमुख मानकों (N, P, K, S, Zn, Fe, Cu, Mn, B, pH, EC, OC) पर आधारित मृदा परीक्षण
- कार्ड के माध्यम से खाद की सटीक अनुशंसा
- प्रत्येक SHC की लागत: ₹300
- किसानों को एसएमएस के माध्यम से SHC की सूचना

9. पशुधन एवं कुक्कुट प्रजनन उप मिशन (प्रारंभ: वित्तीय वर्ष 2014-15):

योजना का नाम: राष्ट्रीय पशुधन मिशन (नेशनल लाइव्सटोक मिशन-एनएलएम)

उद्देश्य:

- रोजगार सृजन और पशुपालन में उद्यमिता
- पशुओं की उत्पादकता में वृद्धि
- घरेलू और निर्यात बाजार के लिए उत्पादन में वृद्धि

मुख्य उप-योजनाएँ:

- पशुधन और कुक्कुट नस्ल विकास उप मिशन-भेड़, बकरी, सुअर और मुर्गी पालन हेतु प्रोत्साहन
- चारा और आहार विकास उप मिशन-प्रमाणित बीजों की आपूर्ति और चारा प्रसंस्करण इकाइयाँ
- नवाचार और प्रसार उप मिशन-प्रशिक्षण, क्षमता निर्माण

10. बीज एवं रोपण सामग्री उप मिशन (2016-17):

योजना: ''हरित क्रांति-कृषोन्नति योजना'' का हिस्सा

उद्देश्य:

- प्रमाणित और गुणवत्ता युक्त बीजों का उत्पादन
- बीज प्रतिस्थापन दर में सुधार
- बीज परीक्षण, भंडारण और प्रमाणन सुविधाओं का आधुनिकीकरण
- नए किस्मों का प्रचार और किसान अधिकारों का संरक्षण (पी.पी.भी. एफ.आर.ए. अधिनियम के तहत)

11. राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन:

उद्देश्य:

- धान, गेहूँ, दालें, मोटे अनाज, पोषणीय अनाज, जूट, कपास, गन्ना और तिलहन की पैदावार बढ़ाना
- वैज्ञानिक तकनीकों और उन्नत प्रबंधन पद्धतियों का प्रसार

प्रमुख सहायता:

- प्रमाणित बीज, बीज मिनी-किट, क्लस्टर डेमो, जैव उर्वरक/कीटनाशक
- ₹9,000/हेक्टेयर (एकल फसल डेमो) और ₹15,000/हेक्टेयर (फसल प्रणाली आधारित डेमो)
- अधिकतम 5 हेक्टेयर तक लाभ
- महिलाओं (30%), छोटे किसानों (33%), एस.सी. (16%) और एस.टी. (8%) को प्राथमिकता

12. 10,000 किसान उत्पादक संगठन (एफपीओ) का गठन और प्रोत्साहन योजना (फरवरी 2020):

कुल बजट: 6,865 करोड़ (5 वर्षों के लिए)

उद्देश्य:

- छोटे, सीमांत और भूमिहीन किसानों को, एफपीओ (फार्मर प्रोडूसर ऑर्गनाइजेशन) में संगठित कर उनकी सामूहिक ताकत को बढ़ाना।
- किसानों को गुणवत्ता युक्त बीज, उर्वरक, तकनीक, ऋण और बेहतर बाजार उपलब्ध कराना।

मुख्य विशेषताएँ:

- NABARD, SFAC, NAFED, NCDC आदि एजेंसियों के माध्यम से लागू
- CBBOs (क्लसटर बेस्ड बिजनिस ऑर्गनाइजेशन) द्वारा एफपीओ को पाँच वर्षों तक पूर्ण सहायता
- व्यक्तिगत किसानों की तुलना में FPOs को अतिरिक्त सब्सिडी, इक्विटी ग्रांट और गारंटी समर्थन
- एफपीओ को कृषि व्यवसाय इकाई के रूप में सशक्त बनाना

13. राष्ट्रीय कृषि विकास योजना कृषि और संबद्ध क्षेत्र के रूपांतरण हेतु लाभकारी दृष्टिकोण

उद्देश्य:

- कृषि को लाभकारी व्यवसाय बनाना
- जोखिम को कम करना, कृषि आधारित उद्यमिता को प्रोत्साहित करना
- नए और मौजूदा एग्रीबिजनेस इनक्यूबेटर्स (R-ABI) को सशक्त बनाना

मुख्य बिंदु:

- किसानों और कृषि उद्यमियों को नवाचार के लिए प्रोत्साहन
- आइडिया-टू-मार्केट चरण तक तकनीकी सहायता और अनुदान
- कृषि और संबद्ध क्षेत्रों में स्टार्टअप्स को सहायता

14. राष्ट्रीय बांस मिशन (एन बी एम)

पुनर्गठन: वर्ष 2022-23 में मिशन फॉर इंटीग्रेटेड डेवलपमेंट ऑफ हॉर्टिकल्चर में विलय

उद्देश्य:

- बांस क्षेत्र का समग्र विकास
- निजी भूमि पर बांस की खेती, कटाई और व्यापार को बढ़ावा देना
- उद्योग-उपयोगी बांस उत्पादन और आयात निर्भरता में कमी

मुख्य विशेषताएँ:

- पूरे मूल्य श्रृंखला का विकास: उन्नत रोपण सामग्री → प्रसंस्करण इकाइयाँ → उत्पाद विकास → विपणन
- क्लस्टर आधारित दृष्टिकोण
- जैव ऊर्जा, सक्रिय कार्बन, पेलेट, एथेनॉल गैसिफायर आदि के लिए प्रसंस्करण यूनिट की स्थापना
- निजी और सरकारी दोनों क्षेत्र लाभान्वित
- उद्यमिता, कौशल निर्माण, अनुसंधान और निर्यात को बढ़ावा

मध्यप्रदेश राज्य सरकार की योजनाएँ

1. गौसेवक प्रशिक्षण (प्रारंभिक एवं पुनः प्रशिक्षण):

विभाग: पशुपालन विभाग, मध्यप्रदेश सरकार

उद्देश्य: ग्रामीण बेरोजगार शिक्षित युवाओं को स्वरोजगार देने हेतु उन्हें प्राथमिक पशु चिकित्सा सेवाओं में दक्ष बनाना।

लाभ:

प्रारंभिक प्रशिक्षण:

- ₹6,000 प्रशिक्षण खर्च
- 6 माह की छात्रवृत्ति (₹1,000 प्रति माह)
- ₹1,200 मूल्य का गौसेवक किट
- कुल लाभ: ₹7,200 प्रति गौसेवक

पुन: प्रशिक्षण:

- ₹500 छात्रवृत्ति
- ₹100 अध्ययन सामग्री
- कुल लाभ: ₹600 प्रति गौसेवक

पात्रता:

- 18-35 वर्ष की आयु
- ग्रामीण पृष्ठभूमि, 10वीं उत्तीर्ण
- पहले से गौसेवक के रूप में कार्यरत
- बेरोजगार

2. वन्य पशुओं द्वारा मवेशियों को घायल करने पर मुआवजा योजना:

प्रारंभ तिथि: 6 फरवरी 2024

विभाग: वन विभाग, मध्यप्रदेश सरकार

उद्देश्य: वन्यजीव हमलों में घायल या मृत पशुओं के मालिकों को आर्थिक सहायता देना

लाभः

- सामान्य चोट: ₹30,000 तक चिकित्सा सहायता
- स्थायी विकलांगता की स्थिति में: ₹1,00,000 तक
- मामूली चोट पर तुरंत सहायता: ₹1,000

नियमः

- घटना की सूचना 48 घंटे के अंदर निकटतम वन अधिकारी को देना अनिवार्य
- मृत पशु को बिना निरीक्षण के नहीं हटाना

3. कृत्रिम गर्भाधान प्रशिक्षण योजनाः

विभागः पशुपालन विभाग, मध्यप्रदेश

उद्देश्यः दुग्ध उत्पादन बढ़ाने, नस्ल सुधार को बढ़ावा देने और ग्रामीण युवाओं को स्वरोजगार से जोड़ना

प्रशिक्षण विवरणः

- कुल अवधि: 3 माह
- 1 माह सैद्धांतिक
- 2 माह व्यावहारिक
- मान्यता प्राप्त संस्थानों में नि:शुल्क प्रशिक्षण

प्रशिक्षण पूर्ण करने के बादः

- ₹4,000 मानदेय
- ₹18,000 मूल्य के उपकरण

पात्रताः

- पूर्व चयनित गौसेवक या 10वीं पास बेरोजगार युवा
- न्यूनतम आयु: 18 वर्ष

4. राष्ट्रव्यापी कृत्रिम गर्भाधान कार्यक्रमः

संयुक्त रूप से संचालितः मध्यप्रदेश सरकार + भारत सरकार + राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड

उद्देश्यः पशुओं की प्रजनन क्षमता एवं उत्पादकता में सुधार

मुख्य बातेंः

- जिले स्तर पर AI तकनीशियनों को प्रशिक्षित किया जा रहा है
- गुणवत्ता युक्त वीर्य और वैज्ञानिक तकनीकों का उपयोग
- सेवा लागत कम कर किसानों के लिए सुलभ बनाना

लाभः दूध, मांस उत्पादन में वृद्धि, नस्ल सुधार

5. आचार्य विद्यासागर गौ संवर्धन योजनाः

उद्देश्यः देशी गायों की देखभाल और संवर्धन को बढ़ावा देना, साथ ही गौ आधारित उद्यमिता को प्रोत्साहन

पात्रताः

- पंजीकृत गौशालाएं, एन.जी.ओ, एवं ऐसे व्यक्ति जिनके पास सरकार द्वारा मान्यता प्राप्त देशी गायें हैं
- हर 5 पशुओं पर 1 एकड़ कृषि भूमि अनिवार्य
- गौ संवर्धन बोर्ड में पंजीयन जरूरी

वित्तीय सहायताः

- अधिकतम परियोजना लागत: ₹10 लाख
- 75% बैंक ऋण, 25% मार्जिन मनी और स्वयं का अंशदान

ब्याज प्रतिपूर्तिः

- 5% प्रति वर्ष या ₹25,000 (जो भी कम)
- अवधि: 7 वर्ष तक
- सामान्य वर्ग: 25% मार्जिन मनी (₹1.5 लाख तक)
- SC/ST: 33% (₹2 लाख तक)

6. कृषक प्रशिक्षण तथा भ्रमण कार्यक्रमः

विभागः उद्यानिकी एवं खाद्य प्रसंस्करण विभाग, मध्यप्रदेश

उद्देश्यः किसानों को देश-विदेश में नवीन कृषि तकनीकों, सफल मॉडल और सर्वोत्तम प्रथाओं से अवगत कराना।

मुख्य लाभः

- राज्य के भीतर भ्रमण: ₹1,000 प्रति किसान (अधिकतम 7 दिन)
- राज्य के बाहर भ्रमण: ₹1,500 प्रति किसान प्रति दिन
- नवीन तकनीक अवलोकन भ्रमण: ₹1,500 प्रति दिन
- 20 किसानों के एक दिवसीय भ्रमण प्रशिक्षण:
- प्रति किसान ₹500
- ₹100 मानदेय मेजबान किसान को
- कुल व्यय: ₹600 प्रति किसान

लाभः आधुनिक कृषि ज्ञान, व्यावहारिक अनुभव, और कृषि-उद्यमिता को बढ़ावा

7. नलकूप खनन योजना (SC/ST किसानों हेतु):

प्रारंभः 31 दिसंबर 2001

विभागः किसान कल्याण तथा कृषि विकास विभाग, मध्यप्रदेश

उद्देश्यः सिंचाई सुविधा बढ़ाना और भूमिगत जल स्रोतों का उपयोग

लाभः

- ट्यूबवेल खुदाई पर 75% अनुदान (₹25,000 तक चाहे सफल हो या नहीं)
- सफल नलकूप पर सबमर्सिबल पंप हेतु 75% अनुदान (₹15,000 तक)
- अनुदान सीधे बैंक खाते में डीबीटी के माध्यम से

पात्रताः

- SC/ST श्रेणी
- मध्यप्रदेश के निवासी
- कृषि भूमि के स्वामी
- इंदौर और शाजापुर जिलों को छोड़कर सभी जिलों में लागू

8. मुख्यमंत्री किसान कल्याण योजनाः

उद्देश्यः आर्थिक रूप से कमजोर किसानों को कृषि कार्यों हेतु आर्थिक सहायता प्रदान करना।

लाभः

- ₹4,000 वार्षिक सहायता (दो किश्तों में ₹2,000 + ₹2,000)
- यह सहायता पीएम-किसान योजना से अतिरिक्त दी जाती है।

पात्रताः

- मध्यप्रदेश के स्थायी निवासी
- पीएम-किसान के अंतर्गत पंजीकृत
- स्व-स्वामित्व की कृषि भूमि पर खेती करने वाले किसान

अयोग्य श्रेणियाँः

- संवैधानिक पदाधिकारी, सांसद/विधायक, क्लास I/II अधिकारी, इनकम टैक्सदाता, पेशेवर (डॉक्टर, इंजीनियर, वकील), आदि।

9. मुख्यमंत्री कृषक उद्यमी योजनाः

विभागः सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यम विभाग, मध्यप्रदेश

उद्देश्यः किसानों के पुत्र-पुत्रियों को स्वरोजगार और उद्यमिता के लिए प्रेरित करना।

ऋण सीमाः ₹50,000 से ₹10 लाख तक।

सब्सिडी और ब्याज सहायताः

- ₹10 लाख से अधिक की परियोजनाः
- सामान्य वर्गः 15% (₹12 लाख तक)
- बीपीएलः 20% (₹18 लाख तक)
- ब्याज सहायताः पुरुषः 5%, महिलाएँः 6% (7 वर्ष तक)
- ₹10 लाख से कम की परियोजनाः
- सामान्य वर्गः 15% (₹1 लाख तक)
- BPL/SC/ST/OBC/महिला/अल्पसंख्यक/दिव्यांगः 30% (₹2 लाख तक)

विशेष श्रेणियाँः

- विमुक्त/अर्धविमुक्त जनजातिः 30% (₹3 लाख तक)
- भोपाल गैस पीड़ित परिवारः अतिरिक्त 20% (₹1 लाख तक)

पात्रताः

- मध्यप्रदेश निवासी
- 18-45 वर्ष आयु
- न्यूनतम 10वीं उत्तीर्ण
- आयकरदाता नहीं
- अभिभावकों के नाम कृषि भूमि नहीं होनी चाहिए

10. सब्सिडी पर नर बकरा प्रदाय योजनाः

विभागः पशुपालन विभाग, मध्यप्रदेश

उद्देश्यः स्थानीय नस्लों की गुणवत्ता सुधारकर बकरी पालन को लाभकारी बनाना।

लाभः

- प्रति लाभार्थी एक बेहतर नस्ल का नर बकरा (जैसे जामुनापारी, बरबरी, सिरोही)
- कुल लागतः ₹8,300
- बकराः ₹7,500
- बीमाः ₹206
- खनिज मिश्रणः ₹394
- प्रशिक्षण पुस्तिका व निगरानी कार्डः ₹200
- अनुदानः 75%, शेष 25% लाभार्थी द्वारा

पात्रताः

- मध्यप्रदेश निवासी
- कम से कम 5 बकरियाँ होने चाहिए
- ग्राम सभा, जनपद व जिला पंचायत की स्वीकृति से चयन

11. कड़कनाथ चूजे प्रदाय योजना (सब्सिडी पर):

उद्देश्यः देशी नस्ल 'कड़कनाथ' को संरक्षित करना व ग्रामीण आजीविका बढ़ाना।

लाभः

- प्रति लाभार्थी 40 कड़कनाथ चूजे
- साथ में 28 दिनों का चारा, दवाइयाँ, परिवहन सुविधा
- कुल लागतः ₹4,400

- चूजे: ₹2,600
- दवाइयाँ: ₹200
- परिवहन: ₹210
- चारा: ₹1,390
- सरकार द्वारा 75% अनुदान, 25% लाभार्थी से

पात्रता:

- मध्यप्रदेश निवासी
- पोल्ट्री पालन हेतु मूलभूत ढाँचा होना चाहिए।

12. खरमोर-सोनचिड़िया पुरस्कार योजना:

विभाग: वन विभाग, मध्यप्रदेश

उद्देश्य: दुर्लभ पक्षियों की सुरक्षा हेतु किसानों को प्रेरित करना।

लाभ:

- खरमोर की पुष्टि होने पर: ₹5,000
- पहली बार (जुलाई-अगस्त): ₹1,000
- पुन: दर्शन (सितंबर-अक्टूबर): ₹4,000
- सोनचिड़िया के लिए: ₹10,000
- पहली बार: ₹2,000
- पुन: दर्शन: ₹8,000

शर्तें:

- पक्षियों, उनके अंडों और आवास की सुरक्षा अनिवार्य।

13. बकरी इकाई योजना (ऋण और अनुदान):

उद्देश्य: भूमिहीन मजदूरों, सीमांत व छोटे किसानों को स्वरोजगार देना

इकाई संरचना: 10 मादा + 1 नर बकरी

कुल लागत: ₹77,456

अनुदान:

- सामान्य वर्ग: 40%
- SC/ST: 60%

पात्रता:

- मध्यप्रदेश निवासी
- अनुभव होना चाहिए
- भूमिहीन, सीमांत या छोटे किसान

14. फल पौधारोपण योजना:

विभाग: उद्यानिकी एवं खाद्य प्रसंस्करण विभाग

उद्देश्य: बागवानी फसलों को बढ़ावा देना।

पात्र फसलें: आम, अमरूद, संतरा, अनार, स्ट्रॉबेरी, केला, मुनगा, नींबू, पपीता आदि

लाभ:

- 0.25 से 4 हेक्टेयर तक के लिए
- 40% से 50% सब्सिडी (तीन साल में 60:20:20 अनुपात में)
- प्रकार के अनुसार सब्सिडी (प्रति हेक्टेयर):

प्लांटेशन प्रकार	ड्रिप नही	ड्रिप के साथ
सामान्य दूरी	₹30,000	₹40,000
उच्च घनता	₹40,000	₹60,000
अति उच्च घनता	₹40,000	₹80,000

15. अन्न भंडारण हेतु गोदाम निर्माण योजना:

प्रारंभ: 24 दिसंबर 2013

विभाग: पंचायत एवं ग्रामीण विकास विभाग

उद्देश्य: ग्रामीण क्षेत्रों में वैज्ञानिक अनाज भंडारण को बढ़ावा देना।

मुख्य बातें:

- आवेदन ग्राम पंचायत को ऑनलाइन/ऑफलाइन जमा करें।
- स्वीकृति के बाद निर्माण की अनुमति दी जाती है।
- खाद्य सुरक्षा अधिनियम 2013 के अंतर्गत।
- किसान, अनाज व्यापारी, सहकारी भूमि धारक पात्र।

16. गोपाल प्रोत्साहन योजना:

विभाग: पशुपालन विभाग, मध्यप्रदेश

उद्देश्य: भारतीय उन्नत नस्ल की गायों को बढ़ावा देना और दुग्ध उत्पादन में वृद्धि करना।

पुरस्कार राशि: ₹5,000 से ₹2,00,000 तक

स्तर: ब्लॉक, जिला, राज्य

अतिरिक्त प्रावधान: प्रतियोगिता आयोजन, चारा, परिवहन, प्रचार

पात्रता:

- भारतीय उन्नत नस्ल की गाय रखने वाले पशुपालक
- उन्नत बछड़ों की उपलब्धता भी आवश्यक

17. मसाला क्षेत्र विस्तार योजना:

लक्ष्य: मसालों जैसे हल्दी, अदरक, जीरा, सौंफ आदि की खेती बढ़ाना।

लाभ:

- बीज मसालों के लिए 50% सब्सिडी, ₹10,000/हेक्टेयर तक।

- कंदीय फसलों (हल्दी, लहसुन, अदरक) के लिए: 50%, ₹50,000/हेक्टेयर तक।

लाभ: केवल एक बार, 0.25-2 हेक्टेयर क्षेत्र के लिए।

18. सब्जी क्षेत्र विस्तार योजना:

लक्ष्य: नई किस्म की सब्जियाँ जैसे भिंडी, टमाटर, लौकी, शिमला मिर्च आदि को बढ़ावा देना।

लाभ:

- हाइब्रिड बीजों पर 50% सब्सिडी, ₹10,000/हेक्टेयर तक।
- कंदीय फसलों (जैसे अरबी): ₹30,000/हेक्टेयर तक।
- लाभ: केवल एक बार, 0.25-2 हेक्टेयर क्षेत्र में।

19. औषधीय एवं सुगंधित फसल क्षेत्र विस्तार योजना:

लक्ष्य: औषधीय फसलों की खेती जैसे आंवला, अश्वगंधा, सफेद मूसली, तुलसी आदि।

लाभ:

- 20% से 50% तक की सब्सिडी।
- 0.25-2 हेक्टेयर क्षेत्र।
- सभी किसान पात्र, वनाधिकार पट्टाधारी भी शामिल।

20. उन्नत पशु प्रजनन योजना (वंशावली मुर्रा सांड):

उद्देश्य: उन्नत नस्लों के माध्यम से पशुधन प्रजनन क्षमता को बढ़ाना

लाभ:

- वंशावली मुर्रा सांड: ₹60,000
- परिवहन व बीमा: ₹2,000
- कुल लागत: ₹62,000
- सरकार: 75%, लाभार्थी: 25% योगदान

पात्रता:

- मध्यप्रदेश निवासी।
- पशुपालन या प्रशिक्षण का अनुभव होना चाहिए।
- सही रख-रखाव की सुविधा।

21. नल जल योजना:

विभाग: पंचायत एवं ग्रामीण विकास विभाग

उद्देश्य: ग्राम पंचायत क्षेत्रों में नल के माध्यम से स्वच्छ पेयजल उपलब्ध कराना

प्रक्रिया:

- ग्राम पंचायत में आवेदन (ऑनलाइन/ऑफलाइन)
- मंजूरी के बाद नल कनेक्शन
- लाभार्थी को निर्धारित जल कर देना होता है।

पात्रता: ग्राम पंचायत क्षेत्र के निवासी।

22. मध्य प्रदेश राज्य मिलेट मिशन योजना

मध्य प्रदेश राज्य मिलेट मिशन योजना 2023 में शुरू की गई थी, जिसका उद्देश्य मिलेट के उत्पादन को बढ़ावा देना और किसानों को समर्थन देना है। इसमें प्रमाणित बीजों पर 80% सब्सिडी, प्रशिक्षण और प्रचार गतिविधियाँ, और मिलेट उत्पादन पर प्रति किलोग्राम 10 रुपये का नकद प्रोत्साहन शामिल है। यह योजना राज्यव्यापी स्तर पर 2 वर्षों (2023-25) के लिए 23.25 करोड़ रुपये के बजट के साथ लागू की गई है।

हिंदी उन सभी गुणों से अलंकृत है, जिनके बल पर वह विश्व की साहित्यिक भाषा की अगली श्रेणी में समासीन हो सकती है।

-मैथिलीशरण गुप्त

"मेरा नाम खरपतवार"

जी.आर. डोंगरे
भाकृअनुप-खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)

मै अवान्छित पौधा हूँ।
खरपतवार नींदा है मेरा नाम
फसल की खुराक चुराना मेरा काम
खेत, खलिहान, मैदान मे लहराता सरेआम
बहुतायत में मैं उगा, तो फसल का फिर काम तमाम
क्रान्तिक अवस्था में न रोका तो बढ़ुंगा सुबह-शाम
खाद पानी सब पहले मैं लेता
बचा कुचा फसल को है जाता
फसल से लड़ता मैं सुबह-शाम
फसल का करता 37 प्रतिशत तक नुकसान
मैं हूँ बड़का गुप्त-चतुर सुजान
किसान न जाने पाये मेरा नुकसान
कीट पतंगो पर ही उसका ध्यान
जल में, थल में और फसल में
रेल पात और ग्रामीण अंचल में
सड़क, मैदानो और वनाचल में
वाटिका, उपवन और नदी के तल में
मैं आता हुँ हर ऋतु हल चल में
मुझ से घबराया है किसान
सूझे न उसे कोई समाधान
मजदूरी के बढ़ गये है दाम
कृषि यंत्र भी नही है आम
कृषि को किया मैंने घाटे का काम
मेरी भी है पूरी सेना, फौज
शाकनाशी का जितना हो डोज
कुछ साथी करते उसका अवरोध
आ रहे हैं नूतन तकनीकी के शोध
ग्लोबल वार्मिंग का भी बोध
मै भी बढ़ता, तोड़कर सब अवरोध
भले मैं हूँ फसलों का खलनायक
पर औषधीय उपयोग के भी लायक
उपयोग ढूढ़ोगे तो हूँ लाभ दायक
मुझ से भी बनते हैं कई सामान
जिसकी उपयोगिता जीवन में हैं आम
वर्मी कम्पोस्ट तो है वरदान
कुछ मेरे है विदेशी साथी
आक्रामकता उनकी बहुभाती
फैल गये है दुनिया में चहु ओर
करते है वे अति तेज प्रहार
बढ़ाते तेजी से अपना विस्तार
हमारी दहशत में सरकार
खोला है नियंत्रण को ICAR-DWR
जिससे हो हर किसान होशियार
करने लगा है हमारा संहार
मेरे भ्रम से आया है बहार
होने लगे है नई दवा के प्रहार
लगता है मेरा सिमटने लगा संसार
फिर भी मेरा सख्त व्यवहार
भूल न पायेगा कृषक परिवार
जानवरों के लिए मैं हूँ आहार
वर्षा ऋतु में तो मेरी भरमार
कीट पतंगो को है मुझसे प्यार
मुझ पर निर्भर उनका संसार
जैसे-जैसे बढ़ेगी कृषक जाग्रति
वैसे-वैसे होगी मेरी दुर्गति
परम्परागत खेती मुझे हैं भाती
नई तकनीक मुझे सताती
हो जाता मेरा समुल विनाश
बच पाती न कोई जीने की आस
उखड़ रही दिन-ब-दिन मेरी श्वास
लगता हैं अब मेरा निकट विनाश
लगता है अब मेरा निकट विनाश।।

जीवन-पथ

सुनीता केशर
पीएम श्री केंद्रीय विद्यालय, 1 एस.टी.सी., जबलपुर (म.प्र.)

हे राही, कुछ कर गुजरना।
पल-पल जीवन बीत रहा ऐसे,
जैसे खींच रहा कोई डोर।
जीवन-पथ पर बढ़ते चलना,
सद्कर्म जगत में करते चलना,
आत्म-सम्मान को सर्वोपरि रखना।
उत्तम आचरण अपनाते चलना।
मंजिल मिलेगी जरूर एक दिन,
मन में विश्वास जगाए रखना।
दर-दर क्यों भटकता है राही ?
मंजिल पर तू अपनी नजर बनाए रखना।
आगे बढ़ने का प्रण किया है तो फिर क्यों घबराना ?
हिम्मत और साहस से प्रत्येक कदम बढ़ाते चलना।
लक्ष्य प्राप्ति में देर भले ही हो जाए,
मुश्किल नहीं है, मुमकिन है सब।
विचलित न होना, सही रास्ता ही चुनना।
पथ में आएं चाहे कितने भी रोड़े।
मन में हौसला बनाए रखना।
विश्वास तनिक भी डगमगाने न देना।
व्याकुलता जब गति मंदिम करे,
तब सब्र बनाए रखना।
समस्या ऐसी है कौन-सी,
जिसका कोई समाधान नहीं ?
अनुशासन और आत्मसंयम का गुण,
अंतर में समाहित रखना।
धैर्य-बल और समय-पाबंद का,
जीवन में अनुपालन करना।
माना जीवन में है अनंत उलझने,
सुलझाते रहने का प्रयास तू करना।
सुख-दुख में सम-भाव बनकर रहना।
हृदय में उत्साह बरकरार रखना।
शाश्वत सत्य हैं, जीवन और मरण
न कुछ लेकर आए हैं,
और न कुछ लेकर जाना है?
संसार का यही है दस्तूर।
व्यथा-पीड़ा से न घबराना ,
जीवन है खुशियों का खजाना।
निराशा जब भी आए जीवन में,
ईश्वर की असीम भक्ति में डूब जाना।
मिलती है जिसमें सच्ची खुशियाँ
ऐसे सद्धतियों को आत्मसात करना।
क्षण भर की खुशी दे सकें किसी को,
ऐसे पुण्यकर्म विकसित करना।
आदर्श छवि की मिसाल तू बनना।
हे राही, कुछ कर गुजरना।
हे राही, कुछ कर गुजरना।

वक्त और इंसान

दीक्षा श्रीवास्तव
चंद्र शेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर (उ.प्र.)

ये वक्त की कहानी है,
जो की बहता एक कतरा आँख का पानी हैं।
जैसे-जैसे वक्त बीतेगा,
आंखों से पानी बहता चला जाएगा।
ना जाने जो आया है इस दुनिया में,
क्या वक्त रहते कुछ कर पाएगा।
नहीं कर पाते जब कुछ हाँसिल, तो वक्त को दुहाई देते हैं।
वक्त के साथ बहते उस एक कतरे पानी को क्यों नहीं देख लेते हैं।
ये वक्त तो बीतता ही चला जाएगा,
और एक दिन इंसान से सबकुछ छुट जाया।
वक्त रहते तो कुछ कर नहीं पाए,
जब हारे तो सिर्फ आँखों से आँसु बहाए।
क्यों इसे अपनी कमजोरी बनाते जा रहे है,
क्यों कीमती एक कतरे पानी को बहाते जा रहे हैं।
ठान ले तो बन जाएगी ये ताकत हमारी,
समझ ले इसे तो बन जाएगी ये साथी भी हमारी।
एक बार वक्त का फैसला समझ कर तो देखे,
एक बार दुख के पलों में हँस कर तो देखे।
जिस दिन अपना लिया आँख के बहते एक कतरे पानी को,
तब ये वक्त भी दोहराएगा अपनी कहानी को।

अभिस्वीकृति: मैं डॉ. सुधानंद प्रसाद लाल के प्रति गहरी कृतज्ञता व्यक्त करती हूँ, जिन्होंने इस विषय से संबंधित कविता को प्रकाशित करने के लिए रचनात्मक सुझाव और प्रेरणा दी।

नवग्रह वाटिका : पौधों के धार्मिक महत्व

मोनिका धगट[1] एवं संदीप धगट[2]
[1]माता गुजारी महिला महाविद्यालय (स्वसायी), जबलपुर (म.प्र.)
[2]भाकृअनुप-खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)

नवग्रह वाटिका यह बताती है कि किस ग्रह से जुड़ा कौन-सा पौधा शुभ माना जाता है और किस ग्रह को शांत करने के लिए किस पौधे की लकड़ी या पत्तियों का उपयोग किया जाता है। इस विशेष वाटिका में ग्रहों के अनुरूप पौधे लगाएं। नवग्रह वाटिका से यह जानकारी मिलती है कि शुक्र, केतु, सूर्य और बृहस्पति ग्रह के लिए कौन-कौन से पौधे उपयुक्त हैं।

वाटिका में प्रत्येक ग्रह के लिए एक विशिष्ट पौधा होता है। जो धार्मिक अनुष्ठानों और विशेष रूप से हवन-पूजन में उपयोगी होता है। भारतीय ज्योतिष शास्त्र के अनुसार, ग्रहों की शांति में पेड़-पौधों की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। यदि किसी ग्रह की दशा प्रतिकूल हो, तो उस ग्रह से संबंधित पौधे की पूजा, उसके मंत्रों का जाप और पौधे की सेवा द्वारा ग्रह के नकारात्मक प्रभाव को कम किया जा सकता है। ज्योतिष शास्त्र के अनुसार, ग्रहों की अशुभ दशाओं को दूर करने के लिए जटिल और खर्चीले पूजा-पाठ या अनुष्ठानों की आवश्यकता नहीं होती। कुछ सरल उपायों से भी नवग्रहों को शांत किया जा सकता है। इन्हीं आसान उपायों में एक है, ग्रहों से संबंधित पौधों की पूजा करना और उनके फल का सेवन करना।

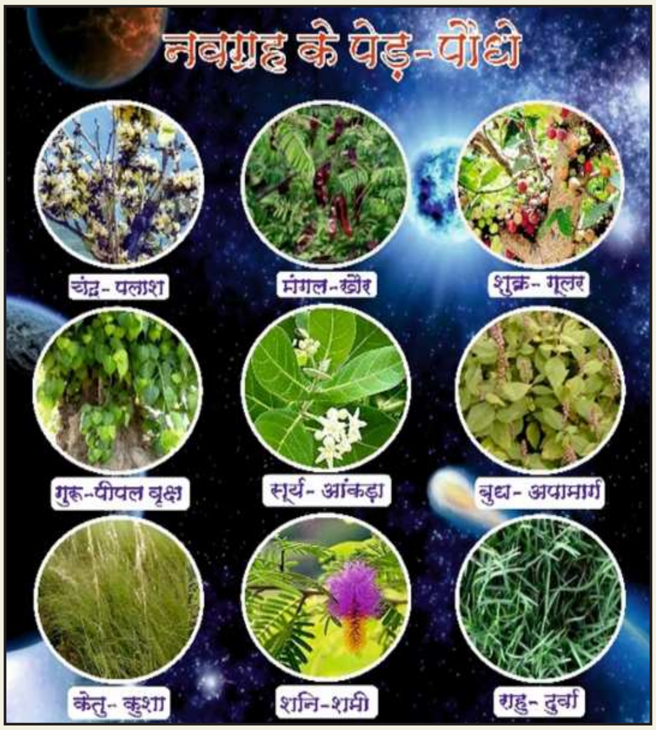

आक (सूर्य) - सूर्य ग्रह से संबंधित आक का पौधा विशेष रूप से प्रभावशाली माना गया है। इसे आकड़ा, मदार, अकौआ या अर्क भी कहा जाता है। इस पौधे की पूजा करने से मानसिक क्षमता, स्मरण शक्ति और आत्मविश्वास में वृद्धि होती है, साथ ही कुंडली में सूर्य की स्थिति भी बेहतर होती है। यदि किसी व्यक्ति की कुंडली में सूर्य ग्रह कमजोर हो तो आक के पौधे की पूजा करने से लाभ मिलता है। सूर्य दोष के कारण व्यक्ति को सम्मान की हानि और जीवन में कठिनाइयों का सामना करना पड़ सकता है। आक का पौधा आकार में छोटा होता है, इसके पत्ते बरगद जैसे होते हैं लेकिन रंग में हल्का सफेदपन लिए हरे होते हैं। इसके सफेद फूल गुच्छों में लगते हैं और फल आम के आकार जैसे होते हैं। फल पकने पर इनमें से रुई जैसे बीज निकलकर उड़ते हैं। इसकी पत्तियों या डंठल को तोड़ने पर सफेद रंग का जहरीला रस निकलता है, जिसे औषधीय प्रयोगों और तंत्र-मंत्र विधियों में उपयोग किया जाता है। आक का पौधा धार्मिक दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है। इसके फूल भगवान शिव को चढ़ाए जाते हैं और इसे घर में लगाना शुभ माना जाता है।

पलाश (चंद्र) - चंद्र ग्रह, जिसे मन का स्वामी माना जाता है, से जुड़ा पौधा पलाश होता है। इस पौधे की पूजा करने से मानसिक तनाव और रोगों से राहत मिलती है तथा चंद्रमा से सकारात्मक फल प्राप्त होते हैं। खासतौर पर इसकी पत्तियों की पूजा करने से चंद्रमा की विशेष कृपा प्राप्त होती है। यदि किसी व्यक्ति की कुंडली में चंद्र दोष हो, तो उसे पलाश के पौधे की आराधना करनी चाहिए। पलाश के फूल आकर्षक लाल रंग के होते हैं, जिन्हें टेसू के फूल भी कहा जाता है। इनसे परंपरागत होली का रंग

तैयार किया जाता है। पलाश के फूलों को 'जंगल की आग' भी कहा जाता है, क्योंकि दूर से देखने पर ये अग्निशिखा जैसे प्रतीत होते हैं। इनके औषधीय गुण भी महत्वपूर्ण हैं पलाश के फूलों से स्नान करने पर शरीर में ठंडक महसूस होती है, ताजगी बढ़ती है और कामशक्ति में भी वृद्धि होती हैं।

खैर (मंगल)– कत्था या खैर का पौधा मंगल ग्रह से जुड़ा माना जाता है। इसकी पूजा करने से रक्त संबंधी विकार और त्वचा रोगों में राहत मिलती है, साथ ही मान-सम्मान और प्रतिष्ठा में वृद्धि होती है। ज्योतिष के अनुसार, यदि कुंडली में मंगल ग्रह अशुभ स्थिति में हो, तो खैर के पेड़ की पूजा करना लाभदायक होता है। जिन लोगों की कुंडली में मंगल ग्रह बलवान होता है, वे साहसी और निभक्क होते हैं, जबकि कमजोर मंगल होने पर जीवन में कई बाधाएं और चुनौतियाँ आती हैं। खैर के वृक्ष की पूजा से इन दोषों को कम किया जा सकता है। इसके अलावा, यह पेड़ अनेक औषधीय गुणों से भी युक्त होता है।

अपामार्ग (बुध)– भारतीय ज्योतिष के अनुसार, बुध दोष को दूर करने के लिए चिरचिटा (जिसे अपामार्ग, लटजीरा या वज्रदंती भी कहा जाता है) की पूजा का विधान है। यह एक कंटीली घास होती है, जिसकी जड़ से दातून करने पर दांत मजबूत होते हैं। यह पौधा पाचन संबंधी समस्याओं में भी लाभ देता है और विषैले जीव-जंतुओं के काटे पर उपचार में उपयोगी होता है। जिन लोगों की कुंडली में बुध ग्रह अशुभ प्रभाव देता है, उन्हें कई प्रकार की शारीरिक और मानसिक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। ऐसे में अपामार्ग के पौधे की पूजा करना लाभकारी माना गया है। बुध ग्रह के कमजोर होने पर व्यक्ति की बुद्धि और वाणी में दोष उत्पन्न होता है, पढ़ाई में मन नहीं लगता और समझने की क्षमता कमजोर हो जाती है। साथ ही मानसिक तनाव भी बना रहता है।

पीपल (गुरु)– पीपल का वृक्ष गुरु ग्रह से संबंधित माना जाता है। इसकी पूजा से ज्ञान में वृद्धि होती है और भगवान विष्णु की कृपा प्राप्त होती है। आमतौर पर गुरु ग्रह के दोष शमन के लिए केले के पेड़ की पूजा की जाती है, लेकिन कुछ परंपराओं में पीपल की पूजा को भी गुरु ग्रह के दोषों को कम करने के लिए प्रभावी बताया गया है। जब कुंडली में बृहस्पति कमजोर होता है, तो व्यक्ति को यश और प्रतिष्ठा में कमी का अनुभव होता है। पीपल का पौधा न केवल वनस्पति शास्त्र में, बल्कि भारतीय ज्योतिष में भी अत्यंत महत्वपूर्ण माना गया है। इसकी पूजा विशेष रूप से शनिवार को की जाती है।

गूलर (शुक्र) – गूलर का पेड़ शुक्र ग्रह से संबंधित माना जाता है और इसका पूजा-पाठ में विशेष स्थान है, जैसे कि पीपल और पिलखल के वृक्षों का भी महत्व होता है। शुक्र ग्रह की दुर्बलता के कारण व्यक्ति के दांपत्य जीवन और भौतिक सुखों में कमी आ सकती है। ज्योतिष शास्त्र में शुक्र को वासना, सौंदर्य, और सांसारिक सुखों का प्रतिनिधि ग्रह माना गया है। जब शुक्र अशुभ प्रभाव में होता है, तो विवाह में विलंब या बाधा आती है और दांपत्य जीवन में तनाव उत्पन्न हो सकता है। ऐसे में गूलर के वृक्ष की पूजा करना लाभकारी माना गया है। इसके फल अंजीर के समान होते हैं और इनमें अनेक औषधीय गुण निहित होते हैं।

शमी (शनि)– शमी का पौधा शनि ग्रह से संबंधित माना जाता है और इसकी पूजा से शनि की कृपा प्राप्त होती है। इससे व्यक्ति को धन, बुद्धि, कार्य में सफलता और मनचाहे परिणाम मिलने लगते हैं। साथ ही जीवन में आने वाली बाधाएँ भी दूर होती हैं। शनि को कर्म और न्याय का देवता माना जाता है। जब शनि ग्रह मजबूत होता है, तो विशेषकर उद्योग-धंधों और कल-कारखानों से जुड़े कार्यों में सफलता मिलती है, जबकि शनि के कमजोर होने पर जीवन में अनेक परेशानियाँ उत्पन्न होती हैं। हालांकि शनि की शांति के लिए पीपल की पूजा भी की जाती है, लेकिन नवग्रहों में शनि के दोष निवारण हेतु शमी वृक्ष की

पूजा विशेष रूप से प्रभावी मानी जाती है। शमी का पौधा अत्यंत शुभ माना जाता है और वास्तु के अनुसार इसे घर के प्रवेश द्वार पर लगाने से समृद्धि आती है। शनि दोष के निवारण के लिए शमी का रोपण और उसकी नियमित पूजा अत्यंत लाभकारी होती है।

कुशा (राहु) - कुशा का पौधा राहु ग्रह से संबंधित माना जाता है, और राहु के दुष्प्रभाव से बचाव के लिए इसकी पूजा करना लाभकारी होता है। भारतीय ज्योतिष में राहु को एक नकारात्मक ग्रह माना गया है, जो अचानक उतार-चढ़ाव और भ्रम पैदा करता है। हालांकि, जब राहु शुभ स्थिति में होता है, तो व्यक्ति को राजनीति और सार्वजनिक जीवन में बड़ी सफलता मिल सकती है, लेकिन इसकी दृष्टि प्रतिकूल होते ही गंभीर हानि भी हो सकती है। राहु दोष से राहत पाने के लिए कुशा की जड़ से पूजन करना विशेष रूप से प्रभावी माना गया है। धार्मिक अनुष्ठानों, यज्ञ और पूजा-पाठ में कुशा के आसन को पवित्र और आवश्यक माना जाता है। इसके अतिरिक्त, कुशा की पवित्री (घास से बनी अंगूठी) का प्रयोग पितरों के तर्पण में भी किया जाता है, जो इसे धार्मिक दृष्टि से और भी महत्वपूर्ण बनाता है।

दूब घास (केतु) - दूब घास का संबंध केतु ग्रह से माना जाता है। केतु ज्योतिष में एक छाया ग्रह है, जिसे आमतौर पर नकारात्मक प्रभावों से जोड़कर देखा जाता है। इसके अशुभ प्रभाव से व्यक्ति को अचानक दुर्घटनाओं, मानसिक कष्टों और रोगों का सामना करना पड़ सकता है। ऐसे में दूब घास की पूजा करना और धार्मिक कार्यों में उसका उपयोग करना लाभकारी होता है। दूब न केवल धार्मिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है, बल्कि इसमें औषधीय गुण भी प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। यह वात, कफ और पित्त जैसे त्रिदोषों को संतुलित करने में सहायक होती है, जिससे यह शरीर के समग्र स्वास्थ्य के लिए उपयोगी बन जाती है।

ज्योतिष शास्त्र के अनुसार, जीवन में आने वाली अनेक समस्याओं और ग्रह दोषों से मुक्ति पाने के लिए पेड़-पौधों की पूजा और रोपण एक प्रभावी उपाय माना गया है। प्रत्येक ग्रह से विशेष वनस्पतियाँ जुड़ी होती हैं, जिनका पूजन करने से संबंधित ग्रहों की अशुभता में कमी आती है और शुभ फल की प्राप्ति होती है। इन पौधों की पूजा न केवल आध्यात्मिक दृष्टि से, बल्कि स्वास्थ्य और पर्यावरण की दृष्टि से भी लाभकारी होती है। जब ग्रह अनुकूल होते हैं, तो भाग्य भी साथ देता है और जीवन में सकारात्मक परिवर्तन आते हैं।

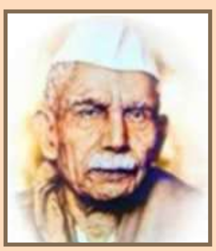

हिंदी हमारे देश और भाषा की प्रभावशाली विरासत है।

-माखनलाल चतुर्वेदी

हिन्दी के द्वारा सारे भारत को एक सूत्र में पिरोया जा सकता है।

-महर्षि स्वामी दयानन्द

जलवायु परिवर्तन और ग्रामीण समुदायों पर इसका प्रभाव

कीर्ति खत्री
सामुदायिक विज्ञान महाविद्यालय, स्वामी केशवानंद राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर (राज.)

जलवायु परिवर्तन 21 वीं सदी की सबसे गंभीर चुनौतियों में से एक है। इसका प्रभाव न केवल वैश्विक स्तर पर महसूस किया जा रहा है, बल्कि विशेष रूप से ग्रमिण समुदायों पर इसका प्रभाव पड़ रहा है। भारत जैसे कृषि प्रधान देश में, जहां अधिकांश जनसंख्या कृषि और इससे जुड़े व्यवसायों पर निर्भर है, जलवायु परिवर्तन की तीव्रता विशेष चिंता का विषय बन गई है।

जलवायु परिवर्तन के कारणः

वर्तमान समय में जलवायु परिवर्तन के प्रमुख कारणों में ग्रीनहाउस गैसों का बढ़ता उत्सर्जन, औद्योगिकीकरण, वनों की कटाई, अत्यधिक कृषि गतिविधियाँ और प्राकृतिक संसाधनों का अनुचित दोहन शामिल है। यह सभी कारक वातवरण के संतुलन को बिगाड़तें हैं, जिससे तापमान में वृद्धि होती है और जलवायु अस्थिरता बढ़ती है।

ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जनः

- कार्बन डाइऑक्साइड, मीथेन और नाइट्रस ऑक्साइड जैसी गैसों का अधिक उत्सर्जन वायुमंडल में गर्मी बढ़ाता है।
- औद्योगिक गतिविधियाँ, कोयले और पेट्रोलियम पदार्थो का जलना इन गैसो के बढ़ते स्तर का प्रमुख कारण है।
- ग्रीनहाउस प्रभाव के कारण धरती का तापमान निरन्तर बढ़ रहा है, जिससे बर्फिले क्षेत्रों में बर्फ पिघल रही है और समुद्र का जल स्तर बढ़ रहा है।

वनों की कटाई:

- वृक्षों के कटाव से कार्बन संतुलन प्रभावित होता है , जिससे ग्रीनहाउस प्रभाव बढ़ता है।
- जंगलों की कमी से वर्षा चक्र बाधित होता है और भूमि की उर्वरता घटति है ।
- वनों के विनाश के कारण अनेक प्रजातियों का अस्तित्व संकट में आ जाता है, जिससे जैव विविधता पर नाकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

औद्योगिकीरण और शहरीकरणः

- बढ़ते उद्योगों और शहरीकरण के कारण जीवाश्म ईधनों का अधिक उपयोग हो रहा है, जिससे वायुमंडलीय प्रदूषण और तापमान में वृद्धि हो रही है।
- नगरों के विस्तार के लिए हरित क्षेत्रों का विनाश हो रहा है, जिससे पर्यावरण असंतुलित होता जा रहा है।
- वाहनों और कारखानों से निकलने वाले धुएं में कार्बन डाइऑक्साइड और अन्य हानिकारक गैसें होती हैं, जो प्रदूषण को बढ़ावा देती हैं।

अत्यधिक कृषि गतिविधियाँः

- उर्वरकों और कीटनाशकों का अत्यधिक उपयोग मिट्टी और जलवायु पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है।
- अधिक पानी के उपयोग से जल संकट बढ़ता है और भूजल स्तर में गिरावट आती है।
- वनों को काटकर कृषि भूमि के रूप में उपयोग करने से पारिस्थितिकी संतुलन बिगड़ता है।

चित्र 1: जलवायु परिवर्तन का प्रभाव

ग्रामीण समुदायों पर जलवायु परिवर्तन का प्रभावः

कृषि उत्पादन में गिरावटः

- अनियमित वर्षा, सूखा, बाढ़ और चक्रवात जैसी घटनाओं के कारण फसल उत्पादन प्रभावित होता है।
- जलवायु परिवर्तन से मिट्टी की उर्वरता में गिरावट आती है, जिससे किसान आर्थिक संकट में फँस जाते है।
- असामयिक वर्षा और अत्यधिक गर्मी के कारण परंपरागत कृषि प्रणाली असफल हो रही है।

जल संकट:

- भूजल स्तर में गिरावट और जल संसाधनों की अस्थिता से ग्रामीण क्षेत्रों में पेयजल और सिंचाई के लिए जल की कमी हो रही है।
- सूखे की बढ़ती घटनाएँ ग्रामीण समुदायों को अधिक प्रभावित कर रही हैं।
- जल संकट के कारण खेती के लिए आवश्यक पानी उपलब्ध नहीं हो पा रहा, जिससे खाद्यान्न उत्पादन प्रभावित हो रहा है।

मिट्टी की गुणवत्ता में गिरावट:

- लगातार बढ़ते तापमान और असंतुलित वर्षा के कारण मिट्टी का कटाव हो रहा है और उसकी उर्वरता कम हो रही है।
- अत्यधिक दोहन और उर्वरकों के उपयोग से मिट्टी की जैव विविधता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है।
- बंजर भूमि की संख्या बढ़ने से कृषि योग्य भूमि की मात्रा घट रही है।

स्वास्थ्य समस्याएँ:

- अत्यधिक गर्मी, बाढ़ और सूखे से ग्रामीण समुदायों में संक्रामक रोगों और कुपोषण की समस्या बढ़ रही है।
- मलेरिया, डेंगू और अन्य जलजनित बीमारियों में वृद्धि हो रही है।
- कुपोषण के कारण बच्चों और महिलाओं की स्वास्थ्य स्थिति बिगड़ रही है।

आजीविका का प्रभाव:

- कृषि और पशुपालन पर निर्भर ग्रामीण समुदायों के लिए जलवायु परिवर्तन एक गंभीर संकट बन चुका है।
- जलवायु अस्थिरता के कारण बेरोजगारी और पलायन की समस्या तेजी से बढ़ रही हैं।
- पशुपालन में गिरावट के कारण ग्रामीण अर्थव्यवस्था कमजोर होती जा रही है।

जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को कम करने के उपाय:

संवहनीय कृषि पद्धतियों को अपनाना :

- जैविक खेती, फसल चक्र और कम पानी वाली फसलों को बढ़ावा देना आवश्यक है।
- मिश्रित कृषि प्रणाली और पारंपरिक खेती की विधियों को अपनाकर जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को कम किया जा सकता है।
- पारंपरिक जल संचयन विधियों का उपयोग करना चाहिए।

वृक्षारोपण और वनो का संरक्षण:

- अधिक से अधिक वृक्षारोपण करना और वनों की कटाई को रोकना अनिवार्य है।
- सामुदायिक स्तर पर वृक्षारोपण अभियानों को बढ़ावा दिया जाना चाहिए।

जल संरक्षण तकनीकों का विकास:

- वर्षा जल संचयन, ड्रिप सिंचाई और फब्बारा (स्प्रिंकलर) सिंचाई प्रणाली को अपनाकर जल संसाधनों को संरक्षित किया जा सकता है।
- पारंपरिक जल स्त्रोतों जैसे तालाबों और कुओं का पुनरूउद्धार किया जाना चाहिए।

नवीकरणीय ऊर्जा का उपयोंग:

- सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा और बायोगैस जैसे नवीकरणीय ऊर्जा स्त्रोतों को अपनाना जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को कम करने में सहायक हो सकता है।
- ग्रामीण क्षेत्रों में नवीकरणीय ऊर्जा से संबंधित योजनाओं को अधिक बढ़ावा देना चाहिए।

स्थानीय समुदायों को जागरूक बनाना:

- किसानों और ग्रामीणों को जलवायु परिवर्तन से बचाव के तरीकों के बारें में शिक्षित करना आवश्यक है।
- जलवायु परिवर्तन से निपटने के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किये जाने चाहिए।

निष्कर्ष:

जलवायु परिवर्तन का प्रभाव सीधें ग्रामीण समुदायों के जीवन पर पड़ रहा है। यदि इसे नियंत्रित करने के लिए समय रहते उचित कदम नही उठाये गए, तो यह समस्या और गंभीर हो सकती है। इस लिए सरकार, वैज्ञानिक, किसान और आम नागरिकों को मिलकर इस समस्या से निपटने के लिए प्रभावी कदम उठाने की आवश्यकता है।

हिन्दी पढ़ना और पढ़ाना हमारा कर्तव्य है। उसे हम सबको अपनाना है।

-लालबहादुर शास्त्री

पर्यावरण मानव जीवन के व्यवहार में बदलाव के लिए आवश्यक

अखिलेश कुमार
कृषि विज्ञान केन्द्र, रीवा (म.प्र.)

विश्व पर्यावरण दिवस प्रत्येक वर्ष 5 जून को बेहतर भविष्य के लिए पर्यावरण को सुरक्षित, स्वस्थ और सुनिश्चित बनाने के लिए नई और प्रभावी योजनाओं को लागू करने के द्वारा पर्यावरण मुद्दों को सुलझाने के लिए मनाया जाता है। इसकी घोषणा 1972 में संयुक्त राष्ट्र महासभा के द्वारा पर्यावरण पर विशेष सम्मेलन ''स्टॉकहोम मानव पर्यावरण सम्मेलन'' के उद्घाटन पर हुई थी। यह पूरे संसार के लोगों के बीच में पर्यावरण के बारे में जागरुकता फैलाने के साथ ही पृथ्वी पर साफ और सुन्दर पर्यावरण के सन्दर्भ में सक्रिय गतिविधियों के लिए लोगों को प्रोत्साहित और प्रेरित करने के उद्देश्य से हर साल मनाया जाता है। यह साल के बड़े उत्सव के रुप में बहुत सी तैयारियों के साथ मनाया जाता है, जिसके दौरान राजनीतिक और सार्वजनिक क्रियाओं में वृद्धि होती है। विश्व पर्यावरण दिवस (डब्ल्यू.ई.डी.) की स्थापना इस ग्रह से सभी पर्यावरण संबंधी मुद्दों को हटाने और इस ग्रह को वास्तव में सुन्दर बनाने के लिए विभिन्न योजनाओं, एजेंडों और उद्देश्यों के साथ हुई है। पर्यावरण संबंधी समस्याओं पर ध्यान केन्द्रित करने और पर्यावरण के मुद्दों पर लोगों को एक चेहरा प्रदान करने के लिए पर्यावरण के लिए इस विशेष कार्यक्रम की स्थापना करना आवश्यक था। यह समारोह स्वस्थ्य जीवन के लिए स्वस्थ वातावरण के महत्व को समझने के साथ ही विश्वभर में पर्यावरण के अनुकूल विकास को निश्चित करने के लिए लोगों को सक्रिय प्रतिनिधि के रुप में प्रेरित करने में हमारी मदद करता है। यह लोगों के सामान्य सूझ को फैलाता है कि, सभी राष्ट्रों और लोगों के सुरक्षित और अधिक समृद्धशाली भविष्य की उपलब्धता के लिए पर्यावरण मुद्दों के प्रति अपने व्यवहार में बदलाव के लिए यह आवश्यक है।

वृक्ष हमारे पर्यावरण के महत्वपूर्ण एवं अभिन्न घटक हैं। वृक्षों (हरे पेड़-पौधे) के बिना पृथ्वी पर मनुष्य अथवा किसी भी जीव-जन्तु, पशु-पक्षी का जीवन संभव नहीं है परन्तु वर्तमान समय में विकास तथा शहरीकरण के कारण हरे वृक्षों की अंधाधुंध कटाई हो रही है जिससे हमारा पर्यावरण प्रदूशित हो रहा है। ज्यों-ज्यों वृक्षों की संख्या घटती जा रही है त्यों-त्यों मानव जीवन पर संकट बढ़ता जा रहा है। सड़क, रेलवे लाइन, रिंग रोड, आँगनबाड़ी केन्द्र, औषधालय तथा विद्यालयों के निर्माण हेतु पुराने हरे वृक्षों की कटाई बेतहासा की जा रही है। इनके स्थान पर नये पौधों का रोपड़ नगण्य के बराबर किया जा रहा हैं। जिससे पर्यावरण प्रदूषण का खतरा दिन दूनी, रात चौगुनी गति से बढ़ रहा है। वर्तमान में फसल उत्पादन को दो गुना करने की होड़ लगी हुई है। इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए अत्याधिक कीटनाशी, नीदानाशी, रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग कृषि में किया जा रहा है जिसके कारण हमारी मिट्टी, हवा, पानी सभी प्रदूषित हो रहे हैं। इन रसायनों के कारण भूमिगत जल भी पीने योग्य नहीं रह गया है। फैक्ट्रियों तथा ईटों के भट्ठों की चिमनियों से निकलने वाले धुंए में मिली हुई विषैली गैसे मानव स्वास्थ्य के लिए खतरा बन गयी हैं। जिसके कारण अस्थमा, ब्लड प्रेशर, हार्ट अटैक, किडनी फेल होना, ब्रेन हेमरेज तथा कैंसर जैसी खतरनाक बीमारियाँ तेजी से बढ़ रही हैं। इस बढ़ते हुए संकट से छुटकारा पाने का एक और केवल एक ही उपाय है कि अधिक से अधिक पेड़-पौधे लगाये जाए, हरे वृक्ष सूर्य के प्रकाश में वातावरण में उपस्थित कार्बन डाई-ऑक्साइड को अवशोषित करके अपना भोजन बनाते हैं तथा बदले में ऑक्सीजन गैस बाहर निकालते हैं जिसका उपयोग मनुक्य तथा अन्य जीव श्वास लेने में करते हैं। जिस दिन हरे वृक्ष नहीं रहेंगे तो लोगों को साँस लेने के लिए शुद्ध ऑक्सीजन नहीं मिलेगी और ऑक्सीजन के बिना दम घुटने से मिनटों मिनट में मृत्यु हो जायेगी। ज्यों-ज्यों वृक्षों की संख्या घटेगी त्यों-त्यों संकट बढ़ता जायेगा। इसलिए समय रहते यदि हम वृक्षारोपण करें तो संकट को टाला जा सकता है। वर्तमान में हमारे देश की जनसंख्या 140 करोड़ हो गई है। इतनी बड़ी जनसंख्या को भोजन उपलब्ध कराने के लिए अनाज उत्पादन बढ़ाने की होड़ लगी हुई है। ऐसे में हमारे किसाान भाईयों के पास खेती करने के लिए ही पर्याप्त जमीन नहीं है। परन्तु हमारे देश, प्रदेश तथा गाँवों में कुछ ऐसी जमनी पड़ी है जहाँ कृषि फसलें उगाना संभव नहीं है। ऐसी जमीन पर खेती करने से लागत अधिक आती है तथा लाभ कम मिलता है। ऐसी सभी भूमियों को पड़ती बंजर भूमि कहा जाता हैं। नदियों तथा नालों के किनारे सड़क, रेलवे लाईन, नहरों के किनारे की उबड-खाबड भूमि पर खेती नहीं की जा सकती हैं परन्तु ऐसी भूमियों पर वृक्षारोपण करके बढ़ते हुए संकट को कम किया जा सकता है।

हमारे आस-पास का पर्यावरण मानव जीवन के लिए उपयुक्त हो, इसके लिए संपूर्ण भू-भाग के 1/3 (33 प्रतिशत) भाग पर हरे वृक्षों का होना आवश्यक है। वृक्षों से शुद्ध ऑक्सीजन के अतिरिक्त फल, चारा, जलाऊ लकडी, ईमारती लकडी, गोंद, रेशा तथा विभिन्न प्रकार की औषधियाँ प्राप्त होती हैं। इसके अलावा पेड़-पौधों की जडे मिट्टी को बाँधे रहती हैं जिससे ऊपर की उपजाऊ मिट्टी पानी के साथ बहकर नदियों,

नालों तालाबो तथा पोखरों में जमा हो जाती है जिसके कारण इन जल संग्रह स्त्रोतों की गहराई कम हो जाती है तथा जल संग्रह क्षमता कम हो जाती है एवं कम वर्षा में भी बाढ़ आ जाती है एवं वर्षा समाप्त होने के कुछ दिनों बाद ही जल संकट दिखाई देने लगता हैं। यदि वृक्षों की इसी प्रकार तिलांजली दी जाती रही, तो वह दिन दूर नहीं है जब मानव बूँद-बूँद पानी के लिए तरसने लगेगा। शुद्ध हवा के बाद यह दूसरा भयंकर संकट है जो घटते हुए वृक्षों के कारण बढ़ता जा रहा हैं। अब भी समय है कि विभिन्न प्रकार की भूमियों मे पौधा-रोपण करके बढ़ते हुए संकट से छुटकारा पाया जा सकता है। जैसे -

1. आँगनवाडी में - मुनगा, अमरूद, सीताफल, पपीता, करौंदा, बेर, अनार आदि।
2. सड़कों के किनारे - बेर, आॅवला, सीताफल, करौंदा, सहतूत, अमरूद।
3. खेतों की मेडों पर - देशी आम, नीम, जामुन, महुआ, इमली, कदम आदि।
4. नाले के किनारे - कटहल, जामुन, गूलर, पीपल, खिरनी, सहतूत, कमरख।
5. पंचायत भवन तथा स्कूल आदि स्थानों पर - देशी आम, अमरूद, कटहल, आँवला, कमरख, खिरनी, मौलऔ आदि।
6. पडती भूमि पर - बबूल, सुबबूल, शीशम, सिरस, खमेर आदि।

इस प्रकार विभिन्न प्रकार की भूमियों पर अधिक से अधिक वृक्षारोपण करके भविष्य के खतरे (भूकंप, ओला, अतिवृष्टि, अनावृष्टि, बाढ, जल संकट, बीमारियों का संकट, पर्यावरण प्रदुषण का संकट) को कम किया जा सकता है।

हिंदी भारतीय संस्कृति की आत्मा है।

-कमलापति त्रिपाठी

जो भी किया जा सकता है उसी वक्त किया जा सकता है, जिसे आप कल पर छोड़ रहे हैं, जान लें, आप करना नहीं चाहते हैं।

-ओशो

कृषिरत महिलाओं के परिप्रेक्ष्य में संयुक्त राष्ट्र सतत् विकास लक्ष्य के प्राप्ति की रूपरेखा

दीक्षा श्रीवास्तव[1], सुधानंद प्रसाद लाल[2], कुमारी सुष्मिता[2] एवं मंजू देवी[2]
[1]चंद्र शेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर (उ.प्र.)
[2]डा. राजेन्द्र प्रसाद केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय, पूसा, समस्तीपुर (बिहार)

विकास एक ऐसी प्रकिया है जो व्यक्ति को, समाज को और देश को अविकसित से विकासशील होते हुए और तत् पश्चात विकसित बनाती है। संगठन या किसी भी देश की उन्नति के लिए विकास के कुछ स्तंभ है जैसे आर्थिक विकास, सामाजिक विकास, पर्यावरणीय स्थिरता और तकनीकी प्रगति जो समग्र रूप से देश या समाज के वृद्धि में सहायता करती है। देश की उन्नति होने के साथ साथ सतत् विकास प्रणाली से देश को विकसित बनाने की धारा में जोड़ना होगा और इसी संदर्भ में देश के माननीय प्रधानमंत्री ने विकसित भारत को लेकर जो संकल्प किया है उससे भारत को ना सिर्फ एशियाई महाद्वीप में बल्कि वैश्विक स्तर पर देश को विकसित राष्ट्र के रूप में देखा जाएगा।

''सतत् विकास वह विकास है जो वर्तमान पीढ़ी की आवश्यकताओं की पूर्ति इस प्रकार करता है कि भविष्य की पीढ़ियों की आवश्यकताओं की पूर्ति की क्षमता से समझौता न हो।'' (ब्रंटलैंड रिपोर्ट, 1987 Our Common Future) सतत् विकास लक्ष्य संयुक्त राष्ट्र द्वारा निर्धारित 17 वैश्विक लक्ष्य हैं, जिनका उद्देश्य 2030 तक गरीबी हटाना, पृथ्वी की रक्षा करना और सभी लोगों के लिए समृद्धि सुनिश्चित करना है। ये लक्ष्य सामाजिक, आर्थिक और पर्यावरणीय विकास के बीच संतुलन स्थापित करते हैं।

सतत् विकास लक्ष्य (SDGs)

तालिका 1: सतत् विकास की पृष्ठभूमि

वर्ष	मुख्य बिंदु	विवरण
1992	रियो पृथ्वी सम्मेलन	पहली बार ''सतत् विकास'' की अवधारणा को वैश्विक स्तर पर प्रमुखता मिली। इसमें एजेंडा 21 तैयार किया गया।
2000	न्यूयॉर्क में संयुक्त राष्ट्र मुख्यालय में संयुक्त राष्ट्र सहस्राब्दि की घोषणा	इस घोषणा के माध्यम से देशों ने अत्यधिक गरीबी को कम करने के लिए एक नई वैश्विक साझेदारी की प्रतिबद्धता जताई और 2015 की समयसीमा के साथ आठ लक्ष्यों की एक निर्धारित श्रृंखला बनाई, जिसे सहस्राब्दि विकास लक्ष्य (MDG) के नाम से जाना गया।
2012	रियो +20 सम्मेलन	सतत् विकास पर ध्यान केंद्रित करते हुए, नए वैश्विक लक्ष्यों की आवश्यकता महसूस की गई। इसके बाद सतत् विकास लक्ष्य की रूपरेखा बननी शुरू हुई।
2015	सतत् विकास लक्ष्य की घोषणा	25 सितम्बर 2015 को संयुक्त राष्ट्र महासभा में 193 देशों ने ''हमारी दुनिया में बदलाव: सतत् विकास के लिए 2030 एजेंडा'' को अपनाया, जिसमें 17 लक्ष्य और 169 उप-लक्ष्य शामिल है ।

2015-2030 के इस वैश्विक एजेंडा के केंद्र में सार्वभौमिकता का सिद्धांत है: ''किसी को पीछे न छोड़ें'' यह व्यापक एजेंडा यह मान्यता देता है कि केवल आर्थिक विकास पर ध्यान केंद्रित करना अब पर्याप्त नहीं है, बल्कि अधिक न्यायसंगत और समान समाजों और एक अधिक सुरक्षित और समृद्ध ग्रह की आवश्यकता है। भारत, वैश्विक स्तर पर सतत् विकास लक्ष्य की सफलता सुनिश्चित करने में एक निर्णायक भूमिका निभाता है।

महिलाओं के परिप्रेक्ष्य सतत् विकास लक्ष्य

महिलाओं के परिप्रेक्ष्य सतत् विकास लक्ष्य एक अत्यंत महत्वपूर्ण विषय है, क्योंकि ये लक्ष्य न केवल आर्थिक विकास को बढ़ावा देते हैं, बल्कि लैंगिक समानता, महिलाओं के अधिकारों और उनके सामाजिक, राजनीतिक तथा आर्थिक सशक्तिकरण को भी केंद्र में रखते है। कुछ लक्ष्य जो कि निम्नलिखित है।

तालिका 2: महिलाओं के परिप्रेक्ष्य सतत् विकास लक्ष्य

क्र.सं.	लक्ष्य सूची	उद्येश्य	मुख्य विवरण
1	लक्ष्य 3	अच्छा स्वास्थ्य और भलाई	मातृ स्वास्थ्य, प्रसव के दौरान देखभाल, प्रजनन अधिकारों की रक्षा, और महिलाओं के लिए स्वास्थ्य सेवाओं की उपलब्धता इस लक्ष्य का अहम हिस्सा हैं।
2	लक्ष्य 4	गुणवत्तापूर्ण शिक्षा	शिक्षा महिलाओं को सशक्त बनाती है, बाल विवाह को रोकती है और उनके रोजगार के अवसरों को बढ़ाती है। लड़कियों की शिक्षा में समान अवसर देना आवश्यक है।
3	लक्ष्य 5	लैंगिक समानता	सभी महिलाओं और लड़कियों के लिए लैंगिक समानता प्राप्त करना और उन्हें सशक्त बनाना।
4	लक्ष्य 8	गरिमापूर्ण कार्य और आर्थिक विकास	महिला श्रमिकों को समान वेतन, सुरक्षित कार्यस्थल, मातृत्व लाभ, और स्वरोजगार के अवसर प्रदान करना।
5	लक्ष्य 10	असमानता को घटाना	जाति, वर्ग, और लिंग आधारित असमानता को खत्म कर समाज में महिलाओं को बराबरी का स्थान दिलाना।
6	लक्ष्य 16	शांतिपूर्ण और समावेशी समाज	महिलाओं के खिलाफ हिंसा को रोकना, न्याय तक पहुंच और कानूनी संरक्षण की गारंटी देना।

सतत् विकास लक्ष्य और महिलाओं की कृषि में भागीदारी

लक्ष्य-2, भुखमरी की समाप्ति, एक ऐसा लक्ष्य जिसे बिना कृषि और किसानों के नहीं हासिल किया जा सकता है। भुखमरी की समस्या किसी भी देश के लिए कैंसर जैसे बीमारियों से भी घातक है, जो देश को अंदर ही अंदर खोखला कर रहा है। 2024 के ग्लोबल हंगर इंडेक्स में, भारत 127 देशों में से 105वें स्थान पर है, ये भारत जैसे देश के लिए एक बहुत बड़ी चुनौती है। और दुनिया भर में लाखों लोग भूखमरी और कुपोषण का सामना कर रहे हैं, जबकि कृषि हमारे जीवन के लिए आवश्यक भोजन का उत्पादन करती है। और इस उत्पादन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है महिला किसान।

तालिका 3: भारत और विश्व भर में महिलाओं की विशेष क्षेत्रों में भागीदारी

क्र. सं.	विशेष विवरण	प्रतिशत (%)	सन्दर्भ
1	महिलाओं का विश्व के खाद्य उत्पादन में योगदान	80	(एफएओ, 2023)
2	महिलाएं विश्व के कृषि श्रम बल का कितना प्रतिशत हिस्सा हैं	43	(सीजीआईएआर, 2021, एफएओ, 2024)
3	भारत में कार्यरत महिलाओं का कितना प्रतिशत कृषि श्रम बल में संलग्न है	62.9	(पीएलएफएस, 2023)
4	भारत में महिलाएं कितने प्रतिशत व्यवसायों की मालिक या संचालक है	20.37	(नीति आयोग, 2023)
5	भारत के GDP में महिलाओं का योगदान	18	(विश्व आर्थिक मंच, 2024)
6	भारतीय महिलाओं द्वारा संचालित कंपनियों में से कितनी प्रतिशत सूक्ष्म उद्यम हैं	>90	(मैथ्यू, 2019)
7	भारतीय महिलाओं द्वारा संचालित कितने प्रतिशत सूक्ष्म उद्यम स्व-वित्तपोषित हैं	79	(मैथ्यू, 2019)
8	भारतीय महिलाओं द्वारा प्राप्त मंत्री पदों का प्रतिशत	6	(एमपीए, 2024)
9	भारतीय संसद में महिलाओं द्वारा प्राप्त पदों का प्रतिशत	12.8	(एमपीए, 2024)
10	कृषि गतिविधियों में संलग्न महिला सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यमों (wMSMEs) का प्रतिशत	34.3	(नीति आयोग, 2023)

उपसंहार

संयुक्त राष्ट्र के सतत् विकास लक्ष्य महिलाओं और महिला किसानों की भूमिका को सशक्त बनाने में महत्वपूर्ण योगदान देते हैं। महिला किसान न केवल खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने में योगदान देती हैं, बल्कि सतत् कृषि पद्धतियों को अपनाकर पर्यावरण संरक्षण में भी सहायक होती हैं। यदि हम महिलाओं को बराबरी का अवसर दें, तो खाद्य उत्पादन में वृद्धि, गरीबी में कमी और ग्रामीण समुदायों में समग्र विकास संभव हो सकता है। सतत् विकास लक्ष्य के प्रभावी कार्यान्वयन के लिए यह आवश्यक है कि नीति निर्माण में महिला किसानों की भागीदारी को प्राथमिकता दी जाए और उनके लिए विशेष समर्थन योजनाएँ चलाई जाएँ। इस प्रकार, महिला किसानों का सशक्तिकरण न केवल व्यक्तिगत लाभ का प्रश्न है, बल्कि यह वैश्विक विकास, सामाजिक न्याय और पर्यावरणीय स्थिरता की दिशा में भी एक महत्वपूर्ण कदम है। सतत् भविष्य का निर्माण महिलाओं के सशक्त योगदान के बिना संभव नहीं है।

''यह वैश्विक लक्ष्यों का है सतत् विकास लक्ष्य (SDG 17),
बनाए इसमें महिलाओं को भी हर संदर्भ में दक्ष।
कृषक महिलाओं ने दिया है अपना संपूर्ण योगदान,
जिससे हासिल कर सकते है लक्ष्य 2 (भुखमरी की समाप्ति)
के रूप में अभयदान।।''

केवल ज्ञान होने से कुछ फायदा नहीं होता, वह कब और कैसे इस्तेमाल किया जाये, इसका ज्ञान होना आवश्यक है।

-स्वामी विवेकानंद

किसी से किसी भी तरह की प्रतिस्पर्धा की आवश्यकता नहीं है। आप स्वयं में जैसे हैं एकदम सही हैं। खुद को स्वीकारिये।

-ओशो

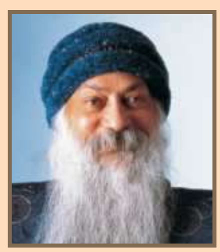

वर्ष 2024-25 में भा.कृ.अनु.प.-खरपतवार अनुसंधान निदेशालय की राजभाषा कार्यान्वयन समिति की गतिविधियां एवं किये गए प्रयासो का संक्षिप्त विवरण

निदेशालय में राजभाषा हिन्दी के कार्यान्वयन, उसके प्रचार-प्रसार तथा समय-समय पर इसके प्रयोग एवं प्रगति का अवलोकन करने हेतु राजभाषा कार्यान्वयन समिति का गठन किया गया है। समिति के प्रयासो के परिणामस्वरुप संस्थान के सभी अनुभागों में हिन्दी में कार्य करने के लिए जो उत्साह उत्पन्न हुआ है, वह सराहनीय है।

राजभाषा हिन्दी के प्रयोग एवं प्रचार-प्रसार के क्षेत्र में सर्वाधिक व सराहनीय कार्यो के लिए निदेशालय को नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, जबलपुर कार्यालय क्रमांक 02 की 15वीं बैठक में वर्ष 2023 के दौरान सरकारी कामकाज में राजभाषा के उल्लेखनीय एवं सराहनीय प्रचार-प्रसार हेतु दिनांक 27 दिसम्बर, 2024 को द्वितीय पुरस्कार (राजभाषा ट्रॉफी) से सम्मानित किया गया।

दिनांक 27 दिसम्बर, 2024 को राजभाषा ट्रॉफी से सम्मानित

वर्ष 2024-25 में खरपतवार अनुसंधान निदेशालय की राजभाषा कार्यान्वयन समिति के माध्यम से निदेशालय में हिन्दी में हुई प्रगति एवं गतिविधियों का विवरण इस प्रकार है-

त्रैमासिक बैठकों का आयोजन

निदेशालय की राजभाषा कार्यान्वयन समिति की त्रैमासिक बैठकों का नियमित आयोजन किया गया। हिन्दी राजभाषा कार्यान्वयन समिति की अप्रैल से जून, 2024 तिमाही की बैठक दिनांक 16/05/2024, जुलाई से सितम्बर, 2024 की तिमाही बैठक दिनांक 04/09/2024, अक्टूबर से दिसम्बर, 2024 की तिमाही बैठक दिनांक 26/12/2024 एवं जनवरी से मार्च, 2025 की तिमाही बैठक दिनांक 25/03/2025 को निदेशालय के सभागार में आयोजित की गई। उक्त बैठकों में निदेशक महोदय की अध्यक्षता में निदेशालय के समस्त अनुभाग प्रभारी एवं समिति के पदाधिकारी सम्मिलित हुए। बैठक में कार्यान्वयन से संबंधित बिंदुओं पर विचार किया गया एवं पिछली बैठक के कार्यवृत्त को पारित किया गया। राजभाषा कार्यान्वयन समिति के प्रभारी द्वारा पिछली तिमाहियों का विस्तृत ब्यौरा प्रस्तुत किया गया, जिसमें राजभाषा अधिनियम 1963 की धारा 3(3) के अनुपालन की स्थिति के संदर्भ में बताया गया। तत्पश्चात् पिछली तिमाहियों के अंतर्गत जारी त्रैमासिक प्रतिवेदनों, कागजातो, मांगपत्रो एवं जांच बिन्दुओं इत्यादि से संबंधित चर्चाएं की गई, साथ ही माननीय संसदीय राजभाषा समिति को दिये गए आश्वासनों के संबंध में संबंधित अनुभागो को उचित कार्यवाही करने हेतु पत्र भी जारी किये गये।

बैठकों में राजभाषा वार्षिक कार्यक्रमों में निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त करने तथा राजभाषा विभाग एवं भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद से प्राप्त निर्देशों/आदेशों/समीक्षाओं के अनुपालन पर चर्चा की गई और इन बैठकों में लिये गए निर्णयो को लागू करने के लिए कार्यवाही की गई।

त्रैमासिक हिन्दी प्रतिवेदन का संकलन

भारत सरकार के राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय द्वारा निर्धारित रिपोर्ट के प्रोफार्मा में निदेशालय के विभिन्न अनुभागो में किये जा रहे हिन्दी कार्यो की प्रगति तथा हिन्दी पत्राचार के आंकड़ें तिमाही समाप्ति पर मंगाये गए और उनको समेकित कर प्रतिवेदन को भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्लीय नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति-02 जबलपुर एवं क्षेत्रीय कार्यान्वयन कार्यालय, भोपाल को प्रेषित किये गए। त्रैमासिक प्रतिवेदन से प्राप्त समीक्षा के अनुसार सुझाए गये बिन्दुओं पर कार्यवाही की गई तथा संबंधित अनुभाग को पृष्ठांकित किया गया।

राजभाषा वार्षिक कार्यक्रम का क्रियान्वयन

भारत सरकार की राजभाषा नीति के अनुसार संस्थान द्वारा संपादित कार्यो में हिन्दी का क्रियान्वयन सुनिश्चित करने के लिए गृहमंत्रालय, राजभाषा विभाग द्वारा जारी राजभाषा वार्षिक कार्यक्रम में दिये गए निर्देशों के अनुसार कार्यवाही हेतु सभी अनुभागो को राजभाषा संबंधी नियमों/निर्देशों से अवगत कराया गया तथा इन नियमों के अनुसार कार्यवाही सुनिश्चित करने का अनुरोध किया गया।

हिन्दी पखवाड़े का आयोजन-

निदेशालय में हिन्दी पखवाड़ा का आयोजन दिनांक 13 सितम्बर से 27 सितम्बर, 2024 तक किया गया, जिसका शुभारंभ दिनांक 13 सितम्बर, 2024 को डॉ. सुनील कुमार, निदेशक भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि प्रणाली अनुसंधान संस्थान, मेरठ के मुख्य आतिथ्य में किया गया। कार्यक्रम में अतिथि वक्ता के रूप में डॉ. पंकज कुमार, ए.जी.एम., बी.आर.बी.आर.ए.आई.टी.टी., जबलपुर द्वारा ''भावनात्मक बुद्धिमत्ता सफल जीवन की शैली'' विषय पर एक व्याख्यान देते हुए परिचर्चा की गई।

दिनांक 14 सितम्बर, 2024 को हिन्दी दिवस के अवसर पर निदेशालय के निदेशक द्वारा समस्त अधिकारियों एवं कर्मचारियों को राजभाषा प्रतिज्ञा दिलाई गई तथा माननीय कृषि कल्याण मंत्री, भारत सरकार के संदेश का वाचन भी किया गया।

हिन्दी पखवाड़े के दौरान निदेशालय में सात प्रतियोगिताओं का आयोजन प्रमुख रूप से किया गया तथा प्रोत्साहन योजना के तहत निदेशालय के वर्ष भर में 20,000 से अधिक हिन्दी शब्द लिखने वाले अधिकारियों/कर्मचारियों को प्रथम, द्वितीय, तृतीय नगद पुरस्कार से सम्मानित किया गया एवं अनुभागो हेतु चलित शील्ड प्रदान की गई। विभिन्न प्रतियागिताओ के विजेताओ को भी पखवाड़ा समापन कार्यक्रम के दौरान पुरस्कार/प्रमाण पत्र प्रदान किये गये। प्रतियोगिताओं का विवरण निम्नानुसार है-

क्र.सं.	प्रतियोगिता का नाम	प्रतियोगिता दिनांक	समूह/वर्ग
1.	तात्कालिक निबंध	17 सितम्बर, 2024	समूह अ एवं ब
2.	हिंदी शुद्धलेखन	18 सितम्बर, 2024	समूह अ एवं ब
3.	कम्प्यूटर पर यूनिकोड में टाइपिंग	19 सितम्बर, 2024	समूह अ एवं ब
4.	आलेखन एवं टिप्पण	20 सितम्बर, 2024	समूह अ एवं ब
5.	अंताक्षरी	23 सितम्बर, 2024	सभी के लिए
6.	वाद-विवाद	24 सितम्बर, 2024	सभी के लिए
7.	प्रश्न-मंच	25 सितम्बर, 2024	सभी के लिए

नगद पुरस्कार – वर्ष भर शासकीय कार्यो का संपादन हिन्दी में करने एवं 20,000 से अधिक हिन्दी शब्द लिखने हेतु प्राप्त आवेदनों एवं चलित शील्ड हेतु आवेदित किये गए अनुभागों के अभिलेखों का निरीक्षण, सत्यापन/पुरस्कार चयन समिति द्वारा किया गया तथा समिति की अनुशंसा के अनुसार पुरस्कार वितरित किये गए।

दिनांक 27.09.2024 को निदेशालय के सभागार में हिन्दी पखवाड़े का समापन एवं पुरस्कार वितरण समारोह का भव्य आयोजन किया गया। जिसमें निदेशालय के समस्त अधिकारियों एवं कर्मचारियों ने भाग लिया। समापन के दौरान मुख्य अतिथि प्रो. (डॉ.) मनदीप शर्मा, कुलगुरू, नानाजी देशमुख पशुचिकित्सा विज्ञान विश्वविद्यालय, जबलपुर एवं विशिष्ट अतिथि प्रो. (डॉ.) आर.सी. मिश्रा, कुलगुरू, महाकौशल महाविद्यालय, जबलपुर उपस्थित रहे। कार्यक्रम में मुख्य अतिथि डॉ. मनदीप शर्मा ने कहा कि हमारे देश में खान-पान, रहन-सहन, नृत्य-संगीत अलग-अलग होने के बाद भी राजभाषा हिन्दी के प्रति हमारा जुड़ाव एकतरफा है। हमारे प्रधानमंत्री जब भी किसी विदेश दौरे पर जाते हैं तो हिन्दी भाषा का ही प्रयोग करते हैं। हिन्दी हमारी राजभाषा है इसकी उन्नति एवं प्रचार-प्रसार के लिए हमें निरंतर प्रयासरत रहना है। विशिष्ट अतिथि, डॉ. आर.सी. मिश्रा ने अपने संबोधन में कहा कि जब हम अपनी राजभाषा को महत्व देंगे तभी उसका विकास हो पाएगा। उन्होने बताया कि इस धरती पर महादेवी वर्मा एवं सूर्यकांत त्रिपाठी निराला जैसे कवियो का समागम रहा है। देश की विकास यात्रा में हिंदी ने समृद्ध भाषा बनकर ''वसुधैव कुटुम्बकम" की धारणा को सुदृढ़ किया है।

इस अवसर पर निदेशालय द्वारा प्रकाशित वार्षिक हिन्दी पत्रिका ''तृण संदेश" के उन्नीसवें अंक तथा खरपतवार समाचार (द्विभाषी) एवं भा.कृ.अनु.प.-खरपतवार अनुसंधान निदेशालय की महत्वपूर्ण उपलब्धियां 2023-24 प्रकाशनों का विमोचन मुख्य अतिथि, विशिष्ट अतिथि एवं निदेशक महोदय द्वारा निदेशालय के समस्त अधिकारियों/ कर्मचारियों की उपस्थिति में किया गया।

हिन्दी पखवाड़े के दौरान राजभाषा पत्रिका ''तृण संदेश" का विमोचन

हिंदी पखवाड़े के दौरान पुरस्कार वितरण

राजभाषा वार्षिक पत्रिका के उन्नीसवे अंक का प्रकाशन-

- ''तृण संदेश'' पत्रिका के उन्नीसवें अंक अप्रैल 2023 से मार्च 2024 का प्रकाशन किया गया, जिसमें खरपतवार प्रबंधन से संबंधित महत्वपूर्ण लेखों को स्थान दिया गया है। पत्रिका को स्लोगन एवं महापुरुषों के कथनों से प्रभावशाली बनाया गया।

हिन्दी कार्यशालाओं का आयोजन-

- राजभाषा कार्यान्वयन समिति द्वारा वर्ष 2024 के दौरान हिन्दी कार्यशालाओं का आयोजन किया गया, जिसका विवरण निम्नानुसार है -

1. दिनांक 31 जुलाई, 2024 को एक दिवसीय हिन्दी कार्यशाला का आयोजन "वैज्ञानिक एवं तकनीकी क्षेत्र में हिन्दी लेखन की महत्ता" विषय पर किया गया, जिसमें डॉ. पी.के. सिंह, प्रधान वैज्ञानिक, खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर द्वारा व्याख्यान दिया गया।
2. दिनांक 13 सितम्बर, 2024 को एक दिवसीय हिन्दी कार्यशाला का आयोजन "भावनात्मक बुद्धिमत्ता सफल जीवन की शैली" विषय पर किया गया, जिसमें डॉ. पंकज कुमार, ए.जी.एम., बी.आर.बी. आर.ए.आई.टी.टी., जबलपुर द्वारा व्याख्यान दिया गया।
3. दिनांक 23 दिसम्बर, 2024 को कृषक दिवस के अवसर पर अधिकारियों/कर्मचारियों एवं प्रगतिशील कृषको हेतु एक दिवसीय हिन्दी कार्यशाला का आयोजन "शीतकालीन फसलों में खरपतवार प्रबंधन" विषय पर किया गया, जिसमें डॉ. पी.के. सिंह, प्रधान वैज्ञानिक, खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर द्वारा व्याख्यान दिया गया।
4. दिनांक 28 फरवरी, 2025 को एक दिवसीय हिन्दी कार्यशाला का आयोजन ''बैंक से संबंधित लाभदायी योजनाओं एवं अन्य जानकारी" विषय पर किया गया, जिसके वक्ता प्रतिनिधि प्रियंका राठौर, प्रियंका मोदी एवं कुलदीप कुमार राई बैंक ऑफ इंडिया, जबलपुर रहे।

दिनांक 13/09/2024 को आयोजित कार्यशाला

दिनांक 23.12.2024 को आयोजित कार्यशाला

दिनांक 28/02/2025 को आयोजित कार्यशाला

निदेशालय की राजभाषा कार्यान्वयन समिति के सदस्यों के नाम

1. डॉ. जे.एस. मिश्र, अध्यक्ष
2. डॉ. पी.के. सिंह, सह-अध्यक्ष
3. डॉ. विजय कुमार चौधरी, सदस्य
4. डॉ. योगिता घरडे, सदस्य
5. श्री राजेन्द्र हाड़गे, सदस्य
6. श्री राजीव कुलश्रेष्ठ, सदस्य
7. श्री मुकेश कुमार मीणा, सदस्य

समाचारों में भाकृअनुप-खरपतवार अनुसंधान निदेशालय
ICAR - DWR in the NEWS

हर कदम, हर डगर
किसानों का हमसफर
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद

भाकृअनुप
ICAR

Agrisearch with a human touch

भा.कृ.अनु.प.-खरपतवार अनुसंधान निदेशालय
जबलपुर (म.प्र.) - 482004

फोन / Phones: +91-761-2353001, 23535101, 23535138, 2353934, फैक्स / Fax: +91-761-2353129
ई-मेल / Email: director.weed@icar.gov.in वेबसाइट / Website: http://dwr.icar.gov.in
फेसबुक लिंक : https://www.facebook.com/ICAR-Directorate-of-Weed-Research-101266561775694
ट्विटर लिंक : https://twitter.com/DwrIcar
यू-ट्यूब लिंक : https://www.youtube.com/channel/UC9WOjNoMOttJaIWdLfumMnA

ISBN : 978-81-958133-8-4